मार्कण्डेय पुराण

खण्ड २

(उ० प्र०)

K. P. SABHA AMBPHALLA
LIBRARY
No.............
Date...........
JAMMU

मार्कण्डेय पुराण

[द्वितीय खण्ड]

(सरल भाषानुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण)

सम्पादक :

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

चारों वेद, १०८ उपनिषद्, षट्दर्शन, २० स्मृतियाँ
योग वासिष्ठ तथा १८ पुराणों के प्रसिद्ध
भाष्यकार और लगभग १५० हिन्दी-ग्रन्थों
के रचयिता ।

★

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब,(वेदनगर) बरेली—२४३००३ (उ० प्र०)

फोन : ७४२४२

प्रकाशक :

डॉ॰ चमनलाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब (वेद नगर)

बरेली—२४३००३ (उ० प्र०)

फोन : ७४२४२

❀

सम्पादक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

❀

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

❀

संशोधित जनोपयोगी संस्करण

सन् १९९०

❀

मुद्रक :

शैलेन्द्र बी० माहेश्वरी

सरस्वती संस्थान

भीकचन्द मार्ग, मथुरा

❀

मूल्य :

तेइस रुपये मात्र

दो शब्द

भारतीय धार्मिक साहित्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। उसमें अध्यात्म नीति-चरित्र से लेकर इतिहास, भूगोल, उद्योग-धन्धे, कला-कौशल सब विषयों का समावेश किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि भारतीय मनीषियों ने जीवन की प्रत्येक गति-विधि का सम्बन्ध धर्म से माना है और अपने अनुयाइयों को सदैव यही शिक्षा दी है कि वे कभी धर्मविमुख आचरण न करें। शास्त्रों में मानव-जन्म के जो चार पुरुषार्थ, धर्म अर्थ काम, मोक्ष गिनाये गये हैं, उनमें भी धर्म को प्रथम स्थान इसी उद्देश्य से दिया गया है कि मनुष्य जीवन निर्वाह और सांसारिक सुख प्राप्त करने के लिए अवश्य ही अर्थ का उपार्जन करें और उसके द्वारा भोगों का भी उपभोग करे, पर उसकी कर्म-पद्धति सदैव धर्म द्वारा नियन्त्रण होनी आवश्यक है, तभी वे जीवन के अन्तिम लक्ष्य—मोक्ष तक पहुँचने में समर्थ हो सकेंगे।

पुराणों की सबसे बड़ी विशेषता यही हैं कि वे इन सिद्धांतों को नित्य प्रति की साधारण और असाधारण घटनाओं के रूप में ऐसे ढंग से हमको सुनाते हैं जिससे हम जान सकें कि संसार के छोटे-बड़े सामान्य असामान्य और आकस्मिक कर्तव्यों का पालन किस प्रकार धार्मिक आदेशों की रक्षा करते हुए किया जा सकता है। इस विवेचन को हर श्रेणी का-साधारण बुद्धि का और अनपढ़ व्यक्ति भी सुन और समझ सके, इसके लिये उन्होंने उसे मनोरंजक कथाओं का रूप दिया है और बहुत ही सरल वर्णन शैला का प्रयोग किया गया है। ऐसी दशा में जो आलोचक प्रवृत्ति के सज्जन पुराणों की एक-एक बात को इतिहास, तर्क और तथ्यों की कसौटी पर कसने का प्रयत्न करते हैं उनका समय और श्रम प्रायः व्यर्थ ही जाता है। वे अपनी समझ से पौराणिक कथाओं का खण्डन करके कोई बड़ा काम करते हैं। पर पुराणों के वास्तविक स्वरूप के ज्ञाता विद्वान् लोग तो इस प्रकार की लम्बी चौड़ी आलोचनाओं को निरर्थक समझते हैं, और केवल श्रद्धाभाव से कथा सुनने वाली अनपढ़ जनता पर भी उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वे प्राचीन ऋषि महर्षियों

के नाम पर लिखे धर्म ग्रन्थों के विरुद्ध कोई बात सुनना ही नहीं चाहते और ऐसे लेखकों को 'नास्तिक' की पदवी देकर ठुकरा देते हैं।

मार्कण्डेय पुराण के इस खण्ड में जो कथायें आई हैं, उनमें से अधिकांश राज्यवंशों के कुछ विशिष्ट राजाओं की कार्यवाहियों से सम्बन्ध रखती हैं। हो सकता है उनमें से कुछ राजाओं के नाम यथार्थ हों-और किन्हीं युद्धों की घटना भी न्यूनाधिक परिमाण में किसी समय घटी हों, पर उनका वर्तमान रूप एक धार्मिक कहानी के समान ही मानना चाहिए। अनेक ऐतिहासिक, उपन्यासों और कहानियों के पात्रों तथा स्थानों के नाम सच्चे होते हैं और कुछ घटनाएं भी मूल रूप में ठीक होती हैं, पर पूरा कथानक लेखक की कल्पना शक्ति से प्रसूत होता है। कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि वह पात्रों को जो कथोपकथन दे रहा है या उनके मनोभावों का जो चित्रण कर रहा है वह किसी प्रत्यक्षदर्शी के आधार पर ज्यों का त्यों लिखा गया। इसके विपरीत लेखक उस कहानी के माध्यम से पाठकों को जो कुछ लाभकारी शिक्षा देना चाहता है उसी के अनुसार कथानक को ढाल दिया जाता है। पुराणों के विषय में भी यही बात ठीक समझनी चाहिए।

एक बात और भी है। अनेक पौराणिक कथाओं में 'अनीति' अनुचित कर्म, दुराचरण का भी खुलकर वर्णन किया है जिसकी कुछ लोग निन्दा किया करते हैं। पर उसका उद्देश्य भी यही है कि पाठकों को जीवन के उत्तम और निकृष्ट, प्रशंसनीय और निन्दनीय दोनों पहलू दिखा दिये जांय जिससे भले की अच्छाई और बुरे की बुराई की शिक्षा उनके मन पर अङ्कित हो जाय। फिर अन्त से मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुसार भलाई अथवा बुराई की ओर तो झुकता ही है। यदि पुराणों से भी कोई निन्दनीय कर्मों को ही पसन्द करके उन्हीं को ग्रहण करना चाहता है तो यह उसका अपना ही दोष माना जायेगा। पुराण तो जन-समूह को सद्मार्ग और परोपकारमय जीवन का ही उपदेश देते आये हैं और देते रहेंगे।

विषय-सूची

५१—भद्राश्वादिवर्ष वर्णन—भाद्रश्ववर्ष केतुमालवर्ष, कुरुदेश आदि का भौगोलिक वर्णन ६

५२—किम्पुरुषादि वर्णन—किम्पुरुवर्ष, हरिवर्ष, मेरुवर्ष, इलावृत रम्यकवर्ष, हिरण्यमयवर्ष आदि के निवासियों का परिचय १३

५३—स्वारोचिष मन्वन्तरारम्भ (२—अरुणास्पद नगर निवासी ब्राह्मण और वरूथिनी अप्सरा की कथा)

५४—कलि वरूथिनी समागम—कलि नामक गन्धर्व का छद्मवेश धारण करके वरूथिनी को अपने अधीन करना २७

५५—स्वरोचि का जन्म और विवाह—मनोरमा के साथ स्वरोचि का विवाह और उसकी दो सखियों को रोगमुक्त करना ३२

५६—स्वरोचि के अन्य विवाह—विभावरी और कलावती के साथ स्वरोचि का विवाह ४१

५७—चक्रवाक और मृग का तिरस्कार—स्वरोचि की कामुकता देख कर चक्रवाकी और मृग द्वारा उसका तिरस्कार ४४

५८—स्वरोचिष मनु की उत्पत्ति—वन की अधिष्ठात्री देवी के साथ स्वरोचि का समागम और स्वारोचिष मनु का जन्म ४८

५९—स्वरोचिष मन्वन्तर कथन ५५

६०—निधि-निर्णय—अष्ट निधियों का विवरण और उनका प्रभाव ५६

६१—औत्तम मन्वन्तर आरम्भ (३) उत्तम राजा द्वारा रानी का परित्याग-ब्राह्मण पत्नी का हरण-पत्नी त्याग के कारण उत्तम राजा की अवमानना ६३

६२—द्विज भार्या को पति के घर भेजना—राक्षस के बन्धन से द्विज पत्नी की मुक्ति

६३—ऋषि से उत्तम का कथोपकथन

६४—औत्तम मनु की उत्पत्ति-उत्तम राजा का अपनी रानी को पुनः प्राप्त करना और औत्तम का जन्म ८३

६५—औत्तम मन्वन्तर कथन ९०

६६—तामस मन्वन्तर-स्वराष्ट्र राजा का राज्यच्युत होना। नदी में मृगी से भेंट—तामस का जन्म और शत्रुओं पर उसकी विजय ६२

६७—रैवत मन्वन्तर-रेवती नक्षत्र के गिरने से एक कन्या का जन्म और महाराज दुर्गम से उसका विवाह, रैवत मनु की उत्पत्ति १०१

६८—चाक्षुष मन्वन्तर—भद्रा के गर्भ से आनन्द का जन्म और तपस्या, ब्रह्माजी द्वारा उसका मनु बनाया जाना ११२

६९—वैवस्वत मन्वन्तर आरम्भ—सूर्य के पुत्र रूप से वैवस्वत मनु का जन्म और उनकी माता संज्ञा का गृह-त्याग १२०

७०—सूर्यस्तव और अश्विनी कुमारों का जन्म
सूर्य की स्तुति और अश्विनीकुमारों का जन्म १२६

७१—वैवस्वत मन्वन्तर कथन १३१, ७२—सावर्णिक मन्वन्तर १३३

७२—देवी माहात्म्य—मधु कैटभ वध—राजा सुरथ और समाधि वैश्य का ऋषि से प्रश्न—मेधा ऋषि का देवी उपाख्यान सुनाना—मधुकैटभ का देवी द्वारा वध १३५

७३—महिषासुर सैन्य वध—देवताओं के सम्मिलित तेज से देवी का आविर्भाव और महिषासुर से भयंकर संग्राम १४६

७४—महिषासुर वध-महिषासुर के प्रमुख सेनाध्यक्षों और स्वयं उसका देवी द्वारा मारा जाना १५६

७५—शक्रादिकृत देवी-स्तुति १६३

७६—देवी से शंभुदूत का कथन—शुम्भ और निशुम्भ का त्रैलोक्य पर अधिकार और देवताओं की सहायतार्थ देवी की उन पर चढ़ाई, शुम्भ का विवाह प्रस्ताव लेकर दूत भेजना १७०

७७—धूम्रलोचन वध १८० ७९—चण्ड मुण्ड वध १८३

७८—रक्त-बीज वध १८७ ८१—निशुम्भ वध १८५

७९—शुम्भ-वध १९१

८०—देवी-स्तोत्र—समस्त दानवों के मारे जाने पर देवताओं द्वारा देवी की स्तुति २०५

८१—देवताओं को देवी का वरदान-देवी के चरित्र श्रवण करने और देवी उपासना का महान माहात्म्य २१३
८२—सुरथ और वैश्य को देवी का वरदान २१९
८३—पांच मन्वन्तर कथन—चार सार्वणि और पांचवे रौच्य नामक मन्वन्तरों के देवता मुनि और राजा २२२
८४—रुचि को पितरों का गार्हस्थ उपदेश-प्रजापति रुचि का वैराग्य धारण और पितरों का उनको गृहस्थ उपदेश। २२६
८५—रुचिकृत पुत्रस्तव-पत्नी की प्राप्ति के लिये रुचि का तप करना ब्रह्माजी की सम्मति से पितरों की स्तुति करना २२९
८६—रुचि को पितरों का वरदान—पितरों का प्रकट होकर रुचि पत्नी और रौच्य नामक मनु के जन्म का वरदान देना और इस स्तोत्र की महिमा कथन करना २३७
८७—रौच्म मनु का जन्म—प्रम्लोचना की कन्या मालिनी से रुचि का विवाह और रौच्य की उत्पत्ति २४२
८८—भौत्य मन्वन्तर आरम्भ-भूति मुनि के पुत्र के लिए तपस्या-शान्ति मुनि द्वारा अग्नि की स्तुति २४४
८९—सर्व मन्वन्तर श्रवण फल कथन-अग्नि का प्रकट होकर शांति को वरदान देना और भूति मुनि से भौत्य मनु की उत्पत्ति २५५
९०—राज वंशानुकीर्तन—सृष्टि का आरम्भ और ब्रह्माजी द्वारा रचना कार्य आरम्भ २६२
९१—वेदमय मार्तण्ड की उत्पत्ति २६६ ९२-ब्रह्मकृत रवि स्तव २६९
९३—कश्यप प्रजापति की सृष्टि-देवासुर संग्राम का आरम्भ और अदिति द्वारा भगवान भास्कर की स्तुति २७१
९४—अदिति के गर्भ से आदित्य का जन्म २७७
९५—भानुतन के लेखन-भगवान भास्कर के असह्य तेज के कारण उनकी पत्नी का गृह त्याग भास्कर का विश्वकर्मा को अपना तेज कम करने का आदेश २८१

९६—विश्वकर्मा द्वारा सूर्य स्तवन २९१
९७—रवि माहात्म्य वर्णन २९३
९८—(क) राज्यवर्द्धन की आयुवृद्धि—महाराज राज्यवर्द्धन के सुशासन के फलस्वरूप उनकी प्रजा का प्रेम और सूर्य भगवान की आराधना द्वारा उनकी आयु वृद्धि करना २९६
९९—(ख) राजा और प्रजा की आयु वृद्धि ३०८
१००—(ग) सूर्य वंशानुक्रम ३१५ १००—(घ) पृषध्रोपाख्यान ३१७
१०१—नाभागापाख्यान (१) द्विष्ट राजा के पुत्र नाभाग का वैश्य-कन्या से विवाह करना और राज्याधिकार से वंचित होना ३२१
१०२—नाभागोपाख्यान (२) ३२६, १०३—कृपावती उपाख्यान ३३१
१०३—(क) भलन्दन वत्सप्रीति चरित्र—वत्सप्रीति द्वारा कुजृम्भ राक्षस के वध का वर्णन
१०४—खनित्र चरित्र (१) ३४५ । १०५—खनित्र (२) ३५३
१०६—विविंश चरित्र ३५५। १०७—खनित्र चरित्र (३) ३५९ । १०८—करन्धम चरित्र ३६४। १०९—अवीक्षित चरित्र (१) ३८६। ११०—अवीक्षित चरित्र (२) ३७२। १११—अवीक्षित चरित्र (३) ३७५। ११२—अवीक्षित चरित्र (४) ३८५। ११३—अवीक्षित चरित्र (५) ३९०। ११४—मरुत जन्म वर्णन ३९५। ११५—मरुत चरित्र (१) ४०२। ११६—मरुत चरित्र (२) ४०८। ११७—मरुत चरित्र (३) ४१४। ११८—मरुत चरित्र (४) ४१७। ११९—नरिष्यन्त चरित्र ४२५। १२०—दम चरित्र (१) ४३०। १२१—दम चरित्र (२) ४३९। १२२—दम चरित्र (३) ४४४। १२३—वपुष्मान वध ४४७। १२४ पुराण-श्रवण-पठन फल ४५२। १२५—मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन ४५९-५०४।

मार्कण्डेय पुराण

द्वितीय खण्ड

५१—भद्राश्वादिवर्ष वर्णन

एवंतु भारतवर्षंतथावत्कथितमुने ।
कृतंत्रेताद्वापर चतथातिष्यश्चतुष्टयम् ।१

अत्रवैंतद्युगानान्तुचातुर्वर्ण्यंचवैद्विज ।
चत्वारिवीद्वेचैवकथैकंशरच्छतम् ।२

जीवन्त्यत्रनराब्रह्मन्कृतादिषुक्रमात् ।
देवकूटस्यपूर्वस्यशैलेन्द्रस्यमहात्मन: ।३

पूर्वेणयत्स्थितवर्षं भद्राश्वं तन्निबोधमे ।
श्वेतपर्यश्चनीलशैवालश्चाचलोत्तम: ।४

कौरश्च: पर्णशालाग्र: पञ्चैसेहिकुलाचला: ।
तेषांप्रसूतिरन्येयेवहत: क्षुद्रपर्वता: ।५

तैर्विशिष्टाजनपदानना रूपा: सहस्रश: ।
तत: कुमुदकाशा: शुद्धसानुसुमङ्गला ।६

इत्येवतादयोऽन्येऽपिशतशोऽथसहस्रश: ।
सीताशंखावलीभद्राचक्रावर्त्तादिकास्तथा ।७

नद्योऽथवह्वयोविस्तीर्णा: शीततोयौघवाहिका: ।
अत्रवर्षेनरा: शंखशंखद्धहेसमप्रभा: ।८

मार्कण्डेयजी ने कहा—भारत का यह वास्तविक वर्णन किया गया, इसी भारतवर्ष में सत्युग, त्रेता, द्वापर और कलियुग यह चारों युग

विद्यमान हैं ।१। इसी स्थान में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के भेद से चार वर्ण हैं । यही सत्युग, त्रेता, द्वापर और कलियुग के भेद से मनुष्य गण क्रमशः चार सौ, तीन सौ, दो सौ और एक सौ की आयु पाते हैं पूर्वदिशा देवकूट नामक विशाल पर्वत के ।२-३। पूर्व की ओर जो वर्ष अवस्थितर, उसे भद्राश्ववर्ष कहते हैं, उसके विषय में कहता हूं । श्वेतवर्ण, नील शैवाल ।४। कौरञ्च, पर्णशालाग्र यह पाँचकुलाचल इस वर्ष में स्थित हैं तथा इसी वर्ष में इन सब पर्वतों से उत्पन्न हुए अनेक छोटे पर्वत भी स्थित हैं ।५। कुमुद, संकाश, शुद्धसानु, सुसङ्गल आदि अन्यान्य सहस्रों जनपद विभिन्न प्रकार से इस वर्ष में ही स्थित हैं, सीता शङ्खवती, भद्रा औ चक्रावर्त आदि ।६-७। बहुत ही अत्यन्त शीतल जल वालीं नदियां इसमें प्रवाहमान हैं, इस वर्ष में उत्पन्न होने वाले सभी मनुष्य शङ्ख तथा स्वच्छ स्वर्ण के समान प्रभा सम्पन्न हैं ।८।

दिव्यसंगमिनः पुण्यादशवर्षशतायुषः ।
अधमोत्तमनतेष्वस्यिसर्वे ते समदर्शनाः ।९
तितक्षादिभिरष्टाभिः प्रकृत्यात्मगुणेर्युत्ताः ।
तत्राप्यश्वशिरादेवश्चातुर्वाहुर्जनार्दनः ।१०
शिरोहृदयमेढाङ्घ्रिहल्तश्चाक्षियान्वितः ।
तस्याप्यथैवविषयाविज्ञ याजगत प्रभोः ।११
केतुमालमतोवर्षनिवोधममपश्चिमम ।
विशाल कम्वलः कृष्णोजयन्तोहरिपर्वतः ।१२
विशोकोवर्द्धमाभश्चसप्तैकुलमर्वताः ।
अन्येसहस्रश देशैलायेषुलोकगणः स्थितः ।१३
मौलयस्तेमपाकायाः शाकपोतकरम्भकाः ।
अच्चुलप्रमुखाश्चापिवन्तिशतयोजना ।१४

वे सत्संग सहित पवित्रता पूर्वक निवास करते हुए सहस्र वर्ष पर्यन्त जीवित रहते हैं, उनमें कोई श्रेष्ठ अथवा अधम नहीं ।९। वहाँ के सब मनुष्य सभी प्रकार के गुणवान् होते हैं, इस वर्ष में चतुर्भुजी

भगवान हयग्रीव स्वरूप में ।१०। शिर, हृदय, मेढ़ चरणहाथ, और अक्षित्रयान्वित होकर अवस्थित हैं, उन जगदीश्वर का सम्पूर्ण विषय इसी प्रकार समझो ।११। अव सुमेरु के पश्चिम में स्थित केतुमाल वर्ष का वर्णन सुनो—इस वर्ष में जो सात कुल चल हैं वे बिशालु कम्वल कृष्ण जयन्त हरि पर्वत ।१२। विशोक और वर्द्धभान नामक हैं इनके अतिरिक्त और भी हजारों विशाल पर्वत हैं, जिनमें अनेक प्राणी निवास करते हैं ।१३। उनमें शाक पोत, करम्भक और अच्चुलाख्यादि अनेक प्रकार के लोगों का निवास हैं ।१४।

येपिवन्ति महानद्यीवक्षुश्यामांस्वकण्वलाम् ।
अमोघांकामिनीश्यामांतथैवान्याः सहस्रशः ।१५
अत्राप्यायुः समपूर्येरत्रापिभगवान्हरिः ।
बराहरूपीपाद स्यहृत्पृष्ठपाश्चवंतस्तथा ।१६
त्मुखेनासादतश्चैवकण्ठतः पुच्छतस्तथा ।
त्रिनक्षत्रयुतदेशेनक्षत्रणाणियुतानिच ।
इत्येतत्केतुमालंतेकथितमुनिसत्तमः ।१७
अतः परकुरून्वक्ष्येनिवोधेममौत्तरान् ।
तत्रवक्षामधुफलानित्यपुष्पधलोपगाः ।१८
वस्त्र जिचप्रसूयन्ते भलेष्वाभरणानिच ।
सर्वकामप्रदास्तेहिसर्वकालफलप्रदाः ।१९
भूमिर्मणिमयीवायुः सुगन्धः सर्वदासुखः ।
जायन्तेमानवास्तत्रदेवलोकपरिच्युनाः ।२०
मिथुनानिप्रसून्तेसमकालस्थितानिवे ।
अन्योन्यमनुरक्तातिचक्रवात्तोपमानिच ।२१

जिन महानदियों के जल का यह लोग पान करते हैं, वे बक्षु श्याम कम्बला, अमोघा, कामिनी, सुमेधा नाम की महानदी हैं इनके प्रतिरिक्त अन्य सहस्रों नदियाँ वहाँ प्रवाहित हैं ।१५। मनुष्यों की आयु वहाँ भी पूर्वोक्त ही हैं उस देश में भगवान् श्रीहरि का निवास बाराह

रूपसे हैं उनके चरण, हृदय, मुख, पृष्ठ देश तथा पार्श्व में मुख, नासिका कण्ठ, दांत और पूँछ सहित तीन नक्षत्रों से पूर्ण होकर सम्पूर्ण देश अवस्थित हैं, वहाँ भी नक्षत्र शुभाशुभ को सूचित करते रहते है ।१६। हे मुने ! इस प्रकार केतुमास वर्ष का वर्णन भी कर दिया गया ।१७। अब उत्तर कुरुदेश का वर्णन करता हूँ, उसे सुनो—इस देश में सब ऋतुओं के फल, पुष्प आदि से युक्त सर्व कामना एवं सर्व फल देने वाले वृक्ष ।१८। वस्त्र उत्पन्न करते हैं तथा उनके सब फलों से आभरण उत्पन्न होते हैं ।१९। वहाँ की भूमि मणियुक्त, सुन्दर सुगन्धित वायु से सम्पन्न तथा सुख के देने वाली है । स्वर्ग लोक से भ्रष्ट हुए व्यक्ति ही वहाँ मनुष्य रूप में जन्म लेते हैं ।२०। उनमें चक्रवात के समान पारस्परिक प्रेम रहता है तथा समकाल में बालकों को उत्पन्न करते हैं ।२१।

चतुर्दशसहस्राणितेषांसार्द्धानिर्वस्थितिः ।
चन्द्रकान्तश्चशैलेन्द्र सूर्य्यकान्तस्तथापरः ।२२
तस्मिन्कुलाचलेत्रषैवन्मध्येचमहानदी ।
भद्रसोमाख्यात्पुण्यातुण्यामलजलोघिनी ।
सहश्रस्तथैवान्यानद्योवर्षेऽपिचोत्तरे ।
तथान्याः क्षीरवाहिन्योधृतवाहिन्यएवच ।२४
दघ्नौह्नदास्तथातत्रतथान्येचानुपर्वताः ।
अमृतास्वादकल्पानिविविधानिच ।२५
वनेषुतेषुरम्याणिशतोऽथसहस्रशः ।
तत्रापिभगवान्विष्णुः प्राक्छिरामत्स्यरूपवान् ।२६
विभक्तोनवधाविप्रनक्षाणांत्रयंत्रतम ।
देशास्तत्रापिनवधाविभक्तानुसत्तम ।२७
चन्द्रद्वीपः समुद्रचभद्रद्वीपतथापरः ।
तत्रापिपुण्योविख्यातः समुद्रान्तर्णहामुने ।२८
वर्ष्येतत्कंथितं ब्रह्मन्कुरुवर्णमयीत्तःम् ।
श्रृणकिंपुरुषादीनिवर्षाणिगदत्तोतम ।२९

वह साढ़े चौदह वर्ष तक जीवित रहते हैं, इस वर्ष में चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त नामक दो कुलाचल स्थित हैं।२२। उस पर्वत में भद्र-सोमा नाम की स्वच्छ जल वाली महानदी प्रवाहित है।२३। इसके अतिरिक्त अन्य सहस्रों छोटी-छोटी नदियाँ वहाँ हैं, अन्य नदियों में कोई दुग्ध वाहिनी और कोई घृत वाहिनी है।२४। तथा कोई दही के ताल से युक्त है, सात कुलाचलों के अतिरिक्त अन्य क्षुद्र पर्वत बहुत से हैं उत्तर कुरु में स्थित शत सहस्र वनों के मध्य स्थित सभी वृक्षों में विभिन्न प्रकार के सुस्वादु फल लगते हैं, इसी स्थान में पूर्व की ओर मस्तक करके मत्स्यस्वरूप से श्रीनारायण भगवान का वास है।२५-२६। इस उत्तर कुरु में नक्षत्र नौ भागों में बंटकर तीन-तीन के क्रम से रहते हैं इसी प्रकार सब देश नौ भागों में विभाजित हैं।१७। इस वर्ष में चन्द्र-द्वीप और भद्रद्वीप नामक दो पवित्र द्वीप है, जो समुद्र के मध्य में स्थित हैं।२८। हे ब्रह्मन् ! यह उत्तर कुरु वर्ष का वर्णन हुआ अब किम्पुरुषादि के विषय में कहता हूं।२९।

५२—किम्पुरुषादि वर्णन

यत्तु किंपुरुषंवर्षंतत्प्रवक्ष्याम्यहद्विज।
वत्रायुर्दसाहस्रं पुरुषाणांवपुष्मताम्।१
अनामयाह्यशोकाश्चनरायत्रतथास्त्रियः।
प्लक्षःखण्डश्चयत्रोक्तः सुमहान्नन्दनोपमः।२
तस्यतेवैफलरसंपिवन्तः पुरुषाः सदा।
स्थिरयौवननिष्पन्नांस्त्रियश्चोत्पलगन्धिकाः।३
अतः परंकिम्पुरुषाद्धरिहर्षप्रचक्षते।
महारजसंकाशाजायतेयत्र मानवाः।४
देवलोकच्युताः सर्वेदेवरूपाश्चसर्वशः।
हरिवर्षेनराः यर्वेपिवन्तोक्षुरसंशुभम्।५
नजरावाधतेतत्रनजीर्यन्तेकर्हिचित्।
तावन्तमेवतेकालजीवन्तयथ निरामया।६

मेरुवर्षमयाप्रोक्तमध्यमयादिलावृताम् ।
नतत्रसूर्यस्तपतिनतेजीर्यन्तिमानवाः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे द्विज श्रेष्ठ ! अब किम्पुरुष नामक वर्ष का वृत्तान्त कहता हूं, सुनो— वहाँ देहधारी मनुष्यों की दश हजार वर्ष की है। वहाँ के सभी स्त्री पुरुष निरोग तथा शोक रहित होते हैं वहाँ नन्दन वन के समान एक महान् प्लक्ष खण्ड स्थित हैं ।२। उन वृक्षों के रस का पान करके ही मनुष्य स्थिर यौवन वाले एवं नारियाँ पद्मवस्था होती है ।३। इस वर्ष के पृष्ठ भाग में हरि वर्ष मनुष्य रूप में उत्पन्न होते हैं तथा वहाँ श्रेष्ठ ईख का रस पान करते हैं —वृद्धावस्था उनको पीड़ित नहीं करती, इसलिए जीर्णता कोई भी प्राप्त नहीं होता, वे जब तक जीवित रहते हैं तब तक यौवनावस्था स्थित रहती हैं तथा वे सदा निरोग रहते हैं ।६। मेरुवर्ष नामक मध्यम वर्ष को इलावृत भी कहते हैं, वहाँ का सूर्य ताप रहित हैं और मनुष्य वहाँ भी वृद्धावस्था से जीर्ण नहीं होते ।७।

लभन्तेनात्मलाभंचरश्मयश्चन्द्रसूर्ययो ।
नक्षत्राणांग्रहाणांचमेरोस्तत्रपराद्युतिः ।८
पद्मप्रभाः पद्मगन्धाजम्बूधलरसाशिनः ।
पद्मपत्रायताक्षास्तुजान्म्रततत्रमानवः ।९
वर्षागान्तुहस्त्राणितत्राष्यायुस्त्रयोदशः ।
शरावाकारसंतारोमेरुमध्येइलावृते ।१०
मेरुस्तमहाशैलस्तदाख्यातमिलावतम् ।
रम्यकवर्षमस्माच्चवथयिष्येनि ।११
वृक्षस्तत्रापिचोतुङ्गन्यग्रोधोहरिच्छदः ।
तस्यापितेफलरसंपिबन्तोवर्तयन्तिवै ।१२
वर्षायुताधुषस्तत्रनरास्तत्फल भोगिनः ।

रतिप्रधानविमलाजरादौर्गन्ध्यवर्जिता: ।१३
तस्म षथोत्तरं वर्षनाम्याख्यातंहिरण्मयम् ।
हिरण्यवतीनदींयत्रप्रभूतकमलोज्ज्वला ।१४
महाबला: सतजस्काजायन्तेतत्रमानवा: ।
महाकायामहामत्वाधनिन: प्रियदर्शना: ।१५

चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह और मब नक्षत्रों की किरणों वहाँ उज्ज्वलता को प्राप्त नहीं हो पाती, क्योंकि वहाँ सुमेरू का तीव्र प्रकाश रहता हैं ।८। जो मनुष्य उस मेरु वर्ष में उत्पन्न होता हैं, वह सभी कमल के समान प्रभा युक्त पद मगन्ध और पद्मपत्र के समान विस्तीर्ण नेत्र वाले तथा जामुन के फलों का रस पान करने वाले होते हैं ।९। वे मनुष्य तेरह सहस्र वर्ष की आयु वाले होते हैं. उस इलावृत्त के बीच में जो मेरू पर्वत स्थित है उसका आकार सकोरे के समान है ।१०। उस वर्ष में वह महापर्वत मेरु ही प्रसिद्ध हैं, अव तुम्हें रम्यक वर्ष के विषय में सुनाता हूं उसे श्रवण करो ।११। उस रम्यक वर्ष में एक अत्यन्त ऊँचा न्यग्रोध नामक वृक्ष है, उनके समस्त पत्र हरे रंग के के है, उस वृक्ष के रस पान द्वारा ही वहाँ के मनुष्य जीवन धारण करते हैं ।१२। उसके फलों के रस का पान करने वालों की आयु दश सहस्र वर्ष होती हैं, वह रति क्रिया में चतुर, सुन्दर तथा दुर्गन्ध और जरावस्था से रहित होते हैं ।१३। उसके उत्तर में हिरण्यमय वर्ष स्थित है, इसमें अनेक कमल पुष्पों से सुशोभित हिरण्यमय नदी हिरण्ययुक्त जल से परिपूर्ण प्रवाहित है ।१४। वहाँ उत्पन्न होने वाले मनुष्य अत्यन्त वली, तेजस्वी, सत्व सम्पन्नं प्रिय दर्शन, विशाल कार्य तथा धनवान होते हैं ।१५।

५४—स्वरोचिष मन्वन्तरारम्भ

कथितंभवतासमग्यष्टष्टोऽसिमहामुने ।
भूमद्रादिसंस्थान प्रमाणामितथाग्रहा: ।
तेषांचैवप्रमाणंयन्नक्षत्राणां वसंस्थिति: ।

भूरामस्यस्तथलोका पतालान्यखिलान्यपि ।२
स्वायम्भु वतथाख्यातं मुनेमन्वन्तरंमम् ।
तदन्तराण्यहं श्रोतुमिच्छेमन्वन्तराण्यवै ॥
मन्वन्तराधिपान्देवानृषीस्तत्तनयान्नृपान् ।३
मन्वन्तरं मयाख्याततवस्वायम्भुवंचयत् ।
स्वारोचिषाख्यमन्यत्तु श्रणुतस्मादनन्तरम् ।४
कश्चिद्विजातिप्रवरः पुरेऽभूदरुणास्पदे ।
वरुणायास्तटेविप्रोरूपेणात्यश्विनावपि ।५
मृदुस्वभावा सद्वृत्तोवेदवेदांगपारगः ।
सदातिथिप्रियोरात्रावागतानांसमाश्रयः ।६
तस्यबुद्धिरियत्वासीकहं पश्येवसुन्धराम् ।
अतिरम्यवनोद्यानांनायगरशोभिताम् ।७

कौष्टुकि बोले—हे महामुन ! आपने मेरे समस्त प्रश्न का फल भले प्रकार समाधान किया, पृथिवी और समुद्रादि की स्थिति, विस्तार एवं ग्रह का परिमाण ।१। नक्षत्रादि की स्थिति और परिमाण भूरादि सप्त लोक, सप्त पाताल ।२। तथा स्वार्यंभुव नामक प्रख्यात मन्वन्तर आदि का भी वृतान्त कहा है । अब उक्त मन्वन्तरके पश्चात् अन्य सग मन्वन्तर उनके अधिपति, वसके वंशीय राजा गण देवता एवं ऋषियों की कथा सुनने की मुझे उत्कट इच्छा है ।३। मार्कण्डेयजी ने कहा-जिसस्वयंभुव मनु का विषय तुम्हारे प्रति कहा है, अब उसके पश्चात् स्वारोचिष मन्वन्तर का वृत्तान्त सुनो ।४। दोनों अश्विनीकुमारों से भी अधिक रूपवान् शान्त स्वभाव वाला, चरित्रवान्, वेद वेदाङ्ग का ज्ञाता एक ब्राह्मण वरुणा नदी के तट पर स्थित अरुणास्पद नामक नगर में रहता था, वह अतिथि के आगमन पर अत्यन्त प्रसन्न होता था तथा रात्रि के समय आने वाले व्यक्तियों के लिए आश्रय स्वरूप था ।५-६। उसके मन में एक इच्छा बलवती थी कि मैं अत्यन्त सुरम्य वनों और उपवनों में सम्पन्न और अनेक नगरों से सुशोभित सम्पूर्ण पृथ्वी को देखूँ ।७।

अथागन्तोऽतिथिः कश्चित्कदाचित्तस्यवेश्मनि ।
नानोषधिप्रभावज्ञोमन्त्रविद्याविशारदः ।८
अभ्यर्थिस्तुतेनासौश्रद्धापूतेनचेतसा ।
तस्याचस्वौसदेशांश्चरम्याणिनगराणि च ।९
नदीयनानिशैलांश्चपुण्यान्यातनानिच ।
सततोविस्मयाविष्ठः प्राहतंद्विजसत्तम् ।१०
अनेकदेशदर्शित्वेनातिश्रमसमन्वितः ।
त्वं नातिबृद्धोंवयसानाति वृत्ताण्चयौवनात् ।
कथमल्पेनकालेनपृथिवीमटसिद्विज ।११
मन्त्रौमधिप्रभावेणविप्राप्रतिहतागतिः ।
योंजनानासहस्र हिदिनार्द्धेनब्रजाम्यहम् ।१२
ततः सविप्रस्तंभूयः प्रप्युवाचेदमादरात ।
श्रद्धधानोवरुतस्यब्राह्मणस्वविपश्चितः ।१३
भमप्रमादभगवन्कुरुमन्त्रप्रभावजम् ।
द्रष्टुमेतःममगहींमतीनेच्छाप्रवतते ।१४

एक दिन उसके घर में सब औषधियों के प्रभाव के ज्ञात तथा मंत्र विद्या में विद्वान् एक अतिथि का आगमन हुआ ।८। ब्राह्मण द्वारा श्रद्धा-युक्त मन से प्रश्न करने पर उसके अतिथि ने उसे अनेक देश, रमणीक नगर ।९। वन, नदी, पर्वत और सभी पवित्र स्थानों का वर्णन सुनाया तब उससे यह अरुणास्पद नगर निवासी ब्राह्मण आश्चर्य से कहने लगा ।१०। हे द्विज ! आपने अनेक देशों को देखा हैं, तो भी आप श्रमाकान्त प्रतीत नहीं होते । आप न तो बृद्ध और अधिक तरुण ही है, आपकी आयु भी अधिक प्रतीत नहीं होती, तो आपने इस अल्प अवस्था में ही सब पृथ्वी में कैसे भ्रमण कर लिया ।११। ब्राह्मण ने कहा—हे ब्रह्मण ! मन्त्रों और औषधियों के प्रभाव से मुझे अप्रतिहित गति की प्राप्ति हुई और इस कारण में आधे दिन में सहस्र योजन चल सकता हूं ।१२। मार्कण्डेय जी ने कहा -- तब उस ब्रह्मण विद्वान् अतिथि के बचन में श्रद्धा युक्त

मन होकर उससे सादर निवेदन किया ।१३। हे भगवान् ! आप मुझे भी औषधि प्रदान करने की कृपा करिए, क्योंकि इस पृथ्वी को देखने के लिए मैं अत्यन्त उत्कण्ठित हूँ ।१४।

पादात्सब्राह्मणश्चास्मपन्दलेपमुदारधीः ।
अभिमन्त्रयामासदिशतेनाख्यातांचयत्नतः ।१५
तेनानुलेप्तपादोऽसद्विजोद्विजसत्तम ।
हिमवन्तमगाद्रष्टुं नानाप्रस्रवण न्वितम् ।१६
सहस्र योजनानांहिदिनार्धंतब्रजामियत् ।
आयास्यामीतिसविप्ष्यतदर्द्धं नापरेणहि ।१७
सप्राप्तोहिममवत्पण्ठनातिश्रान्ततनुर्द्विज ।
विचचारततस्तत्रतुहिनाचलभूतले ।१८
पादाक्रन्तेनतस्याथतुहिनेनविलीयता ।
प्रक्षालितः पादलपः परमौषधिसंभवः ।१९
ततोजडरुतिः सोऽयइतश्चेचश्चपर्यटन् ।
ददर्शातिमतोज्ञानिसानूनमभूभृतः ।२०
सिद्ध गन्धवजुष्टानिकिन्नराभिरतानिच ।
क्रीडाबिहाररम्याणिदेवादिनामितस्ततः ।२१

यह सुनकर उस उदार चेता अतिथि ने उस ब्राह्मण के पाँव में औषधि का लेप कर दिया और अभिमन्त्रण पूर्वक उसे दिशादि का ज्ञान दिया ।१५। जब अतिथि ने ब्राह्मण के पाँव में लेप लगा दिया तब वह सोचने लगा कि अब मैं दिन के पूर्वार्द्धमें एक हजार योजन गमन करूँगा तथा अपरार्द्ध में वहाँ से लौट जाऊँगा, ऐसे विचार कर वह अनेक झरनों वाले हिमालय पर्वत को देखने की इच्छा से चला ।१६-१७। यह सहज में ही हिमालय के पुष्ट देश पर पहुँच कर उस हिम भूमि में भ्रमण करने लगा ।१८। वहाँ घूमते-घूमते उसके पाँव में अत्यन्त शीतलताके लगने से औषधियुक्त लेप धुल गया ।१९। और उस ब्राह्मण की जड़ गति हो गई फिर वह इधर-उधर घूमता हुआ वहाँके मनोहर सानुप्रति

का भाग देखने लगा ।२०। उसने देखा सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर, वहाँ विहार कर रहे है तथा पर्वत के किनारे ही देवताओं के क्रीड़ार और विहार करने के लिए अत्यन्त मनोहर स्थान निर्मित हैं ।२१।

दिव्याप्सरोगणशतैराकीर्णान्यवलोकयन् ।
नातृप्यतद्विजश्रेष्ठ प्रोदभुतपलकोमुने ।२२
क्वचित्यस्रवणाद्भ्रष्टजलपातमनोरमम् ।
प्रनत्यच्छिःखकेकाभिरन्यतश्चनिनादितम् ।२३
दात्पूहकोयटिकाद्यैक्वचिच्चातिमनोहरैः ।
पुस्कोकिलकलातैश्चश्रुतिहारिभिरन्वितम् ।२४
प्रफुल्लतगुरुगन्धेमवासितानिलबीजितम् ।
नुदायुक्तसदद्दशेहिमवन्तमहागिरिम् ।२५
दृष्टवाचैतदिजसुतोहितपुन्तयहाचलम् ।
श्वोद्रक्ष्यामीतिसचिन्त्यमकिचक्रेगृहप्रति ।२६
यिभ्रष्टातलपोऽथचिरणजडितक्रतः ।
चिन्तयामासकिमिदमयाऽज्ञानादनुष्टितम् ।२७
यदिप्रलेपोनष्टोवेविलीनोहिमवारिणा ।
शैलोऽतिदुर्गमश्चायंदूरं चाहमिहाहृतः ।२८

उसने उस स्थान को सैकड़ों अप्सराओं सेभरा हुआ देखा, जिससे उसका शरीर पुलकित हो गया और वह अपने मन की किसी प्रकार भी तृप्ति नहीं कर पाया ।२२। उसने देखा कि यह पर्वत कहीं तो पर्वतों से गिरती हुई जलराशि में सुशोभित हैं, कहीं नृत्य करते हुए मयूरों के रथ मे शब्दायमान है तथा कहीं विभिन्न प्रकार के पक्षी मन को लुभाने वाली बोली बोल रहे हैं ।२३। कहीं पपीहा, कोयल, टिटहरी आदि से यह पर्वत व्याप्त में और कहीं कोयल के समान मधुर ध्वनि से प्रतिध्वनित हैं ।२४। कहीं वृक्षों के प्रफुल्लित पुष्पों की गन्ध से सुगन्धित हुई वायु से सुगन्धित हैं । इस प्रकार वह उस पर्वत की शोभा देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ ।२५। फिर वह हिमाचल को देखकर सोचने लगा कि कल प्रातः काल आकर पुनः देखूँगा और फिर उसने चलने आ विचार

किया ।२६। परन्तु पाँवों का लेप छूटने से जड़गति हुआ वह ब्राह्मण सोचने लगा कि मैंने अज्ञान के वशीभूत होकर यह क्या कार्य कर डाला ।२७। जब मेरा पद लेप धुल चुका है, तब यहाँ से जाना अत्यन्त दुष्कर में, क्योंकि यह पर्वत अत्यन्त दुर्गम है और मेरा घर भी बहुत दूर है ।२८

प्रयास्यामिक्रियाहानिमग्निशुश्रूषणदिकम् ।
कथमत्रकरिष्यामिछ्कट महदागतम् ।२९
इदम्परमिदंरम्यमित्यस्मिन्वर पर्वते ।
सक्तदृष्टिरहतृप्तिनयास्तेऽब्दशतैरपि ।३०
किन्नराणांकलालापाः समन्ताछोत्रहारिणाः ।
प्रफुल्लतरुगन्धांश्चघ्राणनत्यन्यन्यमृच्छात ।३१
खस्पर्शस्तणावायुः फलानिरसवन्तिच ।
हरन्तिप्रसगंचेतौमनोज्ञानिसरांसिच ।३२
एवंगतेतुपश्येयदिकचित्तापोनिधम् ।
सममोपतिशेन्मार्गं गमनायगृहप्रति ।३३
स एवंचिन्तयन्विप्रोवभ्रामचहिमाचले ।
भ्रष्टपादौषधिवलोवैक्लवंपरमगतः ।३४
तंददर्शमृमन्तंचमुनिश्रेष्ठवरूशिनी ।
वराष्सारामहाभागामौलेयारूपशालिनी ।३५

अब तो महान् संकट आ गया है, वहाँ अग्नि सेवादि का कार्य करूँगा ? इस प्रकार तो नित्यकर्म भी नष्ट हो गया ।२९। यह भी मनोहर है, यह भी इत्यादि सोचता हुआ पर्वत के देखने की इच्छा को सौ वर्ष भी पूर्ण नहीं कर सकता ।३०। सब ओर से किन्नरों का कर्ण सुख प्रद मधुरालाप सुनाई पड़ रहा है और पुष्पित वृक्षों से आती हुई सुगंधि से नासिका भी तृप्त हो गई है ।३१। यहाँ सुख-स्पर्श पवन चल रहा है, ।३२। अब इस प्रकार कुछ समय-व्यतीत होने पर यहाँ किसी तपोधन का दर्शन करूँ तो उनसे घर जाने का समय पूँछू ।३३। मार्कण्डेयजी ने कहा—पाँव के लगे लेप के धुले जाने से औषधी शक्ति का क्षय हुआ

जानकर अत्यन्त दुःखित हुआ ब्राह्मण चिन्ता पूर्वक हिमालय में घूमने लगा।३४। उस समय उस श्रेष्ठ ब्राह्मण को घूमते हुए वरूथिनी नाम की मौलिया रूपवती अप्सरा ने देखा।३५।

तस्मिन्दृष्टेनतः साभुदूद्विजयर्वेवरूथिनी।
मदनाकृऽहृदयासानुरागाहितक्षणात् ।३६
चिन्तयामासकोन्वेपपमणीयतमाकृतिः।
सभयमेभवेज्जन्मयदिमांनावमन्यते ।३७
अहोऽस्यारूपमाधर्यमहोस्यललितागतिः।
अहोगम्भीरतादृष्टेः कुतोऽस्यसदृशोभुवि ।३८
दृष्टादेवास्तथादैत्याः सिद्ध गन्धर्वपन्नगाः।
कथमेकोऽपिनास्त्यस्यतुल्यरूपोमहात्मनः ।३९
यथाहमस्मिन्य्येषसानुरागस्तथायदि।
भवेदत्रमयाकर्मस्तत्कृतः पुण्यसंचय ।४०
यद्येषमयिमुस्निग्धांदृष्टिमफनिपातयेद्।
कृतपुण्यानमत्तोऽन्यात्रैलोक्येवनितायः ।४१

वह उसे देखते ही वाण से जर्जरित हो उठी और उसके प्रति तुरन्त ही अनुरागवती हो गई।३६। उसने सोचा कि यह सुन्दर आकृति वाला पुरुष कौन हैं ? यदि यह मेरा आदर करे तो मैं कृतकृत्य हो जाऊँ।३७। इसकी कैसी अपूर्व माधुरी है, कैसी मनोहर चाल, इसकी गम्भीर दृष्टि में कैसा चमत्कार है, पृथ्वी पर इसके तुल्य अन्य पुरुष कौन-सा है ?।३८। देवता, दैत्य, सिद्ध, गन्धर्व, पन्नग इन सबको मैंने देखा है, परन्तु उनमें इनके समान रूपवान् कोई भी दिखाई न दिया।३९। मैं इसके प्रति जैसी प्रीतिवती हुई हूं, वैसी ही प्रीति यह भी मेरे प्रति करें तो मेरे पूर्व जन्म के कर्म का ही फल उदय हुआ समझो।४०। यदि यह मुझ पर अपनी स्निग्ध दृष्टि डाले, योग तीनों लोक में मेरे समान और कौन सी नारी होगी।

एवंसचिन्तयन्तोसादिण्ययोषित्स्मरातुरा।
आत्पानंकर्षयमासकमनीयतराकृतिम् ।४२

तांतपृष्टवाद्विजसुतश्चारुरूपांवरूथिनीम् ।
सोमचारसमागम्यवाक्यभेदुवाचह ।४३
क्वात्वंकमलगर्भाकेस्यर्किवाणुतिष्ठसि ।
ब्राह्मणोऽहमिहायायोनगदादरुणारपदात् ।४४
पादलेपोऽत्रमेध्वस्तोविलीनोहिमवारिणा ।
यस्यानुभावादत्राहमागतोमर्दिवेक्षणो ।४५
मौलेयाह महाभागानाम्ना ख्यातवरूथिनी ।
विचरामिसदैवात्ररमणीयमहाचलो ।४६
साहत्त्वद्दर्शनाद्विपकामवैक्लांव्यतागता ।
प्रशाधिलन्मयाकार्य्यंत्वदधोनास्मिसांप्रतम् ।४७
येनोपायेनगच्छ्रेयनिजगेशुधिस्मते ।
तन्ममातक्ष्वकल्याणिहानिर्नोऽखिलकर्मणाम् ।४८
नित्यनैमित्तिकानांतुमहाहानिर्द्विजन्मन ।
भवत्यतस्त्वलेभद्रेमामुद्धरहिमालयात् ।४९

मार्कण्येजी ने कहा–दिव्य वाला वरूथिनी कामातुर हुई इसी प्रकार विचार करती-करती उस ब्राह्मण को अपने अङ्ग प्रत्यङ्ग दिखाने लगी उस रूपवती को इस ब्राह्मण ने जैसे ही देखा वैसे ही विधि पूर्वक पाद्यादि उपचार के सहित उसके पास जाकर बोला ।४३। हे सुन्दरे ! तुम्हारा वर्ण पद्मगर्भ जैसा मनोहर है तुम कौन किसकी पत्नी हो वहाँ क्या कर रही हो ? मैं ब्राह्मण हूं और यहाँ अरुणास्पद नगर से आ पहुँचा हूं ।४४। जिस औषधिमय आदि लेप के द्वारा वहाँ आया था, वह शीतल जल से धुल गया मैं और अब इसमें विलीन हो गया हूं ।४५। वरूथिनी ने कहा–हे महाभाग मेरा नाम वरूथिनी हैं, मैं अप्सरा हूं, इस सुरम्य पर्वत पर सदा भ्रमण करती रहती हूं ।४६। हे ब्रह्मन् ! तुम्हें देखकर मैं काम के वश में हुई हूं मैं आपके अधीन हूं मुझे आज्ञा कीजिय कि आपका क्या प्रिय करूं ? ।४७। ब्राह्मण बोला–हे शुचि–स्मिते ! मैं जिस प्रकार घर लौट सकूं वह उपाय करो, परदेश में रहने से यहाँ मेरे नित्य नैमित्तिक कर्म नष्ट हो रहे हैं ।३८। ब्राह्मण के लिए

इन कर्मों को नष्ट होना अत्यन्त अनिष्टकारक हैं, इसलिए हे भद्रे ! मुझे हिमलय से निकालो ।४६।

प्रशस्तेनप्रवासीब्रह्मणानांकदाचन ।
अपराध्यतिमेभीरुदेशदर्शनकौतुकम् ।५०
सतोमृहेद्विजाग्र यस्यनिष्पत्तिः सर्व कर्मणाम् ।
नित्यनैमित्तिकानांचपारेवप्रवासिनः ।५१
सात्वंकिवहुनोऽत्र नयणाकुरुयशस्विनि ।
यथानस्तङ्गतेसूर्येपश्यामिनिजमालयम् ।५२
मेत्रत्रहिमहाभागमाभूत्सदिवसोयम ।
मांपरुत्यख्ययत्रत्वं निजगृहसुपैष्यसि ।५३
अहोपम्यतपां स्त्रगोनयतोद्विजनन्दन ।
अतोवयपरित्यक्ष्यतिष्ठातोऽत्रसुरालयम ।५४
सत्व सहमयाभीष्टकान्लेऽनुहिमाचले ।
रममाणेममर्त्यानावान्धवानांस्मरित्यसि ।५५
स्रजोवस्त्राण्यलंकारान्भक्ष्यभोग्यानुलेपनम् ।
दास्याम्थत्वतणाहृन्सेस्मरेणवशगामृत। ।५६

ब्राह्मण का परदेश निवास अनुचित ही हैं, मैं देशों को देखने की इच्छा से ही यहाँ आया था, मैंने कभी कोई अपराध नहीं किया है ।५०। घर में रहते हुए नित्य नैमित्तक कर्म सहज ही पूर्ण हो जाते है, और परदेश में पहुँचने पर उन कर्मो का क्षय होता है ।५१। हे यशस्विनी ! अधिक क्या कहूँ, सूर्यास्त से पूर्व ही अपने घर पहुँच सकूँ वैसा करो ।४२। वरूथिनी ने कहा-हे महाभाग ! आप जिस दिन मुझे त्याग कर अपने घर को लौटें मेरे लिए वह दिन ही न आवें ।५३। इस स्थान की अपेक्षा तो स्वर्ग मी रमणीक नहीं है, इसलिए मैं स्वर्ग का त्याग करके इस स्थान में रहुँगी ५४। आप इस सुरम्य हिमालय से मेरे साथ बिहार करेंगे तब आपको बांधवों की याद नहीं आयेगी ।५५। यहाँ मैं माया वस्त्र अहंकार, भक्ष्य,भोज्य,अनुलेपनने आदि तुम्हारेसमक्ष उपस्थित

करूँग क्योंकि मैं काम से पराजित होकर ही तुम्हारे अधीन हो गई हूं ।५६।

वीणावेणुस्वनंगीतंकिन्नराणांमनोरमम् ।
अङ्गाह्लादकरोवायुरूष्णान्नमुदकंशुचिः ।५७
मनोभिलषिताशय्यासुगन्धमनु लपनम् ।
इहासतोमहाभागगृहेकितेनिजेऽभिकम् ।५८
तहासतोनैवजराकदाचित्तभविष्यादि ।
त्रिदशानामियं भूमियौवनोपचयप्रदा ।५९
इत्युक्त्वासानुरागासासहसाकेमलेक्षणा ।
आलियिगंप्रसीदेतिवदन्तीकलमुलमनाहः ।६०
सामांस्त्राक्षीर्व्रजान्यत्रदुष्टयेःसदृशस्तव ।
मयान्यथायाचितात्वमन्यथैवाभ्युवेषिमाम् ।६१
सायंप्रातुर्हुतंहव्य लोकान्यच्छतिशाश्वतान् ।
त्रैलोक्यमेतमखिलंगूढेव्येप्रतिष्ठितः ।६२
तमुपायं ससाचक्ष्वयेनयामिस्वमालयम् ।
किंतेनाहंप्रियाविप्ररमणीतोनर्किगिरिः ।
गन्धर्वान्किन्नरादीश्चरयक्त्याभिष्टोहिकस्तव ।६३

इस स्थान में रहने से वीणा और वेणु का शब्द किन्नरों का सुमधुर संगीत प्रसन्नता देने वाली समीर, उष्ण भोजन और शीतल जल ।५७।मनचाही शय्या, सुगन्धित अनुलेप तुम्हें उपलब्ध होंगे, इससे अधिक तुम्हारे गृहमें और क्या होगा ? ।५८। यहाँ रहकर तुम कभी वृद्धावस्था को प्राप्त नहीं होंगे, क्योंकि यह देव भूमि यौवनके बढ़ाने,वाली है ।५९। इतना कहकर पद्मनयनी वरूथिनी व्याकुलता पूर्वक 'प्रसन्न होओ' कहती हुई सहसा ब्राह्मण से आलिंगित हुई ।६०। तब ब्राह्मण बोला—अरी दुष्टे ! यह स्पर्श न कर, तू अपने योग्य के ही निकट जा, तू मेरी प्रार्थना के कारण ऐसा विपरीत विचार एवं चेष्टा कर रही है ।६१। प्रातः सायं होम करने से सभी शाश्वत लोकों की प्राप्ति होती है यह तीनों लोक होम के प्रभाव से ही प्रतिष्ठित हैं ।६२। इसलिए उसके

निर्वाहार्थ में अपने घर जिस प्रकार पहुँच सकूँगा, वही मुझे शीघ्र बता, बरूथिनी ने कहा-हे ब्रह्मन् ! तुम मुझे देखकर प्रसन्न क्यों नहीं होते ? क्या यह हिमालय मनोहर नही है ? गन्धर्व, किन्नर आदि के अतिरिक्त तुम्हें और किसकी इच्छा है ? ।६३।

निजमालयमप्यस्माद्भवान्यास्मत्यसंशयम् ।
स्वल्कालमयासर्द्ध भुंक्ष्वभोगासुदुर्लभान् ।६४
अभीष्टागार्हत्याद्याः सततेसन्त्रयोऽग्नयः ।
रम्यममाग्नशरणदेवीविष्टरिणीप्रिय ।६५
अष्टावात्मगुणायेहितेषामादौदयाद्विजः ।
तांकरोपिकथं न त्वंमयिसद्धर्मपालकः ।६६
त्वद्विमुक्तान्नजीवामितथाप्रीतिमतीत्वयि ।
नैतद्वदाम्यहमिथ्याप्रसीदकुलनन्दन ।६७
यदिप्रीतिमतीसत्यंनोपचारादप्रवीषिमाम् ।
तदुपयंसमाचक्ष्वयेनयामिस्वमालयम् ।६८
निजमालमयप्तस्माद्भवान्यास्यत्यसंशयम् ।
स्वल्पकालमयसार्द्धं भुंक्ष्वभोगान्सुदुर्लभान् ।६९
गभोगार्थायविप्राणांशस्यतेरिवरूथिनी ।
इहक्लेशायदिप्राणांचेष्ट प्रेत्यफलप्रदा ।७०

तुम अपने घर अवश्य ही जा सकोगे परन्तु इस समय तो मेरे साथ इस दुर्लभ सुख का भोग करो ।६४। ब्राह्मण बोला—गार्हपत्य, आवहनीय और दक्षिणाग्नि यह तीनों अग्निया ही मेरी इच्छित हैं, अग्नि गृह ही मेरे लिए सुरम्य स्थाक है तथा विष्टरिणी वेदी ही मेरी प्रिया है ।६५। वरूथिनी ने कहा—आठ प्रकार के जो आमगुण कहे गए है, उनमें दया ही प्रमुख गुण है, फिर भी तुम मेरे प्रति प्रीति रूप दया क्यों नहीं करते ? ६६। तुम्हारे प्रति मैं जैसी प्रीतिमति हुई हूँ उस कारण तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकती, मैं असत्य नहीं कहती तुम मुझ पर प्रसन्न होओ ।६७। ब्राह्मण बोला यदि तू मुझ पर सत्य ही अनुरागमयी हुई है, और मुझसे तूने सत्य बात कही है तो मैं जिस प्रकार घर

पहुंच सकूँ वही मुझे बता ।६८। वरूथिनी ने कहा—तुम अवश्य ही यहाँ से अपने घर जा सकोगे, परन्तु अभी कुछ समय के लिए मेरे साथ दुर्लभ सुख भोग करो ।६९। ब्राह्मण बोला—हे वरूथिनी ! ब्राह्मण को सुख भोग की आज्ञा शास्त्र नहीं देता क्योंकि स्त्री की चेष्टा से ब्राह्मण इहलोक में क्लेश और परलोक में भी विपरीत फल पाता है ।७०।

स-ाणध्रियमाणायाममकृत्वापरश्नते ।
पुण्यस्यैवफलंभाविभोगाश्चान्यत्रयजन्मनि ।७१
एवत्वद्धमप्यश्नत्वोपच्यकारणम् ।
प्रत्याख्यानादहमृत्युं त्वंपापमवाप्स्यसि ।७२
परिस्त्रयंनाभिलषदित्यूचुर्गु रवोमम ।
तेनत्वांनाभिवांछामिकामविशुलपण्यवा ।७३
इत्युक्त्वासमहाभागः स्पृष्ट्वापः प्रयतः शुचिः ।
प्राहेदंप्रणिपत्याग्निगार्हपत्यमुपांशना ।७४
भगवन्गार्हपत्याग्नेयोनिस्त्वसर्वकर्मणाम् ।
त्वत्तआहवनीयोऽग्निर्दक्षिणाग्निश्चानान्यतः ।७५
युष्मदाप्यायनाद्देवावृष्टिसस्यादिहेतवः ।
भवन्तिसस्यादखिलजगद्भवतिनान्यतः ।७६
एवंदत्तोभवत्येतद्यनसत्येनवैजगत् ।
तथाहमद्यस्वगेहपश्येयसतिभास्करे ।७७
तथावैवैदिककर्मस्वकाले नोज्झितमया ।
तेसप्येनपश्येयगृहस्थोऽद्यदिवालरम् ।७८
यथ चनपरद्रव्येपरदारेचमेमतिः ।
कदाचित्सालिषाभूत्तथैतत्सिद्धिमेतुमे ।७९

वरूथिनी ने कहा—मैं मृतक के समान हो रही हूँ मेरी प्राणरक्षा करने के कारण परलोक में तुम्हें उसी के समान पुण्यफल मिलेगा और अपर जन्म में तुम्हें उसी के अनेक भोगों को प्राप्ति होगी ।७१। परलोक में सुख और जन्मान्तर में सुख भोग यह दोनों ही फल लाभदायक हैं,

परन्तु यदि मुझे निराश करोगे तो मेरी मृत्यु के कारण पाप के भागी होंगे ।७१। ब्राह्मण बोलो—मेरे गुरु का उपदेश है कि परस्त्री में नम न लगाना, इसलिए तू चाहे रुदन कर या प्राण त्याग मैं तुझे नहीं चाहता ।७३। मार्कण्डेयजी ने कहा—वरूथिनी के प्रति ऐसा कहकर ब्राह्मण ने आचमन द्वारा शुद्ध होकर गार्हपत्य अग्नि को प्रणाम किया और उपांशु जप द्वारा निवेदन करने लगा ।७४। हे गार्हपत्य अग्ने ! तुम सभी कर्मों के बीज स्वरूप हो, क्योंकि आह्वानीय और दक्षिणाग्नि की उत्पत्ति तुम से ही हुई है ।४५। तुम प्रसन्न होते सभी देवता वर्षा द्वारा शस्य प्रदान करते हैं और उस शस्य से ही जगत की स्थिति है, वह अन्य प्रकार से स्थित नहीं रह सकता ।७६। जिस सत्य के द्वारा यह विश्व तुममें प्रतिष्ठित हैं, मैं भी उसी सत्य से सुप्रसिद्धसे पूर्व ही अपने घरको देखूँगा ।७७। जिस सत्य के द्वारा सब वैदिक कर्म यथोचित समय में सम्पन्न हो जाते हैं, उसी सत्य के मैं भी घर में निवास करके सूर्य के दर्शन करूँ ।७८। जिस सत्य से मेरी मति परद्रव्य या परनारी में नहीं लगीं हैं उसी सत्य से मेरी मति इस विषयमें भी सिद्धिको प्राप्त हो ।७९।

५४—कलिवरूथिनी समागम

एवपुवदतस्तस्वगिजपुत्रस्यभावकः ।
गार्हपत्यःशरीरेतुसन्निधानमथारीत् ।१
तेनचाधिष्ठितः सोऽथप्रभामण्डलमध्यगः ।
व्यदीपयततंगेशमूर्तिमानानिवह्व्चवाट् ।२
तस्यास्तुसुतरांतत्रताद्दग्रूपेद्विजन्मनि ।
अनुरागोऽभवद्विप्र पश्यन्त्यादेवयीषितः ।३
ततःसोऽसिष्ठितस्तेनहव्यावाहेनतत्क्षणात् ।
यथ पूर्वंतथागन्तुप्रवृत्तोद्विजनन्दनः ।४
जगामचत्वरायुक्तस्तयासास्रं निरीक्षितः ।
आदृष्टिपातात्तन्वंगयाविश्वासोत्कम्पिकन्धरम् ।५
ततः क्षणेनैवतदानिजगेहमवाप्यसः ।
यथाप्रोक्तं द्विजश्रेष्ठश्च कारसकलाः क्रियाः ।६

अथसाचारुसर्वाङ्गीतत्रासक्तात्ममानसा ।
निश्वासपरमानिन्येढिनशेषतथानिशाम् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा-इस प्रकार निवेदन करते हुए ब्राह्मण पुत्र में गार्हपत्याग्नि अधिष्ठित हुई ।१। उनकी प्रभा के मध्य में स्थित होकर वह ब्राह्मण साक्षात् अग्नि के समान तेजस्वी होकर उस स्थान को प्रकाशित करने लगा ।२। हे ब्रह्मन् ! वरूथिनी ने जब उस ब्राह्मण का ऐसा स्वरूप देखा तब वह अत्यन्त अनुराग से और भी मोह युक्त हुई । ।३। जब उस ब्राह्मण ने अग्नि से अधिष्ठान किया तब वह पहिले के समान शक्ति युक्त होकर गमन में प्रवृत्त हुआ ।४। उस समय वरूथनि खड़ी देख रही थी कि तभी वह ब्राह्मण द्रुतगति से चल दिया, जब वह अदृश्य हो गया, तब वरूथिनी दीर्घ श्वांस लेती हुई कांपने लगी ।५। यह श्रेष्ठब्राह्मण क्षण भर में ही अपने घर पहुँच गया और वहाँ अपनी नित्य नैमित्तिक क्रिया के करने में लगा ।६। इधर उस सर्वांग सुन्दरी वरूथिनी ने उस ब्राह्मण में अनुरागवती रहकर दीर्घ श्वांस छोड़ते हुए उस दिन का शेष भाग एवं रात्रिकाल व्यतीत किया ।७।

निश्वसन्त्यनवद्यांकोहारेतिरुदतीमुहुः ।
मन्दभाग्येतिचात्माननिनिन्दमदिरेक्षणा ।८
नविहारेनचाहारेरमणीयेनवावने ।
नकन्दरेषरम्येषुसावबधतदारतिम् ।९
चकाररममाणेचचक्रवाकतुगेस्पृहाम् ।
मुक्तातेनवरारोहानिन्दनिजयोवनम् ।१०
क्वागताहमिमंशैलदुष्टदेववलात्कृता ।
क्वचप्राप्तः समेदृष्टेर्गोचरं तादृशीनरः ।११
यदद्यसमहाभागोनमेसंगमुपैष्यति ।
तत्कामाग्निरवश्यमांक्षपयिष्यतिदुःसहः ।१२
रमणीयमभूद्यत्तत्पुस्कोकिलनिनादियम् ।
तेनहीनतदेवेतददतीवाद्यमामालम् ।१३

इत्थंसामदानाविष्टाजगाममुनिसत्तमम् ।
ववृद्धे चतदारागस्तस्यास्तस्मिन्प्रतिक्षणम् ।१४

वह अप्सरा घोर रुदन करती हुई अपनी निन्दा करने लगी । आहार, विहार, सुरभ्य वन, मनोहर गिरि कन्दरा किसी से भी उनकी तृप्ति न हो रही थी । चक्रवाकों का बिहार देखकर रतिकर्म में उसे स्पृहा हुई, यह ब्राह्मण द्वारा त्यागी जाने के कारण अपनी युवावस्था को कोसने लगी ।७।१०। मैं दुष्ट दैव के वशसेही इस पर्वतमें आई थी अन्यथा वह सर्वांग सुन्दर पुरुष जो मुझे दिखाई दिया था उसका देखा जाना क्या कभी सम्भव था ? मैं उसे क्या जानती थी ? ।११। यदि वह महा-भाग इस समय मुझे न मिलेगा, तो दुःसह कामाग्नि में दग्ध होकर मुझे अपने जीवन का परित्याग करना पड़ेग ।१२। जो कोकिला का शब्द मेरे कानों को मनोरंजक प्रतीत होत था, वह अग्नि के समान हो मुझे भस्म कर रहा है ।१३। मार्कण्डेयजी ने कहा-इस प्रकार कामासक्त हुई वरूथिनी ने उस मुनिश्रेष्ठ को मन से देखा तो उसका अनुराग क्षण-क्षण में उसके प्रति वृद्धि को प्राप्त होता रहा ।१४।

कलिर्नाम्नातुगन्धर्वः सानुरागोनिराकृतः ।
तयापूर्वमभूत्साऽथतदवास्थांददर्शताम् ।१५
सचिन्तयामासतदाकिन्वेषागजगामिनी ।
निश्वासपवनम्लानागिरावत्रवरूथिनी ।१६
मुनिशापक्षताकिनुकेनचित्किंविमानिता ।
वाष्पवारिपरिक्लिप्नमियधत्ते यतोमुखम् ।१७
ततः सदध्यौसुचि रतमर्थं कौतुकात्कलिः ।
ज्ञातवांश्चप्रभावेणसमाधेः मयथातथम् ।१८
पुनःसचिन्तयामासतद्विज्ञायमुनेः कलिः ।
ममोपपादितंसाधुभाग्यैरयेत्पुराकृतैः ।१९
मयैषासानुरागेणवहुशः प्रार्थितासती ।
निराकृतवतीसेयमक्राप्याभविष्यसि ।२०

मानुषेसानुरागेयंत्रतद्रूपधारिणि ।
रंस्यतेमय्यसन्दिग्धंकिकाले नकरोमितत् ।२१

इस अप्सरा के प्रति पहिले एक कक्ति नामक गन्धर्व आसक्त था, परन्तु उसने इनका निरादर किया था, उसने इस अप्सरा को ऐसी दशा में देखा तो ।१५। सोचने लगा कि यह गजगामिनी इस पर्वत में दीर्घ श्वांस छोड़ती हुई प्रतिक्षण मलीन होती जा रही है, क्या वह वरूथिनी ही है ? ।१३। वह किसी मुनि के शाप से ग्रस्त हुई अथवा किसी ने इसका निरादर किया है क्योंकि इसके मुख पर अश्रु बिन्दु दिखाई दे रहे है ।१७। फिर इस गन्धर्व ने कुतूहल पूर्वक बहुत समय तक ध्यान किया और उसके द्वारा सब वृत्तांत हमें ज्ञात हो गया है ।८। वृत्तांत ज्ञात होने पर इसने सोचा कि मेरे पूर्वकृत पुण्य के फलस्वरूप मेरी यह इच्छा पूर्ण हुई है ।१६। जिसने मेरी अनुरागमयी बिनय को ठुकरा दिया था, यह यही वरूथिनी अब मुझे सहज से प्राप्त हो जायगी ।२०। अब यह जिस मनुष्य के प्रति प्रीतिमती हुई है, मैं उसी मुनि का रूप धारण करूँ तो यह मुझसे भी प्रीति करेगी इसीलिए अब देर क्यों करें ।२१।

आत्मप्रभावेणतस्तस्यरूपद्विजन्मनः ।
कृत्त्रचचारयत्रा तेनिषण्णासाबरूथिनी ।२२
सातंदृष्ट्वावरारोहाकिंचिदुत्फुल्लोचना ।
समेत्यप्राहतन्वंगीप्रसीदेतिपुनः ।२३
त्वयात्यक्तानसत्देहः परित्यक्ष्यामिजीवितम् ।
तत्राधर्मः कष्टतरः क्रियालोपोभविष्यति ।२४
मयासमेत्यरम्येऽस्मिन्महात्मन्वकन्दरे ।
मत्परित्राणजंगर्ध मवश्यप्रतिपत्स्यसे ।२५
आयुषः सावशेषमेनूनमस्तिमहामते ।
निवृत्तस्नेननूनहिहृदयाह्लारकः ।२६

मार्कण्डेयजी ने कहा --इसके पश्चात् उसने आत्म प्रभाव से उस ब्राह्मण का रूप धारण किया और जहाँ बरूथिनी बैठी थी, वहाँ जाकर पूछने लगा ।२२। वरूथिनी ने जैसे ही उस मुनि वेशधारी कलि को देखा तभी आल्हादयुक्त नेत्रों से उसे देखा और निकट पहुँचकर उसने वारम्वार प्रसन्न होओ कहने लगी ।२३। और बोली कि यदि तुम मेरा त्याग करोगे तो मैं अपना जीवन समाप्त कर लूँगी जिससे अधर्म होगा और तुम्हारी सम्पूर्ण क्रिया का लोप हो जायगा ।२४। यदि इस हिमालयकी सुरम्य कन्दरा में मेरे साथ बिहार करोगे तो उससे मेरी रक्षा होगी और उसका धर्मफल तुम्हें प्राप्त होगा ।२५। हे महामते ! मेरी आयु अभीतक शेष नहीं हुई है इसलिए तुम आनन्दकर सकतेहो।२६

किं रोमिक्रियाहानिर्भवत्यत्रसतोमम ।
त्वमप्येवंविधावक्यद्रवोषितुनुमध्ये ।२७
तदहं संकटप्राप्तोवद्ब्रवीमिकरोषितम् ।
यदि यात्संगमोमेद्यभवत्यासहनान्यथा ।२८
प्रसीदयद्ब्रवीपित्वतत्करोमिनतेमृषा ।
ब्रवीम्येतदनाशंक यद्यत्कार्यमयाधुना ।२९
नाद्यसंभोगसमयेद्रष्टव्योहत्वयावने ।
निमालिताक्ष्याः संसर्गस्तवसुभ्रुमयासह ।३०
एवंभवतुमद्रं तेयथेच्छसितथास्तुतत् ।
मयासर्वप्रकारहिवशेस्थेयतवाधुना ।३१

कलि बोला-हे सुन्दरी ! समझ में नहीं आता कि क्या करूँ ? यहां रहने से मेरे कर्म का लोप हो जायगा, परन्तु तुम भी इस प्रकार से अनुरोध कर रही हो ।२०। ऐसे संकटमें पड़कर ही मुझे तुम्हारी बातों से अब सहमत होना पड़ा है, परन्तु जो मैं कहता हूं, यह बात तुम्हें स्वीकार हो तभी तुम्हारे साथ संयोग हो सकता है अन्यथा नहीं हो सकता ।२८। बरूथिनी ने कहा—आप कहो, जो कहोगे वही करूँगी इसमें असत्य नहीं है जो कहते हो वह अभी करूँगी ।२९। कलि बोला

तुम बिहार समय मुख न देखना ।३०। बरूथिनी ने कहा—मैं सब प्रकार से तुम्हारे अधीन हूँ ।३१।

५५—स्वरोचि का जन्म और विवाह

ततः सहतयासोथररामगिरिसानुषु ।
फुल्लकाननह्यद्येषुमनोज्ञेषुसरेषुच ।१
कन्दरेषु चरम्येषु चरम्येषु निम्नगापुलिनेषु च ।
मनोज्ञेषु तथान्येय देशेषमुदितोद्विज ।
वन्हिनाधिष्टितस्यासीदद्रूपंपस्यतेजसा ।
अचिन्तयद्भोगकालेनिमीलितविलोचना ।३
ततः कालेनसागर्भमवापमुनिसत्तमः ।
गन्धर्भवीर्य्यतोरूपंचिन्तनाच्चद्विजमनः ।४
तांगर्भधारिणांसोऽथसान्त्वयित्वावरूथिनीम् ।
विप्ररूपरोयातस्तयाप्रीत्याविसर्जितः ।५
जज्ञेसबालोद्युतिपाञ्जलन्निवविभावसुः ।
स्वरोचिभिर्यथासूर्य्योभासन्यसकलादिशाः ।६
स्वरोचिमियंतोभातिभास्त्रानिवसबालकः ।
ततः स्वरोचिहित्येवनाम्नाख्यातोवभूवसः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—पार्वती के कंगूरे, सुरम्य एवं पुष्पित बन तथा मनोज्ञ सरोवर ।१। रमणीक कन्दरा, नदी तट तथा अन्याय स्थानों में वह प्रसन्नचित्त से वरूथिनी के साथ विवाह करने लगा ।२। अग्नि के अधिष्ठान से उस ब्राह्मण का जो तेजोमय रूप हो गया था, उसी रूप का चिन्तन वरूथिनी समागम काल में करने लगी ।३। फिर उस अप्सरा ने उस गन्धर्व के औरस से यथा समय गर्भ धारण किया। समागम काल में ब्राह्मण के तेजोमय स्वरूप का चिन्तन करने के कारण उसी ब्राह्मण के समान उसके पुत्र उत्पन्न हुआ ।४। ब्राह्मण रूपधारी वह गन्धर्व वरूथिनी को समझाकर वहाँ से चला गया ।५। जिस प्रकार सूर्य

की किरणों से सभी दिशाएँ प्रकाशित होती हैं वैसे ही शरीर के तेज में चारो दिशाओं को प्रकाशित करते हुए बालक ने समय पाकर जन्म लिया ।६। अपने शरीर की प्रभा से भास्कर जैसी दीप्ति करने के करण उस बालक का नाम स्वरोचि हुआ ।७।

ववृधेवमहाभागोवयसानुदिनतथा ।
गणोधैश्चययाब्रालः कलभिः शशलाञ्छनः ।८
सजग्राहधनुर्वेदवेदांश्चै वयथाक्रमम् ।
विद्वाश्चैवमहाभागस्तदायौवनगोचरः ।६
मन्दराद्रौकदाचिन्सविबरश्चारुकेष्ठितः ।
मन्दराद्रौकदाचिन्सविबरश्चारुचेष्टिः ।
ददर्शकांतदाकन्यांगिरिप्रस्थेभयातुराम ।१०
त्रायस्वेतिनी रीक्ष्यैनंसातदावाक्यप्रवीत् ।
माभेषीरितिसप्राहभयविप्लुतलोचनाम् ।११
किमेददिमितेनोक्ते वीरवाक्येमहात्मना ।
तत्साकथयामा सश्वासाक्षेप्लुताक्षरम् ।१२
अहमिन्दीवराख्यस्यसुताविद्याधरस्यवै ।
नाम्नामनोरमाजा तासुतायांमरुन्धवनः ।१३
मन्दारविद्याधरजासखीममविभावरी ।
कशावतीचाप्यपरासुतापारस्तवैमुनेः ।१४

हे महाभाग ! जैसे शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कला प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होती है, वैसे ही उस बालक के गुणों में प्रतिदिन वृद्धि होने लगी । इन स्वरोचि ने चारों वेद, सभी शास्त्र और धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करके युवावस्था में प्रवेश किया ।६। उस सुन्दर मति वाले स्वरोचि को किसी एक समय मंदराचल पर भ्रमण करते हुए एक भयातुरा कन्या दिखाई दी ।१०। उसने उसे देखकर 'रक्षा करो' कहा और इसने भीं कन्या को भयातुरा देखकर भय नहीं कहकर आश्वस्त किया ।११। फिर उसने विरोचित शब्दोंमें तुम्हें क्या भय हुआ है ? यह पूँछा इस पर श्वास छोड़ती हुई उस कन्याने अस्फुट शब्दोंमे उत्तर दिया।१२

वह बोली—मैं इन्दीवर नामक विद्याधर की मरुन्धवा सुता के गर्भ से उत्पन्न पुत्री हूं, मेरा नाम मनोरमा है ।१३। मेरी दो सखी विभावरी और कलावती नाम की हैं, इनमें प्रथम मन्दार विद्याधर की द्वितीय पार मुनि की कन्या है ।१४।

ताभ्यांसहमयायातंकैलाशतटमुत्तमम् ।
तत्रदृष्टोमुनि: कश्चित्तपसातिकृशाकृति: ।१५
क्षुत्माकण्ठोनिस्तेजादूरपाताक्षितारक: ।
मयावहसति: क्रुद्धसतदामांशशापह ।१६
क्षमाक्षामस्वर: किंचित्कंपिताधरपल्लव: ।
त्वयावहसितोयस्मादनार्य्यदुष्टातापसि ।१७
तस्मात्वाभचिरेणैवराक्षसोभिभविष्यति ।
दत्तेशातेमत्सखीभ्यांसतुनिर्भर्त्सितोमुनि ।१८
धिवनेब्राह्मण्यमक्षन्त्याहततेनिखलंतप: ।
अमर्षणैर्धर्सितऽपसानातिकर्शित ।१९
क्षान्त्यांस्पदवंब्राह्मण्यंक्रोधसंयमनंतप: ।
एतच्छ्रुत्वाददोशापतयोरप्यमितद्युति: ।२०
तयोरन्यथैवतज्जातंदथोक्ततनतत्क्षणात् ।२१

एक दिन मैं उनके साथ कैलाश के तट पर गई थी और वहाँ हमें एक मुनि दिखाई दिए थे, उनका अंग तपस्या के कष्टों से अत्यन्त कृश हो रहा था ।१५। उनका कंठ भूख के कारण क्षीण हो रहा था, नेत्र तेज रहित हो गए थे, मैंने उन्हें देखकर उनकी हँसी उड़ाई, इससे क्रोधित होकर उन्होंने कुछ कम्पित से होकर मुझे शाप दे दिया—अरी अनार्यें ! दुष्टे ! तूने मुझ तपस्वी की हँसी उड़ाई है ।१६-१७। इसलिए तू राक्षस से पराभूत होगी, इस प्रकार मुनि द्वारा शाप दिया सुनकर मेरीं सखियों ने उसकी भर्त्सना की ।१८। तुम्हारे जैसे क्षमाहीन ब्राह्मण को धिक्कार है और सम्पूर्ण तप निरर्थक है, तुम्हारा शरीर तपके कारण

दुबला हुआ प्रतीत नहीं होता क्रोध से ही हुआ होगा ।१९। ब्राह्मण तो क्षमा के आश्रय रूप होते हैं और क्रोध पर नियन्त्रण ही उनका तप है। तुम तप में परिपक्व नहीं होपाए, क्योंकि क्रोध ने तुम्हें क्षीण कर दिया है। उनकी ऐसी बात सुनकर उस मुनि ने उन्हें भी शाप दे दिया ।२०। एक से कहा 'तू सर्वांग में कुष्ट से पीड़ित होगी दूसरी से कहा-'तू क्षय रोग से पीड़ित होगी' मुनि द्वारा शाप देते ही वे रोग उत्पन्न होगई ।२१

ममाष्येवंमहद्रुक्षः समुपैतिपदानुगम् ।
नश्रृणोषिमहानादंतस्यादूरेऽपिगर्जतः ।२२
तृतीयमद्यादिवसंयन्मेपृष्ठनमुंचति ।
अस्त्रग्रामस्यहृदज्ञादज्ञाहमद्यते ।२३
तंप्रयच्छामिमांरक्षरक्षसोऽस्मान्महामते ।
प्रादात्स्दायम्भुवस्त्रयंरुद्रः साक्षात् पिनाकधृक् ।२४
स्वायम्भुवोवसिष्ठायसिद्धवर्यायदत्तवान् ।
तेनापिदत्तम मातुः पित्रे चित्रायुधायवै ।२५
प्रादादौद्वाहिकंसोऽपितत्पित्रं श्वशुपःस्वयम् ।
मयापिक्षितंवीरसकाशाद्वालयापितुः ।२६
हृदयसकलास्त्रथामशेषरिपुनाशनम् ।
तदिदंगृह्यतांशीघ्रमशेशास्त्रपरायणम् ।२७
ततोजहिदुरात्मानमेनंराक्षसमागतम् ।२८

तभी एक महाराक्षस प्रकट होकर मेरे पीछे भी दौड़ पड़ा, वह तीन दिन से मेरे पीछे लगा हे, देखो समीप में ही गरज रहा है, क्या आप उस शब्द को नहीं सुन रहे हैं ? मैं अब सभी अस्त्रों का सार रूप यह प्रख्यात अस्त्र ।२२। आपको दे रही हूँ, इसी से आप मेरी रक्षा करें पुराकाल में यह अस्त्र स्वायम्भुव मनु को स्वयं रुद्र ने प्रदान किया था ।२४। यह परमोत्तम सिद्ध अस्त्र स्वायम्भुव ने वसष्ठि को प्रदान किया, और वसष्ठि से इसे मेरे नाना चित्रायुध ने प्राप्त किया ।२५। और उन्होने विवाह के दहेज में मेरे पिता को दिया, सब अस्त्रोंके सारभूत इस

अस्त्र की शिक्षा बाल्यावस्था में अपने पिता से प्राप्त की थी । २६ । यह अस्त्र सभी अस्त्रों का हृदय एवं शत्रुनाशक में, उसे शीघ्र ग्रहण करिए इसके द्वारा सभी अस्त्रों से होने वाले कार्य सिद्ध हो जाते हैं ।२७। इसके ग्रहण पूर्वक इस राक्षस का बध करिए ।२८।

तथे युक्ते ततस्तेनवाय्युपरपृश्यतस्यतत् ।
अस्त्राणाहृदयप्रादात्सरहस्यसिवर्तनम् ।२९
एतस्मिन्तन्तरेरक्षतत्तादाभोषणाकृति ।
नदंमानमहानादमाजगामत्वरान्वित[illegible] ।३०
मयाभिभूताकित्वामुपेहिद्रुतमेहिमे ।
भक्षार्यकिंचिरेणेव्रूवाणतदतशंसए ।३१
स्वरोचिश्चिन्तर्यामासदृष्ट्वातसमुपागतम् ।
गृह्याष्येषवच: सत्यतस्यास्त्विवतिमहामुने: ।३२
जग्राहसमुतेत्यैनांत्वरयासोऽपिराक्षस: ।
त्राहित्राहीतिकरणंविलपन्तीसुमध्यमाम् ।३३
तत: स्वरोचि: संक्रुद्धश्चण्डास्त्रमतिभैरवम् ।
दृष्टवानिवेश्यदृक्षोददर्शनिमितेक्षण: ।३५
तदाभिभूत सतदातामुत्सृज्यनिशाचर: ।
प्रसीदशाम्यतामस्त्रश्रूयताचेत्यभाषत ।३५

मार्कण्डेयजी ने कहा—जब स्वरोचि ने अस्त्र ग्रहण करना स्वीकार किया, तब उस मनोरमा ने वह अस्त्र उनको आचमन करके रहस्त तथा निवर्तन मन्त्र के सहित प्रदान किया ।२९। उस स्वरोचि से उस भयंकर आकार वाले राक्षस को गर्जन पूर्वक आता हुआ देखा ।३०। उसने आते ही कहा—मेरे आक्रमण से कोई रक्षा को प्राप्त नहीं हो सकता, अब देर मत करो, मैं तुम्हारा शीघ्र ही भोजन करना चाहता हूं ।३१ उसे वहाँ देखकर स्वरोचि ने विचार किया कि यदि यह राक्षस कन्या को पकड़ लेगा तो ही उस महामुनि का शाप सत्य हो सकता है। स्वरोचि के ऐसा विचार करते ही राक्षस ने तुरन्त उस विद्या धरी

को पकड़ लिया, इस पर वह त्राहि-त्राहि करती हुई रोने लगी।३३। तव स्वरीचि ने क्रोध में मरकर उस प्रचण्डास्त्र को धनुष पर चढ़ाया और उस राक्षस की ओर देखा।३४। उन्हें इस प्रकार उद्यत देखकर राक्षस-भय-विह्वल हो गया और कन्या को छोड़कर स्वरीचि से बोला आप अस्त्र का परित्याग करिये, मुझ पर प्रसन्न होकर मेरा वृत्तान्त सुनिए, उसे मैं आपसे कहता हूं।३५।

मोक्षित ऽहंत्वयाशापादतिघोरान्महाद्यूते।
प्रदत्तादतितीव्रेणब्रह्ममित्रणधीमता।३६
उपकारोनमेत्वत्तो महाभागाधिकोपर:।
येनाहसुमहाकष्टान्महाशापाद्विमोक्षित:।३७
ब्रह्ममित्रेणमुनिनाकिन्निमित्तं महात्मना।
शप्तस्त्वकीदृशश्चैवशापोदत्तोऽभवत्पुरा।३०
ब्रह्ममित्रोऽष्टधातिन्नमायर्वेदमधींतवान्।
त्रयोदशाधिकारं चप्रगृह्याथवणोद्विज:।३६
अहचेन्दीवराक्षेतिख्यातोऽस्याजनकोऽभबम्।
विद्याधरपते: पुत्रोनलनाभस्यखांगिन।४०
भयाचयाचित: पूर्वंब्रह्ममित्र ऽभवन्मुनि:।
आयुर्वेदमशेषमेभगवन्दातुमर्हसि।४१
यदातुबहुशोवीरप्रश्रयावनतस्यमे।
नप्रादाद्याचितोविद्यामयुर्वेदात्मिकांममम्।४२

हे तेजस्विन्! अत्यन्त तेज सम्पन्न ब्रह्ममित्र मुनि ने मुझे एक बार घोर शाप दिया था, आपने मुझे शाप से मुक्त कर दिया है।३६। हे महाभाग! मेरा ऐसा उपकार करने वाला कोई उपकारी आपके समान नहीं हैं, क्योंकि आपने मुझे घोर क्लेशप्रद ब्रह्म शाप से मुक्त किया है।३७। स्वरोचि बोले—मुनिवर ब्रह्ममित्र ने तुम्हें जो शाप दिया था, वह कैसा तथा किसलिए दिया था।३८। राक्षस बोला—उन मुनिवर ब्रह्ममित्र ने अथर्व के तेरह अधिकार में ज्ञान प्राप्त किया तथा आठ

भाग व सम्पूर्ण वेद को पढ़ा था ।३९। मेरा नाम इन्दीवर हैं मैं खग-नयनाभ नामक विद्याधर का पुत्र इस कन्या का पिता हूं ।३०। मैंने उन ब्रह्ममित्र से f वेदन किया था कि मुझे सम्पूर्ण आयुर्वेद का ज्ञान दीजिये ।४१। परन्तु बारम्बार विनय पूर्वक निवेदन करने पर भी मुनि ने मुझे आयुर्वेद का ज्ञान नहो दिया ।४२।

शिष्येभ्योददतस्यगयान्तथानगेनहि ।
आयुर्वेदात्मिकाविद्यागृहीभूत्तदानघ.।४३
गृहोतायांतुविद्यायांमासैरष्टाभिरन्तपात् ।
ममातिहर्षादभदद्धासोऽतीवपुन पुनः ।४४
प्रत्याभिज्ञायमांहासा-मुनिः कोपसमन्वितः
विकाम्पिकन्धरः प्राहमामिदपरुषक्षारम ।४५
राक्षसेनेत्रयस्मात्मेत्त्वयाऽदृश्येनदुर्मते ।
हृताविद्यात्वसासश्चममामवज्ञायवेंकृतः ।३६
गस्मात्वंराक्षसः पापमच्छापेतनिराकृतः ।
भविष्यंयसिनसन्देदःसप्तरात्रेणदारुणः ।४७
इत्युक्तं प्रचिपाताद्यै रुपचारैः प्रसादितः ।
समामाहपुनर्विप्रस्तत्क्षणान्मृदुमानसः ।४८

तब, जब अपने शिष्य को आयुर्वेद का ज्ञन दे रहे थे, उस समय छिपकर मैंने उस विद्या को प्राप्त किया ।४३। जब आठ महीने में मुझे सम्पूर्ण आयुर्वेद का ज्ञान हो गया,तब मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई और मैं बाम्बार हँसने लगा ।४४। मुनिने जब मेरा इस प्रकार हँसना जाना तो उन्होंने क्रोध से कम्पित कण्ठ होकर यह कठोर वचन कहा ।४५। हे दुर्मते ! तूने राक्षस के समान छिपकर विद्या को चुराया है और अवज्ञा सहित मरी हँसी उड़ाई है ।४६। इसलिए तू मेरे शाप से अधि-कार च्युत होकर सात रात्रि में ही घोर राक्षस हो जायगा ।४७। इस प्रकार का शाप सुनकरमैंने मुनि को विनम्रतायुक्त उपचारों से प्रसन्न किया तो वह तुरन्त प्रसन्न होगये और बोले ।४८।

यन्मयोक्तामवश्यंतभ्या विगन्यः विन्धर्वनान्वथा ।
किन्तुत्वराक्षसोमूत्वा पुनः स्वप्राप्स्यसेवपुः ।४९
नष्टस्मृतिर्यदाक्रुद्धः स्वमपुत्रीयंचिखादिषुः ।
निशाचरत्वेत्तासितदस्त्रानलतापितः ।५०
पुनः संमत्राप्यस्त्राप्स्यसिनिजवपुः
तथैवस्वमधिष्ठानंलोन्नगन्धर्वसञ्ज्ञिते ।५१
सोऽहष्वयामहाभागमोक्षितोऽस्मान्महाभयात् ।
निशाचरत्वाद्धोरतेनमेप्रार्थनांकुरु ।५२
इमांतेतनयांभार्याप्रच्छासिप्रताच्चताम् ।
आर्वेदश्चसकलस्त्वष्टांगोयोमयातः ।
मुनेः सकाशात्सप्राप्तस्तगृह्णोष्वमहामते ।५३
इत्युक्त्वाप्रददोविद्यासचदिव्याम्बरोज्ज्वलः ।
स्रग्भूषणधरोदिव्यपौराणवपुरास्थितः ।५४
दत्वाविद्यांततः कन्यांसदातुमुपचक्रमे ।
तमाहसांतदाकन्याजनितारंस्वरूपिणम् ।५५

हे गन्धर्व, मेरा कहा हुआ तो मिथ्या नहीं होगा, परन्तु तू राक्षस होने के पश्चात् तू अपने शरीर को प्राप्त होगा ।४९। जब तू राक्षस होकर पुरानी बात भूलता हुआ क्रोधवश अपनी ही पुत्री का भक्षण करने को तत्पर होगा तभी अस्त्रानल से संतप्त होकर ।५०। पुनःस्मृति लाभ करेगा और अपने उसी शरीर, गन्धर्व लोक और अधिकार को पूर्ववत् प्राप्त करेगा ।५१। हे महाभाग ! आपने मुझे इस घोर राक्षसत्व से मुक्त किया है इसलिए मुझसे वर मांगो ५२। हे महामते, इस कन्या को मैं आपको प्रदान करता हूँ इसे पत्नीरूप में स्वीकार करो तथा मुनि से मुझे जिस अष्टांग आयुर्वेद की प्राप्ति हुइ हैं उसे भी ग्रहण करो ।४। मार्कण्डेयजी ने कहा—दिव्य वसन, दिव्य भूषणएवं माला तथा पूर्ववत् दिव्य देह को धारण किये हुए इस गन्धर्व ने ऐसा कहकर स्वरोचि को ।५४। संपूर्ण आयुर्वेद विद्या प्रदान की तथा उस ने जब कन्यादान

का उद्यम किया तभी उस कन्या ने अपने स्वरूप को प्राप्त हुए पिता से कहा ।५५।

अनुरागोममऽव्यत्रतातातीबमहात्मनि ।
दर्शनादेवसंजातोविशेषणोपकारिणी ।५६
किन्त्वेषांमेसखोसाचमत्कृतेदुःखपोडिते ।
अतोनाभिलषेभोगान्भोक्तुमेतेनवैसमम् ।५७
पुरुषैरपिनोशक्याकर्तुमित्थनृशंसता ।
स्वभावरुचिरैर्मादृवकयोषित्करिष्यति ।५८
साहंयथातेदुःखत्तं मत्कृतेकन्यकेपितः ।
तथास्थायामिदुःखार्तातिच्छोकानलतोपिता ।५९
आयुर्वेदप्रसादेनतेकरिष्येपुनर्नवे ।
सख्योतवमहाशोकसमत्सृजसुमध्यमे ।६०
ततः पित्रास्वयंदत्तांतांकन्यांसविधानतः ।
उपयेमेगिरौतस्मिन्स्वरोचिश्चारुलोचनाम् ।६१

इन महात्मा को देखते ही मेरा अनुराग इनके प्रति हो सका था, और यह इस समय भी विशेष रूप से उपकारी है ।५६। परन्तु मेरी दो सखियाँ मेरे ही कारण दुःख को भोग रही हैं इसलिए इसके साथ सुख भोग करना मेरे लिए अनुचित ही है ।५७। जब पुरुष भी ऐसा कठोर व्यवहार नहीं कर सकते । तब मेरे जैसे सरल नारी ही वैसा कैसे कर सकती है ? ।५८। जिस अवस्था में पड़कर वह दोनों कन्यायें दुःख भोग रही हैं उसी प्रकार मैं दुःख से सन्तप्त होकर उन्हीं के समान दुःख भोगूँगी ।५९। स्वरोचि बोले—हे सुमध्यमे ! शोक को छोड़ो, मैं आयुर्वेद के प्रभाव से तुम्हारी सखियों को मुक्त करूँगा ।६०। मार्कण्डेय जी ने कहा—इसके पश्चात् स्वरोचि ने मन्दराचल में पिता प्रदत्त उस सुशोभित नयन वाली कन्या के साथ विवाह किया ।६१।

दत्तातृतांतदाकन्यामभिसान्त्व्यचभाविनीम् ।
जगामदिव्ययागत्यागन्धर्वः स्वपरं तपः ।६२

सचापिसहितस्तन्व्यातदुद्यानंतदायौ ।
कन्याकायुगलंयत्रतच्छापोत्थगदातुरम् ।६६
ततस्तयोःसत्वज्ञोरोगघ्नैरौषधैरसैः ।
चकारनीरुजेदेहेत्वरोचिरपराजितः ।६४
ततोऽतिशोभनेकन्येविमुक्तेव्याधितः शुभे ।
स्वकान्त्याज्ज्योतिदिग्भागंचक्रातेतन्महीधरम् ।६५

कन्यादान करके गन्धर्व उसे हर प्रकार से समझाकर दिव्य विमान पर चढ़कर अपने लोक गया ।६२। इधर स्वरोचि अपनी पत्नी के सहित वहाँ गये, जहाँ मनोरमाकी दोनों सखियाँ रोगाक्रान्त हुई उद्यान में रह रही थी ।६३। और आयुर्वेद के तत्वज्ञाता स्वरोचि ने रोगनाशक औषधियों के रसों से उन दोनों के शरीर को रोग रहित किया ।६४। तब उन अत्यन्त रूपवती कन्याओं की देह शान्ति से पर्वत की सभी दिशायें प्रकशित होने लगी ।६५।

५६–स्वरोचि के अन्य विवाह

एवंविमुक्तरोगातुकन्यकातंमुदान्विता ।
स्वरोचिशनुबाचेदश्शृणुष्ववचनंप्रभो ।१
मन्दारविद्याधरजानाम्नाख्याताविभावरी ।
उपकारिन्स्वमात्मानंप्रयच्छामिप्रतीच्छमाम् ।२
विद्यांचतुभ्यंदास्यामिसर्वभूतरुताभिते ।
ययाभिव्यक्तिमेष्यन्तिप्रसादप्रवणोभव ।३
एवमस्त्वतितेनोक्ते धर्मज्ञेनस्वरोचिषा ।
द्वितीयातुतदाकन्याइदंवचनमब्रवीत् ।४
कुमारब्रह्मचार्यासीत्पारोनामपितामम ।
ब्रह्मर्षिःसुमहाभागोवेदेदांगपारगः ।५
तस्यपुंस्कोकिलालापरमणीयेमधोपरा ।
आजगामाप्सरोभ्याशप्रख्यातापुंजिकस्थला ।६

कामवैकलव्यतांनीतः सतदामुनिपुंगवः ।
तत्संयोगेऽहमुत्पग्नातस्यामत्रमहाचले ।७

मार्कंडेयजी ने कहा—मनोरमा की दोनों सखियों में से एक ने रोग मुक्ति की प्रसन्नता से स्वरोचि के प्रति कहा मेरी बात सुनिये ।१। मैं उमन्दार नामक विद्याधर की कन्या विभावरी हूँ, आपने मेरा महान् उपकार किया है, उसके बदले में आपको अपनी आत्माही अर्पित करती हूँ ।२। तथा जिस विद्या के द्वारा सब प्राणियों के स्वर का ज्ञान होता है, वह भी आपको देती हूं, उसे आप ग्रहण करिये ।३। मार्कण्डेय जी ने कहा, धर्मज्ञाता स्वरोचि ने विभावरी की बात को स्वीकार कर लिया, इसके पश्चात् दूसरी कन्या ने उनसे कहा ।४। मेरे पिता कुमारावस्था से ही ब्रह्मचर्य का अवलम्बन करने वाले वेद वेदान्त के ज्ञाता ब्रह्मर्षि पार है ।५। एक समय जब वसन्त ऋतु प्राप्त हुई तब कामीजनों के मन को हरण करने वाले पुंस्कोकिल के मधुर स्वर से तपोवन गूंज रहा था तभी एक पुंजिकस्थला नामक अप्सरा ने उनके निकट आगमन किया ।६। इससे यह मुनिवर काम के वश में होगये तब उस अप्सरा के गर्भ से मैं इस महापर्वत में उत्पन्न हुई ।७।

विहायमांगतासाचमातास्मिन्निर्जनेवने ।
वालमेकांमहीपृष्ठेव्यालश्वापदहकुले ।८
ततःकलाभिः सोमस्यवर्द्धन्तीभिरह क्षये ।
आप्यायमानारहोवृद्धियातास्मिसत्तमः ।९
ततःकलावतीत्येतन्ममनाममसात्मना ।
गृहीतायाःकृतंपित्रागन्धर्वेणशुभात्मना ।१०
नदत्ताहंतदातेनयाचितेनमहात्मना ।
देवारिणामिशासुप्तस्तोमेत्रातितः पिता ।११
ततोऽहमति निर्वेदादात्मव्यापादनोद्यता ।
निवाहिताशम्भुपत्न्यासत्यप्रति श्रवाः १२

माशुचःसुभ्रु भर्तातेमहाभागोभविष्यति ।
स्वरोचिर्नामपुत्रश्चमनुस्तस्यभविष्यति ।१३
आज्ञांचनिधयः सर्वेकारिष्यंतित्वादृता: ।
यथाभिलषितं वित्तं प्रदास्यन्तिचतेशुभे ।१४

फिर मेरी माता मुझे इस हिंसक जन्तुओं से परिपूर्ण निर्जन वन में एकाकी पड़ी छोड़कर चली गई ।८। तब एक महात्मा गन्धर्व ने मेरा पालन किया, वहाँ शुक्ल पक्ष में वृद्धि की प्राप्त होती हुई शशिकला से परिपुष्ट होती हुई मैं बढ़ने लगी, परन्तु कृष्ण पक्ष में चन्द्रकला के क्षय होने पर भी मेरा क्षय न होता हुआ देखकर उस गन्धर्व ने मेरा नाम कलावती रखा ।९-१०। कुछ काल के पश्चात् अलिनामक एक राक्षस मेरे पिताके पास आकर मुझे माँगने लगा और जब मेरे पिता ने उसकी याचना स्वीकार न की तो उसने रात्रि में शयन करते हुए मेरे पिताका वध कर दिया ।११। मैं उस दुःख से संतृप्त होकर आत्मघात को उद्यत हुई, तब भगवान शिव की भार्या सती ने मुझे रोका ।१२। उन्होंने कहा— तुम शोक को छोड़ दो महाभाग स्वरोचि तुम्हारे पति होंगे और उनका पुत्र मनु होगा ।१३। सभी निधियाँ तुम्हारी आज्ञा का सदैव पालन करेंगी और तुम्हारे लिए इच्छित वर देंगी ।१४।

यस्यावत्सेप्रभावेणविद्यायास्तांगृहाणमे ।
पद्मिनीनामविद्येयंमहापद्माभिपूजिता ।१५
इत्यावमांदक्षसुतासतीसत्यपरायणः ।
स्वरोचिस्त्वध्रुवदेवीवान्यथासावदिष्यति ।१६
साहप्राणप्रदायाद्यतांविद्यांस्वंतथावपुः ।
प्रयच्छामितीच्छत्वंप्रसादसुमुखोभव ।१७
एवमस्त्विति तामाहसतुकन्याकलावतीम् ।
विभावर्याकलावत्यास्निग्धदृष्टयानुमोदितः ।१८
जग्राहचततःपाणीसत योरमरद्युतिः ।
ननृतसुदेदतूर्येषुनृत्यन्तीस्यप्सरः सुच ।१९

सत्य परायणता दक्ष सुता का वचन मिथ्या नहीं हो सकता, इसलिये आप अवश्य ही वह स्वरोचि हैं ।१६। मैं आपको अपना शरीर, प्राण और विद्या समर्पित करती हूँ आप प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण करिये ।१७। मार्कण्डेयजी ने कहा—'इस पर स्वरोचि ने ऐसा ही हो' कहा और विभा वरी एवं कलावती दोनों की अनुमतिं से ।१८। स्वरोचि ने उस कन्या का भी पाणिग्रहण कर लिया, उस समय दिव्य वाद्य बजने लगे और अप्सरायें नाचने लगी ।१।

५७–चक्रवाक और मृग का तिरस्कार

ततःसताभि सहितः पत्नीभिरमरद्युतिः ।
ररामतस्मिछैलन्द्रे रम्य कानर्नानर्झरे ।१
सर्वोपभोगरत्नानिमधुनिममधुराणिच ।
निधयःसमुपाजग्मु.पद्निन्यावशवर्तिनः ।२
स्रजोवस्त्राण्यलङ्कारांन्गन्धढयमनुलेपनम् ।
आसनान्यतिशुभ्राणिकांचःनियथेच्छया ।३
सौवर्णानिमहाभागकरकान्भाजुनानिच ।
तथाशय्याश्चविधादिव्यैरास्तरणैर्युताः ।४
एवंसताभिःसहितोदिव्यगन्धाधिवासिते ।
ररायस्यरुचिभर्भिभर्भासितेवरपर्वते ।५
ताश्चापिसहतेनेतिलेभिरेप्रदत्तामाम् ।
रममाणायथास्वर्गतथातत्रशिवोच्चये ।६
कलहसोजगादैकांचक्रवाकींजलेसतीम् ।
तस्याातासांचललितेसम्बन्धेचस्पृहावती ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—फिर अमरदीप्ति वाले स्वरोचि अपनी तीनों पत्नियोंके साथ मलयाचलके उस सुरम्य वन एवं निर्झर स्थानोंमें विहार करने लगे।१।पद्मिनी विद्याके वश में हुई निधियां उपभोगार्थ नाना प्रकार के रस एवं मधुर मद्य ।२। माला, वस्त्राभरण, सुगन्धित लेप, आसन

चांदी एवं स्वर्ण ।३। तथा स्वर्णके विभिन्न पात्र, दिव्य बिछौनोंसे युक्त दिव्य गन्धादि से सुशोभित और रत्नादि से सुशोभित पर्वतीय प्रदेश में तीनों पत्नियों के साथ विहार रत हुए ।५। उस स्वर्ग तुल्य रमणीक श्रेष्ठ पर्वत में बिहार करती हुई तीनों भार्या भी अत्यन्त सुखी हुई ।६। उस समन उनको इस प्रकार प्रणययुक्त विहार करते देखकर एक कलहंसी ने जल में स्थित अन्य चक्रवाकी के प्रति कहा ।७।

चन्योऽयमतिपुण्यौऽयंवौवनमोचर: ।
दयिताभि: सहैताभिर्भुङ्क्ते भोगानभीप्सितान् ।८
सन्तियौवनिन:श्लाघ्यास्तत्न्योनातिशोभना: ।
जगत्यामल्पका:पत्न्य:पतियश्चातिशोभना: ।६
अभीष्टाकस्यचित्कान्ताक्रान्त. कस्याश्चिदीप्सित: ।
परस्परानुरागाढ्यं दाम्पत्यमतिदुर्लभम् ।१०
धन्योऽयंदयिताभष्टोह्ये ताश्चास्यातिवल्लभा: ।
परस्परानुरागोहिधन्यानामेवजायते ।११
एतन्निशम्यवचनकहसीसरितम् ।
उवाचचक्रबाकीतांनातिविस्मतमानसा ।१२
नायंधन्योयतोलज्जानान्वस्त्रीसन्निकर्षत: ।
अन्यांस्मियमयभुंक्तेनसर्वास्वस्यमानसम् ।१३
चित्तानुरागएकस्मिन्नधिष्ठानेयत: सखि ।
ततोतिप्रीतिमानैषभार्यासुभविताकथम् ।१४

इन स्त्रियों के साथ समस्त इच्छित भोगों को भोगने वाला यह युवक ही धन्य है ।७। संसार में रूप और यौवन से सम्पन्न ऐसे अनेक पुरुष हैं जिनकी भार्या असुन्दर हैं, ऐसे दम्पत्ति कोई बिरले ही हैं जो पति-पत्नी दोनों ही सौन्दर्य से शोभायमान हों ।६। कोई पति अपनी पत्नी में और कोई पत्नी अपने पति में अनुरक्त हैं, परन्तु समान आसक्ति वाले स्त्री-पुरुष कठिनता से मिलते हैं ।१०। इसलिए अपनी

पत्तिनयों के यह प्रियतम और इनकी प्रियतमा पत्नियाँ भी धन्य हैं, क्योंकि कृतकृत्य प्राणियों में ही परस्पर अनुराग की उत्पत्ति होती है ।११। कलहंसी की बात से चक्रवाकी अधिक बिस्मित नहीं हुई, उसने कहा ।१२। वह स्वरोचि धन्य नहीं हो सकते क्योंकि एक स्त्री के सामने ही दूसरी से बिहार करते हैं, इसलिये इन्हें किंचित् भी लज्जा नहीं आती सब पत्नियों के प्रति इनकी समान रुचि भी नहीं है ।१३। जब चित्त का अनुराग एक ही में अवस्थान करता है, तब यह स्वरोचि सब पत्नियों में समान अनुराग कैसे रख सकते हैं ।१४।

एतानदयिताःहत्युर्मैतासांदयितःर्हतिः ।
विनोदमात्रमेवतायथ।परिजनोपरः ।१५
एतासांचयदीष्टोऽप्यन्तिकप्राणान्नमुञ्चति ।
आलिंगत्यपरांकान्तांध्यातोवैकान्तयान्यया ।१६
विद्याप्रदानमूल्येनक्रीतोह्येषसुभृत्यवत् ।
प्रवत्तानोनहिप्रेमसमवह्त्वषुयिष्ठति ।१७
कलहंसिपतिर्धन्योममधन्यामेव च ।
यस्यैकस्यांचिरचित्तंयस्याश्चैकत्तसंस्थितम् ।१८
बहुपत्नीपतिर्लोकःशरणपुण्यपापयोः ।
गृहाशनासद्यश्चभूषणैश्चसहागमैः ।१९
विधर्मैःक्रियमाणहियुज्यतेमहदेनसा ।
ज्येष्ठांकनीयभावेनकनिष्ठतांनयेत् ।२०
गुरवेतुवरंवत्वाहुत्वान्यांसमिधयथा ।
ऊढयासहकर्त्तव्यानित्यनैतित्तिकीःक्रियाः ।२१

इनको सब पत्नियां प्रियतमा नहीं हैं और न उन सबको ही यह समान रूप से प्रिय हैं ।१५। यदि यह सबमें समान प्रीति वाले होते हो सबको सब समय सन्तुष्ट करने में समर्थ होकर क्या इतने काल पर्यन्त जीवित रह सकते थे, उनमें परस्पर का अनुराग और समान प्रेम कहाँ से हो सकता है ? ।१६। यह स्वरोचि विद्या प्राप्ति के मूल्य में बिककर

पत्नियों के समक्ष भृत्य के समान ही हैं, सभी पत्नियों में प्रेम का समान भाव से रहना सम्भव नहीं हैं ।१७। हे सखी, धन्य तो मैं हूं और मेरे पति हैं, क्योंकि मैं ही उनकी एकमात्र भार्या हूं, उनके चित्त का अनुराग मेरे प्रति है और मैं भी उन्हीं में अनुरक्त हूं ।१८। अनेक भार्याओं का पति पुण्य और पाप का कारण है, गृह निवासिनी के शब्दायमान आभूषणों से और सहगमन द्वारा हुए निश्चय से ।१९। युक्त मनुष्य विषमता के कारण महापापी होता है तथा बड़ी को छोटी और छोटी को बड़ी मानते हैं ।२०। तथा गुरु को दक्षिणा के रूप में वर देकर समिधाओं के द्वारा हवन करने जैसा है । विवाहिता पत्नी के सहित ही नित्य नैमित्तक कर्मों को करे ।२१।

जगादार्थान्यभावेनपापीयांजायतेनरः ।
सर्वसत्वरुतज्ञोऽसौस्वरोचिरपराजितः ।२२
निशम्यलज्जितोदध्यौसत्यमेवहिनानृतम् ।
ततोवर्षशतेयातेरममाणोमहागिरौ ।
रमाण समन्ताभिर्ददर्शपुरतोमुगम् ।२३
सुस्निग्धपीनावयवं मृगीयूथविहारिणम् ।
वासिताभिःस्वरूपाभिर्मृगीभिःपरिवारितम् ।४४
आकृष्टघ्राणपुटकाजिघ्रन्तीस्तास्ततोमृगीः ।
उवाचसमगोऽलवोलज्जात्यागेनगम्याताम् ।२५
नाहंस्वरोचिस्तच्छीलोनचैवाहंसुलोचनाः ।
निर्लज्जाबहवःसमन्तताद्दृशाश्तत्रगच्छत ।२६
एकत्वनेकानुगतायथाहासास्पदजने ।
अनेकाभिस्तथैवैकोभोगदृष्टयानिरीक्षितः ।२७
तस्यकर्मक्रियाहानिरहन्यहनिजायते ।
सक्तोऽन्यभार्ययाचान्यकामासक्तःसदेवसः ।२८
यस्तादृशोऽन्यस्तच्छीलःहरलोकपरामुखः ।
तत्र्कामयभद्रंवोनाहंतुल्यःस्वरोचिषा ।२९

अन्य प्रकार से करने वाला पापी कहा जाता है। मार्कण्डेयजी ने कहा—सब जीवों की वार्ता को समझने वाले पराजय रहित स्वरोचि ।२१। उनकी बात सुनकर लज्जित हुए और विचारने लगे कि इसका वचन सत्य हैं, इनमें अनृत कुछ भी नहीं है, फिर भी उस महाचल में पत्नियों के संग विहार करते उन्हें सौ वर्ष व्यतीत हो गये। तदन्तर एक दिन जब पत्नियों के साथ विहार रत थे तभी उन्होंने सामने स्थित ।२३। एक स्थूल सर्वाङ्ग पुष्ट मृगी यूथ के साथ विहार करने वाले एक मृग को देखा, वह चारों ओर से अपनी समान आयु वाली मृगियों से घिरा हुआ था ।२४। तब बालिका सिकुड़ कर मृग के शरीर को सूँघती हुई मृगियों को देखकर मृग ने उससे कहा—अरी मृगियों ! तुमने लज्जा छोड़ दी है, इसलिए अब और कहीं जाओ ।२५। सुन्दर नयन वालियों ! मैं स्वरोचि नहीं हूं, और न मेरा स्वभाव ही उनके जैसा है, उनके समान अनेक लज्जाहीन पुरुष मिल सकते हैं तुम उन्ही के पास जाओ। जैसे एक नारी अनेक पुरुषों की अनुगामिनी होने पर समाज में उपहास के योग्य होती है, वैसे ही अनेक नारियों से विहार करने वाला पुरुष भी हास्यास्पद होता है ।२७। उसकी नित्य क्रिया नष्ट हो जाती है ।२८। इसलिए परलोक से विमुख स्वभाव वाले स्वरोचि जैसा कोई अन्य पुरुष हो तुम उसी के पास जाओ, मैं वैसा नहीं हूँ ।२।

५८—स्वरोचिष मनु की उत्पत्ति

एवंनिरस्यमामानास्ता हरिणेनामृगांगनाः ।
श्रुत्वास्वरुचिरात्मानमेनेसपतितयथा ।१
त्यागेचकारचमनः सतासांमुनिसत्तम ।
चक्रवाकीमृगप्रोक्तो वृगचर्याजुगुप्सितः ।२
सनेत्यताभिर्भु यश्चवर्द्ध मानमनोभवः ।
आक्षिप्तनिर्वेदकथोरेमेवर्षशताविषट् ।३

किन्तुधर्माविरोधेनकुर्वन्धर्माश्रिताःक्रिया ।
भुङ्क्ते स्वोर्चिर्विषयान्सहताभिरुदारधीः ।४
ततश्चजज्ञिरेतस्यत्रयःपुत्राःस्वरोचिष ।
विजयो मेरुनन्दश्चप्रभावश्चमहाबलः ।५
मनोरमाचविजयंप्रासूतेन्दीवरात्मजा ।
विभावरीमेरुनन्दनंप्रभावंचकलावती ।६
पद्मिनीनामयाविद्यासर्वभोगोपपादिका ।
सतेषांतत्प्रभावेणापिताचक्रे पुरत्रयम् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—इस प्रकार उस मृग के द्वारा वे हरिणियाँ निराश हुईं और इस वार्ता को सुनकर स्वरोचि ने स्वयं को पतित समझा ।१। हे मुनिवर ! चक्रवाको और मृग द्वारा एसी निन्दा को पाकर तथा युग के आचरण को देखकर अपने को निन्दित समझा और पत्नियों को त्यागने का विचार किया ।२। परन्तु पत्नियों से मिलते ही पुनः काम की प्रवृत्ति के सबल होने से उनका विरक्त भाव नष्ट हो गया और इसके पश्चात् उन्होंने छैः सौं वर्ष तक पत्नियों के साथ बिहार किया ।३। परन्तु जब वे विषय रत होते तब भी वे अपने धर्म-मार्गानुसार सभी क्रिया तथा विधि सम्पन्न करते थे ।४। फिर उनके विजय, मेरुनन्द और प्रभाव नामक तीन अत्यन्त बलवान् पुत्र उत्पन्न हुए ।५। इन्दीवर की पुत्री मनोरमा से बिजय, विभवरी से मेरुनन्द और कलावती से प्रभाव की उत्पत्ति हुई थी ।६। सर्व भोगों का सम्पादन करने वाली पद्मिनी विद्या के प्रभाव से स्वरोचि ने तीन पुरों की रचना की ।७।

प्राच्यांतुदिक्ष्यंनामकामरूपेणनगोत्तमे ।
विजयायसुतायादौसददौपुरमुत्तमम् ।८
उदीच्यांमेरुनन्दनस्यपुरींनन्दवतीमिति ।
ख्यातांचकारप्रत्तुङ्गवप्राकारमौलिनीम् ।९
कलावतीसुतस्यापिप्रभाचस्यनिवेशितम् ।
पुरतालमितिख्यातंदक्षिणापथमाश्रितम् ।१०

एवनिवेश्यपुत्रान्सरेषुपुरुषर्षभः ।
रेमेताभिससविप्रमनोज्ञास्वद्रिभूमिषु ।११
एकदातुगतोऽरण्येविहरन्तधनुर्धरः ।
चकर्षधनुरालोक्यवराहमतिदूरगम् ।१२
अथाहकाचिदभ्येत्यततदारिणांगना ।
मय्येवहात्यतांवाणःप्रसीदेतिपुनःपुनः ।१३
किमनेनहतेनाद्यमामाशुविनिपातय ।
त्वयानिपातितोवाणोदुःखात्मांमोक्षयिष्यति ।१४

पूर्व दिशा में कामरूप पर्वत पर विजय नामक पुर वनाकर विजय को ।८। उत्तर दिशा में अत्यन्त ऊँची प्राचीरो वाला नन्दवती नामक पुर मेरुनन्दन को दिया ।९। और दक्षिण में ताल नामक पुर वनाकर प्रभाव को प्रदान किया ।१०। इस प्रकार पुरुष श्रेष्ठ स्वरोचि ने तीनों पुत्रों की उन तीनों पुरों में वसाकर पत्नियों सहित अत्यन्त सुरम्य प्रदेश में बिहार किया ।११। एक दिन धनुश ग्रहण करके विहार करते हुए वहुत दूर पर उन्होंने एक वाराह को देखकर शर संधान किया ।१२। तभी एक हरिणी वहाँ आई और वह बारम्बार प्रार्थना करने लगी—'मुझ पर प्रसन्न होकर इस वाण को मुझ पर चलाओ ।१३। इस वाराह का वध किया जाना व्यर्थ होगा, इसलिए आप मुझ पर अपना वाण चलाकर, मुझे दुःख से छड़ाइये ।१४।

नतेशरोरं सरुजमस्माभिरुपलक्ष्यते ।
किन्नुतकारणंयेनत्वंप्राणान्हातुमिच्छसि ।१५
अन्यास्वासक्तहृदयेयस्तिश्चेतःकृतास्पदम् ।
ममतेनविनामृत्युरौषधिकिमिहापरम् ।१६
कस्त्वांनाभिलषेद्भीरुसानुरागासिकुत्रवा ।
यदप्राप्तौनिजान्प्राणान्परित्यक्तुंव्यस्यसि ।१७
त्वामेवेच्छामिभद्रं तेत्वयामेऽपहृत्तंमनः ।
वृणोम्यहमतोमृत्युमयिवाणोनिपात्यताम् ।१८

त्वमृगीचचलापांगीनररूपधरावयम् ।
मूथत्वयासमयोगोमद्विधस्यभविष्यति ।१९
यदिसापेक्षितं चित्तंमयितेमांपरिष्वज ।
यदिवांसधुचित्तांतेकरिष्यामिथेप्सितम् ।२०
एतावताहभवताभविष्यतिमानिता ।
आलिंगततस्तांसस्वरोचिर्हरिणांगनाम् ।२१

स्वरोचि बोले—तेरा देह किसी प्रकार भी रोगग्रस्त प्रतीत नहीं होता फिर तू क्यों अपना देह त्यागना चाहती है ।१५। मृगी ने कहा मेरा चित्त उसके प्रति आसक्त है, जिसका चित्त अन्य किसी नारी में अनुरक्त हुआ है, इसलिए उसे प्राप्त न करके रूप रोग की एक मात्र औषधि आपके बाण से प्राण त्यागना ही है ।१६। स्वरोचि बोले—तुझे कौन नहीं चाहता ? तू किसके प्रति आसक्ति वाली हुई है । जिसके प्राप्त न होने से तू प्राण त्याग करने को दृढ़ निश्चय है ।१७। मृगी ने कहा—अपने मेरा चित्त चुरा लिया है मैं आपकी अभिलाषा करती हूं इसलिए प्राण त्याग के लिए तत्पर हुई है, आप शीघ्र ही मुझ पर बाण चलाइये ।१८। स्वरोचि बोले—तू चपल अङ्ग वाली मृगी हैं और मैं मनुष्य शरीर में हूं, इसलिए मेरा तुम्हारा संग किस प्रकार संभव है ? ।१९। मृगी ने कहा—यदि मेरे प्रति आपके चित्त में भी अनुराग है तो मुझे आलिंगन प्रदान करिये ।२०। उस प्रकार मैं आपके द्वारा अत्यन्त सम्मान को प्राप्त हूंगी, मार्कण्डेयजी ने कहा—यह सुनकर स्वरोचि ने उस मृगी को आलिंगन किया ।२१।

तेनचालिंगितासद्यःसाभूद्दिव्यवपुधरा ।
ततःसविस्मयाविष्टःकात्वमित्यभ्यभाषत ।२२
साचास्मैकथयामासप्रेमलज्जाजडाक्षरम् ।
अहमभ्यथितादेवैःकाननस्यादेवता ।२३
इत्पादनोयोहिमनुत्वयामयिमहामते ।
प्रीतिमत्यांमयिसुतभूर्लोकपरिपालकम् ।२४

तमुत्पादयदेवानांत्वामहंवचनाद्वदे ।
ततःसतस्यांतनयंसर्वलक्षणलक्षितम् ।२५
तेजस्विनमिवात्मानजनयामासतत्क्षणात् ।
जातमात्रस्यतस्याथदेववाद्यानिसस्वनुः ।
जगुर्गन्धर्वपतयोननृश्चाप्सरोगणाः ।२६
सिषिचुःशीकरैर्मेघात्रृषयश्चतपोधनाः ।२७
देवाश्चपुष्पवर्षचमुमुश्चसमन्ततः ।
तस्यतेजःसमालोक्यनामचक्रे पितास्वयम् ।२८
द्युतिमाननितियैनास्यतेजसाभासितादिशः ।
सवालोद्युतिमान्नामहाबलपराक्रमः ।२९

उसका आलिंगन प्राप्त करते ही वह मृगी उसी समय दिव्य शरीर धारण करके एक सुन्दर नारी हो गई, उस पर स्वरोचि ने अत्यन्त विस्मय पूर्वक उससे कहा 'तुम कौन हो ?' ।२२। तव मृगी ने लज्जा और प्रेम से गद्‌गद होकर कहा कि मैं इस वन की अधिष्ठात्री देवी हुँ और देवताओं से प्रार्थित होकर तुम्हारे निकट आई हूँ ।२३। हे महामते! मैं तुम पर अनुरक्त हुई, मुझसे तो मनु को उत्पन्न करना तुम्हारे लिये कर्तव्य है, इसलिए उस भूलोक परिपालक पुत्र को मुझसे उत्पन्न करिए ।२४। यह बात मैंने देवतओं के वचनोंके अनुसार ही कही है । मार्कण्डेय जी ने कहा—फिर स्वरोचि ने उस वन देवी के गर्भ से अपने ही समान तेजस्वी पुत्र उत्पन्न किया,उसके उत्पन्न होते ही सम्पूर्ण वाद्य बजने लगे गन्धर्वपति गायन करने लगे और अप्सरायें नृत्य करने लगी ।२५-२६। दिशाओं से हाथी जल सींचने लगे और तपोधन ऋषि ।२१। तथा देवता सब ओर पुष्प वरसाने लगे । उस बालक के तेज से सभी दिशाएँ प्रकाशित हो उठीं, ऐसी अङ्ग दीप्ति देखकर स्वरोचि ने अपने पुत्र का ।२८। नाम द्युतिमान रखा, यह बालक अत्यन्त बलशाली और पराक्रमी हुआ ।२९।

स्वरोचिष सुतोयस्मात्तस्मा त्स्वारोचिषोऽभवत् ।

सचापिविचरन्नमयेकदात्तिदुर्गिरिनिर्झरे ।३०
स्वरोचिद्दशेहंसनिजपत्नीसमन्वितम् ।३०
उवाचसतदाहंसीसाभिलाषांपुनः पुनः ।३१
उपसंह्रियतामात्मा चिरंतेक्रीडितंमया ।
किंसर्वकालंभागैस्तेअ।सन्नं चरमंवयः ।३२
परित्यागस्यकालोमेतवचापिजलेचरि ।
अकालःकोहिभोगानांसर्वभोगात्मकजगत् ।३३
यज्ञाः क्रियन्तेभोगार्थं ब्राह्मणैः संयतात्मभिः ।
दृष्ट दृष्टास्तथाभोगान्वांछमानाविवेकिनः ।३४
दानानिचप्रयच्छन्तिपूतान्धर्मांश्चकुर्वते ।
सत्वनेच्छसिकिंभोगान्भोगच्चेष्टभलनृणाम् ।३५

स्वरोचि का पुत्र होने के कारण उसे स्वरोचिष भी कहा जाने ने लगा, फिर किसी एक समय सुरम्य पर्वत और निर्झर में भ्रमण करते हुए ।३०। उन स्वरोचि ने अपनी भार्या के सहित एक हंस को देखा वह काम्या हँसी से कह रहा था ।३१। हे हंसी ! अपने मन को अब निवृत्त कर, मैंने तेरे साथ बहुत समय तक विहार किया है अब सदैव ही भोग रत रहने से क्या लाभ है, क्योंकि वृद्धावस्था आगई है ।३२। यह हमारे द्वारा विषय भोगों के त्यागे जाने का समय उपस्थित है । इस पर हंसी ने कहा कहा —भोग का समय असमय क्या है ? देखो यह सम्पूर्ण विश्व भोगमयी है । ।३३। क्योंकि संयतात्मा ब्राह्मण भोग की इच्छा से ही यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं तथा ज्ञानीजन भी दृष्ट-अदृष्ट भोगों की अभिलाषा करते हुए ।३४। दान और पूर्ति के ध्यान में लगे रहते हैं। जब ऐसे व्यक्तियों का भी कर्म फल भोग ही है तो तिर्यक योनि वालों के विषय में कहा ही क्या जाय ? ३५।

विवेकिनांतिरश्चांचकिंपुनःसंयतात्मनाम् ।
भोगेष्वासक्तचित्तानांपरमार्थान्विताममतिः ।
भविष्यतिकदासंगमुपेतानांचवन्धुषु ।३६

पुत्रमित्रकलत्रेषुसक्ताःसीदन्तिजन्तवः ।
सरःपङ्कार्णवेमग्नाजीर्णावनगजाइव ।३७
किंनपश्यसिवाभद्रे जातसंगस्वरोचिषम् ।
आबाल्यात्काममसंसक्तमग्नेहाम्बुकर्दमे ।३८
यौवनेऽतीवभार्यासुसाम्द्रतंपुत्रनृप्तृषु ।
स्वरोचिषमनोमग्नमुद्धारंप्राप्स्यतेकुतः ।३९
नाहंस्वरोचिषतुल्य स्त्रीवस्योवाजलेचरि ।
विवेकवांश्चभोगानांनिवृत्तोऽस्मिचसाम्प्रतम् ।४०
स्वरोचिरेतदाकर्ण्यंजातोद्वेगःखगेरितम् ।
आदायभार्यास्तपसेययावन्यत्तपोवनम् ।४१
तत्रतप्त्वातपोघोरं सहिताभिरुदारधीः ।
जगामलोकानमलान्निवृत्ताखिलकल्मषः ।४२

इसलिए तुम उस भोग को क्यों नही चाहते ? हंस बोला—भोगो में जिनकी चित्तवृवत्ति नहीं, उनकी मति परमात्मा की अनुगामिनी है, बाँधवों के संसर्ग वाले मनुष्य की बुद्धि क्या अभी इसी प्रकार की हो सकती हैं ? ।३६। पुत्र, मित्र और कलत्र में आसक्ति वाले जीव सरोवर के पंक में फँसे हुए जंगली हाथी के समान सदा दुःखित रहते हैं ।३७। हे भद्रे ! क्या तुमने वाल्यावस्था के कामासक्त एवं स्नेह पंक में फँसे हुए स्वरोचि को नहीं देखा है ? ।६८। यौवनवती पत्नियों, पुत्रों में डूबे हुए उस स्वरोचि का मन किस प्रकार उद्धार को प्राप्त हो सकेगा ? ।३६। उस स्वरोचि के समान मैं स्त्रियों के अधीन नहीं हूं और अब भोगों का परित्याग करता हूं ।४०। मार्कण्डेयजी ने कहा—हंस के वचन सुनकर स्वरोचि अपनी तीनों पत्नियो को साथ लेकर तप करने के उद्देश्य से तपोवन को प्राप्त हुए ।४१। वहाँ उन्होंने पत्नियों के सहित घोर तप किया और सभी पापों से मुक्त होकर मल—रहित लोक को गए ।४२।

५९--स्वरोचिष मन्वन्तर कथन

ततःस्वारोचिषंनाम्नाद्यु तिमन्तंप्रजापतिम् ।
मनुचकारभगवांस्तस्यमन्वन्तरश्रृणु ।१
तत्रान्तरेतुयेदेवा मुनयस्तत्सुताश्चमे ।
भूपालाःक्रौष्टुकेयेतान्गस्त्वनिशामय ।२
देवाःपारावतास्तत्रतथैवतुषिताद्विज ।
स्वारोचिषेऽन्तमेकेन्द्रोविपश्चिदितिविश्रुतः ।३
उर्जस्तम्वस्तथांप्राणोदत्तोलिर्ऋषभस्तथा ।
निश्चरश्चाचवोरांश्चवत्रसप्तर्षयोऽभवन् ।
चैतकिपुरुषाद्यश्जसुतास्तस्यमहात्मनः ।
सप्तासन्सुमहावीर्याः पृथिवीपरिपालका ।५
तस्यमन्वन्तरयावत्तद्वंशविस्तरे ।
भक्तेयमवनिःसर्वाद्विमीयवैतदन्तरम् ।६
स्वरोचिषस्तुचरतिजन्मस्वारोचिषस्यच ।
निशम्यमुच्यतेपापैः श्रद्दधानोहिमासवः ।

मार्कंडेयजी ने कहा—इसके पश्चात् भगवान् ने स्वरोचिष अर्थात्. द्यु तिमान नामक प्रजापति को मनु बनाया अब उनके मन्वन्तर का वर्णन सुनो ।१। हे क्रोष्टुके ! उस स्वरोचिष मन्वन्तर में जो देवता, मुनि, मनु–पुत्र राजा आदि हुए, उनके विषय में कहता हूं, उसे सुनो ।२। हे द्विज ! उस स्वरोचिष मन्वन्तर में देवताओं को परावत और तुषित तथा इन्द्र को विपश्चित् कहा जाता था ।३। ऊर्ज, स्तम्व, प्राण, दत्तोलि, ऋषभ, निश्चर और अर्वरी नामक महर्षि थे ।४। धन स्वारोचिष मनु के चैत्र और किम्पुरुष आदि नाम वाले सात पुत्र पराक्रमी एवं पृथिवी का पालन करने वाले थे ।५। उनका मन्वन्तर जितने दिन का था, तब तक उनके वंशधरों ने पृथिवी का भार भोगा । मन्वन्तरोंमें स्वरोचिष मन्वन्तर द्वितीय है ।६। स्वरोचि का चरित्र और स्वरोचिष

मनु की उत्पत्ति को जो कोइ श्रद्धापूर्वक श्रवण करता है, वह पापों से मुक्त होता हैं ।७।

६०--निध निर्णय

भगवन्कथितमर्वविस्तरेणात्वयामम ।
स्वरोचिषस्तुचरितंजन्मस्वारोचिषस्यतु ।१
यातुसापद्मिनीनामविद्याभोगोपपादिका ।
तत्संश्रयायेनिधयस्तान्मेतिस्तरतोवद ।२
अष्टोयेनिधयस्तेषांस्वरूपद्रव्यसंस्थितिः ।
भवताभिहितंसम्यवछ्रोतुमिच्छाम्यहंगुरो ।३
पद्मिनीनामयाविद्यालक्ष्मीस्तस्याश्चदेवता ।
तदाधानाश्चनिधयस्तन्मेनिगदयशृणु ।४
तत्रपद्ममहापद्मौतथामकरकच्छपौ ।
मुकुन्दोनन्दकश्चैवनीलः शंखोऽष्टमोनिधिः ।५
सत्यामृद्धौभवन्त्येतेसिद्धिस्तेषांहिजायते ।
एतेह्यष्टौसमाख्यातानिधयस्तवक्रौष्टुके ।६
देवतानांप्रसादेनसाधुसमेवनेनच ।
एभिरालोकितवित्तो मानुषस्यसदामुने ।७

क्रौष्टुकि बोले---हे भगवन् ! आपने स्वरोचि का चरित्र और स्वारोचिष मनु की उत्पत्ति का वर्णन विस्तार पूर्वक मुझसे किया है ।१। परन्तु सर्व भोगों का सम्पादन करने वाली पद्मिनी विद्या की आश्रित निधियों का वर्णन भी विस्तार सहित करिए ।२। हे गुरो ! अष्टनिधियों का स्वरूप और द्रव्य की संस्थित को भी सम्यक् प्रकार से आपके मुख से सुनने की भी इच्छा है ।३। मार्कण्डेयजी ने कहा --पद्मिनी विद्या की अधिष्ठात्री लक्ष्मीजी हैं यह विद्या अष्ट निधियों की आश्रय स्वरूपिणी है, इसके विषय में कहता हूं तुम श्रवण करो। पद्म, महापद्म, मकर, कच्छप, मुकुन्द, नन्दक, नील और शंख' यह आठों निधि उस विद्या की

आश्रिता हैं ।५। समृद्धि होने से ही इन निधियों की सिद्धि प्राप्त होती है; हे क्रौष्टुके ! तुम्हें यह आठ प्रकार की निधियाँ बताई गयी हैं ।६। हे मुने ! देव प्रसाद और साधु सेवा के फल से मनुष्य का चित इन निधियों के द्वारा सदैव आलोकित होता है ।७।

याद्दक्स्वरूपंभवतितन्मेनिगदत: शृण ।
पद्मोनामनिधि: पूर्वमस्यभवद्विज ।।८
सतस्यतत्सुतानांचतत्पौत्राणाचनिस्यश: ।
दाक्षिण्यसार: पुरुषस्तेनचाधिष्ठतोभवेत् ।।९
सत्वाधारोमहाभागोयतोऽसौसात्विकोनिधि: ।
सुवर्णरूप्यताम्रादिधातूनांचपरिग्रहम् ।१०
करोत्यतितरांसोऽथतेषांक्रयविक्रयम् ।
करोतिचतथायज्ञानन्दक्षिणांचप्रयच्छति ।११
(स पादयतिका मांश्चसर्वानिवयथाक्रमम्) ।
समादेवनिकेतांश्चसकारयतितन्मना: ।
सत्वाधारोनिधिश्चान्योमहापद्महतिश्रुत: ।।१२
सत्वप्रधानोभवतितेनससाधिष्ठतोनर: ।
करोतिपद्मरागादिरत्नानांचपरिग्रम् ।१३
मौक्तिकानांप्रबालानांतेषांचक्रयविक्रयान् ।
दादातियोगशीलेभ्यस्तेषामावसथांस्तथा ।१४
सकारयतितच्छील: स्वयमेवच जायते ।
तत्प्रसूतास्तथाला: पुत्रपौत्रक्रमेण च ।१५

इनका जो स्वरूप हैं, वह बताता हूं—पद्म नामक निधि सदा ही भय दानव के पास थी ।८। फिर उसकेपुत्र, पौत्र, प्रपौत्र के पास रही। इस निधि के अधिष्ठान से पुरुष चातुर्य एवं ।९। सत्वगुण से सम्पन्न और अत्यन्त भोगवान् होता हैं, क्योंकि यह निधि सतोगुण से युक्त है। इस निधि से सम्पन्न पुरुष सुवर्ण, रजत, ताम्रादि सब धातुओं का परिग्रह

।१६। तथा क्रय-विक्रय करता हैं तथा बहुतसे विपुल दक्षिणा वाले यज्ञों का अनुष्ठान करता है ।११। एकाग्र चित्तसे सभा भवन और देव मन्दिर निर्मित करता है, महापद्म नामक निधि सत्वाधार के नाम से विख्यात है ।१२। उससे अधिष्ठित मनुष्य भी सतोगुण प्रधान होता है तथा पद्म राग आदि रत्नों को संकलित करने वाला होता है ।१३। और मुक्ता आदि का क्रय-विक्रय करता है एवं योगियों को उनका स्थान देता है ।१४। तथा साधारण व्यक्तियों को योगाभ्यास के लिए उत्साहित करता हैं और स्वयं भी योग में तत्पर रहता है। उसके पुत्र, पौत्रादि वंशधर भी उसके समान होते हैं ।१५।

पूर्वद्विमात्र: सप्तासौपुरुषांश्चमुंचति ।
तामसोमकरोनामनिधिस्तेननावलोकित: ।१६
पुरुषोऽथतम: प्राय: सुशीलोऽपिहिजायते ।
बाणखड्गर्ष्टिधनुषांचर्मणांच परिग्रहम् ।१७
दशनानांचकुरुतेयोतिमैत्रीचराजभि: ।
ददातिशौर्यवृत्तीनांभुजांयेचतत्प्रिया: ।१८
क्रयविक्रयेचशस्त्राणांनान्यत्रप्रीतिमेतिच ।
एकस्यै भवत्यैषनरस्यन सुतानुग: ।१९
द्रव्यार्थदस्युतोनाशंसंग्रामेवपिसव्रजेत् ।
कच्छपश्चनिधिर्योऽसौनरस्तेनासिवीक्षिम: ।२०
तम: प्रधानोभवतियतोऽसौताममोनिधि: ।
व्यवहारानशेषांस्तुपुण्यजातै: करोति च ।२१
कर्मस्थानश्रिलांश्चवनविश्वसितिस्यचित् ।
समस्तानियथाङ्गानिसहारत्येवकच्छप: ।२२

यह महापद्म नामक निधि पूर्व के अपेक्षा उत्तरोत्तर आधी-आधी शक्ति से घटती हुई सात पीढ़ियों तक रहती है तथा जो मकर नामकी तमोगुणी निधि हैं, उससे अधिष्ठित पुरुष ।१६। तमोगुण प्रधान और शीलवन्त होता वह मनुष बाण, खड्ग-ढाल तथा आयुधों के धारण

करने वाला होता है ।१७। भोज्य पदार्थ का स्वाद ग्रहण करने में समर्थ होता है, राजाओं के साथ सख्यभाव स्थापित करता है तथा वीर्य वृत्ति वाले वीरों को दान देकर सन्तुष्ट होता है ।१८। शस्त्रों को क्रय-विक्रय किये विना तुष्ट नहीं होता परन्तु धन के लोभ से तस्करों द्वारा अथवा रण क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त होता हैं, यह निधि एक पीढ़ी तक ही रहती है, फिर नहीं रहती इसे तामसी कहा गया है इसकी दृष्टि जिस पर पड़ती है ।१९-२०। यह पुरुष तमोगुण प्रधान, पुण्यमय एवं आचार व्यवहार तथा कर्म के वश में होकर सब भोगों को भोगता हुआ, किसी पर विश्वास नहीं करता ।२१-२२।

तथाविष्टभ्यरत्नानितिष्ठत्याकुलमानसः ।
नददातिनवाभुङ्क्तेतद्विनाशभयाकुलः ।२३
निधानमुर्व्यांकुरुतेनिधिः सोत्येकपुरुषः ।
रजोगुणमयश्चान्योनामयोनिधिः ।२४
नरोऽवलोकितस्तेनतद्गुणोभवतिद्विजः ।
वीणावेणुमृदङ्गानामातोद्यस्यपरिग्रहम् ।२५
करोतिगायतांवित्त नृत्यतांचप्रयच्छति ।
वन्दिमागधसूतानांविटानांलास्यपाठिनाम् ।२६
ददात्यहर्निशं भोगान्भुङ्क्ते तैश्चसमंद्विजः ।
कुलटासुरतिश्चाग्र्यंभवत्यन्यैश्चतद्विधैः ।२७
प्रयातिसंगनेकचयंनिधिर्भजतेमरम् ।
रजस्तमोमयश्चान्योनन्दोनाममहानिधिः ।२८

वैसे ही अपने अभिप्राय को गुप्त रखता और चित्त को संयमित बनाता हैं तथा नष्ट होने के भय से धन का उपभोग स्वयं नहीं करता और न किसी दूसरे को ही प्रदान करता है ।२३। यह निधि पृथ्वी में एक पीढ़ी तक रहती है और मुकुन्द नाम की जो अन्य रजोगुणी निधि है ।२४। इसकी दृष्टि जिस मनुष्य पर पड़ती है, वह रजोगुणी होता है तथा उससे अवलम्बित मनुष्य वीणा वेणु मृदङ्ग आदि आतोद्य वाद्योंका

संग्रह करता ।२५।गायकों और नर्तकोंको बहुत धन देनेवाला, बन्दी सूत मागध, विट और लास्यपाटी नृत्य गान की विशेषता वालों को।२६।दिन रात्रि इच्छित भोग देता है तथा उनके साथ भोजन करताहै इसकीप्रीति अपने समान एवं कुलटा मनुष्य में रहती है।२७। यह नित्य जिसे चाहती है उसी की अनुगामिनी रहती है, उसके वंशधरों के पास नहीं रहती नन्द नाम की निधि रजोगुण और तमोगुण दोनों से युक्त है ।२८।

उपैतिस्तम्भमधिकंनरस्तेनावलोकित: ।
समस्तधातुरत्नानांपुण्यधान्यादिकस्यच ।२९
परिग्रहंकरोत्येषतथैवक्रयस्र्यविक्रयम् ।
आधार: स्वजनानांच आगताभ्यागतस्य च ।३०
सहतेनापमानोक्तिस्वल्पामपिमहामुने ।
स्तूयमानश्चमहतीप्रीतिबध्नातियच्छति ।३१
ययमिच्छतिश्रकासंमृदुत्वमुपयाति च ।
वह्वोभार्य्याभवन्त्यस्यसूतिमत्योऽतिशोभना: ।३२
भजतेसप्तचनरान्निधिनन्दोऽनुवर्तंतते ।
प्रवर्द्ध मानोऽथनरमष्टभागेनसत्तम: ।३३
बन्धूनामेवभरणंयेचदूरादुपागता: ।३४
तेषांकरोतिवैनन्द: परलोकेनचादृत: ।
भवत्यस्यनचस्नेह: सहवासिषुजायत ।३५

इसकी दृष्टि जिसपर पड़ती है, वह अत्यन्त स्तंभित रहता है इससे अधिष्ठित मनुष्य सब धातु, रत्न, धान्य आदि पुण्य द्रव्योंका ।२९। संग्रह और क्रय-विक्रय करता हैं तथा वह स्वजनों, अतिथियों और अभ्यागतो की आश्रय रूप होता है।३०। वह निरादर सहन नहीं करता और प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होता है ।३१। याचकों की अभिलाषा के अनुसार वस्तुएँ प्रदान करता है तथा मृदु स्वभाव का होता है, उससे अत्यन्त सुन्दरी पुत्रवती अनेक पत्नियाँ प्रेम करती हैं ।३२। यह निधि क्रमश:

अष्टमांश होती हुई सात पीढ़ी तक रहती है ।३३। और जिससे अधिष्टित होती है, उसको दीर्घ आयु करती हैं, वह मनुष्य बाँधवों और अमित मनुष्य का परिपालक होता है ।३४। परन्तु यह परलोक के लिए कोई यत्न नहीं करता और न नगर निवासियों से ही प्रीति रखता है ।३५।

पूर्वं मित्रेषुशैथिल्यंप्रीतिमन्यैः करोति च ।
तथैवसत्वरजसीयोबिभर्तिमहानिधिः ।३६
सनीलसंज्ञस्तत्संगीनरस्तच्छीलवान्भवेत् ।
वस्त्रकार्पासधान्यादिफलपुष्पपरिग्रहः ।३७
मुक्ताविद्रुमशंखानांशुक्त्यादीनांतथामुने ।
काष्ठादीनांकरोत्येषयच्चान्यज्जलसम्भवम् ।३८
क्रयविक्रयेमयेषांनान्यत्ररभिजायते ।
तडागान्पुष्करिण्याऽतथारामान्करोति च ।३९
बन्धंसरितांवृक्षास्पथारोपयतेनरः ।
अनुलेपनपुष्पादिभोगभुस्वाभिजायते ।४०
त्रिपौरुषश्चापिनिधिर्नीलोमामैषजायते ।
रजस्तमोमयश्चान्यः शंखसंज्ञोहियोनिधिः ।४१
तेनापिनीयतेविप्रद्गुणित्वं निधीश्वरः ।
एकस्यैवभवत्येषनरं नान्यमुपैति च ।४२

पहिले मित्र से मैत्री-भाव में शिथिलता और नयोंसे प्रीति स्थापित-करता है इसी प्रकार जो सत्य और रजोगुण के युक्त महानिधि है ।३६। वह नीलनिधि नामवाली अपनी अधिष्ठान रूप पुरुष को सतोगुण और रजोगुण से युक्त करती है, इसकी दृष्टि जिस पर पड़ती है, वह वस्त्र, कपास, धान्यादि अन्न, फल एवं पुष्प ।३७। तथा मोती मूँगा, शंख, सीपादि तथा जलमें उत्पन्न अन्य वस्तुओं और काष्ठादिका संचय करता है ।३८। और इन पदार्थो का स्वयं उपभोग करता हुआ क्रय-विक्रय भी करता है, उनके अतिरिक्त अन्य किसी विषयमें वह प्रीतिमान् नहीं होता ।३९। वह मनुष्य तडाग, पोखर उपवन बनवाता, नदी पर पुल

बँधवाता तथा वृक्षारोपण करता है और अनुलेप और पुष्पादि का अनुलेप करता हुआ प्रसिद्धि को प्राप्त होता है ।४०। यह नील निधि तीन पीढ़ी तक स्थित रहती है । तथा शंख नाम की निधि रजोगुण और तमोगुण के मिश्रण से युक्त है।४१। इसके अधिष्ठानसे पुरुष उक्त दोनों गुणों से युक्त होता है, यह एक ही पुरुष की अनुगामिनी होती है, किसी अन्य पुरुष तथा अन्य पीढ़ी में स्थित नहीं रहती ।४२।

यस्यशंखोनिधिस्तस्वरूपं क्रोष्टुशृणु ।
एकवात्मनासृष्टमन्नंभुङ्क्तेतथाम्बरम् ।४३
कदन्नभुवपरिजनोनचशोभवनस्त्रधृक् ।
नददातिसुहृद्भार्य्यामातृपुत्रस्नुषादिषु ।४४
स्वपोषणपर: शंखीनरोभवतिसर्वदा ।
इत्येतेनिधय:ख्यातानराणामर्थदेवता: ।४५
मिश्रावलोकनान्मिश्रा: स्वभावफलदायिन: ।
यथाख्यातस्वभावस्तुभवत्येवविलोकनात् ।
सर्वेषामाधिपत्येचश्रीरेषांद्विजपद्मिनो ।४६

हे क्रोष्टुके ! जो पुरुष शंखनिधि को अपने वश में कर लेता है उसका रूप सुनो,- वह स्वोपार्जित श्रेष्ट अन्न का भोजन करता और सर्वोत्कृष्ट वस्त्र पहनता है ।४३। परन्तु उसके कुटुम्बियों को निष्कृष्ट भोजन वस्त्र उपलब्ध होते औरउनका जीवन कष्ट से व्यतीत होता है और शंख निधि पुरुष अपने सहृद, भ्राता पत्नी, पुत्र आदि को भरण-पोषण को भी कुछ नहीं देता ।४४। केवल अपना ही भरण-पोषण करने में लगा रहता है । मनुष्य को वित्तका देवता कहकर यह निधि विख्यात है ।४५। इसके देखते से मनुष्य उपर्युक्त स्वभाव वाला है, परन्तु यह निधियाँ मिलकर देखनेसे संयुक्त फल के देने वाली हैं तथा स्वतन्त्र रूप से देखें तो स्वल्प फलप्रद है । यह श्री स्वरूपिणी पद्मिनी विद्या उक्त कष्ट निधियों के आश्रम में अधिष्ठित हैं ।४६।

६१—औत्तर मन्वन्तर प्रारम्भ

विस्तरात्कथितंब्रह्मन्ममस्वारोचिषंत्वया ।
मन्वन्तरं थैवाष्टौयेपृष्टानिधयोमया ।१
स्वायम्भुवपूर्वमेवमन्वन्तर मुदाहृतम् ।
मन्वन्तरतृतीयमेकथयोत्तमसंज्ञितम् ।२
उत्तानपादपुत्रोऽभूदुत्तमोनामनासतः ।
सुरुच्यास्तन्यः ख्यातोमहाबलपराक्रमः ।३
धर्मात्माचमहात्माचपराक्रमधोनृपः ।
अतीत्यसर्वभुत निवभौमानुपराँक्रमः ।४
समशत्रौचमित्रेच्च परेपुत्रे चधर्मवित् ।
दुष्टे चय मवत्साधौसोमवच्चमहामुने ।५
वाभ्रव्यांबइलांनाम उपयेमे सधर्मवित् ।
उत्तानपादतनयः शचीमिन्द्रइवोत्ताभः ।६
तस्यामनीबतस्यातीद्विदजवर्यमनः सदा ।
स्नेहवच्छशिनोयद्वद्रोहिण्यांनिहितास्पदम् ।७

क्रौष्टुकि बोले—हे ब्रह्मन् ! स्वरोचिष मन्वन्तर का बिषय आपने विस्तार पूर्वक वर्णन किया है, अब आठ मन्वन्तर और मेरे द्वारा पूछी गई निधि के विषय में कहिये ।१। आप स्वायंभुव मन्वन्तर का पहिले वर्णन कर चुके हैं, अब औत्तम नामक तृतीत मन्वन्तर का वर्णन करिए ।४। मार्कण्डेयजी ने कहा—राजा उत्तानपाद के एक अत्यन्त पराक्रमी उत्तम नामक पुत्र रानी सुरुचि के गर्भ से उत्पन्न हुआ ।३। यह धर्मवान् और पराक्रमी उत्तम राज्य को प्राप्त होकर अपने पराक्रम से अत्यन्त तेजस्वी हुए ।४। यह धर्मज्ञ राजा शत्रु मित्र यथा प्रजा और पुत्र में समान दृष्टि रखने वाले थे, वह दुष्टों के लिए सदा यम तुल्य और शिष्ट व्यक्तियों के लिए चन्द्रमा के समान शीतल थे ।५। जिस प्रकार इन्द्र ने सभी लोकों में प्रसिद्ध शची का पाणिग्रहण किया, उसी प्रकार उत्तम ने बभ्रु—सुता बहुला नाम की विख्यात कन्या का पाणिग्रहण

किया था ।६। हे द्विज श्रेष्ठ ! जिस प्रकार चन्द्रमा का चित्त रोहिणी में अनुरक्त है, वैसे ही उत्तम का चित्त बहुला में आसक्त था ।७।

अन्यप्रयोजनसक्तिमुतैतिन हितन्मनः ।
स्वप्नेचैवतदालम्बिसनोऽभूत्तास्वभूभृतः ।८
सचतस्याः सुचार्वङ्ग्यादर्शनादेवपार्थिवः ।
ददाहलोचनैर्गात्रे गात्रस्पर्शैश्चतन्मयः ।९
श्रौतोद्वेगकरं वाक्यप्रियमप्यवनीपते ।
तस्यापिभूरिसन्मानमेनेपरिभवंततः ।१०
अवमेनेस्रजदत्ताशुभान्याभरणानिच ।
उत्तस्थावधपीतेवपिवतोऽस्यबरः सवम् ।११
भुञ्जताचनरेन्द्रे क्षणमात्रकरेधृत ।
दुभुजेस्वल्पकंभक्ष्यद्विजनातिमुदायती ।१२
एवंतस्यानुकूलस्यनानुकूलामहात्मनः ।
प्रभूततरामत्यर्थ चक्रे रागमहीपतिः ।१३
अथपानगतोभूपः कदाचित्तमनस्विनीम् ।
सुरांभृतपानपात्र ग्राहयामासाददः १४
पश्यतांभूमिपालानांवार मुख्यासमन्वितः ।
प्रमीयमानोमधुरैर्गेयगायनतत्परैः ।१५

राजा का चित्त बहुला के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं था और वह स्वप्न से भी अन्य नारी का चिन्तन नहीं करते थे ।८। वह राजा अपनी स्वरूपवती भार्या को जैसे ही देखते, वैसे ही उसमें तन्मयहोजाते थे ।९। परन्तु रानी बहुला को उनके मधु वचन भी कटु प्रतीत होते और वह उनका सम्मान करने में भी अपना अपमान समझती थी ।१०। उनके द्वारा अर्पित माला और मनोहर आभूषणों के प्रति रानी अवज्ञा व्यक्त करती ।११। हे द्विज ! जब राजा भोजन के समय अनेक प्रकार आग्रह करते तब वह अप्रसन्न मन से अल्पाहार करती ।१२। उस प्रकार रानी के अधिक अनुकूल न होने पर भी राजा अपनी प्रिया के प्रति

अत्यधिक अनुराग प्रकट करते थे ।१३। एक समय जब श्रेष्ठ वारांगनाएँ मधुर स्वर से राजा के निकट गा रही थीं तभी राजा ने सुरापान की इच्छा करके अपने सभासदों के समक्ष ही निकट बैठी बहुला को मद्य से परिपूर्ण पात्र दिया ।१४।१५।

सातुनेच्छतितत्पात्रमादातुं तत्पाङ्मुखी ।
ससक्षमवनीशानांततः क्रुद्धः सपार्थिवः ।१६
उवाचद्वा:स्थमाहूयानिः श्वसनुरगोयथा ।
निराकुतस्योदेव्याप्रियापतिरप्रियः ।१७
द्वा:स्थनांदुष्टहृदयामादायविजनेवने ।
परित्यज्यामुनेतत्ते विचार्यवचनंमम् ।१८
ततोनृपस्यवचनमविचार्यसवेक्ष्यसः ।
द्वास्थतत्याजतांसुभ्रुमारोप्यस्यन्दनेवने ।१९
साचतविपिनेत्यागनीतातेनमहीभृता ।
अपश्यमानातमेनेपरंकृतमनुग्रहम् ।२०
सोऽपितआनुरागार्तिह्यमानात्ममानसः ।
औत्तानपादिर्भूपत्नीनान्याभार्यामविन्दता ।२१

पर रानी ने उससे विमुख होकर मद्य पात्र को ग्रहण नहीं किया, तो राजा को अत्यन्त क्रोध आया ।१६। और सर्प के समान निःश्वास को त्यागते हुए उन्होंने द्वारपाल को बुलाया और उससे बोले कि इस मेरी प्रियतमा बहुला ने मुझे अप्रिय मानकर मेरा निरादार किया है ।१७। इसलिए इस दुष्ट हृदय वाली को शीघ्र ही यहाँ से ले जाकर वन में छोड़ आओ, मेरी इस आज्ञा का तुरन्त पालन करो ।१८। मार्कण्डेय ने कहा—द्वारपाल ने राजा की आज्ञा को प्राप्त कर रानी को रथ में चढ़ाया और उसे वन में छोड़ आया ।१९। राजा द्वारा रानी को वन में छोड़े जाने पर, अब राजा को न देखना होगा ऐसा सोच कर रानी ने राजा का अनुग्रह ही माना ।२०। इधर राजा उत्तम ने रानी के प्रति अत्यन्त अनुराग होने के कारण दुःखित हृदय होते हुए अन्य पत्नी को ग्रहण नहीं किया ।२१।

सस्मारतांसुचार्वंगीमहर्निशमनिर्वृतः ।
चकारचनिजराज्यंप्रजाधर्मेणपालयन् ।२२
प्रजांपालयतस्तस्यपितुःपुत्रानिवौरसान् ।
आगतब्राह्मणः कश्चिद्‌दिमाहार्त्तमानसः ।२३
महाराजभृशार्त्तोऽस्मिश्रूयतांगदतोमम ।
नृणामार्तिपरित्राणमन्यतीननराधिप तु ।२४
ममभार्याप्रसुप्तस्यकेनाप्यपहृतानिशि ।
गृहद्वारमनुद्धाटयतांसमानेतुमर्हसि ।२५
नवेत्सिकेनापहृताक्ववानीतातुसाद्विज ।
यतामिविगृहेकस्यकुतोवाप्यानयानयामिताम् ।२६
तथैवस्थागितेद्वारिद्रसुप्तस्तगृहेमम ।
हृताभिभार्याकिंकेनेत्येतद्विज्ञायतेभवान् ।२७
त्वंरक्षितोननृपतेषड्भागादानवेतनः ।
धर्मस्यतेऽतोनिश्चिन्तास्वपन्तिमनुजानिशि ।२८

वह दुःख चित्त से उस शोभनाङ्गी का स्मरण करने लगा और इस अवस्था में भी धर्म पूर्वक प्रजा पालन करते हुए राज्य—कार्य में लगे रहे ।२२। वह राजा अपनी प्रजा का पालन और सुपुत्र के समान करते थे, एक दिन एक ब्राह्मण उनके निकट आया और दुःखित हृदय से बोला ।२३। हे राजन् मैं अत्यन्त क्लेश में हूँ, मेरी बात सुनो, क्योंकि मनुष्यों के क्लेश को राजा ही दूर कर सकता है ।२४। मैं रात्रि के समय जब शयन कर रहा था, तभी घर के द्वार खोले बिना ही किसी ने मेरी पत्नी का हरण कर लिया है, अब आप मेरी उस पत्नी को लाकर मुझे दीजिए ।२५। राजा ने कहा—हे ब्रह्मन् ! आपकी पत्नी का हरण किसने किया है और कहाँ रखा है ? जब तक मैं यह न जानलूँ, तब तक उसे कहाँ से प्राप्त करूँ ।२६। ब्राह्मण बोला—हे राजन् ! मेरे शयन करने पर घर का द्वार खोले बिना ही मेरी पत्नी का हरण किस प्रकार हुआ, यह तो आप ही जान सकते हैं ।२७। क्योंकि आप राजा

हैं, धर्म का षष्ठांश वेतन स्वरूप लेकर रक्षा के लिए नियुक्त हैं, इसलिए ये मनुष्य रात्रिकाल में निश्चय शयन करते हैं ।२८।

नतेदृष्टामयाभार्यायादृग्रूपाचदेहत: ।
वयश्चैवक्षमाख्य हिंकिशीलाब्राह्मणोचते ।२६
कठोरनेत्रासात्युच्चाह्रस्वबाहुः कृशानना ।
(लंबोदरीह्रस्वस्फितजतथाह्रस्वस्तनीनृप) ।
विरूपाभूपालनन्दिामितथैवताम् ।३०
वाचिभूपातिपरुषानसौम्यासाचशीलत: ।
इत्याख्यानामयाभार्यासकरालनिरीक्षणा ।३१
मनागतीतंभूपालतस्याश्चप्रथमवयः ।
तादृशरूपाहिमेभार्यासत्यमेतन्मयोदितम् ।३२
अलतेब्राह्मणतयाभार्यामन्ययांददामिते ।
सुखायभार्याकल्याणीदु:खहेतुर्हितादृशी ।३३
अल्प कुरूपताविगारगशीलमुत्तमम् ।
रूपशीलविहीनायात्याज्यातेन्येनसाहृता ।३४

राजा बोले—आपकी पत्नी को मैंने कभी नहीं देखा है, इसलिए आप उसकी आकृति, और स्वभाव का भले प्रकार वर्णन करिये ।२६। ब्राह्मण बोला-हे राजन् मेरी पत्नी कोठर नयन, दीर्घ आकार, छोटी भुजा, कृश मुख (लम्बा उदर और सूक्ष्म हाथ) वाली अत्यन्त कुरूप है, फिर भी मैं उसे निन्दनीय नहीं मानता ।३०। वह वाणी और स्वभाव से अत्यन्त कर्कश हैं, उसकी प्रथमावस्था कुछ कुछ ढल चुकी है, इस प्रकार उसका सभी वर्णन सत्य सत्य आपसे किया हे ।३१।३२। राजा ने कहा –हे विप्र ! ऐसी कुलक्षण पत्नी का आप क्या करेंगे ? मैं आपको एक अन्य पत्नी प्रदान करता हूं, क्योंकि सुलक्षण पत्नी से सुख और कुलक्षण से दु:ख ही प्राप्त होता है ।३३। हे ब्रह्मन् ! सौंदर्य और शील स्वभाव से हीं मंगल होता है, इसलिए कुरूप तथा शील रहित पत्नी का तो परित्याग ही ठीक है ।३४।

रक्ष्याभार्यामहीपालइतिचश्रुतिरुत्तमा ।
भार्यायांरक्ष्यमाणायप्रजाभवतिरक्षता ।३५
आत्माहिजायतेतस्यसारक्ष्यातोनरेश्वर ।
प्रजायांरक्ष्यमाणायामात्माभवतिरक्षिता ।३६
तस्यामरक्ष्यमाणायांभविता वर्णसंकरः ।
सपातन्येमहीपालपूर्वान्स्वर्गादधः पितृन् ।३७
(अनुज्ञायगुरुं राजन्दत्वान्यांजातवेदसे) ।३८
समिधतुमयाभार्यावृतेयंकर्कशायतः ।
कथमेतांविहायान्यभार्ययासहसंचरे ।३९
गृह्यधर्मोयतोब्रह्मप्राप्यतेशाश्वतंनरैः ।
पूर्वोढयात्धर्मेणगृहीकुर्वन्नसीदति ।४०
त्यक्त्वातांचक्रियांकुर्वन्नैवकर्म फलंलभेत् ।
अग्निनासाहृयानूनसाजगामगृहं शुभः ।४१
धर्मस्यगृहशेसातुपूर्वोढवप्रशस्यते ।
शठायाचारणात्तस्याजायतेवर्णसंकरः ।४२

ब्राह्मण बोला —हे राजन् ! पत्नी सदैव रक्षा के योग्य होती है, मुझे यह श्रुति विदित है ।पत्नी की सम्यक् रक्षा से ही सन्तान की रक्षा हो सकती है ।३५। हे राजन् ! पत्नी के गर्भ से अपने आत्मा की ही उत्पत्ति होती है, इसलिए सन्तान की रक्षा करने से अपने आत्मा की ही रक्षा होना माना गया है ।३६। इसलिए पत्नी की भले प्रकार रक्षा करे, उसकी रक्षा न करने से वर्णसंकर की उत्पत्ति होती है, जिसके कारण पूर्व पितरों का स्वर्ग से पतन होता है ।३७। (हे राजन् ! गुरुजनों की अनुमति से अग्नि साक्षी करके) ।३८। इस कर्कश पत्नी का मेरे साथ वरण हुआ है, इसलिए इसका त्याग करके अन्य नारी के साथ किस प्रकार यह आचरण करूं ।३९। जब ऐसे आचरण से ग्रहस्थ धर्म के साथ ही मनुष्य को शाश्वत ब्रह्म की प्राप्ति होती है, और जिस स्त्री के साथ धर्म करता हुआ गृही दुःखको प्राप्त नहीं होता ।४०। उस स्त्री को जो शुभ अग्नि की साक्षी में अपने गृह पर लाई गई है, त्याग कर

जो क्रिया वह करता है, यह क्रिया फल रहित होती है ।४१। वह प्रथम ही धर्म के ग्रहण में प्रशंसनीय है तथा उस दुष्टा के त्याग से वर्णसंकर की उत्पत्ति संभव हैं ।४२।

धर्महानिश्चानुदिनमभार्यस्यभवेन्मम ।
नित्यक्रियाणांविभ्रंशात्सचापिपतनायमे ।४३
तस्यांचपृथिवीपालभवित्रीममसन्ततिः ।
तवषड् भागदात्रीसाभवित्रीधर्म हेतुकी ।४४
तदेतत्त्मयाख्यातापत्नीयामेहृताप्रभो ।
तांसमानयरक्षायांभवानधिकृतोयतः ।४५
सतस्यैवच्च श्रुत्वाविमृष्यचनरेश्वरः ।
सर्वोपकरणैर्युक्तमारुरोहमहारथम् ।४६
इतश्चेतश्चतेनासौपरिबभ्राममेदिनीम् ।
ददर्शमहारण्येतापसाश्रममुत्तमम् ।४७
अवतीर्य चतत्रासौप्रविश्यदद्रशेमुनिम् ।
कौश्यांवृष्यांसमासीनंज्वलन्तमितेजसा ।४८
सदृष्ट्वानृपतिंप्राप्तंसमुत्थायत्वरान्वितः ।
समान्यस्वागतेनैवशिष्यामाहार्ध्यमानय ।४९

पत्नीके न होनेसे धर्मकी दिन-दिन हानि होती हैं यथा इस प्रकार नित्य क्रिया के नष्ट होने पर मुझे भी पतित भाव की प्राप्ति होगी ।४३। हे राजन् ! मेरी उस पत्नी के गर्भ से जो सन्तान होगी, वह आपको धर्मपूर्वक अपनी आय का छठवां भाग देगी ।४४। इन्हीं कारण से मैं निवेदन कर रहा हूँ कि आप मेरी उस पत्नी को लाकर दीजिये क्योंकि हमारी रक्षा के निमित्त आप ही नियुक्त हैं ।४५। मार्कण्डेयजी ने सोच विचार करके सर्व सामग्री सम्पन्न रथ पर चढे।४६। और रथ के द्वारा विचरण करते हुए एक महावन में श्रेष्ठ तपस्या मय आश्रम देखा ।४७। तब रथ से उतर कर उन्होंने आश्रम में प्रवेश किया जहाँ कुशा आसन पर अपने तेज से प्रकाशित एक श्रेष्ठ मुनि को बैठे हुआ

देखा ।४८। राजा का आगमन देखकर शीघ्रता पूर्वक उठते हुए मुनि ने उसका स्वागत सत्कार किया और अपने शिष्य को अर्घ्य लाने की आज्ञा दी ।४६।

तमाहशिष्यः शनकैर्दातव्योऽर्घ्योऽस्यकिंमुने ।
तदाज्ञापयसंचिन्त्यवाज्ञांहरोम्यहम् ।
ततोऽवगतवृत्तान्तोभूपपेस्तस्यसद्विजः ।
सम्भाषासनदानेचक्रे सम्मानमात्मवान् ।५०
किंनिमित्तमिहायातोभवान्किंतेचिकीर्षितम् ।
उत्तानपादतनयवेद्मित्वामुत्तमंनृपः ।५१
ब्राह्मणश्यगृहाद्भार्याकिनाप्यहहृतामने ।
अविज्ञातस्वरूपेणतामन्वेष्टमिहागतः ।५२
पृच्छामियत्ते तन्मेन्वंप्रणतस्यानुकम्पया ।
अभ्यागतस्याथगृहंभगवन्वक्तु मर्हसि ।५३
पृच्छमामवनीपालयत्प्रष्टव्यमशंन्तिः ।
वक्तव्यंचेत्तनमयाकमयिष्यामितत्वतः ।५४
गृहागतायथोमह्यं प्रथमेदर्शनेमुने ।
त्वयासमुद्यतोदातुं कथसोऽर्घ्योनिवर्तितः ।५५

इस पर शिष्य ने कहा—कि इन महाराज को अर्घ्यदान उचित होगा या नहीं, इसका विचार करके ही आज्ञा दीजिए, मैं आपकी आज्ञा का तत्काल पालन करूंगा, तब आत्मवान मुनि ने सब वृत्तान्त जान लिया और आसन दे सभाषण द्वारा ही उन्होंने राजाका सम्मान किया ।५०। ऋषि बोले—हे राजन् ! आप उत्तानपाद-तनय उत्तम हैं, यह मुझे विदित हैं, परन्तु आप यहाँ क्यों आये है ? आपका इच्छित विषय क्या है, यह बतलाइए ।५१। राजा ने कहा—हें मुने ! एक ब्राह्मण के घर से कोई अज्ञात व्यक्ति उसकी पत्नी को हर ले गया है मैं उसी ब्राह्मणी की खोज के लिए यहां आया हूं ।५२। हे भगवन् ! मैं आपसे जो विनम्र निवेदन करता हूं, आप अनुग्रह पूर्वक मुझे कृपा के योग्य समझकर उसे कहने की आज्ञा दीजिये ।५३। ऋषि बोले—हे राजन् !

आप जो पूछना चाहें, शंकारहित होकर पूछें, कथन योग्य बात को मैं यथार्थ रूप में ही कहूंगा ।५४। राजा ने कहा- मैं जब यहाँ आया था तब पहिले आप मुझे अर्घ्य देने की इच्छा करते थे, फिर आप उससे निवृत्त क्यों हो गए ।५५।

त्वद्दर्शनेनरभरसादाज्ञप्तोऽयंमयानृप ।
यदातदहामहेतेनशिष्येणप्रतिबोधितः ।५६
एषवेत्तिजगत्यत्रमत्प्रसादादनागतम् ।
यथाहसमतीतंचवर्त्तमानंचवर्त्तमानंचसर्वतः ।५७
आलोच्याज्ञापयेत्युक्ते ततोज्ञातंमयापितत् ।
ततोनदत्तवानर्घ्यमहतुभ्यविधानतः ।५८
सत्यराजंस्त्वमर्घ्यार्हः कुलेस्वायम्भुवस्यच ।
तथापिनार्घ्ययोग्यंत्वांम यामोवयेमुत्तमम् ।५९
किंकृतंहिमयाब्रह्मञ्ज्ञानादज्ञानतोऽपिवा ।
येनत्वत्तोर्ध्यर्हामिनाहमस्यागतश्चिरात् ६०
किंविस्मृतंतेयत्पत्नीत्वयात्यक्ताचकानने ।
परित्यक्तस्तयासार्द्धं त्वलाधर्मोनपाखिलः ।६१
पक्षेणकर्मणोहान्याप्रयात्यस्पश्यतांनरः ।
किमत्वार्षिकीयस्यहानिस्तेनित्यकर्मणः ।६२
पत्न्यानुकूलयाभाव्यंयथाशीवेऽपिभर्त्तरि ।
दुःशीलापितथाभार्यापोषणीयानरेश्वरः ।६३

ऋषि बोले—हे राजन् ! आपके देखते ही, जैसे हो मैंने अर्घ्य लाने की आज्ञा दी, वैसे ही इस शिष्य ने शंका व्यक्त की ।५५। जैसे मैं अतीत, वर्त्तमान और भविष्य के सभी गुप्त या प्रकट वृत्तान्त को भले प्रकार जानता हूँ, वैसे ही मेरा यह शिष्य भी मेरे प्रसाद से भूत, भविष्य वर्तमान का ज्ञाता है ।५७। इस शिष्य ने विचार कर आज्ञा देने का अनुरोध किया, तब मैंने सब बात जानकर आपको विधिवत् अर्घ्य नहीं दिया ।५८। हे राजन् ! आप स्वायम्भुव मनुके वंशोत्पन्न हैं, इसलिए अर्घ्य के योग्य होकर भी मेरे विचार में अर्घ्य के योग्य

नहीं है ।५९। राजा ने कहा—हे भगवन् ! मैं जाने-अनजाने में ऐसा कौन सा कार्य किया है । जिससे प्रथम बार आकर भी मैं अर्घ्य के योग्य नहीं रहा ? ।६०। ऋषि बोले—हे राजन् ! आपने पत्नी को त्याग कर वन में भेज दिया है, क्या यह स्मरण नहीं रहा ? उस पत्नी के त्याग के साथ ही आपने धर्म का भी त्याग कर दिया समझो ।६१। धर्म-कर्म की हानि के एक पक्ष तक होने से मनुष्य स्पर्श के योग्य भी नहीं रहता, तुम्हारी तो वर्षों ही कर्म-हानि हुई है, इसलिए अपनी अर्घ्य विषयक योग्यता पर आप स्वयं ही विचार कीजिये ।६२। हे राजन् ! जैसे पति के विपरीत चरित्र वाली होने पर भी पत्नी को पति की अनुगामिनी होना कर्त्तव्य है, वैसे ही शील-रहित होने पर भी उसकी भरण-पोषण पति का कर्त्तव्य है ।६३।

प्राकुलापिसापत्नीतस्यविप्रस्तयाहृता ।
तथापिधर्मकामोऽसौत्वामुद्दयोतितवान्नृप ।६४
चलतः स्थापयस्यन्यान्स्वधर्मेषुमहीपते ।
त्वांस्वधर्माद्विलित कोऽपरःस्थापयिष्यति ।६५
(द्वीपेकडगरीयेवाराज्ञिचान्यायवर्तिनि) ।
पापकृत्सुचद्वित्सुचद्वित्सुनियंताजतुरत्रकः ।
विलक्ष्य समहीपालइत्युक्तस्तेनधीमता ।
तथेत्युक्त्वाचपप्रच्छहृतांपत्नोद्विजन्मनः ।६६
भगवन्केननीतासापत्नीविप्रस्यकुत्रवा ।
अतीतानागतवेत्तिजगत्यवितथंभवान् ।६७
तांजहाराद्रितनयोवलाकोनामराक्षसः ।
द्रक्ष्यतेचाद्यतांभूरउत्पलावतकेवने ।६८
गच्छसंयोजयाशत्वंभार्यां याहिद्विजोत्तमम् ।
मापापास्पदतांवातुत्वमिव सौदिनेदिने ।६९

हे राजन् ! उस ब्राह्मण की हरण की गई पत्नी उसके प्रतिकूल है तो भी वह उसकी इतनी खोज कर रहा है ।६४। हे राजन् ! धर्मभ्रष्ट

को धर्म में स्थापित करने वाले आप ही हैं, परन्तु जब आप स्वयं ही धर्म को छोड़ेंगे तब आपको उसमें कौन प्रवृत्त करेगा ? ।३५। (खेत की मेंड़ ही यदि खेतव धान्य का भक्षण करके अपना निग्रह करे, राजा अन्यायी हो या विद्वान् पुरुष पाप कर्म करे तो फिर शिक्षा देने वाला कौन होगा ?) मार्कण्डेयजी ने कहा—ऋषि के ऐसे वचन सुनकर राजा लज्जित हो गये और सब दोष स्वीकार कर, विप्र पत्नि का वृत्तान्त उन्होंने पूछा ।६६। हे भगवन् ! आप विश्व के सभी भूत, भविष्य, वर्तमान ज्ञाता हैं, अब उस विप्र पत्नी को किसने हरण किया और कहाँ रखा है, यह बताने की कृपा करिए ।६७। ऋषि बोले—हे राजन् ! उस ब्राह्मणी का हरण अद्रि के पुत्र बालक नाम राक्षस ने किया हैं, उसे आप इस समय उत्पलावत नाम के वन में देखेंगे ।६८। अब आप जाइये और ब्राह्मण को उसकी पत्नी से मिलाइये, जिससे उस ब्राह्मण को आपके समान पाप का भागी न होना पड़े ।६६।

६२—द्विजभार्या को पति के घर भेजना

अथारुरोहस्वरथप्रणिपत्यमहामुनिम् ।
तेनाख्यातंवनंतच्चप्रययावुत्पलावतम् ।१
यथाख्यातस्वरूपांचभार्य्याभर्त्तुर्द्विजस्यताम् ।
भक्षयन्तींददर्शाथश्रीफलानिनरेश्वरः ।२
पप्रच्छाचकथंभद्रेत्वमेतद्वनमागता ।
स्फुटंब्रवीहिवैशालेरपिभार्य्यासुशर्मणः ।३
सुताहमतिरात्रस्यद्विजस्यवनवासिनः ।
पत्नीविशालपुत्रस्ययस्नामत्वयोदितम् ।४
साहहृताबलाकेनराक्षसेनदुरात्मना ।
प्रसुप्ताभवनस्यान्तभ्रातृमातृवियोजिता ।५
भस्मीभवतुतद्रक्षोयेनास्म्येवबियोजिता ।
माताभ्रातृभिरन्यैश्चतिष्ठाम्यत्रसुदःखिता ।६

अस्मिन्वनेऽतिगहनेयेनानीयाहमुज्झिता ।
नवेद्मिकारणं कितन्नो भुङ्क्तेनखादत ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—राजा उस महर्षि को प्रणाम करके-रथ में चढ़े और महर्षि द्वारा बताये हुए उत्पलावत वनमें पहुँचे ।१। वहाँ देखा कि पति के बताए हुए रूप वाली वह ब्रह्माणी श्रीफल खा रही है ।२। उसे देखकर उन्होंने पूछा—हे भद्रे ! तुम वनमें किस प्रकार आ गईं तुम विशाल पुत्र सुशर्मा नामक ब्राह्मण की पत्नी हो न ? यह स्पष्ट बताओ । ब्राह्मणी बोली— मैं अति रात्रि नामक बनवासी ब्राह्मणी की पुत्री और जिन विशाल पुत्र का आपने नाम लिया है, उनकी ही भार्या हूं ।४। मैं घर में शयन करती थी, तभी पापी राक्षस मुझे भाई और माता से वियोग करके यहाँ ले आया है ।५। अब सब आत्मीयजनों से पृथक् होकर अत्यन्त दुःख पूर्वक यहाँ रह रही हूं । जिस राक्षस ने मेरी यह दशा की है, वह भस्म हो जाय ।६। मुझे ज्ञान नहीं कि वह मेरा भक्षण या उपभोग क्यों नहीं करता ।७।

अपितज्ज्ञातेद्रक्षस्त्वामुत्सृज्यक्ववैगतम् ।
अहं भर्त्रातवैवात्रप्रेषितोद्विजनन्दिनि ।८
अस्यैवकाननस्यान्तः सतिष्ठतिनिशाचरः ।
प्रविश्यतुभवान्नबिभेतितनोयदि ।९
प्रविवेशततःसोथतयावर्त्मनिदर्शिते ।
ददृशेपरिवारेणसमवेतचराक्षसम ।१०
दृष्टमात्रेततस्तस्मिस्त्वरमाणसराक्षसा ।
दूरादेवमहीमूर्ध्नान्स्पृशन्पादान्क्रिययौ ।११
ममात्रागच्छतागेहं प्रसादस्तेमहान्कृतः ।
प्रशाधिकिंकरोम्येषवसाविपयेतव ।१२
अर्घ्यंचेमंप्रतीच्छत्वंस्थीयतांचेदमासनम् ।
वयं भृत्याभवान्स्वामीदृढमाज्ञापयस्वमाम् ।१३
कृतमेवत्वयासर्वसत्र्मिपतिचिः कृताः ।

किमर्थं ब्राह्मणवधूस्त्वयानीता निशाचर: ।१४

राजा ने कहा—तुम्हारे पति मुझे यहाँ भेजा है, क्या तुम्हें ज्ञात है कि वह राक्षस इस समय कहाँ होगा ? ।८। ब्राह्मणी बोली—इसी वन प्राँत में कहीं होगा, यदि उससे डर न हो, तो वन में प्रवेश करो तो वह दिखाई पड़ जाएगा ।६। मर्कण्डेयजी ने कहा—ब्राह्मणी द्वारा मार्ग प्रदर्शित करने पर राजा ने वन में घुस कर अपने परिवारी जनों से घिरे हुए उस राक्षस को देखा ।१०। वह राजा को देखते ही तुरन्त उठा औ मस्तक से पृथिवी को स्पर्श करता हुआ राजा के चरणों के समीप आकर बोला ।११। राक्षस ने कहा—महाराज की मुझे क्या आज्ञा है, किसलिए मेरे घर पर पधारे हैं, मैं आपके राज्य में निवास करता हूं आप मुझे आज्ञा करिए ।१२। यह अर्घ्य ग्रहण करिए, इस आसन पर विराजमान होइये, आप स्वामी हैं और मैं सेवक हूं; आप मुझे नि:सकोच आज्ञा दीजिए ।१३। राजा ने कहा—तुमने अपने कर्तव्य का पालन और अतिथि संस्कार भी उचित रीति से किया है, परन्तु तुम उस विप्र पत्नी को क्यों हरण कर लाये ।१४।

नेयंसुरूपासन्त्यन्या भार्यार्थेचेद्धृतात्वया ।
भक्ष्यार्थंचेत्कथंनात्तात्वयैतत्कथ्यतांतम् ।१५
नवयंमानुषाहाराअन्येतेनृपराक्षसा: ।
सुकृतस्यफलंयत्त तदश्नीमोवयंनृप: ।१६
(सुकृतस्यफलयत्तु तत्तवध्याम्याभ्यहंनृप: ।
राक्षसीयोनिमापन्न क्रूरांलोकभयंकरीम्) ।
स्वभावच मनुष्याणांयोषितांचविमानिता: ।
नामिषं चसमश्नीमोनवयंजन्तुखादका: ।१७
यदस्माभिर्नृणाक्षान्तिभुक्ताक्रुध्यन्तितेतदा ।
भुक्तेदुष्टेस्वभावेच गुणवन्तोभवन्ति च ।१८
सन्तिन: प्रमदाभूपरूपेणाप्सरसांममा: ।
राक्षस्यस्तासुप्तिष्ठत्सुमानुषीषुरति: कथम् ।१९

यद्येषानोपभोगायनाहारायनिशाचर: ।
गृहप्रविश्यनिप्रस्तत्किमेषाहृतात्वया ।२०

पत्नी बनाने को लाये हैं, यह भी नहीं कह सकता, क्योंकि वह कठोर हैं, यदि भक्षणार्थ लाये है तो भक्षण क्यों नहीं करते ? यह सब मुझे यथार्थ रूप में वताओ ।१५। राक्षस बोला --हे राजन् ! मनुष्य का भक्षण करने वाला मैं नहीं हूं, मनुष्य भक्षी राक्षस अन्य होते हैं, मैं तो पुण्य फल का ही भोजन करता हूं ।१६। (हे नृप अब मैं पुण्य का फल बताता हूं, क्रूर और भयदायक राक्षस योनि को प्राप्त हुआ मैं) सम्मान युक्त अथवा सम्मानित स्त्री-पुरुषों के स्वभाव का ही सदा भोजन करता हूँ, मैं जन्तुभोगी राक्षस नहीं हूं ।१७। इस प्रकार क्षमा गुण वाले स्वभाव का भोजन करने से क्रोध उत्पन्न होता हैं और दुष्ट स्वभाव का भोजन करने पर वह गुण प्राप्त होते हैं ।१८। हे राजन् ! मेरे पास रूपवती अनेक राक्षसी पत्नियाँ हैं, मैं मनुष्य स्त्री की कामना क्यों करता ? ।१९। राजा ने कहा—यदि यह ठीक हैं तो तुमने इसका ब्राह्मण के घर से हरण क्यों किया ? ।२०।

मन्त्रवित्जद्विजश्रेष्ठोयज्ञेगतस्यमे ।
रक्षोघ्नमन्त्रपठनात्करोत्युच्चाटनंनृप: ।२१
वयबुभुक्षितास्तस्तयमन्त्रोच्चाटर्मणा ।
क्वयाम:सर्वयज्ञेषुसत्रर्त्विरभवतिद्विज: ।२२
ततोऽस्माभिरिदंतस्यवै कल्यमुपपादितम् ।
पत्न्याविनापुमानिज्याकर्मयोग्योनजायते ।२३
वैकल्योच्चारणात्तस्यब्राह्मणस्यमह मते: ।
तत:सराजातिभुशविषण्ण:समाजायत: ।२४
वैकल्यमेषविप्रस्यवदन्मामेबनिन्दति ।
अनहमर्धस्यचगासोऽप्याहमुनित्तम: ।२५
वैकल्यंतस्यविप्रस्यराक्षसोऽप्याहमेयथा ।
अपत्नीकतयासोऽहंसकट महदास्थित: ।२६

एवंचिन्तयतस्तस्यपुनरप्याहराक्षसः ।
प्रणामनम्रोराजानंवद्धांजलिपुटोलुने । ७
नरेन्द्राज्ञाप्रजानेनप्रसादःक्रियतामम ।
भृत्यस्यप्रणतस्येत्थंयुष्यद्विषयवासिनः ।२८

राक्षस बोला—हे राजन् ! वह ब्राह्मण मन्त्रवेत्ता है और सभी यज्ञों में जाकर रक्षोघ्न मन्त्र का पाठ करके मेरा उच्चाटन करते हैं ।११। जब वह मन्त्र पाठ द्वारा मेरा उच्चाटन करतेहैं, तब-तब मैं क्षुधासेपीड़ित होकर कहाँ जाऊँ ? क्योंकि वह सभी यज्ञों में ऋत्विक बनते हैं ।१२। इसीलिए मैंने उनके चित्त को उद्विग्न किया हैं, क्योंकि भार्या के बिना पति कभी किसी यज्ञ कर्म में समर्थ नहीं होता ।२३। मार्कण्डेयजी ने कहा—राक्षस द्वारा ब्रह्मण के चित्त का उद्विग्न किया जाना सुनकर राजा अत्यन्त क्षुभित हुए ।२४। और उन्होंने सोचा कि ब्राह्मण को उद्विग्न किया कहकर वह राक्षस मेरी ही निन्दा करता है, इसी कारण उन ऋषिवर ने मुझे अर्घ्य के अयोग्य बताया था ।२५। और अब यह राक्षस भी मुझ पत्नी-विहीन के समान ही ब्राह्मण की पत्नी का हरण करके उसको उद्विग्न किया करता है, ।२६। इस प्रकार राजा विचार कर ही रहे थे, तभी उस राक्षस ने पुनः विनम्रता पूर्वक प्रणाम करके निवेदन किया ।२७। हे राजन् ! मैं भी आपका प्रजाजन हूँ, इस कारण इस सेवक को आज्ञा देकर कृतार्थ करिये ।२८।

स्वभावंवयश्नीमस्त्वयोक्तं यन्निशाचर ।
तदर्थिनोवयंयेनकार्येणशृणुतान्मम । २९
अस्यास्त्वयाद्यब्राण्यादौ शील्यंमुपभुज्यताम् ।
येनत्वयात्तदौःशील्यातद्विनीताभवेदियम् ।३०
नीयतांयस्यभार्येयंतस्यवेश्मनिशाचरः ।
अस्मित्कृतंसर्वंगृहमभ्यागतस्यमे ।३१
ततःसरक्षसस्तस्ताःप्रविश्यान्तःस्वमायया ।
भक्षयामासदौःशील्यंनिजशक्तयानृपाज्ञयया ।३२

दौ: शील्येनातिरौद्रेणपत्नींतस्यद्विजन्मन: ।
तेनसापम्मरित्यक्तामम।हजगतीपतिम् ।३३
स्वकर्मफलपाकेनभर्तुस्तस्यमहात्मन: ।
वियोजितांहंतद्धेतुरयमासीन्निशाचर: ।३४
नास्यदोषोनवातस्यममभर्तुर्महात्मन: ।
ममैवदोषोनान्यस्यस्वकृतंह्यपभुज्यते । ५

राजा बोले—हे निशाचर ! तुमने स्वभाव भक्षण करने की बात कही है, अब मैं जिस कार्य के लिए आया हूं, उसे सुनो ।२९ तुम इस ब्राह्मणी के खोटे स्वभाव का भक्षण करो . इससे स्वभाव में विनम्रता आ जाएगी ।३०। ऐसा करने के पश्चात् इसे उसी के घर पहुँचा दो, जिसकी यह पत्नी है, ऐसा करने से तुम्हारे द्वारा मेरे आतिथ्य सत्कार की भी पूर्ति होगी ।३१। मार्कण्डेयजी ने कहा. तब अपनी माया के प्रभाव से उस राक्षस ने ब्राह्मणी के हृदय में प्रवेश किया और उससे दुष्ट स्वभाव का भक्षण कर लिया ।३२। तदन्तर अपने अत्यन्त दुष्ट स्वभाव से मुक्त हुई वह ब्राह्मणी राजा से बोली ।३६। मैं अपने कर्म से ही अपने महात्मा स्वामी के वियोग को प्राप्त हुई हूँ, यह राक्षस उसका एकमात्र निमित्त है ।३४। परन्तु इस राक्षस या मेरे उन महात्मा पति का इसमें कुछ भी दोष नहीं है, दोष तो मेरा ही है, क्योंकि स्वकृत कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है ।३५।

अन्यजन्मनिकस्यापिवियोग: कृतोमया: ।
सोऽसंमयाप्युपगत: कोषोऽस्यमहात्मन: ।३६
प्रापयामितवादेशादिमांतुर्गृहंगभा: ।
यदन्यत्करणीय तेतदाज्ञापयार्थिव ।३७
अस्मिन्कृतेकृतंसर्वंत्वयामेरजनीचर ।
आगन्तव्यंचतेवोरकार्य्यकाले स्मृतेनमो ।३८
तथेत्युक्त्वातुतद्रक्षस्तामादायद्विजाङ्गनाम् ।
निन्येभर्तृगृहं शुद्धाद्दौ: शील्यापगमात्तदा ।३९

प्रतीत होता है किसी पूर्व जन्म में मैंने किसी का वियोग कराया था, इसी से मेरा भी अपने पति से वियोग हुआ, इसमें इस राक्षस का क्या दोष है ? ।३६। राक्षस ने कहा — हे महाराज ! आपकी आज्ञा से मैं अभी इसको पति-गृह पहुँचाता हूँ, मुझे आज्ञा दीजिए कि आपका और क्या कार्य करूँ ।३७। राजा बोले—हे राक्षस ! इस कार्य को करके तुमने मेरे सभी कार्य कर दिए हैं, फिर हे वीर ! मेरे द्वारा स्मरण करने पर तुम मेरे पास उपस्थित होओ, यह स्वीकार करो ।३८। मार्कण्डेयजी ने कहा- राक्षस ने राजा की बात स्वीकार करके दुष्ट स्वभाव से मुक्त हुई उस ब्राह्मणी को उसके पति गृह में जा पहुँचाया ।३९।

६४--ऋषि से उत्तम का कथोपकथन

तांप्रेषयित्वाराजापिस्वभर्तृ गृहमंगनाम् ।
चिन्तयामासनिः श्वसन्किमत्रसुकृतंभवेत् ।१
अनर्घयोग्याकष्टं समामाहमहामना: ।
वैकल्यविप्रमुदिदृश्यततथाहायनिशाचर: ।२
सोऽहंकरिष्यामित्युक्तापत्नीमयाहिसा ।
अथवाज्ञानदृद्धितपृच्छामिमुनिसत्तम् ।३
संचिन्त्येत्थसभूपालः समारुह्यचमरथम् ।
ययौयत्रसधर्मात्मा त्रिकालज्ञोमहामुनिः ।४
अवरुह्यरथासोऽथतंसमेत्यप्रणम्यच ।
यथावृत्तं समाचख्योराक्षसेनसमागमम् ।५
ब्राह्मण्यादर्शनंचैवद्धौः शील्यापागमंतथा ।
प्रेषणंतु गेहेचकार्यमागमनेचयत् ।६
ज्ञातमेतन्मयापूर्वंयत्कृतं तेनराधिपः ।
कार्यकागमनेचैवमत्समीपेतवाखिलम् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा– उस ब्राह्मणी को उसके पति के घर भेजकर राजा दीर्घश्वास लेते हुए सोचने लगे कि अब किस कर्म के द्वारा मेरी भलाई हो ।१। इन महर्षि ने मुझे पत्नी त्याग के कारण अर्घ्यके अयोग्य बताया और इस राक्षस ने भी ब्राह्मण के प्रति पत्नी वियोग से उत्पन्न कर्म-हानि का विषय कहा ।२। मैंने अपनी पत्नी का परित्याग किया है, अब मुझे क्या करना चाहिये, इस विषय में उन्हीं ज्ञान दृष्टि वाले महर्षि से प्रश्न करूँ ।३। ऐसा विचार करके राजा रथारूढ़ हुए और उन त्रिकालज्ञ मुनि के आश्रम में पहुँचे ।४। रथ से उतर कर उनके निकट उपस्थित हुए और प्रणाम करके ब्राह्मणी से मिलना, राक्षस से समागम होना ब्राह्मणी के दुष्ट स्वभाव का नष्ट होना और उसे उसके पति-गृह भेजकर पुनः उसके पास आने का उद्देश्य भी आदि से अन्त तक कहा ।५। ऋषि ने कहा—हे राजन् ! आपके द्वारा किया गया कार्य और पुनरागमन का उद्देश्य मैं पहिले ही जान चुका हूं ।७।

प्रष्टुं मामिह किं कार्यं समयेत्यद्विग्नमानसः ।
त्वमागतो महीपाल शृणु कार्यं च यत्त्वया ।८
पत्नी धर्मार्थकामानां कारणं वप्रलं नृणाम् ।
विशेषतश्च धर्मस्य सक्तस्त्यजता हितम् ।९
अपत्नीक नरो भूप न योग्यो निजकर्मणाम् ।
ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यः शूद्रोऽपि वा नृप ।१०
त्यजता भवता पत्नीं न शोभनमनुष्ठितम् ।
अत्याज्यो हि यथा भर्त्ता स्त्रीणां भर्त्ता तथा नृणाम् ।११
भगवन्किं करोम्येष विपाको मम कर्मणाम् ।
नानुकूलानुकूलस्य यस्मात्यक्ता ततो मता ।१२
यद्यत्करोति तत्क्षान्तं दह्यमानेन चेतसा ।
भववंस्तद्वियोगार्ति विभ्यतेमान्यरात्मना ।१३
साम्प्रतं नु वने त्यक्ता न वेद्मि क्व नु सा गता ।
भक्षिता वापि विपिने सिंहव्याघ्रनिशाचरैः ।१४

फिर भी आप स्वयं ही मुझसे प्रश्न करें, इसी की प्रतीक्षा में था। हे राजन् ! अब आप अपने कर्त्तव्य के विषय में सुनिये ।८। धर्म, अर्थ और काम के साधनका प्रबल कारण भार्या ही है, जो भार्या को त्याग देते हैं, वह धर्मका भी त्याग करते है ।९। हे राजन् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र ही क्यों न हो, पत्नी को त्याग करके अपने कर्म के अनुष्ठान में समर्थ नहीं होते ।१०। हे राजन् ! आपने पत्नी का त्याग करके उचित कार्य नहीं किया है जैसे स्त्री के लिए पतिका त्याग अनुचित हैं, वैसे ही पति के लिए पत्नी का त्याग भी उचित नहीं हैं ।११। राजा बोले—हे भगवन् ! मैं तो पत्नी का त्याग कर ही बैठा, अब मुझे क्या करना चाहिये ? ।११ उनके वियोग के कारण मेरा-अन्तरात्मा क्षोभ से भरा हुआ है और चित्त दग्ध हो रहा है, इसीलिए उस पत्नी द्वारा किये सब अप्रिय आचरण भूल गया हूँ ।१३। परन्तु वन में त्यागी मेरी पत्नी न जाने कहाँ चली गई होगी ? उसे सिंह, व्याघ्र राक्षस कोई भी खा गया होगा ।१४।

नभक्षितासाभूपालसिंहव्याघ्रनिशाचरैः ।
सात्वविप्लुतचरित्रासाम्प्रततुरसातले ।१५
सानीताकेनपातालमास्तेसाऽदूषिताकथम् ।
अत्यद्भुतमिदंब्रह्मन्यथावद्वक्तु मर्हसि ।१६
पातालेनागराजोऽस्तिप्रख्यातश्चकपोतकः ।
तेनदृष्टात्वयात्यक्ताभ्रममाणमहावने ।१७
सारूपशलिनीतेनसानुरागे पार्थिव ।
वेदिताथनपातालनीतासायुवतीतदा ।१८
ततस्तस्यसुतासुभ्रर्नन्दानामममहीपते ।
भार्यामनोरमाचास्यनागराजस्यधीमतः ।१९
तयामातुःसपत्नीयं सभवित्रर्तिशोभना ।
दृष्टास्वगेहसानीतागुप्ताचान्तः पुरेशुभा ।२०
यदातुयाचितानन्दानददतिनृपात्तम् ।
मूकाभविष्यसीत्याहतदातांतनयांपिता ।२१

ऋषि ने कहा—हे राजन् ! सिंह, व्याघ्र अथवा राक्षस किसी ने भी उसका भक्षण नहीं किया है, वह इस समय विशुद्ध चरित्र मुक्त होकर रसातल में रह रही है ।१५। राजा बोले -हे ब्रह्मन् ! मेरी पत्नी रसातल में किसके द्वारा गई हैं और किस प्रकार विशुद्ध होकर रहती हैं, यह अद्भुत बात मुझे यथावत् बताने की कृपा करिए ।१६। ऋषि ने कहा—हे राजन् ! कपातक नाम के एक नागराज रसातल में रहते हैं। वे आपके द्वारा परित्यक्त उस रानी पर अनुरक्त हो गए और अपना प्रयोजन बताकर वह उसे रसातल में ले गए ।१७-१८। उस नागराज की पत्नी का नाम मनोरमा तथा कन्या नाम नन्दा है ।१९। उस कन्या ने इस सुन्दरी को अपनी माता की होने वाली सपत्नी जानकर उसे अन्तपुर में छिपा लिया ।२०। जब नागराज उस सुन्दरी के विषय में अपनी पत्नी से कहते तब वह उन्हें कुछ उत्तर न देती थी, इस पर नागराजने अपनी पुत्री नन्दा को गूँगी होने का शाप दे दिया ।२१।

एवंशप्तासुतापुनसाचास्येतत्रभूपते ।
नीतातेनोरगेन्द्रेणघृतातत्सुतयासती ।२२
ततोराजापरहर्षमवाप्यतमपृच्छत ।
द्विजवर्यस्वदौर्भाग्यकारणंदयितांप्रति ।२३
भगवन्सर्वलोकस्यमयिप्रीतिरनुत्तमा ।
किन्नुतत्कारणंयेनस्वपत्नीनातिवत्सला ।२४
ममचासायतीवेष्टाप्राणेभ्योऽपिमहामुने ।
साचमाप्रतिदुःशीलाब्रूहितत्कारणं द्विज ।२५
पाणिग्रहणकालेत्वसूर्यभौमशनैश्चरैः ।
शुक्रवाचस्पतिभ्यांचतवभार्याबलोकिता ।२६
तन्मुहूर्तेऽभवच्चन्द्रस्तस्याः सोमसुस्तथा ।
परस्परविपक्षौतौततः पार्थिवतेभशम ।२७
तद्गच्छत्वंस्वधर्मेणपरिपालयमेदिनीम् ।
पत्नीसहायसर्वाश्चकुरुधर्मवतीः क्रिया ।२८

इत्युक्तेप्रणिपत्यैनमारुह्यस्यन्दनंपरम् ।
उत्तमः पृथिवीपालआजगामनिजंततः ।२९

हे राजन् ! वह नागकन्या इस प्रकार अपने माता पिता के द्वारा शापित हुई है, फिर भी उसने सुन्दरी को पकड़ रखा है ।२२। मार्कण्डेयजी ने कहा—इस पर राजा अत्यन्त हर्षित हुए उन्होंने अपनी पत्नी के अपने प्रति अप्रिय भाव का कारण ऋषि से पूछा ।२३। राजा बोले--हे भगवन् ! सभी पुरुष मुझसे अत्यन्त प्रेम करते है, परन्तु मेरी अपनी ही पत्नी मुझ में अनुरागिनी नहीं है, इसका कारण क्या है? ।२४। हे मुने ! मेरे प्राणों से अधिक प्रिय होने पर भी वह पत्नी मेरे प्रति कुव्यवहार करती है, उसका कारण मुझे बताइये ।२५। ऋषि ने कहा-जिस समय आपका विवाह हुआ था, उस समय आप पर सूर्य, मङ्गल और शनिश्चर की तथा आपकी पत्नी पर शुक्र और बृहस्पति की दृष्टि थी ।२६। उसी मुहुर्त में आपके बुध और आपकी पत्नी के चन्द्रमा परस्पर में घोर विपक्षी थे ।२६। अब जाकर अपनी पत्नी से मिलो और सब प्रकार धर्म-कार्यों का अनुष्ठान और पृथिवी का पालन करो ।२८। मार्कण्डेयजी ने कहा—महर्षि के ऐसा कहने पर महाराज उत्तम ने उन्हें प्रणाम किया और रथारूढ होकर अपने नगर में आये २९।

८३--औत्तम मुनि की उत्पति

ततःस्वनगरं प्राप्यटंददर्शद्विजनृपः ।
समेतभार्यमाचैवशीलवत्यामुदान्वितम् ।१
राजवर्यकृतार्थोऽस्मियतोधम्मोहिरक्षितः ।१
धर्मज्ञ नेहभवताभार्यामानयताम्म ।२
कृतार्थस्त्वंद्विजश्रेष्ठनिजधर्मानुपालनात् ।
वयंसंकटिनोविप्रयेषांपत्नोनवेश्मनि ।३
नरेन्द्रसाहिविनेभक्षिताश्वपदैर्यदि ।
क्रोधस्यवशमागास्यधर्मोनावेक्षितस्तवया ।४
अलंतयाकिमन्यानपाणिर्गृह्यतेत्वया ।

संति राज्ञांगृहेकन्याः शोभनानृपनन्दन ।४
नभक्षितामेदयिताश्वापदैः साहिजीवति।
अविदूषिताचारित्राकथनेतत्करोम्यहम् ।५
यदिजीविततिेभार्यानचैवव्यभिचारिणी ।
अपत्नीकत्वतोजन्मकिंपापक्रियतेत्वया ।
आनितापिहिसाविप्रतिकूलासदैव मे ।
दःखायनख यालस्यासत्रीनवैमयि ।
यथातेब्राह्मणीविप्रवशगातवसुन्दरी ।
तथात्वंकुरुयत्ननेयथासावशगातिनी ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—महाराज उत्तम ने अपने नगर में पहुँच कर उस ब्राह्मण को अपनी पत्नी शीलवती के साथ हर्ष सहित स्थित देखा ।१। ब्राह्मण ने राजा से कहा—हे नृपश्रेष्ठ ! आपने धर्मके ज्ञाता होने के कारण मेरी पत्नी को लाकर धर्म की रक्षा की हैं, इससे में धन्य हुआ हूँ ।२। राजा ने कहा—हे द्विजवर ! आप अपने धर्म पालन के कारण कृतकृत्य हुए हैं, परन्तु मेरे घर में भार्या नहीं हैं, इसलिएमैं घोर विपत्ति में पड़ा हूँ ।३। ब्राह्मण बोला—हे राजन् आपने क्रोधावेश में उस समय धर्म को नहीं देखा, अब उसे कहीं हिंसक जीवों ने भक्षण कर लिया हो या किसी और प्रकार से नष्ट हो गई हो तो उसके मिलने की आशा न करके किसी अन्य कन्या से विवाह क्यों नहीं कर कर लेते । हे राजन् ! राजाओं के घर अनेक कन्यायें होगी ।७। राजा ने कहा --मेरी पत्नी का किसी ने भक्षण नहीं किया वह अभी भी विशुद्ध चरित्र से जीवितावस्था में है, फिर कैसे अन्य स्त्री का ग्रहण करूँ ।५। ब्राह्मण बोला—यदि आपको पत्नी अभी तक श्रेष्ठ चरित्र वाली होकर जीवित है तो उसे छोड़कर पाप क्यों करते हैं ? राजा ने कहा—हे ब्रह्मन् । मैं उसे ले भी आऊँगा तो भी वह मेरे अनुकूल नहीं होगी, क्योंकि उसकी प्रीति मुझमें नहीं हैं ।७।

त्वयिसंप्रीततेतस्यावरेष्टिरुपकारिणी ।
क्रियतेमित्रकामैर्वामित्रविन्दांकरोमिताम् ८
अप्रीतयोःप्रीतिकरीसाहिसंजननीयरम् ।
भार्यापत्योर्मनुष्येन्द्रतांतवेष्टिकरोम्यहम् ।९
यत्रतिष्ठतिसासुभ्रू स्तवभार्यामहीपते ।
तस्मादानीयतांसातेपरांप्रीतिमुपैष्यति ।१०
(तस्यास्तवहितार्थायधर्मोयत्रनसीदति)
इत्युक्तः सतुनिखिलसम्भारानवनीपतिः ।
आनिनायचकारोष्टिसचितांष्टिजसत्तम् ।
सप्तकृत्वः सतुवदाचकारोष्टिपुनःपुनः ।
तस्यराज्ञोगिजश्रेष्ठोभार्यासम्पादनायवैः ।१२
यदारोपितमैत्रांताममन्यतहामुनिः ।
स्वभर्त्तरितदाविप्रस्तमुवाचनराधिपम् ।१३
आनोयतांनरश्रेष्ठयातवेष्टात्मनाऽन्तिकम् ।
भुंक्ष्वभोगास्तयासार्द्धं यजज्ञांस्तयाहृतः ।१४

ब्राह्मण बोला—मित्रता की कामना वाले उपकारी पुरुष जिस यज्ञ को करते हैं, उसी मित्रविन्दा नामक यज्ञ को मैं तुम्हारी पत्नी के लिए करूँगा ।७। हे राजन् ! वह यज्ञ असन्तुष्ट स्त्री-पुरुष में प्रीति कराने वाला और शक्ति का देने वाला है, मैं उसीका आपके निमित्त अनुष्ठान करूँगा ।९। आपकी वह पत्नी जहाँ रहती है वहाँ से उसे ले जाइये, वह अवश्य ही आपको प्रति परम कर्तव्य करने वाली हो जायगी ।१०। (तुम्हारे हित के लिए ऐसे अवसर में धर्म की हानि नहीं होगी) मार्कण्डेयजी ने कहा—ब्राह्मण का वचन सुनकर महाराज उत्तम ने सम्पूर्ण यज्ञ सामग्री उपस्थित की और ब्राह्मण ने भी यज्ञ का अनुष्ठान किया ।१२। जब उससे उस राजमहिषी को अपने स्वामी के प्रति अनुरक्त समझा तब वह राजा से बोला ।१३। हे राजन् ! जब अपनी उस पत्नी को लाकर सांसारिक सुखों को भोगिये ।१४।

इत्युक्तस्तेनविप्रेणभूपालोविस्मतस्तदा ।
सस्मारतमहावीर्यं त्यस्तंधननिशाचरम् ।१५
स्मृतस्तनतदासद्य: समुपेत्यनराधिपम् ।
किंकरोमीतिसोऽप्याहप्रणिपत्यमहामुने ।१६
ततस्तेननरेन्द्रणाविस्तरेणनिवेदिते ।
गत्वापातालमादायराजपत्नीमुपाययौ ।१७
आनीताचाहृदिनभाददर्शतदापतिम् ।
उवाचचप्रसीदेतिभूयोमुदान्विता ।१८
ततःसराजारभसाबरिष्वज्याहमनिनीम् ।
प्रियेप्रसन्नएवाभूयोऽप्येवब्रवीषिकिम् ।१९
यदिप्रसादप्रयणनरेन्द्रम यतेमनः ।
तदेतदभियाचेत्वांतत्कुण्वममार्हणम् ।२०
निःशङ्कं हिमत्तोयदभवत्याकिंचिदीप्सितम् ।
तदलभ्यंनतेभीरुतवायत्तोऽस्मिनान्यथा ।२१

मार्कण्डेयजी ने कहा—ब्राह्मण की बात सुनकर राजा अत्यन्त विस्मय को प्राप्त हुए और उन्होंने उसी समय उस महान् पराक्रमी राक्षस का स्मरण किया ।१५। स्मरण करते ही वह राक्षस उसी समय उपस्थित हुआ और उनको प्रणाम करता हुआ बोला—मुझे क्या आज्ञा है ? ।१६। तव राजा ने सब बात उसे विस्तार पूर्वक बताई और तब वह पाताल में जाकर रानी को शीघ्र ही लेकर आ गया ।१७। रानी ने वहाँ आकर हार्दिक प्रीति सहित अपने पति को देखा और प्रसन्न होकर इस प्रकार बारम्बार विनय करने लगी ।१८। फिर राजा ने उत्सुकता-पूर्वक उसे हृदय से लगा लिया और बोले--हे प्रिये ! मैं तो तुम पर प्रसन्न ही हूं । फिर तुम बारम्बार इस प्रकार क्यों कहती हो ? ।१९। रानी ने कहा—हे महाराज ! आप यदि मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरे योग्य सम्मान की आप रक्षा करें ।२०। राजा बोले—अपनी इच्छित बात शंका रहित मन से कहो ।२१।

मदर्थंतननागेसुताशप्तासखीमम ।
मूकाभबिष्यसात्याहसाचमूकत्वमागता ।२२
तस्या:प्रतिक्रियांप्रीत्याममशक्रोतिचेद्भवान् ।
बाग्विधातप्रशान्त्यर्थंतत:किनकृतंमम ।२३
तत: सराज्ञतविप्रमाहास्मिन्कीदृशांक्रिया ।
तन्मूकतापनोदयसचप्रहपार्थिवम् ।२४
भूपसारस्वतीमिष्टिकरोभिवचनात्तव ।
पत्नीतवेयमानृण्ययातुतद्वाक्प्रवर्तनात् ।२५
इष्टिसारस्वतींचक्रे तंदर्थसद्विजोत्तम: ।
सारस्वतानिरूक्तानिजजापचमाहित: ।२६
तत: प्रवत्तवाक्यांतांगर्ग: प्राहरसातले ।
उपकार: सखीभर्त्राकृतोऽयमतिदुष्कर: ।२७
इत्थंज्ञानसमाद्यनन्दाशीघ्रगतिपुरम् ।
ततोराज्ञींपरिष्वजयस्वसखीमुरगात्मजा ।२८
नवचंस्तूयभूपालंकल्याणीकन्या पुन: पुन: ।
उवाचमधुरंनागीकृतासनपरिग्रहा ।२९

रानी ने कहा—नागराज की कन्या मेरी सखी है और वह नागराज के शापवश गूँगी होगई ।२२। यदि आप मुझ पर प्रीति करते हैं और उसके गूँगेपन को दूर करने में समर्थ हैं, तो आपने अवश्य ही मेरा सब कुछ कार्य किया समझो ।२३। मार्कण्डेयजी ने कहा-तब राजा ने उस ब्राह्मण से नागकन्या के गूँगेपन को दूर करने का उपाय पूछा ।२४। ब्राह्मण ने कहा—हे राजन् ! आपके बचन मानकर मैं सरस्वती कीइष्टि करूँगा, क्योंकि आपकी यह पत्नी उसकी मूकता दूर होने पर ही ऋण से छुटेगी ।२५। मार्कण्डेयजी ने कहा—तब उस ब्राह्मण ने सरस्वती कीं सूक्त का प्रारम्भ किया और यत्न पूर्वक सारस्वत सूक्त को जपने लगा ।२६। तदन्तर गर्ग ऋषि ने पाताल से बाक शक्ति को प्राप्त हुई उस नागकन्या से कहा कि तुम्हारी सखी ने तुम्हारा यह अत्यन्त कठिन

उपकार किया है।२६। तब नागकन्या नन्दा अपनी सखी के लिए उस नगर में आई और उसने रानी को आलिंगन किया।२२। और वह राजा के भी गुण गाती हुई आसन पर बैठ मङ्गलमय वचनों द्वारा कहने लगी।१६।

उपकारःकृतोवीरभवतायोममाधुना।
तेनास्म्याकृष्टहृदयाद् ब्रवीमिश्रृणवतत्।३०
तव पुत्रो महावीर्योभविष्यतिनराधिपः।
तस्याप्रतिहतचक्रमस्यां भुविभविष्यति।३१
सर्वार्थं शास्त्रतत्त्वज्ञोधर्मानुष्ठानतत्परः।
मन्वन्तररेश्वरोधीमान्भविष्यतिसवैमनुः।३२
इतिदत्वावरंतस्मैनागराजसुताततः।
सखीतांसंपरिष्वंज्यपातालमगमन्मने।३३
तत्रतस्यतासार्द्धं रमतः पृथिवीपतेः।
जगामकालः सुमहान्प्रजा पालयतस्तथा।३४
ततः सतस्यांतनयोजज्ञे राज्ञोमहात्मनः।
पौर्णमास्यांयथाकांतश्चन्द्र संम्पूर्णमण्डलः।३५

हे वीर! आपने जो उपकार किया है उससे मेरा हृदय अत्यन्त आकर्षित हुआ है। अब मैं जो कुछ कहती हूँ, इसे श्रवण करो।३०। हे राजन्! आपको अत्यन्त पराक्रमी पुत्र की प्राप्ति होगी और इस भूमण्डल पर उसका अखण्ड राज्य होगा।३१। आपका पुत्र स्वार्थ साधन शास्त्र का तत्वज्ञानी, धर्मानुष्ठान में सदैव तत्पर वह मेधावी पुत्र मन्वन्तर का स्वामी मनु होगा।३२। मार्कण्डेयजी ने कहा—इस प्रकार राजा को बारम्बार वर देती हुई नागकन्या अपनी सखी का प्रगाढ़ आलिंगन करके अपने लोक को गई।३३। इधर पत्नी के साथ विहार करते हुए प्रजा का पालन करते हुए राजा को बहुत समय व्यतीत हो गया।३४। फिर रानी के गर्भ में पूर्णिमा के चन्द्र मण्डल के समान श्रेष्ठ कान्ति वाले पुत्र की उनके उत्पत्ति हुई।३५।

तस्मिञ्जातेमुदंप्रापुः सर्वाः सहमरा ।
देवदुन्दुभयोनेदुःपुष्पवृष्टिःपपातच ॥३६
तस्यदृष्ट्वावपुर्कान्तभविष्यंशीलमेवच ।
औत्तमश्चेतिमुनयोनामचक्रःसमागता ॥३७
जातोऽयमुत्तमेवंशेवाल कालेतथोत्तमे ।
उत्तमावयस्तेनऔत्तमोयंभविष्यति ॥३८
उत्तामस्यसुतःसोऽयनाम्नाख्यातस्तथौत्तमः ।
मानुरासीत्तत्प्रभावोगुरेश्रुयतांमम ॥३६
उत्तमाख्यकमलिलंजन्मचैवोत्तमस्यय: ।
नित्यशृणोतिविद्वेषंसकदाचिन्नगच्छति ॥४०
इष्टदारैस्तयापुत्रैवन्धुभिवाकदाचन ।
वियोगोनास्यभविताशृण्वतःपठतोऽपिवा ॥४१
तस्यमन्वन्तरंब्रह्मन्वदतोममविस्तरात् ।
श्रूयतांतत्रयश्चेन्द्रोयेचदेवास्तथषय: । ४२

उनके जन्म लेने पर समस्त प्रजा आनन्द में मग्न हो गई, देवताओं द्वारा वाद्य वादन और पुष्प वृष्टि की गई ।२६। आगत मुनियों ने उसके स्वभाव दि को देखकर उसका 'औत्तम' नाम रखा ।३७। मुनिगण बोले कि इसने उत्ताम कुल उत्ताम काल और उत्तम अंग सहित जन्म ग्रहण किया है, इसलिए यह 'औत्ताम' नाम से प्रसिद्ध होगा ।८। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे मुने ! उत्तम के पुत्र होने से वह औत्तम नाम से प्रसिद्ध होकर मनु हो गरे अब उनका प्रभाव कहता हूं, उसे सुनो ।३६। जो मनुष्य राजा उत्तम के आख्यान और औत्ताम मनु के जन्म का वृतान्त श्रवण करते हैं, वे कभी विद्वेष को प्राप्त नहीं होते ।४०। तथा इसके सुनने या पढ़ने वालों को कभी इष्ट; मित्र, स्त्री और बन्धुओं का वियोग सहन नहीं करना पड़ता ।४१। अब उसके मन्वन्तर के वृत्तान्त का विस्तार पूर्वक वर्णन करता हूँ ।४२।

६५ औत्तम मन्वन्तर कथन

मन्वन्तरेतृतीयेऽस्मिन्नौत्तमस्यप्रजापतेः ।
देवानिन्द्र मृषोन्भूषान्निवोधगतोमम् ॥१
स्वधामानस्तथादेवायथानामानुनारिणः ।
सत्याख्वश्चद्वितोयोऽन्यस्त्रिदशानातथागणः ॥२
तृतीयेतु गणदेवाः शिवाख्यामुनिसत्तम ।
शिवारूपतस्तेतु श्रु ताः पापप्रणाशनाः ॥३
प्रतर्दनाख्यश्चगणोदेवानामा निसत्ताम् ।
चतु र्थस्तत्रकथितऔत्तामस्यांत रेरेमनोः
यंशवर्तिन पंचमेऽपिदेवास्थतगणद्विज ।
यथाख्यातस्यरूपास्तु सर्वएवमहामने ॥५
एतेदेवगणा पंचस्सृमायनभुजस्तथा ।
मन्वन्तरेमनुश्रेष्ठे सर्वेद्वादशकागणाः ॥६
तेषामिन्द्र महाभागस्त्रोक्यस्येश्वरोऽभवत् ।
शतं क्रतूनामाहृत्यसुशान्तिर्नामनामतः ॥७
यस्योपसर्गनाशायनामक्षरविभूषिता ।
अद्यापिमानवैगांथागीयतेतु महीतले ॥८

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे मुनि ! अब औत्ताम प्रजापति के तृतीय मन्वन्तर के देवता, इन्द्र और ऋषियों के विषय में कहता हूँ, श्रवण करो ।१। 'स्वधामा' नामक देवताओं के नाम के अनुरूप ही स्वज्योति से प्रकाशित है और द्वितीय गण का नाम 'सत्य' है ।२। तृतीय गण शिव नाम से प्रशिद्ध है तथा इसके नाम का स्मरण करते ही वह पाप को नष्ट करके 'शिव' नाम को सार्थक करता है ।३। हे मुने ! औत्ताम मन्वन्तर के देवताओं का चतुर्थगण प्रतर्दन नाम वाला है ।४। पंचक गण में 'वशवर्ती' नामक देवता स्थित हैं, वे सब नाम के ही अनुरूप कार्य करने वाले हैं । हे द्विजवर ! बस मन्वन्तर में यह भोगी देव-

ताओं के पाँच प्रकार के गण तथा प्रत्येक गण में द्वादश देवता हैं ।५-६। उन देवताओं के इन्द्र 'भृशांशि' नामक हैं जो अश्वमेध यज्ञ करके तीनों लोक के गुरु होते हैं ।७। उन देवेन्द्र सुशान्ति का यह नाम और अक्षर से विभूषित वृत्तान्त अब भी कहा जाता है ।८।

सुशान्तिर्देवराट्कान्तः सुशान्तिसप्रयच्छति ।
ग़हित शिवसत्वाद्यैस्तथैववशवर्तिभिः ।।९
अज परशुचिर्दिव्योमहाबलपराक्रमः ।
पुत्रास्तयस्मोरासन्विख्याता स्त्रिदशोपमाः ।।१०
तत्सूतिसम्भवंभूतिः पायिताभून्नरेश्वरैः ।
यावन्मन्वन्तर तस्यमनोरुत्तमतेजसः ।।११
चतुर्गानांसख्यातासाधिकाह्येकसप्ततिः ।
कृतत्रेतादिसंज्ञानियान्युक्तानिपुरामया ।।१२
स्वतेजस्त्रहितपसोवग्ष्ठिस्यमहात्मनः ।
तनयाश्चान्यरेतमिस्न्नसप्तसप्तर्षयोभवन् ।।१३
तोयमेयत्कथित तवमन्वन्तरमया ।
तामस्यचतुर्थन्तु मनोरन्तरमुच्यते ।।१४
वियोनि जन्मयोयस्यग्रशसाद्योतितजगत् ।
जन्मतस्यमनोर्ब्रह्मञ्छ्रूयतांगदतोमम ।।१५
अतीन्द्रियमशेषाणांमनूताचरितंतथा ।
तथाजन्मापिविसेयंप्रभावश्चमहात्मनान् ।।१६

वह तेजस्वी देवेन्द्र सुशांति शिवादि देवताओं के सहित सुख शांति के देने वाले हैं तथा उनके वश में रहने वाले देवता भी इसी प्रकार के स्वभाव वाले हैं ।९। इन औत्तम मनु के तीन पुत्र देवताओं के समान अत्यन्त पराक्रमी हुए थे, जिनके नाम, अज, परशुचि और दिव्य थे ।१०। उनका मन्वन्तर जितने दिनों तक रहा, उतने काल तक उनके वंशधर इस पृथ्वी पर राज्य करते रहे ।११। इस मन्वन्तर में—सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलि यह चारों युग हुए हैं, उक्त

प्रकार की कुछ अधिक चतुर्युगियों को मन्वन्तर कहा गया है।१३। इस मन्वन्तर में महातपा नामक महात्मा के पुत्र ही सप्तर्षि हुए थे।१। यह तृतीया मन्वन्तर का वृत्तांत हुआ, अब चतुर्थ मन्वन्तर के विषय में कहता हूं।१४। विभिन्न योनि जन्मा जिन मनु के सुयश से सम्पूर्ण विश्व प्रकाशमान हुआ उस मुनि की उत्पत्ति कहता हूँ उसे तुम श्रवण करो।१५। इन सभी महात्मा मनुओं का चरित्र और उनके प्रभाव को अवश्य जानना चाहिए।१६।

६६–तामस मन्वन्तर

राजभुद्भविविख्यात:स्वराष्ट्रोनामवीर्यवान् ।
उनकेयज्ञकृतत्प्राज्ञ:संग्रामामेष्वपराजित: ।।१
तस्यायु:सुमहद्दतसूर्येणसुमताद्युते: ।
(पुपाभागता!विप्रमत्रिणाराधितेनवै ।,
पत्नीनाचशतंतस्यधन्यानामभवाद्द्विज ।२
अस्यदीर्घायुष:हत्नयोहातिदीर्घायुषोमुने ।
कालेनजग्मुर्निवनंभृत्मयन्त्रिजनास्तथाम् ।।३
सभार्याभिस्तथामुक्तोभृत्यैश्चसहजन्मभि: ।
उद्विग्नचेता:संप्रापवीर्यहानिमहानिशम् ।।४
तंवीर्यहीनंभितैभृत्यैस्त्यक्तंसुदु:खितम् ।
अनन्तरोविमदूर्दाख्योराज्याखच्याचितवांस्तदा ।।५
राज्याच्चुत:सोऽपिवनगत्वानिर्विण्णमानस: ।
तपस्तेपेमहाभागोवितस्तापुलिनेस्थित: ।।६
ग्रीष्मेपचयपाभूत्वावर्षास्वभ्रावकाशक: ।
जलशायोचशिशिरेनिरारोयतव्रत: ।।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—स्वराष्ट्र नामक एक राजा अनेक यज्ञों के करने वाले, युद्ध में सदा जीतने वाले, अत्यन्त पराक्रमी और ज्ञानी थे।१। हे द्विज ! उनके मन्त्रियों की आराधना से प्रसन्न हुए भगवान् भास्कर ने उसको दीर्घायुष्य बताया था, उन राजा की 'धन्या' नामकी

एक अत्यन्त सुन्दर भार्या थी।२। परन्तु, उन राजा की भार्याएँ दीर्घायु वाली नहीं थी, इसलिए वे शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हुईं और मन्त्रिगण तथा भृत्यगण भी काल के वशीभूत हो गये।३। राजा अपने सुहृदों, भृत्यों और भार्याओं के वियोग से उद्विग्न रहते हुए दिनों दिन पराक्रमहीन होने लगे।४। अवसर देखकर निकटस्थ विमर्द नाम के राजा ने इस वीर्यहीन और विश्वासी भृत्यों से रहित दुःखित हृदय राजा को राज्य से भ्रष्ट कर डाला।५। वह राजा अपने राज्य से हटने के कारण दुःखपूर्ण हृदय से विस्तता नदी के तट पर वन में रहते हुए तप करने लगे।६। वह ग्रीष्म काल में पञ्चाग्नि से तपते, वर्षा के समय में खुले में बैठकर भीगते हुए और शीतकाल में जल में शयन करते आहार त्यागकर संयम पूर्वक तप करते थे।७।

ततस्तपश्यतस्तस्यप्रावृट्कालेमहान्प्लवः।
बभूवानुदिन मेघैर्वर्षद्भिरनुसंततम् ।।८
नादिग्विज्ञायतेपूर्वादक्षिणावानपश्चिमा।
नोत्तरातमसासर्वंसनलिप्तमिवाभवतः।।९
ततोऽतिपूरेणनृपासनद्योप्रेरितस्तटम्।
प्रार्थयन्नपिनावापह्रियमाणोऽतिवेगिना।।१०
अथदूरेजलौघेनह्रियमाणोमहीपतिः।
आससादजलेरौहींसपुच्छेजगृहेचताम् ।।११
तेनप्लवेनसययाब्रह्माभनोमहीतले।
इतश्चेतश्चान्धकारेआससादतटततः।।१२
विस्तारिपङ्कमत्स्यर्थदुस्तरंसनृपस्तरम्।
तथैवकृष्यमाणोऽन्यप्रम्यंदनमवापसः।।१३
तत्रान्धकारेसारौहीचकर्षवसधाधिपम्।
पुच्छेलग्नमहाभाग कृशंधमुनिसत्तमम् ।।१४

फिर एक दिन, जब राजा तपस्या में रत थे, तब घोर वृष्टि होने से पृथिवी सर्वत्र ज्ञानमयी हो गई।८। दिशाएँ अंधकार से ढक गईं

थीं, इसलिए दक्षिणादि किसी भी दिशा का ज्ञान नहीं हो रहा था।६। तब वह राजा जल के वेग से नदी तट से प्रवाहित होते हुए उस नदी के तट को नहीं पा सके।१०। फिर वह जल प्रवाह में बहने लगे, तभी उन्हें एक रोही दिखाई दी, तो उन्होंने उसकी पूँछ पकड़ ली।११।जल समूह में खिंचे हुए पृथिवी के तल में पहुंचे।१२। मृगी द्वारा खिंचते हुए राजा उस विस्तृत और कठिनता से पार की जाने वाली कीचड़ से पार होकर एक सुरम्यवन में पहुंच गये।१३। वह मृगी पूँछ को पकड़े हुए राजा को अन्धकार में खींचने लगी।१४।

तस्याश्चस्पर्शसंभतामवापमुद्मुत्तमाम्।
सोऽन्धकारे भ्रमन्भूपोंदनाकृष्टमानस ॥१५
विज्ञायसानुरागंतं पृष्ठस्पर्शनतत्परम्।
नरेन्द्रंतबृषस्यंतं सामृगीतमुवाचह ॥१६
किंपृष्ठवेपथमकाकरणस्पृशमेमम।
अन्यथैवास्यकार्यस्यसञ्जानृपतेगतिः ॥१७
नास्थानेवामनोयातं नागम्याहन्तवेश्वरः।
कितुत्वत्संगमेगिनमेषलोः करोतिमे ॥१८
इतिश्रत्वावाचस्तस्यामग्याश्चगतीपतिः।
जातकौतूहलोरोहीमिदवचनमब्रवीत् ॥१९
कात्वंब्रूहिमृगीवाक्यकथंमानुषवद्वदेत्।
कश्चैवलोलिलोविघ्नत्वत्संगेकुरुतेतथः ॥२०
अ न्तेदयिताभूवप्रागामुत्पलावती।
भार्य्याशताग्रहमहिषीदुहितादृढधन्वनः ॥२१

वह महाराज स्वराष्ट्र अन्धेरे में विचरण करते हुए मृगी के स्पर्श से कामासक्त चित्त वाले होकर अत्यन्त आनन्दित हुए।१५। जब उन्होंने उस मृगी के पृष्ठ भाग का उस वन प्रवेश में जाकर स्पर्श किया, तब इन्हें अनुरक्त जाकर वह मृगी बोली।१६। हे राजन! अपने कम्पित हाथों से मेरी पीठ का इस प्रकार क्यों स्पर्श कर रहे हो ? इस स्पर्श

से अन्य भाव प्रतीत हो रहा है ।१७। हे राजन् ! आपकी इच्छा अयोग्य के प्रति नहीं, गमन योग्य के प्रति ही हुई है परन्तु यह लोल आपके संसर्ग में बाधक है ।१८। मार्कण्डेयजी ने कहा— मृगी की यह बात सुनकर राजा ने विस्मय पूर्वक उससे कहा ।१९। तुम कौन हो ? मृगी होकर मानवी के समान किस प्रकार बोल रही हो २०। मृगी बोली—हे राजन् ! मैं आपकी प्रियतमा राजमहिषी तथा सभी रानियों में श्रेष्ठा एवं दृढ़धन्वा की पुत्री उत्पलावती हूं ।२१।

किन्तुयावत्कृतेकर्मयेने मांयोनिमागता
पतिव्रताधर्मपरासाचेत्थंकथमीदृशी ।।२२
अहंपितृगृहबालासभीभिःसहितावनम् ।
रन्तुं गतादद‍र्शकंमृग्यासमागतम् ।।२३
ततःसमीपवर्तिन्यामयासाताडितामृगी ।
मयात्रस्तागतान्यत्रक्रुद्धः द्धप्राहततोमृगः ।।२४
मूढकिमेवत्त्वासिधिक्ते दौःशील्यमीदृशम् ।
आधानकालेयेनायंत्वयायामेर्यिभलौकृक्रातिः । २५
वाचश्रुत्याततस्तस्यमानुषऽषेवभाषतः ।
भीतातमब्रुवकोऽसीत्येतांयोनिमुपागतः ।।२६
ततःसप्राहपुत्रोऽहमृषेर्निर्वृतिचक्षुषः ।
सुतपानामभृग्यान्तुसाभिलाषोमृगीऽभवम् ।।२७
इमांचानुगतःप्रस्नायाच्छितश्चानयावने ।
त्वयावियोजितादुष्टेतस्माच्छापंददामिते ।।२८

राजा ने कहा—तुमने ऐसा कौन-सा धर्म किया है, जिसके कारण तुम्हें इस योनि को प्राप्त होना पड़ा है ? मेरी वह भार्या तो पवित्रा और धर्म परायणी थी फिर उसकी ऐसी दशा क्यों हुई ? ।२२। मृगी ने कहा—मैं अपने पितागृह में, बाल्यकाल में अपने साथियों के साथ क्रीड़ा

के लिए वन में गई थी, वहाँ एक मृग से युक्त मृगी को मैंने देखा ।२३। फिर उसके पास जाकर मैंने उस पर प्रहार किया तो वह मृगी भय के कारण वहाँ से चली गई, तब क्रोधित होकर यह मृग मुझसे बोला ।२४ हे मूर्खे ! तेरी इस दुःशीलता को धिक्कार है, तू ऐसी मत्त क्यों हो रही है ? तूने मेरे गर्भधान काल को विफल कर दिया है ।२५। उस मृग को मनुष्य के समान बोलते देखकर मुझे अत्यन्त भय हुआ और मैंने उससे पूछा—आपको इस मृगयोनि की प्राप्ति क्यों हुई है ? ।२७। मृग ने कहा—मैं निवृत्ति चक्षु मुनि का पुत्र सुतपा हूँ, मैंने मृगी की इच्छा से रूप धारण किया है ।२८। इस मृगी की अभिलाषा से, इसकी प्रीतिवश ही मैं इसका अनुगामी हुआ हूँ परन्तु तूने मेरा इससे वियोग करा दिया, इसलिए तुझे शाप दूँगा ।२८।

मयोचोक्तंतयाज्ञानादपराधःकृतमुने ।
प्रसादंकुरुयापंमेनभवान्दातुमर्हसि ।।२९
इत्युक्तःप्राहुमांसोऽपिमुनिरित्थंमहीपते ।
नप्रयच्छामिशापंतेयद्यात्माभ ददासिते ।।३०
मयाचोक्तंमगीदाहंमृगरूपधरावने ।
लप्स्यरेऽन्यांमृगीतावन्मयिभावोनिवर्त्यताम् ।।३१
इत्युक्तःकोपरक्ताक्षः सप्राहस्फुरिताधरः।
माहंमृगीत्वयेत्युक्तं भूढेभविष्यसि ।।३२
ततोभृशंप्रव्यथिताप्रथम्यमुनिब्रुवम् ।
स्वरूपपस्थमतिक्रद्धु प्रसोदेतिपुनः पुनः ।।३३
वालानभिज्ञावाक्यानातनतःप्रोक्तमिदमया ।
पित्तयंसतिनारीभिर्व्रियतेहिपतिःस्वयम् ।।३४
सपितातेकथचाहंवृणोतिमुनिसत्तम ।
सापराधाथवापापौ प्रसीदेषानमाम्यहम् ।।३५

मैंने कहा—मुनि श्रेष्ठ ! मुझसे यह अपराध अज्ञान के कारण ही हुआ है आप शापित न करें ।२९। वे मुझसे बोले—यदि मैं तुझमें

आत्मदान कर सकूँ तो तुझे शापित नहीं करूँगा ।३०। मैं मृगी नहीं हूं, इसीलिए मेरे प्रति अपनी इस इच्छा को शान्त कीजिए ।३१। ऐसा सुनते ही उनके नेत्र क्रोध से लाल हो गये और उन्होंने कम्पित होठों से कहा—तूने 'मैं मृग नहीं हूँ' यह कहा है, इसलिए तू मृगी होगी ।३२। तब मैंने व्यथित चित्त से मृग रूपधारी उस मुनि को प्रणाम पूर्वक कहा—मैं वाला हूं' बात कहना भी नहीं जानती, इसी से ऐसा कह बैठी, आप मेरे प्रति प्रसन्न हों, यदि पिता न हो तो कन्या अपने पति का वरण स्वयं करती है ।३३-३४। परन्तु मैं अपने पिता के होते हुए आपका वरण कैसे कर सकती हूँ ? हे प्रभो ! मेरे अपराध को क्षमा करिए, मैं आपके चरणों में वन्दन करती हूँ, आप प्रसन्न हों ।३५।

प्रसीदेतिप्रसीदेतिप्रणतायांमहामते ।
इत्थंलालप्यामानायाःसप्राहमुनिपुंगवः ॥३६
नभवत्यन्यथाक्तोक्तममवाक्यकदाचन ।
मृगीभविष्यसिवुतावनेऽस्मिन्नेवजन्मनि ॥३७
मृगत्वेचमहाबाहुस्तवगर्भमुपैष्र्तति ।
लोलोनाममुने पुत्रःसिद्धवायस्यभाविनि ॥३८
जातिस्मराभवित्रीत्वतस्मिन्गर्भमुपागते ।
स्मृतिंप्राप्यतणावाकंमानुषोमीरयिष्यसि ॥३९
तस्मिञ्जातेमृगत्वात्वविमुक्तापतिनाथिता ।
लोकान्वाप्यासिप्राप्ययेनदुष्कृतनर्मभिः ॥४०
सोऽपिलोलोमहावार्यःहितशत्रुन्निपाष्यवै ।
जित्वावावसुन्धराकृत्स्नांभविष्यतिततोमनुः ॥४१
एवंशाहमहंलब्धामामृतातिर्य्यक्तवमागता ।
त्वात्संस्पर्शाच्चगर्भोऽसौसंभूतोजठरेमम ॥४२

मुझे बारम्बार 'प्रसन्न हों' प्रसन्न हों कहते देखकर उन मुनि श्रेष्ठ ने कहा ।३६। मेरा वचन कभी मिथ्या नहीं होता, तुम मरने के बाद

पर जन्म में इसी वन में मृगी बनोगी ।७। जब तुम मृगी हो जाओगी तब किसी सिद्ध वीर्य मुनि का पुत्र 'लोल' तुम्हारे गर्भ से उत्पन्न होगा ।३८। जब, वह लोल तुम्हारे गर्भ में स्थित होगा, तब तुम पूर्व जन्म का मरण करने वाली और मनुष्य जैसी वोली बोलने वाली होगी ।३९। उस महाबाहु लोल के उत्पन्न होने पर तुम शाप मुक्त होकर पति के द्वारा सम्मानित होगी और जिस लोक को पापी मनुष्य प्राप्त नहीं कर पाते उसी लोक को तुम प्राप्त होगी ।४०। फिर वह अत्यन्त पराक्रमी लोल ही पिता के शत्रुओं का संहार करेगा ।४१। हे राजन् ! इस प्रकार शापित होकर मैं तिर्यक योनि को प्राप्त हूँ तुम्हारे स्पर्श से मेरे जठर में वह गर्भ उत्पन्न हुआ है ।४२।

अतोब्रवी सिनास्थानतवयातंमनोमयि ।
नचाप्यगस्यागर्भस्थोलोलाविघ्नंकरोत्यसी ।।४३
एवमुक्तस्ततःसोऽपि राजा प्राप्यसरांमुदम् ।
तुत्रोममारोञ्जित्वेतिपृथिव्याभावितामनुः ।।४४
ततस्तंसुषुवेपुत्रंसामृगीलक्षणान्वितम् ।
तस्मिञ्जातेचभूतानिसर्व्वाणिप्रयुमुदम् ।।४५
विशेषतश्चराजासोपुत्रेजाते महावने ।
साविमुक्तामृगीशापात्प्रपलोकाननुत्तमाम् ।।४६
ततस्तस्यर्षयःसर्वेसमेत्यमुनिसत्तम ।
अवेक्ष्यभाविनीमृद्धिनामचक्रुर्महात्मवः ।।४७
तामसींभजमानाययोनिमातर्यजायत ।
तमसाचावृतेलोकेतामसोऽयंभविष्यति ।।४८
ततः सतामष्टेनपित्रासंवर्द्धितोवने ।
जातवृद्धिरुवाचेदंपितरंमुनिसत्तम् ।।४९

इसलिए मैंने कहा था कि आपकी मेरे प्रति अभिलाषा गम्य के प्रति है, किन्तु यह गर्भ में स्थित लोल इस कार्य में बाधक है । ४३ । मार्कण्डेयजी ने कहा—यह पुत्र शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर मनु होगा। यह बात सुनकर राजा अत्यन्त हर्षित हुए ।४४। फिर उस मृगी के

श्रेष्ठ लक्षण वाले पुत्र की उत्पत्ति हुई उस समय सभी जीव आनन्द में मग्न हो गये ।४५। इस महा-पराक्रमी पुत्र के उत्पन्न होने से राजा को परम हर्ष हुआ और मृगी भी शाप से मुक्त होकर अत्युत्कृष्ट लोक में, गई ।४६। हे मुनिवर ! फिर ऋषियों ने वहां आकर उसका भविष्य देखते हुए नामकरण किया ।४७। वे बोले—विश्व के अन्धकार द्वारा ढके जाने पर तामसी योनि को प्राप्त हुई माता के गर्भ से इस बालक ने जन्म लिया, इसलिए इसका नाम 'तामस' हुआ ।४८। हे मुने ! वह 'तामस' समय पाकर बुद्धिके उदित होने पर वहपिता से बोला।४९।

कस्त्वंतातकथंवाहंपुत्रोमाताचकामम ।
किमथंमागतश्चत्वमेतत्सत्यंब्रवीहिमे ।।५०
ततःपितायथावृत्तंस्वराज्यच्यावनादिकम् ।
तस्याचष्टे महाबाहुःपुत्रस्यजगतीपतिः ।।५१
श्रुत्वातत्सकलंसोऽपिसमःराध्यचभास्करम् ।
अवापदिव्यान्यस्त्राणिससहारायशेषतः ।।५२
कृतास्तनरींजित्वापितुरानोयचान्तिकम् ।
अनुज्ञातान्मुमोजाथसावस्वंधर्ममास्थितः ।।५३
पितापितःयस्वल्लोकास्तपोयज्ञसमाजितान् ।
विसृष्टदेह सप्राप्तोदृष्ट्वापुत्रमखसुखम् ।।५४
जित्वासमस्तांपृथिवीतामसाच्यांसपार्थिः ।
तामसःख्योमनुरभूत्तस्यमन्वन्रं शृणु ।।५५.

हे तात ! आप कौन हैं ? मैं आपका पुत्र कैसे हुआ ? मेरी माता कौन है ? आप यहाँ किसलिए आये हैं, यह सब मेरी प्रति यथार्थ रूप से कहिए ।५०। तब उन महाबाहु राजा ने अपने पुत्र को अपने राज्य से च्युत होने आदि का सम्पूर्ण वृत्तांत सुनाया ।५१। उस तामस ने यह बात सुनकर भगवान् भास्कर की उपासना की और निवर्तन मंत्र के सहित विभिन्न प्रकार के सब दिव्यास्त्र मंत्र पूर्वक किए ।५२। वे अस्त्र प्रयोग में निपुण होकर शत्रु जेता हुए शत्रुओं को अपने पिता के पास लाकर उनकी आज्ञा से मुक्त कर दिया, इस प्रकार वे अपने धर्म

की रक्षा में तत्पर हुए ।५३। फिर उनके पिता ने भी अपने पुत्र को सुखी देखकर सुखपूर्वक देह-त्याग किया और यज्ञादि द्वारा संचितपुण्य के प्रभाव से उच्च लोकों को प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण पृथिवी के विजेता होकर तामस अपने नामानुसार मनु हुए ।५४-५५।

येदेवास्तत्पतिर्यश्चदेवेन्द्रोयेतथर्षय: ।
येपुत्राश्चमनोस्तस्यपृथिवीपरिपालिका: ।।५६
सत्यास्तथांन्तेसुधिय:सुरूपाहरयस्तथ: ।
एतेदेवगणास्तत्रसप्तविंशतिकामुने ।।५७
महाबलोमहावीर्यंशनयज्ञोपलक्षित: ।
शिखिरिन्द्रस्तथातेषांदेवानायभवद्विभुः ।।५८
ज्योतिंर्धार्मापृथु:काव्यश्चेत्रोऽग्निर्ललकस्तथा ।
पीवरश्चतथाब्रह्मान्सप्तसप्तर्षयोऽभवन् ।५९
नर:क्षान्ति:शान्तदान्तजानुजंघादयस्यथा ।
पुत्रास्पनामसस्यासन्नाजान:सुमहृदाबला: ।।६०
इत्येततामसविवेमन्वायरमुदाहृतम् ।
य: पठेच्छृणुयाद्वापिगमातानबाध्यते ।।६१

उस मन्वन्तर के देवता, इन्द्र ऋषि और मनु के जिन पुत्रों ने पृथिवी की रक्षा की उनका वृत्तान्त सुनो ।५६। हे मुने ! इस मन्वन्तर में सत्य, सुधी, सुरूप और हरि यह चार प्रकार के देवता गण हुए और प्रत्येक गण में सत्ताईस देवता हुए ।५७। महाबली और पराक्रमी 'शिखि' नामक इन्द्र हुए जो सौ यज्ञ करके उन देवताओं के स्वामी बने ।५८।उस मन्वन्तर में जो सप्त ऋषि हुए उनके नाम ज्योतिर्धार्या, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, बलक और पीवर हुए ।५९। उस मनु के नर, क्षान्त, दान जानु, जंघा इत्यादि महाबली एवं पराक्रमी पुत्र हुए ।६०। इस प्रकाप तामस मन्वन्तर का वृत्तांत यथार्थ रूप से आपके प्रति कहा है, इसको पढ़ने या सुनने वालों को आज्ञानाधिकार बाधा नहीं देता ।६१।

६७—रैवत मन्वन्तर

पंचमोपिमनुर्ब्रह्मन्रैवतोनामविश्रुतः ।
तस्योत्पत्तिंविस्तरशाशृणुष्वकथयामिते ॥१
रासीन्महाभागऋतवागितिविश्रुतः ।
तस्यापुत्रस्यपुत्रोऽभद्रैवत्यन्तेतह्यात्मनः ॥२
सतस्यविधिवच्चक्रे जातकर्माणिकाःक्रियाः ।
तथोपनयनादींश्चसचाशीलऽभवन्मुने ॥३
यत प्रभृतिजायऽसौततः प्रभृतिसोप्यृषिः ।
दीर्घरोगपरामर्शमवापमुनिपंगवः ।
मातातस्यपरामार्तिकुष्ठरोगादिपीडिता ।
जगामसपिताचास्यचिन्तयामासदुःखितः ॥५
किमेतदितिसोऽप्यस्यपुत्रोऽप्यत्यन्तदुर्मतिः ।
जग्राहभार्यान्यस्यमुनिपुत्रस्बमुखीम् ॥६
ततोबिषण्णमनमनसा तवागिदमुक्तवान् ।
अपुत्रतामनुष्याणांश्रेयसंनकुपुत्रता ॥७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे ब्रह्मन् ! अब रैवत नाम से प्रसिद्ध पाँचवें मनु का जन्म तुमसे कहता हूँ, उसे श्रवण करो ।१। ऋतवाक् नामक एक प्रसिद्ध ऋषि थे, वह प्रथम तो पुत्रहीन थे; फिर रेवतीनक्षत्र के शेष में उनको एक पुत्र की प्राप्ति हुई ।२। उन ऋषि ने अपने उस पुत्र का विधिवत् जातकर्म, उपनयन आदि संस्कार किया, परन्तु वह पुत्र शीलवान नहीं था ।३। हे मुने ! उस बालक का जन्म होने के समय से ही वह ऋषि दीर्घकाल व्यापि रहने वाले रोग से ग्रसित हो गये ।४। उसकी माता भी कष्ट के कारण अत्यन्त दुःखी रहने लगी, तब उसके पिता ने दुःखित चित्त से विचार किया ।५। ऐसा किस कारण हुआ ! इसके पश्चात् उनके उस विपरीत मत वाले पुत्र ने एक मुनि के सामने ही उनकी पत्नी का हरण कर लिया ।६। इससे ऋतवाक् ऋषि को अत्यन्त दुःख हुआ ।७।

कुपुत्रोहृदयायासंसर्व्वदाकुरुतेहितु: ।
मातुश्चस्वर्गसंस्थांश्चस्वपितृन्तातयत्यध: ॥८
सुहृदांनापकारायपितुणांचनतृप्तये ।
पित्रोर्दु:खायधिग्जन्मस्यदुनष्कतकर्मण: ॥९
धन्यास्तेनयायेषांसर्व्वलोकाभिसम्मता: ।
परोपकारिणो:शान्ता साधुकर्मण्यनुव्रता: ॥१०
अनिर्वतंनथामन्दपरलोकपरांमुखम ।
नरकायनसद्गत्यैकुपुत्रालम्बिजन्मन: ॥११
करोतिसुहृदादन्यमपित्रानांतथामुदम् ।
अकालेचजरांपित्रो कुसुत:क्रुतध्रुवम् ॥१२
एवसत्यन्तदुष्टस्यपुत्रस्यचरितंनमुनि: ।
दह्यमानमोर्वृत्तिं गर्गमपृच्छत ॥१३
सुव्रतेनपुरावेदाकृहीताविधिवन्मया ।
समाप्यवेदान्विधिवत्कृतोदारपरिग्रह: ॥१४
सदारेणक्रियाऽकार्या:श्रौता:स्मार्त्ताषष्ट्प्रक्रिया: ।
नमेन्यूना:कृता:काश्चिद्यावदद्यममहामुने ॥१५

क्योंकि कुपुत्र सदा ही माता के पिता हृदय के को पीड़ित करता रहता है और स्वर्गवासी पितरों को भी वहाँ से पतित करता है ।८। उनके द्वारा सुहृदों का भी कोई उपकार नहीं हो पाता और न पितरों को ही तृप्ति होती है, माता-पिता के लिए दुःख के कारण रूप ऐसे पुत्र को धिक्कार है ।९। जिसकी सन्तति सबके द्वारा सत्कारित, परोपरत, सत्यकर्म वाली और शान्त प्रकृति की है वही कृतकृत्य हैं।१०हमारा जन्म परलोक से विमुख, कुमार्ग का आश्रयी और नरक निमित ही हुआ है, श्रेष्ठ गति के लिए नहीं हुआ ।११। कुपुत्र सदा सुहृदों की दीन, अपकार करने वालों को प्रसन्न और माता-पिता को वृद्धावस्था प्राप्त कराने वाला है।१२।मार्कंडेयजी ने कहा—इस प्रकार दुश्चरित्र

पुत्र के विपरीत आचरण से मन में दग्ध होते हुए उन ऋषि ने गर्ग ऋषि से सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर उनसे पूछा ।१३। ऋत्वाक् बोले—मैंने श्रेष्ठ व्रतों का अनुष्ठान करते हुए विधि सहित वेदों का अध्ययन किया है और इनके पश्चात विधि पूर्वक स्त्री का पाणिग्रहण किया है और इनके पश्चात विधि पूर्वक स्त्री का पाणिग्रहण किया है ।१४। श्रौत स्मार्त्त और वषट्कार रूप जो कर्म पत्नी के सहित करने का निर्देश हैं वह सब मैंने किये हैं ।१५।

गर्भाधानविधानेनकाममनुरुध्यता ।
पुंक्षार्थंजनितश्चायपुन्नाम्नोविभ्यतामुने । १६
सोयंकिमात्मदोषेणवामुने ।
नस्मद्दुःखावहोजातोदौःशील्याद्बन्धुशोकदः ॥१७
रेवत्यन्तेमुनिश्रेष्ठजातोऽयंत्तनयस्तव ।
तेनदुःखायतेदुष्टेकालेयस्मादजायतः ॥१८
नतेऽपचारोनैवास्यमातुर्नायंकुलस्यते ।
तस्यदौःशील्यहेतुत्वरेवत्यन्तमुपांगतम् । १९
यस्मान्ममैकपुत्रस्यरेवत्यन्तसमद्भवम् ।
दौःशील्यमेतन्सात स्मात्पततामाशुरेवती ॥२०
तेनैवण्याहृतेशापेरेवत्यृक्षंपपातह ।
पश्यतः सर्वलोकस्यविस्याविष्टचेतसः ॥२१

पुन्नाम नरक से डरकर मैंने विधिवत गर्भाधान द्वारा इस पुत्र को जन्म दिया है, कामासक्त होकर उस पुत्र की उत्पत्ति नहीं की है ।१६ हे मुने ! फिर भी यह बालक हमारे लिए दुःखदायी, बन्धुओं को शोक प्रदान करने वाला तथा बुरे स्वभाव का उत्पन्न हुआ है, ऐसा मेरे दोष से हुआ है ।१८। यह तुम्हारे, तुम्हारी पत्नी के या तुम्हारे वंश के धर्म के व्यक्तिक्रम से इस प्रकार का नहीं हुआ, उसके दुष्ट, स्वभाव का कारण रेवती का अन्तिम काल है ।१६। ऋत्वाक् बोले—जिस रेवती के अन्त में उत्पन्न होने के कारण मेरा एक मात्र पुत्र बुरे स्वभाव का

हुआ है, रेवती का शीघ्र ही पतन हो ।२०। मार्कण्डेयजी के कहा---ऋतवाक् ऋषि ने जब ऐसा शाप दिया, तब उस रेवती नक्षत्र को गिरता हुआ देखकर सभी आश्चर्य चकित हो गये ।२१।

रेवत्युक्षंचपतिं कुमुमाद्रौसमन्ततः ।
भासयामाससहसावनकन्दरनिर्झरान् ॥२२
कुमुदाद्रिश्चतत्पातख्यातोरैवतकोऽभवत् ।
अमीवरम्य सर्वस्यांपृथिव्यांपृथिवीधरः ॥२३
तस्यर्क्षास्यतुयाकान्तिजांतापंकजिनीसरः ।
ततोजज्ञेतदाकन्यारूपेणातीवशोभना । २४
रेवतीकांतिसम्भूतांतांदृष्ट्वाप्रमुचोमुनिः ।
तस्यानामचकारेवतीनामभागुरेः ॥२५
पोषयामासचैवैतांस्वाश्रमाभ्यासम्भवाम् ।
प्रमुचःसमहाभागस्तस्मिन्नेवमहाचले ।२६
तांतुयौवनिनीदृष्ट्वाकन्यकांरूपशालिनीम् ।
तमूनिश्चिन्तयामासकोऽस्याभर्ताभवेदिति ॥२७
एवंचितायतास्तास्ययौकालोमहान्मुनेः ।
नचाससादसदृशंवरं तास्यामहामुनि ॥२८

कुमुद पर्वत में सहसा गिरकर उस रेवती नक्षत्र ने उसकी सभी दिशाऐं, वन, कन्दरा आदि को प्रकाशित कर दिया ।२२। पृथिवी पर मैं अत्यन्त रमणीक वह कुमुद पर्वत भी रेवती के गिरने से रैवतक के नाम से हुआ ।२३। उसकी काति से कमल युक्त सरोवर हुआ और उस सरोवर से एक अत्यन्त रूपवती कन्या उत्पन्न हुई ।२४। उसी कन्या को रेवती से उत्पन्न हुई देखकर प्रमुचमुनि ने उसका नाम 'रेवती रखा ।२५। वह महाभाग ऋषि रैवत पर्वत में अपने आश्रम के निकट उत्पन्न हुई कन्या का पालन करने ।२६। उस रूपवती कन्या को युवावस्था से सम्पन्न देखकर मुनि सोचने लगे कि इसका

पति कौन हो इस प्रकार चिन्ता में बहुत दिन व्यतीत हो गये ।२७-२८

ततस्तस्यावरंद्रष्टु मग्निसप्रमुचोमुनिः ।
विवेशवह्निनशालांवपृष्टस्तप्राहहव्यभुक् । २६
महाबलोमहावीर्य प्रियवाग्धर्मवत्सलः ।
दुर्गमोनाम भविताभर्त्ताह्यस्यामहीपतिः ॥३०
अनन्तपश्वमृगयाप्रसंगेतागतोमुने
तस्याश्रमपदंधीमन्दुर्गमःसनराधिपः ॥३१
प्रियव्रतान्वयभवोमहाबलपराक्रमः
पुत्रोविक्रमशीलस्यकालिन्दीजठरोद्भवः । ३२
सप्रविश्याश्रमपदंतातन्वींजगतीपतिः ।
अपश्यमानस्तमर्षिप्रियेत्यामन्त्र्यपृष्टवान् ।।३३
क्वगतोभगवानस्पादाश्रमान्मुनिपुंगव ।
तप्रणंतुमिहेच्छामितत्वंप्रब्रूहिशोभने ॥३४
अग्निशालांगत्तोविप्रस्तच्छ्रुवातस्यभाषितम् ।
प्रियेत्यामन्त्रिणचैवनिश्चयक्रामष्वरान्वितः ।।३५
सददशमहान्मानंराजानंदुर्गममुनिः ।
नरेन्द्रचिह्नहहितंप्रश्रयावनतंपुरः ॥३६

तब अग्नि से पूछने के लिए अग्निशाला में गये, इस पर अग्नि ने उनसे कहा ।२६। इस कन्या के पति महाबलि, पराक्रमी, प्रियवक्ता, धर्मवत्सल दुर्लभ नामक महीपाल होंगे ।३०। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे मुने ! इसके पश्चात स्वायम्भुव मनुके ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत के वश में उत्पन्न हुए विक्रमशील नरेश को कालिंदी नाम की रानी से उत्पन्न हुए अत्यन्त पराक्रमी वह राजेन्द्र दुर्गम मृगयाक पीछे मुनि के आश्रम पहुंचे ।३१-३२। उन्होंने आश्रम में ऋषि को न देखकर उस कृशांगी कन्या से ही उनके विषय में 'प्रिय' कहकर पूछा ।३३। हे सुन्दरी! वह मुनिवर कहाँ गये हैं मुझे यह बताओ, क्योंकि उन्हें प्रणाम करने की इच्छा से उपस्थित हुआ हूं ।३४। मार्कण्डेयजी ने कहा—वह विप्रश्रेष्ठ

अग्निशाला में गये हुए थे, यह राजा का वचन और 'प्रिय' सम्बोधन सुनकर अग्निशाला से बाहर निकले ।३५। और उन्होंने राज्य लक्षण से विभूषित और विनयनत महाराज दुर्लभ को देखा ।३६।

तस्मिन्दृष्टेततः शिष्यमुवाचसतगौतमम् ।
गौतमानीयतांशीघ्रमर्घोऽस्यजगतीपतेः ।।३७
एक तावदयंभूपश्चिरकालादुपागतः ।
जामातचविशेषेणयोग्योऽर्घस्यमतोमम् ।३८
ततः सच्चिन्तयामानराजाजामांतृकारणम् ।
विवेदचनतन्मौनीजगृहेऽर्घंचतन्नृपः ।।३९
तमासनगतंविप्रोगृहीतार्घंमहामुनिः ।
स्वागप्राहतंराजेन्द्रमपितेकुशलगृहे ।।४०
कोशेवलेऽर्थमित्रेषुभृत्यामात्येनरेश्वरः ।
तथात्मनिमहावाहोयत्रसर्वप्रतिष्ठितम् ।४१
पत्नीचतेकुशलिनोयतएवानुतिष्ठति ।
पुच्छाम्यस्यास्ततोकाहकुशलिन्तौऽपरः स्तवः ।।४२

इन्हें देखकर ऋषि ने अपने गौतम नामक शिष्य को अर्घ्य लाने की आज्ञा दी ।३७। उन्होंने कहा कि एक तो बहुत समय के पश्चात यहाँ इनका आगमन हुआ है, दूसरे यह जमाता भी हैं, इसलिए अर्घ्य दान के उचित पात्र हैं ।३८। मार्कण्डेयजी ने कहा-ऋषि द्वारा जमाता कहे जाने पर राजा सोचने लगे कि क्यों यह शब्द कहा, परन्तु वह कुछ समझ न पाये और मौन रहकर अर्घ्य ग्रहण किया ।३९। अर्घ्य ग्रहण के पश्चात वे श्रेष्ठ आसन पर बैठेतब उनसे महामुनि ने कहा—हे राजन् ! आप यहाँ सुख पूर्वक तो आ सके । आपका कोषागार तो ठीक है ? आपकी सेना, मित्र, सेवक और मन्त्रिगण तो कुशल पूर्वक हैं ? आप सबके आश्रय स्नान भी सकुशल तो हैं ? ।४०-४१। आपकी पत्नी यहाँ कुशल पूर्वक रह रही हैं, इसलिए मैंने उस विषयक कुशल प्रश्न नहीं किया, आपके पुर की अन्य ललनायें तो कुशल से हैं ? ४२।

त्वत्प्रसादादकुशलंनदवचिन्ममसुव्रत ।
जातकौतूहश्चोस्मिमभार्य्यात्रिकामने ।।४३
रेवतो मुमहाभागात्रैलोक्यस्यापिसुन्दरी ।
तवभार्य्यावरारोहातांत्वराजन्नेवेत्सिकिम् ।।४४
सुभद्राशान्तननयांकावेरीतनयांविभाम् ।
सुराष्ट्रजासुजातांचकदम्वांचवरुथवरुथजाम् ।।४५
विपाठानन्दिनोचैववेद्मिभार्यागृहेद्विज ।
तिष्ठन्तिमेनभगवन्नेवतोवेद्मिकान्विंतम् ।।४६
प्रियेतिसाम्प्रतंयत्वयोक्तावरवर्णिनीं ।
किंविस्मृततेभूपालश्लाध्वयंगृहिणीतव ।।४७
सत्यमुक्तं मयाकिन्तुभावोदुष्टोनमेमुने ।
नात्रकोपभवान्कर्तुं मर्हत्यस्मासुयाचितः ।।४८
यत्वंवीषिभपालनभावतस्नवदूषितः ।
व्याजहारभवानेनतद्वह्निननानृपचोदितः ।।४९

राजा ने कहा—हे सुव्रते महामुने ! आपकी कृपा से मेरी सब प्रकार से कुशल हैं, परन्तु यह पत्नी कौनसी है इसे जानने के लिए मुझे कुतूहल हुआ है ।४। ऋषि बोले हे राजन्—रेवती नाम की तीनों लोकों में अद्वितीय आपकी पत्नी है, क्या आप उसे नहीं जानते ! ।४४। राजा ने कहा—हे भगवन् ! सुभद्रा, शांततनया, कावेरी तनया, सुराष्ट्रजा, सुजाता, कदम्बा, वरूथजा ।४५। विपाठा और नन्दिनी यह मेरी पत्नियाँ है, इन्हें मैं भले प्रकार जानता हूँ, क्योंकि वह मेरे ही घर में रहती हैं, परन्तु मैं अपनी रेवती नाम की पत्नी को नहीं जानता कि वह कौनसी है ? ।४६। ऋषि ने कहा—वर की वरण करने के लिये तत्पर जिस कन्या को आपने 'प्रिय' कहा, वही आपकी श्लाघनीय पत्नी है, हे राजन् ! क्या तुम उसे भूल गये हो ? ।४७। राजा ने कहा हे मुनिश्रेष्ठ ! आपका कथन सत्य है, परन्तु मेरे द्वारा किए गए 'प्रिय' सम्बोधन से मेरा कोई दुष्ट भाव नहीं था; इसलिए

आप मुझ पर क्रोध न करें। ऋषि ने कहा—हे राजन् ! आपकादुष्ट भाव नहीं था, यह सत्य ही है ।४६।

मयापुष्टोदुतवहाकोऽस्यावप्तेंतिपार्थिवः ।
भविताते-चाप्युक्तोभवांनवाद्यवैवरः ।।५०
मद्गृह्यतांग्रादत्ततुभ्यकन्यानराधिपः ।
प्रियेत्यामन्त्रिताचेयविचारंकुरुषेकथम् ।।५१
ततोऽसावभवन्मौनोतेनोक्त.पृथिवीपति ।
ऋषिस्तथोद्यत कर्तुं तस्यावैबाहिकंविधिम् ।।५२
तमुद्यतंसापितरं विवाहायमहामुनें ।
उवाचकन्यायकिंचित्प्रश्रयावनतानना । ५३
यदिमेप्रीनिमांस्तातप्रसादंकर्तुं मर्हसि ।
रैवत्यृक्षेनवैभद्रे चन्द्रयोगिव्यवस्थितम् ।
रेवत्यृक्षेनवैभद्रे चन्द्रयोगिव्यवस्थितम् ।
अन्य निमन्तिऋक्षाणिसुभ्रु वैवाहिकानिते ।।५५
तातत्तेनविनाकालोविफलःप्रतिभातिमे ।
विवाहोविफलेकालेमद्विधायाःकथभवेत् ।।५६

हे भूपते ! मैंने अग्नि से उसके पति के विषय में पूछा था तब अग्नि ने आपको ही इसके पति होने की बात कही थी ।५०। इसलिए हे राजन् ! आपने जिसके प्रति 'प्रिय' कहा है, वह कन्या मैं आपको प्रदान करता हूँ, आप इसमें विचार क्यों करते हैं, इसे ग्रहण करिये ।५१। मार्कण्डेयजी ने कहा-ऋषि के बचन सुनकर राजा मौन हो गये और ऋषि भी विवाह संस्कार के कार्य सम्पादन में तत्पर हुए ।५२। जब कन्या ने मुनि को विवाह करने में तत्पर देखा, उसने विनयपूर्वक निवेदन किया ।५३। हे तात ! आपकी मुझ पर प्रीति है और यदिआप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरा विवाह संस्कार रेवती नक्षत्र में सम्पन्न करें ।५४। ऋषि ने कहा—रेवती नक्षत्र योग में अवस्थित नहीं है, परन्तु विवाह कार्य में श्रेष्ठ अन्य सभी नक्षत्र विद्यमान हैं ।५५। कन्या ने

कहा-हे तात ! रेवती नक्षत्र से वर्जित समय मेरे विषय में विफल जान पड़ता है मेरा विवाह विफल समय में कैसे होगा ? ।५६।

तवागितिविख्यातस्तपस्वीरेबतोप्रति ।
चकारकोपंक्रुद्धेनतेनर्क्षंविनिपायित्तम् ।।५७
मयाचास्मप्रतिज्ञाताभार्येतिमदिरेक्षणा ।
नचेच्छसिविवाहवसंकटनःसतागतम् । ५८
ऋतवास्समुनिस्त ताकमेवतप्तवांस्तपः ।
नत्वयाममतातेनब्रह्मबन्धोःसुतास्दिकिम् ।।५९
ब्रह्मबन्धोःसुतानत्वंबालेनैवतपस्विनः ।
सुतात्वममयोदेवान्कर्त्तमन्मान्समुत्सहे ।।६०
तपस्त्रीयदिमेतातस्तत्किमृक्षमिदर्दिवि ।
समारोप्य बिवाहोमेतदृक्षेक्रियतेनतु ।।६१
एवभवतुभद्रन्तेभद्रे द्रीतिमतीभव ।
आरोपयामीन्दुमार्गेरेवत्यृक्षंकृतेतव ।।६२

ऋषि बोले—पहिले ऋतुवाक् नामक प्रख्यात तपस्वी ने रेवती नक्षत्र को क्रोध पूर्वक आकाश से पतित कर दिया है ।५७। मैं राजा को बचन दे चुका हूं कि इस कन्या को मैं तुम्हें पत्नी रूप दूंगा। इसलिए इस समय विवाह के लिए तुम्हारा सहमत न होना मुझेसङ्कट में डाल रहा है ।५८। कन्या ने कहा हे तात ! उन ऋतवाक् मुनि ने ऐसा कौन-सा तप किया है, जो आप जैसे मेरे पिता द्वारा साधित नहीं हो सका तो क्या मैं किसी ब्रह्मबन्धु की कन्या हूँ ? ५९। ऋषि बोले— तुम ब्राह्मणबन्धु की नहीं हो और न किसी साधारण तपस्वी की ही पुत्री हो, जो ऋषि देवताओं के जन्म देने में समर्थ हो, उसी मुझ ऋषि की तुम पुत्री हो ।६०। कन्या ने कहा—यदि मेरे पिता ऐसे तपस्वी हैं तो उस नक्षत्र को आकाश में स्थिर करके, उसी नक्षत्र में मेरा विवाह संस्कार क्यों नहीं कर सकते ? ।६१। ऋषि बोले-ऐसा ही होगा। तुम्हारा कल्याण हो, तुम प्रीतिमती हो, तुम्हारे हित के लिए

रेवती नक्षत्र को में चन्द्रभाग में स्थित किये देता हूँ ।६१। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे द्विजश्रेष्ठ ! तदनन्तर उस महर्षि ने अपने तप के बल से रेवती नक्षत्र को पहिले के ही समान चन्द्रमा मे स्थित कर दिया ।६२

ततस्तपःप्रभावेणरेवत्यक्षमहामुनिः ।
यथापूर्वन्तथाचक्रं सोमथोगिद्विजोत्तम् ॥६३
विवाहंचैवदुहितुर्विधिवन्मन्त्रयोगिनम् ।
निष्पाद्यप्रीतिमान्भूयोजामातरमथाब्रवीत् ॥६४
औद्वाहिकतेभूपालकथ्यतांकिददाम्यहम् ।
दुर्लभ्यममिदास्यामिमाप्रतिहततप: ॥६५
मनोः स्वायम्भुवस्याहमुत्पन्नः सन्ततोमुने ।
मन्वन्तराधिपपुत्रंत्वत्प्रसादाद्वृणोम्यहम् ॥६६
भविष्यैत्येपतेकामोमनुस्त्वत्तनयोमहीम ।
सकलाभोक्ष्यतेभूपधर्मविच्चभविष्यति ॥६७
तामादायततोभूप: स्वमेवनगरं ययौ ।
तस्मादजायतसुतोरेवत्यांरैवतोमनुः ॥६८
सनेतः सकलैर्धर्मैर्मानिमवैरपराजितः ।
विज्ञाताखिलशास्त्रार्थोवेदविद्यार्थशास्त्रवित् ॥६९
तस्यमन्वन्तरेदेवान्मुनिदेवेन्द्रपार्थिवान् ।
कया मायान्मयाब्रह्मन्निबोधसुसमाहितः ॥७०

और वैवाहिक मन्त्रों से अपनी कन्या को विवाह संस्कार सम्पन्न करके अत्यन्त प्रसन्न मन से अपने जमाता के प्रति कहा ।६४। ऋषि बोले—हे राजन् ! विवाह में दान स्वरूप तुम्हें क्या प्रदान करूँ यह मुझे बताओ, तुम यदि कोई दुर्लभ वस्तु भी माँगोगे तो मैं अपनीतपस्या के प्रभाव से दूँगा ।६५। राजा ने कहा हे मुने ! मैं स्वायम्भुव मनु के वंश में उत्पन्न हुआ हूँ मैं आपकी कृपा से मन्वन्तराधिपति पुत्र कोप्राप्त करूँ यही चाहता हूं ।६६। ऋषि ने कहा—हे राजन् तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण होगी ।६७। मार्कण्डेयजी ने कहा—तदनन्तर वह राजा

अपनी पत्नी को साथ ले अपने नगर को गये और समय पाकर उस रेवती के गर्भ से रेवती मनु उत्पन्न हुए ।६८। यह धर्म ज्ञाता अजेय शास्त्रों में पारगामी तथा वेद विद्या और अर्थशास्त्र में भी पारङ्गत हुए ।६। हे ब्रह्मन् ! अब उनके मन्वन्तर देवता, ऋषि, इन्द्र और राजाओं का वर्णन करता हूं, उसे सुनो ।७०।

मेधसस्तत्रदेवास्तथाभूतनयाद्विज ।
वैण्ठश्चापिताभाश्चचतुर्दशचतुर्दशः ।।७१
तेषादेवणानांतुचतुर्णामपिचेश्वरः ।
नाम्नाविभुरभूदिन्द्रः शतयज्ञोपलक्षकः ।।७२
हिरण्यलामावेदश्रोरूध्वबाहुस्तथापरः ।
वेदवाहुः सुधामाचपर्जन्यश्चमहामुनिः ।।७३
वसिष्ठश्चमहाभागोवेदवेदांगपारगः ।
एतेसप्तर्षयश्चासन्रैवतस्यान्तरेमनोः ।।७४
वलवन्धुर्महावीर्यः सुयष्टव्यस्तथापर ।
सत्यकाद्यास्तथैवासन्रैवतस्यमनोः सुतः ।।७५
रैवतांतस्तुमनवः कथितायेमयातव ।
स्यावम्भुवाश्रयाह्येतेस्वारोचिषमृतेमनुम् ।।७६
(यएपांश्रृणुयान्नित्यंपठेदाख्यानमुत्तमम् ।
विमुक्तः सर्वपापेभ्यालोकंप्राप्नोत्यभीप्सितम् ।।७७

हे द्विज ! देवगण, सुमेध, बैकुण्ठ और अभिताभ यह चार गण हैं तथा प्रत्येक गण में चौदह देवता हैं ।७१। उन चार गणों के अधिपति सौ यज्ञ करने वाले 'विभु' नामक इन्द्र हैं ।७२। हिरण्यलीमा, वेद श्री ऊध्र्वबाहु, वेदबाहु, सुश्रामा, महामुनि पर्जन्य ।७३। तथा वेद वेदांग पारंगता वसिष्ठ यह सप्तर्षि उस रैवत मन्वन्तर में हुए थे ।७४। रैवत मनु तक उसी स्वायंभुव मनु के वंश में हुए थे, परन्तु स्वारोचिष मनु उस वंश के नहीं थे ।७६। जो इस श्रेष्ठ आख्यान को नित्य सुनते या पढ़ते हैं, वह इच्छित लोक को प्राप्त होते हैं ।७७।

६८—चाक्षुष मन्वन्तर

इत्येतत्कथितंतुभ्यंपञ्चमंमन्तरंमया ।
चाक्षुषस्यमनोःषष्ठंश्रूयतामिदमन्तरम् ॥१
अन्यजन्मनिजातोऽसौचक्षुमेष्ठिनः ।
चाक्षुषत्वमतस्तस्यजन्मन्यस्मिन्नपिंद्विज ॥२
(अनमित्रस्यराजर्षेर्भद्राभार्यामहात्मनः ।
जज्ञेसुतविद्वासशुचिजातिस्मरविभुग ॥३)
जातंमातामिजोत्संगेस्वितमुल्लाप्यततुनः ।
परिष्वजतिहार्देनपुनरुल्लापयत्यथ ॥४
जातिस्मरःसजातोवैमातुरुःसंगमास्थितः ।
जहासतंसदामातासंक्रुद्धावाक्यमप्रवीत ॥५
भीतास्मिकिमिदंवेत्सहासोयद्विदनेतव :
अकालबोधःसञ्जातः कश्चित्पश्यसिशोभनम् ॥६
(तन्मातुवचनंश्रुत्वाप्रहस्येदनथाब्रवीत्)
मामत्तुमिच्छतिपुरोमार्जारीकिनपश्यसि ।
अन्तर्द्धानगताचेयंद्वितीयाजातहारिणो ॥७

मार्कण्डेय जी ने कहा—हे द्विज श्रेष्ठ ! मैंने तुम्हारे प्रति इन पाँच मन्वन्तरों का वर्णन किया, अब छठवें चाक्षुष मन्वन्तर के विषय में कहा हूँ, श्रवण करो ।१। अन्य जन्म में परमेष्ठी ब्रह्माजी चक्षु से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम इस जन्म में भी चाक्षुष हुआ था ।२। महात्मा अनमित्र की भद्रा नामक पत्नी के गर्भ से विज्ञान, पवित्र जातिस्मर और विभू गुण से सम्पन्न एक पुत्र की उत्पत्ति हुई ।३। माता ने आनन्द में भरकर उस उत्पन्न हुए पुत्र का लाड़ से आलिंगन किया और फिर उसका आदर करने लगी ।४। इस पर माता की गोदी में स्थित हुए वह जाति स्मर पुत्र हंस पड़ा तो माता ने उससे क्रोध पूर्वक कहा ।५। हे वत्स ! तुम्हारे मुख की इस हंसी को देखकर मैं डर गई हूँ, तुम्हें इस शिशु काल में ज्ञान को प्राप्त होकर क्या कुछ शुभ दिखाई देती है ? ।६। पुत्र ने कहा—यह जो मर्जारी मुझे भक्षण

करने की इच्छा से सामने खड़ी है, उसे क्या तुम नहीं देख सकती ? गुप्त रूप से यह जात हारिणी यहाँ स्थित है, उसे क्या तुम नहीं जान सकती ? ।७।

पुत्रप्रीत्याचभवतीसहार्द्वांमामवेक्षती ।
उत्थाप्योल्लाप्यबहुश परिष्वजतिमांयत: ।।८
उद्भतपुलकास्नेहम्भवास्राविलेक्षणा ।
ततोममागतोहास:श्रृणुचाप्यत्रकारणम् ।।९
स्वार्थप्रसक्तामार्ज्जारीप्रसक्तंमामवेक्षते ।
तथान्तर्द्धानग्रांचैवद्वितीयाजातहारिणी ।।१०
स्वार्थायस्निग्धहृदयेयथैवैतेममोपरि ।
प्रवृत्तेस्वार्थमास्थायतथैवप्रतिभाषिमे ।।११
किंतुमदुपभोगायमार्ज्जारीजातहारिणी ।
त्वन्तुक्रमेणोपभोग्यंमत्ताफलभीप्सत ।।१२
नमाजानासिकोप्येषनचैवोपकृतंमया ।
संगतं नातिकालीन पंचप्तदिनात्मकम् ।।१३
तथापिस्नेह्यसेस्रापरिप्वजसिचाप्यति ।
तातेतिवत्सभद्रेतिनिर्व्यलेकब्रवीषिमम् ।।१४

जब तुमने पुत्र के वात्सल्य से स्नेहमयी होकर आदरपूर्वक मेरा बारम्बार आलिंगन किया तो मुझे हँसी आ गई, अब में उसका कारण बताता हूं, श्रवण करो ।८-९। यह मार्जारी और जात हारिणी अपने प्रयोजन में आसक्त हुई अपनी अर्थपूर्ण दृष्टि से मुझे देख रही है ।१०। यह स्वार्थवश मेरे प्रति जेसे नम्र हृदया हुई है, वैसे ही स्वार्थवश तुम भी मेरे प्रति स्नेहमयी हुई हो, मैं यही समझता हूँ । ११ यह मार्जारी और जातहारिणी मेरा भक्षण करने की इच्छा करती है और तुम मुझसे इच्छित उपभोग प्राप्त करने की अभिलाषा रखती हो ।१२ क्योंकि तुम मुझे नहीं जानती कि मैं कौन हूँ, बहुत दिनों का मिलना भी नहीं है और न मैंने कोई उपकार ही किया है, केवल पांच या

सात दिन माता-पुत्र रूप में मिलन हुआ है ।१३। फिर भी तुम अश्रु-पूर्ण नेत्रों से मेरे प्रति स्नेह प्रकट करती हो, आलिंगन करती हो और कष्ट रहित हृदय से तात, वत्स आदि कहकर पुचकारती हो ।१४।

नत्वाहमुपकारार्थंवत्सप्रीत्यापरिष्वजे ।
नचेदेतद्भवत्प्रीत्यैपरित्यक्तास्म्यहंत्वया ॥१५
स्वार्थंमयापरित्यक्तोयस्त्वत्तोमेभविष्यति ।
इत्युक्त्वासातमुत्सृज्यनिष्क्रांतासूतिकागृहात् ॥१६
जडांगवाह्यकरणंशुद्धान्तः करणात्मकम् ।
जहाहृतंपरित्यक्तसातदाजातहारिणी ॥१७
साहित्वातंतदावालंविक्रांतस्यमहीभृतः ।
प्रसूतपत्नीशयनेन्यस्यतस्यतस्याददेसतम् ॥१८
तमप्यन्यगृहेनीत्वागृहीत्वातस्याचात्मजम् ।
तृतीयभक्षयामाससाक्रमाज्जातहारिणी । १९
हृत्वाहृत्वातृतीयंतुभक्षयत्यतिनिर्घृणा ।
करोत्यनर्दिनतातुपरिवर्तंतथान्ययोः ॥२०
विक्रान्तोऽपिततस्यसुतस्यैवमहीमतिः ।
कारयासाससंस्काराराजन्यस्यभवन्तिते । २१

माता ने कहा—हे वत्स ! किसी उपकार की आशा से मैं तुम्हारा आलिंगन नहीं करती यदि तुम मेरे आलिंगन करने आदि से प्रसन्नता को प्राप्त नहीं होते तो मुझे छोड़ दो ।१५। तुमसे जिस स्वार्थसिद्धि की आशा है, मैंने उसे छोड़ा ऐसा कहकर प्रसूति गृह से माता उस जड़वत पुत्र का परित्याग कर बाहर निकली, तब माता द्वारा परित्यक्त उस पुत्र का जातहारिणी ने हरण कर लिया ।१६-१७। इसका हरण करके उसने विक्रांत नामक राजा की प्रसूता शय्या में रखकर उसके नवोत्पन्न शिशु का हरण किया। और उसे भी किसी दूसरे के घर में रखकर उसके पुत्र को चुराकर अन्त में उस तृतीय शिशु का भक्षण कर लिया ।१९। वह अत्यन्त निर्दय जातहारिणी नव प्रसूत शिशुओं

का नित्य प्रति इसी प्रकार हरण करती और पहिले दो का परिवर्तन करके तीसरे का आहार कर लेती थी ।२०। इसके अनन्तर राजाविक्रांत ने अपने उस परिवर्तित पुत्र के क्षत्रियोचित सभी संस्कार कराये ।२१

आनन्देतिचनामास्यपिताचक्रे विधानतः ।
मुद्रायरमयायक्तोविक्रान्तसनराधिपः ॥२२
द्वयीपनयनंतंतुगुरुराहकुमारकम् ।
जनन्याःप्रागुपस्थानक्रियतांचाभिवादनम् ॥२३
सगुरीस्यद्वचःश्रुत्वाहिस्वंवमणःब्रवीत् ।
वद्यामेकतमा मामानिनीपालनीनुकिम् ॥२४
नन्वियंतेमहाभागजगित्रीजातमजा ।
विक्रान्तस्याग्रमहिषीहैमिनीनामनामः ॥२५
इयंजनित्रीचैत्रस्यविशालग्रामवासिनः ।
विप्रागुयबोधपुत्रस्ययोस्वांजातोन्यतांगमम् ॥२६
कतस्त्वकथयानन्दचैत्रः कोवात्वायोच्यते ।
सकटमहृदाभातिक्वजातोब्रवीतिकम् ॥२७

उस पुत्र को पाकर राजा अत्यन्त आनन्दित हुए, इसलिए उनके उस पुत्र का नाम आनन्द रखा गया ।२२। तदनन्तर उस यज्ञोपवीत संस्कार किए गए राजकुमार को, गुरुजी ने माता ने निकट जाकर प्रणाम करने को कहा ।२४। गुरुजी के बचन सुनकर आनन्द ने हँसकर कहा—मैं किस माता को प्रणाम करूँ ? जन्म देने वाली को अथवा पालने वाली को ? ।२४। गुरुजी ने कहा हे महाभाग ! महाराजविक्रांत की राजमहिषी हैमिनी क्या तुम्हारी जन्मदात्री नहीं हैं ? ।२५। आनन्द बोला—इसके गर्भ से उस चैत्र की उत्पत्ति हुई थी जो विशाल नाम ग्राम निवासी बोध नामक ब्राह्मण का पुत्र है मेरा जन्म अन्यत्र हुआ था ।२६। गुरुजी ने कहा—हे आनन्द ! तुम कहाँ से आये ? तुमने जिस चैत्र का नाम लिया; वह चैत्र कौन है ? तुम कहाँ उत्पन्न हुएऔर यह क्या कह रहें हो ? ।२७।

जातोऽहमनमित्रस्गक्षत्रियस्यगृहेद्विज ।
तत्पत्न्यांगिरिद्रायामाददेजातहारिणी ॥२८
तयात्रमत्तोहेमिन्यागृहीत्वाचसुतंचसा ।
वोधन्यद्विजमुख्यस्यगृहेनीतवतीपुनः ॥२९
भक्षयामासचसुतंतय्यबोधद्विजन्मनः ।
सतत्रद्विससंकारैः संस्कृतोहैमिनीसुतः ॥३०
वयमत्रमहाभागसंस्कृतागुरुणात्वया ।
मयातवच कार्यमुपैमिकतमांगुरो ॥३१
अतीवगहनंवत्ससंकट महादागतम् ।
नवेद्मिकिंचिन्मोहेनभ्रमन्तीवहिवृद्धयः ॥३२
मोह यपुत्रोविभर्षेकोवाकस्यनबान्धकः ॥३३
आरभ्यजन्मोनृणांसम्बन्धित्वम थैतिय ।
अभ्यसंबधिनोविप्रमृत्यु नामन्निवर्तिताः ॥३४
अत्रापिजातस्यसुत सम्बन्धीयोऽस्यबांधवेः ।
सोप्यस्तमन्तेदेहस्य प्रयात्येषोऽखिलक्रमः ॥३५

आनंद बोला—राजा अनामित्र की पत्नी गिरिभद्रा के गर्भ से मैं उत्पन्न हूं और जातहारिणी मेरा हरण करके यहाँ रख गई ।२८। और हैमिनी के पुत्र का हरण करके उसे ब्राह्मण बोध के यहाँ ले जाकर ।२९। उस बोध के पुत्र को खा गई, हैमिनी के उस पुत्र का विशाल ग्राम में द्विज-संस्कार किया गया है ।३०। और मेरा संस्कार यहाँ आपके द्वारा हुआ है, हे महाभाग ! आप मेरे गुरु हैं, मुझे आपकीआज्ञा पूर्णरूपेण स्वीकार है, अतः आज्ञा कीजिए कि मैं किस माता को प्रणाम करूँ ।३१। गुरुजी ने कहा—हे वत्स यह तो अत्यन्त घोर सङ्कट आ गया, मैं कुछ भी नहीं समझ पाता जैसे मेरी बुद्धि मोह से भ्रमित हो गई है ।३२। आनंद बोला—हे ब्रह्मर्षे ! इस प्रकार से व्यथित इस संसार में मोह का विराम क्या है ? इसलिए कौन किसका पुत्र है ? जन्म लेने के पश्चात जीव विभिन्न जीवों से सम्बन्ध युक्त होता है,तब

कोई किसी का वन्धु नहीं हो सकता है, जिस प्रकार संबन्ध वाले मनुष्य मृत्यु के द्वारा धराशायी होते हैं।३३-३४। तथा बांधवों के सहित जन्म लेने वाले मनुष्यों का जो सर्वानुगामी सम्बन्ध है, वह भी शरीर के नष्ट होने पर टूट जाता है।३५।

अतीब्रवीमिसंसारेवसत कोनाबान्धव:।
कोवापिसततबन्धु किंवोविभ्राम्यतेमति: ॥३६
पितृद्वयमयाप्राप्तमस्मिन्नेहर्ह्हिजन्मनि।
मातृद्वयचकिंविचित्रयद्हसम्भवे ।।३७
सोऽहंतपकरिष्यामित्ययाययायोह् यस्यभूपते:।
विशालग्रामत: पुत्रैश्चैत्रआनीयतामिह ॥३८
तत:सविस्मितोराजासभायं:सहबन्धुभि:।
तस्मान्नवत्यममतामनुमेनेवनायतम् ।३९
चैत्रमानीयतनयराज्योग्यचकारस:।
समान्यब्राह्मणयेनपुत्रबुद्ध्यासपालित:॥४०
साऽप्यानन्दस्तपस्तेपेबालएवहावने।
कर्मणांक्षयर्थायविमुक्त: परिपन्थिनाम् ॥४१

इसलिए कहता हूँ कि संसारी जीवों का कोई बन्धु नहीं; इसलिए आपकी बुद्धि किस कारण भ्रान्त हो रही है।३६। इसी जन्म में मेरे दो पिता और दो माता हो चुकी हैं फिर यदि दूसरा देह धारण करके ऐसा सम्बन्ध हो जाए इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? ।३७। अब मैं तप करूँगा, आप इन राजा के पुत्र चैत्र को विशाल ग्राम से यहां ले आइये।३८। मार्कंण्डेयजी ने कहा—तब राज ने पत्नी और बन्धुओं से आश्चर्यान्वित होकर उस पुत्र के प्रति मोह का परित्याग कर उसे वन जाने की आज्ञा दी। ।३९। और ब्राह्मण ने चैत्र का पालन किया था, उसे सम्मानित कर, उससे अपना पुत्र लेकर उसका राज्याभिषेक किया।४०। उधर आनन्द मुक्ति में बाधक होने वाले सब कर्मों के परित्याग पूर्वक बाल्यावस्था से ही तप करने लगा।४१।

तपस्यन्तंतस्ततचप्राहदेव: प्रजापतिः ।
किमर्थतप्यसेवत्सतपस्तीव्रं वदस्वतत् ।।४२
आत्मनाशुद्धिकामोहंकांरोमिभगवंष्तपः ।
बन्धायममकर्माणियानिक्षोपणोन्मुखः ।।४३
क्षीणधिकारोभवतिमुक्तिगयोनशर्मवान् ।
सत्वाधिकारन्मुक्तितवाप्स्यतितोभत्रान् ।।४४
भवतामनुन भाव्यंषष्ठेनव्रजतत्करु ।
अलतेतपसातस्मिन्कृतेमुक्तिमवाप्स्यसि ।।४५
इत्युक्तेब्रह्मणासोऽषितथेत्युक्त्वामहामतिः ।
तत्कर्मास्मिमुखोयस्तुतपसोविरराामह ।।४६
चाक्षुषेत्याहतब्रह्मातपसोविनिवर्त्तयन् ।
पूर्वनाम्नावभवाथप्ररुयातश्चाक्षुषोमनः ।।४७
उपयेमविदसतुतामुग्रस्यभूभृतः ।
तस्यांचोत्पादवामासपुत्रान्प्रख्यातविक्रमान् ।।४८
तस्वमन्वन्तरेशस्ययेऽन्तरेत्रिदशाद्विज ।
येचर्षतस्तथंवेन्तोयेसुताश्चास्यतान्छृणु ।।४६

जब वह इस प्रकार तप में प्रवृत्त हुआ, तब प्रजापति ब्रह्माजी ने उससे कहा—हे वत्स ! ऐसा घोर तप किस लिये कर रहे हो ।४२। आनंद बोला—हें भगवन् ! संसार के बंधन रूप कर्मों को नष्ट करने की अभिलाषा से ही मैं यह तप कर रहा हूँ ।४३। ब्रह्माजी ने कहा—क्षीणाधिकारी वाले मनुष्य ही क्षोमके अधिकारी होते हैं, क्योंकि वेकर्मवान् नहीं होते, तुम जीवों पर आधिपत्य करने वाले होकर मोक्ष को कैसे प्राप्त कर सकोगे ?।४४।जाओ, तुम छठवें मनु होंगे और उसी प्रकार के कार्य से मोक्ष को प्राप्त हो जाओगे । अब तुम्हें तप करना आवश्यक नहीं है ।४५। मार्कण्डेयजी ने कहा—ब्रह्माजी को पाकर 'ऐसा ही हो' कहते हुए आनंद ने तपस्या का परित्याग किया ।४२। और ब्रह्माजी ने उन्हें तप से निवृत्त करके पूर्वतत् 'चाक्षुष' नाम दिया, फिर वही चाक्षुष

मनु के नाम से प्रसिद्ध हुए ।४७। फिर उन्होंने राजा उग्र की पुत्री विदर्भा से विवाह किया और उसके गर्भ से उन्होंने विक्रम युक्त अनेक पुत्र प्राप्त किए ।४८। उस मन्वन्तरपति के मन्वन्तर में जो ऋषि, इंद्र और जो-जो संतान हुई, उसका वर्णन सुनो ।४९।

आप्यानामसुरास्तत्रतेषामेकोऽष्टकोगण: ।
प्रख्यात कर्मणांविप्रज्ञेहव्यभुजामयम् ।।५०
प्रख्यात बलवीर्य्यप्रभासण्ढलदर्दशाम् ।
द्वितीयश्चप्रसूताख्योदेवानामष्टकोगण: ।।५१
तथैवाष्टकएवान्योमन्त्राख्योदेवतांगण: ।
चतुर्थश्चगणस्तत्रयथागाख्यास्तथाष्टक: ।।५२
लेखसंज्ञास्तथैवान्येतत्रमन्वन्त रेद्विज: ।
पंचमेचणेदेवास्थत्संग् ह्यमृताशिव: ।।५३
शत कृतूनामहाहृत्यय तेषामधिपोभवत ।
मनोजस्वस्तृथेवेन्द्रसंख्यातोयज्ञभागभुक् । ५४
सुमेधाविरजाश्चैवहविष्मानुन्नतोमधु:
अतिनत्मासहिष्णुश्चसप्त सन्निति चषय: ।।५५
ऊरूपुरुशतद्यु म्नप्रमुखा:सुमहाबला: ।
चाक्षु षस्यमनोपुत्रा: पृथिवीहतयोभवन् ।।५६

हे ब्रह्मन् ! इस मन्वंतर में देवताओं का 'आर्य' नामक प्रथम गण हुआ, उस गण में कर्म और यज्ञ में हव्यभोजी आठ प्रसिद्ध देवता थे ।५०। बल वीर्य में विख्यात और प्रभामण्डल के मध्यवर्ती होने के कारण दुर्दश अन्य देवताओं का 'प्रसूत' नामक द्वितीय गण हुआ, इसके भी आठ देवता हुए ।५१। मंताख्य नामक तृतीय देवगण में आठ और यूथम नामक चतुर्थगण भी आठ देवता हुए ।५२। पाँचवें गण में अमृताशी नामक विख्यात देवता हैं। उस मंवंतर में अन्य देवता लेख नाम वाले हैं, इस पाँचवें गण में पूर्ववत् अमृतभोजी देवता आठ हैं ।५२। सौ यज्ञ करके 'मनोजव' नामक इंद्र उन देवताओं के अधिपति हुए

।५४। इसमें सुमेधा, विरजा, हविष्मान्, उन्नत्त, मधु, अति और सहिष्णु यह सप्तर्षि हुए तथा गुरु, शतद्युम्न इत्यादि राजा उन चाक्षुष मनु के अत्यंत बलवान् पुत्र हुए ।५५-५६।

ऐतत्ते कथितषष्ठंमयामन्वन्तरं द्विवज ।
चाक्षुष यतथाजन्मचरितञ्चमहात्मनः ।।५७
सारप्रतंवर्त्ततेतोऽयंवाम्नावैयस्त्वतोमनुः ।
सप्तमोयेन्तरेतस्यदेवाद्यास्ताञ्छृष्वमे ।।५८
यइदकतियेद्धीमाणचाक्षुषस्यान्तरं भुवि ।
श्रृणुतेचलभेत्युत्रानारोन्यसुखसम्पदम् ।।५९

यह इस षष्ठ मन्वंतर और महात्मा चाक्षुष मनु का जीवन चरित्र मैंने तुमसे कह दिया ।५७। अब जो वैवस्वत नामक सातवें मनु वर्तमान हैं, उनसे मंवंतर के देवादि का वर्णन श्रवण करो ।५८। जो मनुष्य इस चाक्षुष मंवंतर को कहेंगे, यह श्रवण करेंगे उंहें पुत्र आरोग्यता सुख सम्पत्ति की प्राप्ति होगी ।५९।

६९–वैवस्वत मन्वन्तर आरम्भ

मार्तण्डस्यरवेभर्यातनयाविश्वकर्मणः ।
संज्ञानामहाभागतस्याभानुरजीजनत् ।।१
मनु प्रख्यातयशसमनेकज्ञानपारवम् ।
विबस्वितःसुतोयस्मात्तस्माद्वैवस्यवतस्तुसः ।।२
संज्ञासरविणादृष्टानिमीलयविलोचने ।
ततस्ततः सरोषोऽर्क सज्ञांनिष्ठुरमप्रवीत् ।।३
मयिदृष्टेसदायस्मात्कुरुषेनत्रसंयमः ।
तस्माज्जंनिष्यसेमूढप्रजासंयमनयनम् ।।४
ततः साचपलांदृष्टिदेवीचक्रे भयाकुला ।
विलोलितदृष्ट् वापृनराहचतारविः ।।५
यस्मादिवलोलितादृष्टिर्मयिष्टे त्वयाधुन ।
तस्माद्विलोलांतनयांनदीत्वंप्रसविष्यसि ।।६

तःसंज्ञानुसंजज्ञेभर्तु शापेनतेमवै ।
यमश्चयमुनाचेयप्रख्यातासुमहानदी ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे महाभाग ! विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा मार्त्तण्डदेव की भार्या थी, उसके गर्भ से ।१। यश में विख्यात एवं अत्यन्त ज्ञानवान् मनु उत्पन्न हुए,वह विवस्वान् के पुत्र होने से वैवस्वत नामसे प्रसिद्ध हुए ।२।सूर्य के रूपको देखतेही वह संज्ञा अपने नेत्र बन्दकर लेती थी, इसलिए एक दिन सूर्य ने उसके प्रति यह कठोर बचन कहा ।३। तू मुझे देखकर सदैव नेत्रों का संगम कर लेती है इसलिए तेरे प्रजा का संगम करने वाले यम की उत्पत्ति होगी ।४। मार्कण्डेयजी ने कहा—तभी से संज्ञा भय से व्याकुल होकर सूर्य को चंचल दृष्टि से देखने लगी, तब उसे चंचल नेत्र वाली देखकर सूर्य ने कहा ।५। तू मुझे देखकर चंचल दृष्टि कर लेती है, इसलिए अब तू चंचल नदी रूपवाली कन्या को उत्पन्न करेगी ।६। मार्कण्डेयजी ने कहा—पति के द्वारा इस प्रकार शापित हुई संज्ञा के गर्भ से यम उत्पन्न हुआ और फिर यमुना नाम की विख्यात नदी भी उत्पन्न हुई ।७।

सापिसंज्ञारवेस्तेजः सेहेन्दुःखेनभाविनो ।
असहन्तीचसातेजश्चिन्तमायसवैतदा ।८
किंकरोमिक्वागच्छमिक्वगताऽयाश्चनिर्वृतिः ।
भवेन्ममकथभर्ताकोपमकँश्चनैष्यति ।६
इतिसंचिन्त्यबहुधाप्रजापतिसुतानदा ।
बहुमेनेंमहाभागःपितृसंश्रयमेवसा ।१०
ततःपितृगृहेगन्तुं कृतबुद्धिर्यशस्विनी ।
छायामयीमात्मतनुं निर्ममेदयितारवेः ।११
तांचोत्राचत्वयावेश्यन्त्रभानोयथामया ।
तथासम्यगत्येषुवर्तितव्यंयथारवौ ।१२
पृष्टायापिनवाच्यतेतद्भर्त्रागमनंमन ।
सैवास्मिनामसंज्ञेमिवाच्यमेतत्सवावचः ।१३

आकेशग्रहणाद्देविशापाच्चवचःतव ।
करिष्येकथयिष्यामिवृत्तंतुशापकर्षणात् ।१४

उस संज्ञा ने उतने समय तक अत्यंत कष्टपूर्वक सूर्य के तेज को सहन किया था परन्तु जब अधिक सहन न करके के कारण यह विचार करने लगी ।८। क्या करूँ ? किधर जाऊं ? किस प्रकार भयसे बचूँ ? किस उपाय से अपने पति को क्रोध से निवृत्त करूँ ? ।९। तब उस प्रजापति-सुत संज्ञा ने पितृ गृह के आश्रम में जाने का ही विचार किया ।१०। ऐसा निश्चय करके उसने अपनी छाया स्वरूप एक देह बनाकर ।११। उस छाया से कहा—जिस प्रकार मैं इस सूर्यदेव के गृह में निवास करती हूँ उसी भाव से वहाँ रहती हुई मेरे पुत्र और पति के प्रति मेरे ही समान आचरण करना ।१२। सूर्य पूछे तो भी मेरे चले जाने की वार्ता उन्हें मत बताना, मैं ही संज्ञा हूँ' उन्हें ऐसे ही समझाये रहना ।१३। छाया ने कहा—हे देवि ! जब तक वे मेरे केश नहीं पकडेंगे और शाप नहीं देंगे, तब तक मैं तुम्हारे वचनों के अनुसार कार्य करूँगी और केश पकड़ने या शाप देनेपर सब वृतांत बता दूँगी ।१४।

इत्युक्तासातदादेवीजगामभवनंपितुः ।
ददर्शतत्रत्वष्टारंतसाधूतकल्मषम् ।१५
बहुमानच्चतेनापिपूजिताविश्वकर्मणा ।
तस्थौपितूगेहैसातुकञ्चित्कालमनिन्दिता ।१६
ततस्तांप्राहचार्वंगीपितानातिचिरोषिताम् ।
स्तुत्वाचतनयांप्रेमबहुमानपुरःसरम् ।१७
त्वांतुमेपश्यतोवत्सेदिनानिसुबहून्यपि ।
मुहूर्त्ताद्धिसमानिस्युःकिन्तुधर्मोविलुप्यते ।१८
बान्धवेषुचिरंवासोनारीणांनयशस्करः ।
मनोरथोबान्धवानांनार्य्याभर्तृगृहेस्थितिः ।१९
सात्वंत्रैलोक्यनाथेनभर्त्रासूर्य्येणसंगता ।
पितृगेहेचिरंकालवस्तुनार्हसिपुत्रिके ।

सात्वंभर्तृगृहंगच्छतुष्टोहंपूजितासिमे।
पुनरागमनकार्यंदर्शनायचभेसम् ॥२१

यह सुनकर संज्ञा अपने पिता के घर चली गई और वहाँ उसने तप के द्वारा पाप रहित हुए विश्वकर्मा के दर्शन किये ।१५। विश्वकर्मा ने संज्ञा का स्वागत सत्कार किया और फिर आनंदयुक्त हुई संज्ञा ने कुछ काल अपने पिता के गृह में निवास किया ।१६। फिर कुछ कालोपरान्त उसके पिता ने अत्यंत मान के सहित उनसे कहा ।१७। हे वत्से ! तुमको देखते हुए समय व्यतीत होने पर भी वह मुझे आधे मुहूर्त के समान ही समय व्यतीत हुआ प्रतीत होता है, परंतु इससे धर्म का लोप होता है ।१८। स्त्रियों के लिए बाँधवों के साथ सदा निवास करना यश देने वाला कार्य नहीं है, उनका निवास तो पतिगृह में ही उचित है ।१९। तीनों लोकों के स्वामी सूर्य तुम्हारे पति हैं, तुम उनके साथ विवाह सूत्र में बँधी हो, तुम्हारा पितृगृह में रहना उचित नहीं हो सकता ।२०। इसलिए अब तुम अपने पति के घर चली जाओ, तुम्हारे आगमन से मैं संतुष्ट हुआ और तुम भी मेरे द्वारा संस्कारित हुई अब फिर देखने के लिए यहाँ आ जाना ।२१।

इत्युक्तासातदापित्रातथेत्युक्ताचमामुने।
सम्पूजयित्वापितरंजगामाथांत्तरान्कुरुन् ॥२२
सूर्यतापमनिच्छन्तीते सश्तस्यविभ्यती।
तपश्चचारत्रापिवडवारूपधारिणी ॥२३
संज्ञेयमितिमन्वानोगितायामहस्पतिः।
जनयामासतातनयौकन्यांचैकामनोरमाम् ॥२४
छायामंज्ञात्वपत्येषुयथास्वेष्यतिरात्तला।
ताथानसंज्ञःकन्यान्यांपुत्रोश्चान्ववर्त्तता ॥२५
लालनाद्युपभोगेषुविक्षेपमनुवासरम्।
मनुस्तात्क्षान्तावानस्यायमस्तास्यानचक्षमे ॥२६

ताडनायचवैकोपात्पापस्तेनसमुन्नतः ।
तास्याःपुनःक्षांतिमतानतुदेहेनिपापितः ॥२७
ततःशशापताकोपाच्चायासंज्ञायमद्विजः
किञ्चित्प्रस्फुरमाणौष्ठी विचलत्पाणिपल्लवा ॥२८
पितुःपत्नीममर्य्यादयन्मांतर्ज्जयसेपदा ।
भुवितास्मादयंपादस्तावाद्यैवपतिष्यति ॥३९

मार्कण्डेयजी ने कहा—अपने पिता विश्वकर्मा के ऐसा कहने पर संज्ञा उनकी आज्ञा मानकर उनका पूजन कर उत्तर कुरुक्षेत्र में गई ।२२। सूर्य के तेज से भयभीत संज्ञा सूर्य के तेज को न चाहने की इच्छा से वहाँ घोड़ी का रूप रखकर तप करने लगी ।२३। उधर सूर्य ने उन छाया को ही संज्ञा मानते हुए उसके गर्भ में दो पुत्र और एक पुत्री को जन्मा दिया ।२४। परंतु वह छाया जितनी ही प्रीतिवती अपनी संतान के प्रति थी, उतनी संज्ञा की संतान के प्रति स्नेहवती नहीं थी ।२५। वह लालन-पालन के समय संतानों में भेदभाव दिखाती थी, इसकेलिये मनु ने तो उससे कुछ नहीं कहा, परंतु यम ने उसे क्षमा नहीं किया ।२६। उंहोंने क्रोधवश प्रहार करने को अपना चरण उठाया, परंतु क्रोध को रोककर चरण प्रहार नहीं किया ।२७।परंतु उस छाया संज्ञा ने क्रोध के वशीभूत होकर होंठ कम्पित करते हुए हाथ उठाकर शाप दिया ।२८। मैं तेरे पिता की पत्नी हूँ फिर भी तू मेरी मर्यादा न रख कर चरण दिखाकर डराता है, इसलिये तेरा यह चरण तत्काल पृथिवी में गिर जाय ।२९।

इत्याकर्ण्ययमःशापंमात्रादत्तंभयातुरः ।
अभ्येत्यपितरं प्राहप्रणिपातापुरःसरम् ॥३०
तातैतन्महादश्चर्य्यंष्टमितिकेनचित् ।
मातावात्सल्यमुन्सृज्यशापपुत्रेप्रयच्छति ॥३१
यथामनुर्ममाचष्ट नेयंमातातथामम ।
विगुंणेष्वपिपुत्रेषुनमाताविगुणाभवेत् ॥३२

यमस्यैतद्वचाश्रुत्वासगवास्तिमिराषहः ।
छायासज्ञांसमाहूयषप्रच्छगतेतिसा ।३३
चाचाहतनयात्वष्टुरषपज्ञाविभावसो ।
पत्नीतवत्वयापत्यान्येतानिजनितानिमे ।३४
इत्थविवस्वतःसातुबहुशपृच्छतोयदा ।
नाचचक्षेततःक्रुद्धोभास्वास्वांस्तशिप्तुमुद्यतः ।३५

मार्कण्डेयजी ने कहा–माता द्वारा ऐसा शाप सुनकर भय सेआतुर यम ने अपने पिता सूर्य के पास जाकर उंहें प्रणाम किया और बोले ।३०। यम ने कहा–माता अपने ही पुत्र को शाप दे,यह अत्यंत विस्मय-जनक है, ऐसी बात तो कभी नहीं देखी गई ।२३। मनु ने मुझसे जैसा कहा था, वैसी यह माता नहीं है, पुत्र के असद्‌गुणी होने पर भी माता उसके अमङ्गल की बात नहीं कहती ।३१। मार्कण्डेयजी ने कहा–यमका वचन सुनकर भगवान सूर्य ने छाया को अपने पास आदर सहित बुलाकर पूछा—संज्ञा कहाँ गई ? ।३२। छाया ने कहा—हे भगवन् ! विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा मैं ही हूँ, मैं ही तुम्हारी भार्या हूँ मेरे ही गर्भ से इस संतान की उत्पत्ति हुई है ।३३। सूर्य के बारम्बार प्रश्न करने पर भी उसने वही उत्तर दिया तब सूर्य क्रोधित हो गये और शाप देने के लिये तत्पर हुए ।३४।

ततःसाकथयामासयथावृत्तं विवस्वतः ।
विदितार्थश्चभगवाजगामत्वष्टुरालयम् ।३६
ततःसम्पूजयामासतदात्रलोक्यपूजितम् ।
भास्वन्तवरयाभक्तयानिजगेहमुपागतम् ।३७
संज्ञार्षष्टस्तदातस्मैकथयामासविश्वखृत् ।
आगतेवेहमेश्मभवतःप्रेषितेतिवैः ।३८
दिवाकरःसमाधिस्थोवड़वारूपधारिणीम् ।
तपश्चरन्तीददृशे उत्तरेषुकुरुवथ ।३९
सौम्यमूर्तिःशुभाकारोममभर्तभिवेदिदि ।

अभिसन्धिश्चतसावुबुधेऽस्यादिवाकर: ।४०
शातनंतेचसोमेऽद्यक्रियतामितिभास्कर: ।
तांक्षाहृविश्वकर्माणंसंज्ञा:पितरं द्विज: ।४१
संवत्सरभ्रमेस्सत्रिश्वकर्मारवेस्तत: ।
तेतस:शातचक्रे स्तूयमानश्चदैवतौ ।४२

तब जो वृत्तान्त था वह सभी उसने सूर्य से कह दिया, जिसे जान कर वह विश्वकर्मा के घर पहुंचे ।३६। अपने घर पर आगत भगवान सूर्य का विश्वकर्मा ने अत्यन्त भक्तिपूर्वक पूजन किया ।३७। इसके पश्चात् जब सूर्य ने संज्ञा का वृत्तान्त पूछा तो उन्होंने बताया कि संज्ञा वहाँ आई थी और फिर मैंने उसे आपके ही यहाँ भेज दिया था ।३८। तब सूर्य ने ध्यान में अवस्थित होकर संज्ञा को घोड़ी का रूप धारण किए उत्तर कुरु वर्ष में तप करते हुए देखा ।३९। उन्होंने जान लिया कि उसके तप का उद्देश्य मेरी सुन्दर आकृति और सौम्य मूर्ति होने की कामना ही है ।४०। तब भगवान् सूर्य ने संज्ञा के पिता विश्वकर्मा से कहा कि मेरे तेज को क्षीण कर दीजिये ।४१। देवताओं के द्वारा प्रार्थना करने पर उन विश्वकर्मा ने सूर्य के तेज को क्षीण करदिया।४२

७०—सूर्य—स्तव एवं अश्विनी कुमारों की उत्पत्ति

ततस्तांतुष्टृ वुदवास्तथादेवर्षयोरविम् ।
वाग्भिरीडयमशेषस्यत्रैलोकयस्तमागता: ।१
नमस्तेऋक्स्वरूपायसामरूपायतेनम: ।
यज:स्वरूपरूपायसाम्नांमधामवनेमम: ।२
ज्ञानैकधामभूतायनिर्धततमसेनम् ।
शुद्धज्योति:स्वरूपायविशुद्धायामयात्मने ।३
(चक्रिणंशखिनेधाम्नेशांर्गिणेपिद्मनेनम:)
वरिष्ठायवरेण्यायपरस्मैपरमात्मने ।
नमाऽखिलजगद्व्यापिस्वरूपायात्ममूर्त्तये ।४

सर्वकारणभूतायनिष्ठायैज्ञानचेतसाम् ५
नमःसूर्यस्वरूपायप्रकाशात्मस्वरूपिणे ।
भास्करायनमस्तुभ्यतथादिनकृतेनमः ।६
शर्वरीहेतवेचैसंध्याज्योत्स्नाकृतेनमः ।
त्वंसववेतभगद्ञ्जदुत्भ्रमतात्वया ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—तब देवता और ऋषि वहाँ आकर त्रैलोक्य पूज्य भगवान् भास्कर की स्तुति करने लगे ।१। देवताओं ने कहा--हे देव ! आप ऋक् स्वरूप हैं, आपको नमस्क र है, आप साम स्वरूप को नमस्कार है, आप ही यजु स्वरूप एवं साम के द्यु तिमान हैं, आपको नमस्कार है, ।३।आप शंख, चक्र पद्म और शार्ङ्ग धारण करने वालेको नमस्कार आप वरिष्ठ, वरेण्य, पर परमात्मा, आत्मस्वरूप एवं जगद्-व्यापी स्वरूप को नमस्कार है ।४। आप ही ज्ञानत्तित वाले पुरुषों के लिये निष्ठा स्वरूप तथा सर्व भूतों का कारण स्वरूप है ५। आप ही सूर्य रूपी प्रकाश और आत्मरूपी भास्कर हैं, आपदिनकर कोनमस्कार है रात्रि के कारण संध्या एवं ज्योत्स्नाको प्रकट करने वाले आप भग-वान् के लिये नमस्कार है । आपके ही द्वारा यह विश्व जाग्रति और सुषुप्ति में पड़ता है ।७।

भ्रमत्याविद्वमखिलंब्रह्मांडसचराचरम् ।
त्वदंशुभिदंस्पृष्टंसर्वसंजायतेशुचिः ।८
क्रियतेत्वत्करैःस्पर्शाज्जलीनापवित्रता ।
होमदानादिकोधर्मोपकारायजायते ।९
तावद्यावन्नसंयोगिजगदेवत्वदंशुभिः ।
चस्तेसकलांह्येतायजुष्येतानिवान्यतः ।१०
सकलानिचसामानिनिपतन्तित्वदंगतः ।
क्षङ्मयस्त्वंजगन्नथत्वमेवयचयजुर्मयः ।११

यत: साममयश्चेवततोनाथत्रयीभय: ।
त्वमेवब्रह्माणोरूपंप्ररंचामरमेवच ।१२
मर्त्तामूर्तस्थासूक्ष्म:स्थूलरूपस्तास्थित: ।
निमेषकाष्ठादिमयकालरूप:क्षयात्मक: ।
प्रसीदस्वेच्छयारूपंस्वतेज शम कुरु ।१३
इदंस्तोत्रपरम्यत्रं श्रद्धयानरै: ।
शिष्योभत्वासमाधिस्थोदत्वादेयंगुरोरपि: ।१४

आपके द्वारा ही यह सचराचर ब्रह्माण्ड गति करता है और सभी स्पर्शनीय द्रव्य आपकी रश्मियों का स्पर्श प्राप्त करके ही पवित्र होतेहैं ।८। आपकी रश्मियों से ही जलादि पवित्र होते हैं तथा जब तक उपकारार्थ होम, दान आदि कर्म नहीं होते ।९। जव तक यह विश्वआपकी रश्मियों के संयोग को प्राप्त नहीं होता आपके अङ्ग से अद्भुत्रश्मियाँ ऋक्, यजु और साममय ही हैं, इसलिए आपही ऋक्मय; यजुर्मय।१०। ११। और साममय है, आप ही त्रयीमत स्वरूप, तथा प्रधान और अप्रधान भी हो ।१२। आप मूर्तिधारी हो तथा आप ही आकृतिहीन हो, आप प्रसन्न हो और स्वेच्छापूर्वक ही रूप और तेज को क्षीण करें ।१३। इस सुरम्य स्तोत्र को श्रद्धापूर्वक सुनें और गुरु अपने शिष्य को समाधि में स्थित होकर प्रदान करें ।१४।

एवंसंस्तूयमानस्तुदेवैर्देवर्षिभिस्तथा ।
मुमोचस्वन्तदातेजस्तेजरांराशिरव्यय: ।१५
यत्तस्त ऋङ्मयंतेजाभावितातेनमेदिनी ।
यजुर्मयेयान नापिद्दिवस्र्गा:साममयंरवे: ।१६
शातिवास्तेजसोभागयेत्वष्ट्रादशपचच ।
त्वष्ट्रे वतेनपर्वस्यकृथल महात्मना ।१७
चक्रं विष्णोवसूनांचशंकवोथसुदारुणा: ।
पावकस्यतथाशक्ति:शिवकाधनदस्यच ।१८

अन्येषामसुरारीणामस्त्राण्युग्राणयानिवै ।
क्षक्षविद्याधराणाञ्चतानिक्रविश्वकृत ।१६
ततश्चपोडसंभागंविभतिभगान्भिुः ।
तत्तेजःपंचदशधापातितंविश्वकर्मणा ।२०
ततोऽश्वरूपधृग्भानुरत्तारानगगमत्कुरुन् ।
तदृशेत्रसंज्ञांचवडवारूपधारिणीम् ।२१

मार्कण्डेयजी ने कहा—देवताओं और ऋषियों द्वारा इस प्रकार स्तुत होकर तेजोराशि भगवान् सूर्य ने अपने तेज को क्षीण किया ।१५। उनके ऋक् मय तेजसे पृथिवी हुई, यजुर्मय तेज से आकाश और साम-मय तेज से स्वर्ग हुआ ।१६। त्वष्टा ने सूर्य तेज के जिस पंचदश भाग को निकाला था, उसी भाग से शिवजी का शूल ।१७। विष्णु का चक्र तथा वसुगण शंकर और अग्नि की दारुण शक्ति का निर्माण किया तथा उसी से कुबेर की पालकी ।१८। तथा अन्याय देवता, यक्ष, विद्याधर आदि के जो तीक्ष्ण अस्त्र हैं वह सब बनाये ।१९। फिर भगवान् सूर्य ने अपने तेज को षोडशांश मात्र धारण किया, उसे भी विश्वकर्मा ने पन्द्रहबार छीला ।२०। तदनन्तर सूर्य ने अश्व का रूप धारण किया और उत्तर कुरुवर्ष पहुंचकर अश्व रूप में अवस्थित संज्ञा को देखा।२१

साच्चदृष्ट्वातमायान्तं परपुंशोयिशङ्कया ।
जगामसंमुखंतस्यापृष्ठरक्षणतत्परा ।२२
ततश्चनासिकायोगगं तयोस्तत्रसमेतयो ।
नासत्यस्रोतनयावस्वीवस्त्रविनिर्गतो ।२३
रेतसोऽन्तेवन्तःगीखोर्म्मीतनुध्रक ।
अश्वारूढ़ससुद्भूतोवाणतूणसमन्विता ।२४
ततःस्यरुपमतुचर्शयातःसभानुतान् ।
तस्यैषाचममालोक्यस्वरुपमुदमादरे ।२५
स्वरूपधारिणीचेमामानिजाश्रमम् ।
संज्ञांभार्याप्रीतिमतीभास्करोवारितस्करः ।२६

ततःपूर्वंसुतीयोऽस्याःसोऽभूद्वैवस्वतोमनुः ।
द्वितीयश्चयमःशापाद्धर्मदृष्टिरभूत्सुतः ।।२७
कर्मयोमांसमादायपादतोऽस्यमहीतले ।
पतिष्यन्तीतिशापांततस्यचक्रेपितास्वयम् ।२८
धर्मदृष्टिर्यतश्चासौसमोमित्रेतथाऽहिते ।
ततोनियोगंयाम्मेचकारतिमिरपहा ।२९

उन्हें आता देखकर पर-पुरुष की आशङ्का से संज्ञा अपनी पीठ की रक्षा करती हुई उनके सामने पहुंची ।२२। फिर उन दोनों की नासिका मिलने का कारण अश्वी के मुख से नासत्य और दस्र नामक दो पुत्र तत्काल बाहर निकले ।२३। तथा वीर्य के शेष भाग से ढाल, कवच खङ्ग, बाण, तूर्णधारी अश्वारूढ़ एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम रेवत हुआ ।२४। फिर सूर्य ने उस घोड़ी को अपना अतुलित स्वरूप दिखाया, उस स्वरूप को देखकर बड़वा रूपी संज्ञा ने प्रसन्न होकर अपना यथार्थ रूप धारण कर लिया ।२५। तब जल का शोषण करने वाले भगवान सूर्य उस संज्ञा नाम की अपनी पत्नी को घर ले गये ।२६ इसी का ज्येष्ठ पुत्र वैवस्वत मनु हुआ और दूसरा पुत्र यमपाशकेकारण धर्मदृष्टि हुआ ।२७। उनको दिए गए शाप का निवारण उनके पिता सूर्य ने स्वयं कर दिया ।२८। तथा धर्मदृष्टि की शत्रु मित्र में समदृष्टि देखकर सूर्य ने उनको यमत्व के कार्य में नियुक्त किया ।२९।

यमुनाचनदीजज्ञेकलिन्दान्तरवाहिनी ।
अश्विनोदेवभिषजोकृतौपित्रामहात्मना ।३०
गुह्यकाधिपतित्वेचरेवन्तोऽपिनियोजितः ।
छायासज्ञासुतानांचनियोगःश्रूयतामम ।३१
पूर्वजस्यमनोस्तुल्यश्छायासंज्ञासुतोऽग्रजः ।
ततःसावर्णिकीज्ञामबातपतनयोरवेः ।३२
भविष्यात्मनुःसोपिबलिरिन्द्रोयदातदा ।
शनैश्चरोग्रहाणाचमध्येपित्रानियोजितः ।३३

तयोस्तृतींयाकन्यापुतपतीनामसाकुरम्।
नृपात्सवरणात्तुत्रंमबापमनुजेश्वरम् ।३५
तस्यवैवस्वतस्याहसमनौःसप्तमसन्वन्तर ।
कथया निसुतान्भूपानषोन्देबन्सुराधिपम् ।३६

उनकी कन्या यमुना नदी रूप से कलिन्द देश के मध्य में वहने लगी और घोड़ी के दोनों पुत्र (अश्विनीकुमार) पिना के द्वारा स्वर्ग के वैद्य नियुक्त किये ।३०। तथा रेवत गुह्य काधिपति हुए, अब छाया के गर्भ से उत्पन्न हुए ज्येष्ठ पुत्र का नाम सावर्णिक हुआ ।३२। जब बलि इन्द्र हो जायेंगे तब यह मनु होंगे तथा पिता के द्वारा शनैश्चर को ग्रह में अवस्थित किया । सबसे छोटी कन्या का नाम तपसी हुआ, उसे संवरण नामक नरेश से एक पुत्र की प्राप्ति हुई ।३४। अब उन सप्तम मनु वैवस्वत के मन्वन्तर में जो सब ऋषि; देवता, इन्द्र और उनके जो पुत्र राजा हुए उनके विषय में वर्णन करता हूँ ।३५।

७१-वैवस्वत मन्वन्तर कथन

आपित्यात्र वोरुद्राःसाध्या विश्वेमरुद्गणा ।
भृगवोअंगिरसश्चाष्टौयत्रदेवगणाःस्मृताः १
आदित्यावसोरुद्राविद्राविज्ञेयाः कश्यपात्मजाः ।
साज्यासश्चवसनोविश्वेधर्मपुत्र गणास्त्रयः ।२
भगीस्तुभृगवोदेवापुत्रह्यगिरसःसुताः ।
अपसर्गश्चमारीचोविज्ञेयःसम्प्रताधिपः ।३
उर्ज्जस्वीनाभ्रवेद्रोमहात्मायज्ञभाचमुक् ।
अतीतानातायैचवर्तन्तेसाम्प्रतंचते ।४
सर्वतेत्रिदशेन्द्रास्तुज्ञे-ास्तुल्यलक्षणाः
सहस्राक्षःक्रलिशियनः सर्वएवपुरन्दराः ।५
मघवन्ताबृषाःसर्वेशृंगिणीगजगःमिनः ।

तेशतक्रतवःवुभूतभितेजसः ।६
धर्मांद्यैःकारणशुद्धैराधिपत्यगुणान्विताः ।
भुतभव्यभवन्नाःशृणचैतत्त्रयद्विजः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—उस मन्वन्तर में आदित्य वसु, रुद्र, साध्य, विश्व, मरुद्गण, भृगु और अङ्गिरा वह आठ देवता हैं ।१। उनमें आदित्य वसु और रुद्र कश्यपजी से उत्पन्न हुए हैं तथा साध्य वसु और विश्वदेवा धर्म की संतान हैं ।२। भृगुगण भृगु के पुत्र तथा अंगिरागण अंगिरा के पुत्र हैं, इस सर्ग को मारीच सर्ग कहा गया है ।३। उस मन्वतंर में महात्मा ऊर्जस्वी यज्ञ भाग को भोगने वाले इन्द्र हुए हैं। पहिले जो इन्द्र हुए अब जो इन्द्र हैं या जो भविष्य में इंद्र होंगे ।४। सब देवेन्द्र कह कर ही प्रसिद्ध हैं, सभी सहस्राक्ष वज्रधर और पुरंदर हैं ।५। सभी मघवा, वृश; शृंगधारी और गज पर गमन करने वाले हैं, सभी सौ यज्ञ करने वाले, भूतों को जीतने वाले तथा तेजमय हैं ।६। वह सब इंद्र पवित्र धर्मादि के कारण, आधिपत्य गुण वाले और भूत भविष्यत, वर्तमान के अधीश्वर हैं अब तीनों लोक का विभाग श्रवण करो ।७।

भूर्लोकोऽयंस्मृताभूमिरन्तारिन्तारिक्षदिविस्मृतम् ।
दिव्याख्यश्चतथास्वर्गस्त्रैलोक्यमितिगद्यते ।८
अत्रिश्चेववसिष्टश्चकश्यपश्चतहानृषिः ।
गोतमश्चभरद्वाजोविश्वामित्रोऽकौशिकः ।९
तथैवपुत्रोभगवानृचीकस्यमहात्मनः ।
जमादग्निस्तुसप्तेमुनतोऽत्रतथान्तरे ।१०
इक्ष्वाकुनाभागश्चैवधृष्टःशर्यातिरेवच ।
नरिष्यन्तश्चविख्यातोनाभागोदिष्टएवच ।११
कलश्चपुषध्रश्चवसुमाल्लोकविस्रुतः ।
मनोर्वैवस्वतस्यतेनवयत्राःप्रकीर्तिता ।१२
वैंपस्वतमिदं ब्रह्मन्कथितंतेमयान्तरम् ।

अस्मिञ्छ्रुतेनरःसद्यःपठितेचैवसत्तम् ।
मुच्यतेपातकैःसर्वैं पुण्यचमहदश्नुतेः ।.१३

इस पृथिवी का भूलोक, अंतरिक्ष को दिव और स्वर्ग को दिव्य कहते हैं, यदि त्रैलोक्य कहे जाते हैं ।८। अत्रि, वसिष्ठ, कश्यप, गौतम भरद्वाज विश्वामित्र ।६। और भगवान ऋची के पुत्र जमदग्नि वह इस मन्वतंर में सप्तर्षि हैं ।१०। इक्ष्वाकु, नाभाग, धृष्ट शर्याति नारष्यंत, नाभाग दिष्ट ।११। करुष और पृषघ्र यह नो उन वैवस्वत मनु केप्रसिद्ध पुत्र हुए ।१२। हे विप्रे ! वैवस्वत मन्वंतर का वर्णन तुम्हारे प्रति किया गया, इसके सुनने और पाठ करने से ही शीघ्र सब पापों से मुक्त होकर पुण्य फल को प्राप्त होते हैं ।१३।

७२-सार्वणिक मन्वन्तर

स्वालम्भुवाद्यःकथिताः सप्तै तेमनवोत्तम् ।
तदन्तरेषुवेदेवाराजानोमुनयस्तथा ।१
अस्मिन्कल्पेसप्तयेऽन्येभविष्यन्तिमहामुनि ।
मनवस्तान्समाचक्ष्वतादेवायश्च ।२
कथिस्तवसावर्थिश्छाप्रासज्ञासुतश्च. ।
पूर्वजस्धमनोस्तुल्यं समनभवताष्टमः ।३
रामोध्यासोगालवश्चदीप्तिमान्कृपएवच ।
ऋट यश्रृंगस्तथाद्रोणस्त्रसप्तर्षयोऽभवन् ।४
सुतापास्चामिताभाश्चमुख्यायाश्वंवत्रिधासुनाः ।
विषकःक्वथिताश्चैषात्रयाणात्रिगुणोगणः ।५
तपस्तपश्चशक्रश्चैषात्रयाणात्रिगुणोगणः ।
प्रभोसोदयितोधर्मस्तेजोरश्मिश्चक्रवतुः ।६
इत्यादिकस्तुसपादेवानांविंशकोगणः ।
प्रभुर्विविभासद्यस्तथान्योविंशकोगणः ।७

क्रौष्टिकि बोले—अपने स्वायम्भुवादि सात मनु उनके मन्वतंर

देवता, ऋषि और राजाओं का वर्णन मेरे प्रति किया ।१। अब इस कल्प में जो सात मनु होंगे उनका और उस समय में होने वाले देवादि का वर्णन मेरे प्रति कीजिए ।२। मार्कण्डेयजी ने कहा—संज्ञा की छाया के गर्भ से उत्पन्न जिन ज्येष्ठ पुत्र सावर्णि के विषय में तुम से कहा गया वह सावर्णि आठवें मनु होंगे । इस मन्वतंर में राम, व्यास गालव दीप्तिमान; कृप, ऋष्य, शृङ्ग और द्रौणि यह सात सप्तर्षि होंगे ।४। सुतपा, अभिताभ और मुख्य यह तीन गण और प्रत्येक गण में बीस देवता हैं इस प्रकार यह साठ हैं ।५। उनमें तपस्तप, शक्र' द्युति ज्योति; प्रभाकर, प्रभास, दयति, धर्म तेज, रश्मि और वक्रतु ।६। आदि सभी देवता उन बीस गणों के अन्तर्गत हैं, प्रभु और विभासादि देवता अभिताभ देवताओं के बीस गण हैं ।७।

सुराणाममितानांतुतृतीयमपिमेशृणु ।
दमोदान्नलृते:सोसौविन्ताद्याश्चैचविंशति: ।८
मुख्यह्यतेससाख्यातादेवामन्वन्तराधिपः ।
मासीचस्यैवतेपुत्र काश्सपस्यप्रजापते: ।९
भविष्याश्चभविष्यन्तिसाव्रर्णस्तांन्तरेतनो: ।
तेषमिन्द्रोभविष्यस्तुबलिर्वेरोचनिमुने ।१०
प्रावालआस्तेतोऽद्यापिदैत्य:समयबन्धन: ।
विराजाश्चार्ववीराश्चनिर्मोह:सत्यवाक्कृतिः ।
बिष्णुवाद्याश्चैयतनयाः सावर्णस्यमनोनृपाः ।११

अब तृतीया गण का विशक कहता हूँ—दम, दाम्र, ऋतु, सोम और वित आदि देवता गण मुख्य नाम के तृतोया बिशक के अन्तर्गत हैं ।८। यह सभी मन्वन्तराधिपति और सभी मारीच पुत्र प्रजापति कश्यपजी के ही पुत्र हैं ।९। सावर्णि मन्वन्तर में यह देवता और बिरोचन-पुत्र बलि इन्द्र होंगे ।१०। जो दैत्यराज प्रतिभा पाश में बँधे होने से अब भी पाताल में रहते हैं वह विरता, अर्ववीर, निर्मोम, सत्यवाक, कृति, बिष्णु नामक यह सावर्णि पुत्र उस काल में राजा होंगे ।११।

७३-देवी माहात्म्य मधु कैटभ वध

सावर्णि:सूर्यतनयोयोमनुकथ्यतेष्टमः।
निशामयतदुत्पत्तिबिस्तरश्द्गदतोमम ।१
महामयनुभावेनयथामन्वन्तराधिपः।
सवभूवमहाभानःसावर्णिस्तनयोरवेः ।२
स्वारोचिषेतरेपूर्वंचत्रबंशसमुद्भवः।
सुरथोनामराजाभूत्समस्तेक्षितिमण्डले ।३
तस्यापालवतःसम्यक्प्रजापुत्रानिवौरसान्।
बभूबःशत्रवोभूपाःविध्वसिनस्तदा ।४
तस्यतैरभवद्यु द्धमति प्रबलदंडनिः।
न्यूनैरपिस्तैर्यु द्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ५
तमःस्वपुरमायातोनिजदेपाधिपोभवत्।
आक्रांत स महाभागस्तैस्तदाप्रवलारिभिः ६
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैदुर्बलस्यदुरात्मभिः।
कोशांवलंचापहृतं तत्रापिस्वपुरैततः ७

मार्कण्डेयजी बोले—जिस सूर्य पुत्र सार्वाण को, आठवां मनु कहा गया है; उसका विस्तार पूर्वक जन्म कहता हूं, श्रवण करो ।१। जिस प्रकार वह महामाया भगवती की कृपा से सभी ऐश्वर्यों से सम्पन्नहोकर मन्वन्तराधिपति हुआ, उसे सुनो ।२। स्वारोचिष मुनि के राज्याधिकार से पूर्व चैत्रवंशोत्पन्न सुरथ नामक समस्त पृथिवी का राजा हुआ ।३। जब वह सुरथ अपनी प्रजा का पालन पुत्रवत् करने लगा, उसी अवसर पर लोका विध्वंस नामक राजा उससे शत्रुता करने लगे ।४। औरप्रबल दण्ड देने में समर्थ राजा सुरथ के साथ उनका युद्ध हुआ, यद्यपि शत्रु अल्प थे, फिर भी उन्होंने सुरथ को परास्त कर दिया ।५। तब अपने प्रबल शत्रुओं के वशीभूत हुआ राजा सुरथ अपने नगर में आकर राज्य करने लगा ।६। उस नगर में भी प्रबल और दुष्ट अमात्यों ने उस राजा का कोषागार तथा सेना नष्ट कर डाली ।७।

ततोमृगयाव्यजेमह्रुतस्वाम्यःसभूपतिः ।
एकाकोहयमारुह्यजगामगह्ननंवनम् ।८
सतत्राश्रममद्राक्षीद्द्विजवयःसुमेधसः ।
प्रशांतश्वापदाकीर्णंमुनिशिष्योपंशोभितम् ।९
तस्थौकच्चित्सकालंचमुनिनातेनसत्कृतः ।
इतश्चेतश्चवितरंस्तस्मिन्मुनिवराश्रम ।१०
सोचिंतयत्तदातत्रममत्वाकृष्टमानसः ।
मत्पूर्वं पालितं पूर्वंमयाहीनपुरं ह्तिम् ।
मदभृत्यैस्त्तै धर्मतापाल्यतेनवा ।११
नजातेप्रसाधनोमेशरोहस्तोसदामदः ।
ममवैसिवशंयातकान्भोगानुपालस्यते ।१२
येममानगतानित्यंप्रसादधनभोजनैः ।
अनुवृत्तिध्रवतेद्यवंन्त्यहीभृतम् ।१३
असम्यग्व्यशोलैस्तैःकुर्वदभिःसततव्ययम ।
सचितमोतिःखेनक्षयक्कोशोगमिष्यति ४

इस प्रकार राज्य के छिन जाने पर सुरथ राजा अश्वारूढ़ होकर मृगा के मिस से एकाकी ही निर्जन वन में चले गये ।८। वहाँ उन्होंने परसिहा से निवृत्त हुए पशुओं से परिपूर्ण एक आश्रम को देखा जो कि मेधा नामक महर्षि का था, वह अपने शिष्यों के सहित वहाँ निवास करते थे ।९। उन महर्षि ने राजा का अत्यन्त सत्कार किया और तब वह राजा कुछ काल तक महर्षि के आश्रम में ठहर कर इधर-उधर विचरण करते रहे ।१०। फिर उनका मन ममता-पूर्वक चितनकरनेलगा कि मेरे पूर्व पुरुषों द्वारा पालित राज्य अब मुझसे विहीन हो गया है, मेरे दुराचारी भृत्य उसका धर्म पूर्वक पालन करते होंगे या नहीं ? ।११ सदा मद में रहने वाला वह मेरा प्रधान हाथी अब शत्रुओं के वशीभूत होकर, कैसे रहा होगा । १२ । जो नित्य-प्रति प्रसाद

धन, भोजनादि देने के कारण मेरे अनुगामी रहते थे, अब यह अवश्य ही अन्य राजाओं की सेवा में लगे होंगे ।१३। तथा अन्यान्य प्रकार से धन व्यय करते हुए भी अत्यन्त कष्ट पूर्वक संचित कोष उन सेवकों के द्वारा नष्ट कर दिया जायगा ।१४।

एतच्चान्यच्चसततचिंतयामासापार्थिवः ।
तत्रिप्राश्रमाभ्याशेवैश्यमेकददशसः ।१५
सपुष्टस्तेन ऽस्त्वभोहेतुश्चागमनेत्रकः ।
सशोकइवकस्तात्वदुर्मनाइवलक्ष्यसे ।१६
इत्याकर्ण्यवचस्तस्तस्यभूपते प्रणयोदितम् ।
प्रत्युवाचसतंवैश्यःप्रश्रयावनवोनृपम् ।१७
समाधिर्नामवैश्योसमुत्पन्नोधनिनांकुले ।
पुत्रदारैर्निरस्तश्चधनलोभादसाधुभिः ।१८
विहीनः स्वजनैर्दारैपुत्ररायमेधनम् ।
वनमभ्यागयोदुःखीनिरस्तश्चान्तवधुभिः ।१९
सोहनवेद्मिपुत्राणाकुशलाकुशलात्मिकाम् ।
प्रवृत्तिस्वजनानांचदाराणांचात्रसंस्थितः ।२०
किंतुतेषांगुक्षेममकिनुसांम्प्रतम् ।
कथंतेकिनुमद्वृत्तादुर्वत्ताःकिंनुमेसुनाः ।२१

राजा सुरथ इस प्रकार की अनेक चिन्तायें करने लगे, तभी उन्होंने आश्रम के समीप एक वैश्य को देखा ।१५। तो उन्होंने उससे पूछा कि तुम कौन हो ? ।१६। राजा ने ऐसे विनम्र वचन सुनकर वैश्य ने भी उन्हें अत्यन्त नम्रता पूर्वक उत्तर दिया ।१७। वैश्य ने कहा—मैं धनिक कुल में उत्पन्न हुआ समाधि नामक एक वैश्य हूं, धन के लालच मेंमेरी स्त्री और पुत्रों ने ।१८। मेरा सम्पूर्ण धन छीनकर मुझे घर से बाहर कर दिया है और इस अवस्था में मुझे मेरे बान्धवों और मित्रों ने भी त्याग दिया है, इसलिये दुःखित हृदय मैं इस वन में आया हूं ।१९।तथा इस वन में आकर मैं अपने स्त्री पुत्रादि के कुशल या अमङ्गल की बात

से अनभिज्ञ हूं।२०। घर में कुशल है या नहीं, तथा उन पुत्रादि का आचरण सुधरा है अथवा नहीं।२१।

यैर्निरस्तोभवाल्लुब्धैःपुत्रदारादिभिर्धनैः ।
तेषुकिंभवतःस्नेहमनुबध्नातिमानपम् ।२२
एवमेतद्यथाप्राहभवानस्मद्गतंवचः ।
किंकरोमिनबध्नातिममनिष्ठुरतांमनः ।२३
यैःसंत्यज्यपितृस्नेहंधनलुब्धैर्निराकृतः ।
पतिस्वजनहार्दंचवहार्दितेष्वेवनेमनः ।२४
किमेतन्नाभिजानामिजानन्नापिमहामते ।
यत्प्रेमप्रवणचित्तं विगुणेष्वपिबंधषु ।२५
तेषांकृतेमेनिःश्वासोदौर्मनस्यचजायते ।
करोमिकियन्नमस्तेष्वप्रीतिषनिष्ठरम् ।२६
ततस्तौसहितौविप्रतंमुनिसमुपस्थितौ ।
समाधिर्नामवैश्योसौसचपार्थिवसत्तमः ।२७
कृत्वातुतौयथान्यायययथार्हं तेनसंविदद् ।
उपविष्टौकथाःकाश्चिक्रतुर्वैश्यपार्थिवौथिवो ।२८

राजा बोले—जिन धन के लालची स्त्री पुत्रादि ने तुम्हें घर से निकाल बाहर किया, उनके प्रति भी तुम्हारा चित्त स्नेहवान् क्यों है? ।२२। वैश्य बोला—आपका कथन यथार्थ है, परन्तु मैं क्या करूं, मेरा मन किसी प्रकार भी उतना कठोर नहीं हो पा रहा है ।२३। जिन पुत्रों ने पितृ-स्नेह को त्यागकर, जिन पत्नियों ने पति के प्रेमको छोड़करऔर जिन बन्धुओं ने बांधवत्व का परित्याग कर धन के लालच में मुझे घर से बाहर कर दिया उन्हीं दुष्ट स्त्री, पुत्र और बन्धुओं में मेरा मनफँसा हुआहै, हे महामते ! उनमें मेरा चित्त इतना आकर्षित क्यों है, यह मेरी समझ में नहीं आता ।२४-२५। उन्हीं के प्रति खिन्न हुआ मेरा चित्त दीर्घ निःश्वास छोड़ता हुआ मेरा प्रीतिमान् है और कठोरता को प्राप्त नहीं हो पाता ।२६। मार्कण्डेय जी ने कहा—हे मुनिवर ! इसके

पश्चात् राजा सुरथ और वैश्य दोनों ही मिलकर महर्षि मेधा के पास पहुंचे ।२७। और दोनों ने मुनि का यथोचित सम्मान किया ।१२८।

भगवस्त्वामहंप्रष्टु मिच्छाम्येकवमस्वतत् ।
दु:खयायन्मेमनस स्वचित्तयत्ततांविना ।२९
ममत्वंगतराज्यस्यराज्यांगेष्वखिलेष्वपि ।
जानतोपियथाज्ञस्यकिमेतन्मुनिसत्तम ।३०
अयंचनिकृत:पुत्रै दारैर्भृत्यस्तथोज्झित:
स्वजनेनचसंत्यक्तस्तेषुहद्दीतथाप्यति ।३१
एवमेषतथाहंचद्वावप्यत्यंतदु:खितौ ।
दृष्टदोषेषिविये ममत्वाकृष्टमानसौ ३२
तकिमेन्महाभागयन्मोहाज्ञानिनोरपि: ।
ममास्यचभवत्येषाविवेकांधस्यमूढता ।३३
ज्ञानामस्तिसभस्तस्जतोर्विषयगोचरे ।
विषयाश्चमहाभायगयांतिचैत्रपृथक्पथक् ।३४
दिवांधा:प्रणिन:केचिद्रावधास्तथापरे ।
केचिद्दवातथारात्रोप्राणनस्तुल्यंदृष्टय: ।३५

राजा बोले—हे भगवन् ! जिस विषय को न समझाने के कारण मेरा मन दु:खित है, उस विषय को आपसे पूछना चाहता हूं, उसे मुझे समझाने की कृपा करें ।२९। हे प्रभो ! यद्यपि यह भ्रम है, फिर भी राज्यादि के प्रति मेरी इतनी ममता है, ऐसा क्यों है ? ।३०। इस वैश्य को भी इसके पुत्र, भृत्य बांधवादि ने अपमानित करके त्याग दिया है, फिर भी यह उन्हीं के प्रति अनुराग युक्त है ।३१। इस प्रकार मैं और यह वैश्य दोनों ही इस दिखाई पड़ते हुए दूषित विषय मेंममतावान् होकर अत्यन्त दु:खित हो रहे हैं ।३२। हम ज्ञानी होकर भी विवेकांध के समान विमूढ़ हो रहे हैं ऐसा क्यों है ? ।३३। ऋषि ने कहा—सभी जीवों को विषय के दिखाई पड़ने पर ज्ञान है, परन्तु विषयों के प्रति पृथक्-पृथक् ज्ञान की प्राप्ति होती है ।३४। देखो कोई जीव दिन

में नहीं देख सकता कोई रात्रि में नहीं देख पाता और किसी को दिन और रात्रि में समान रूप से दिखाई देता है ।३५।

ज्ञानिनौमनुणाःसत्यंकिंनुतेनहिकेवलम् ।
यताहिज्ञानिःसर्वेपशुपक्षिमृगादयः ।३६
अनन्तमनुष्याणान्तेषामृगपक्षिणाम् ।
मनुष्यणांचयत्तेषांतुल्यमन्यत्तथोभयोः ।३७
ज्ञानेपिसतिपश्यैतान्तंगाञ्छावचचषु ।
कणमोक्षादृतान्मोहात्पीडयमानानांनपिक्षुधा ।३८
मानुषामनुजव्याघ्रसाभिाषाःसुतान्प्रति ।
लोभात्प्रत्युपकारायनन्वेमन्किनपपश्यसि ।३९
तथापिमतावर्त्तेमोहगर्त्तेनिपातित ।
महामायाप्रभावेणसंसारस्थितिकारिणा ।४०
तन्नात्रविस्मयःकार्योयोगनिद्राजगत्पतेः ।
महामायाहेश्चषातयासमोह्यजगत् ।४१
ज्ञानिनामपिचेतांसिदेवीभगवतीहिसा ।
वलादाकृष्यमोमायमहामायाप्रयच्छति ।४२

आप जिस प्रकार की ज्ञानवार्ता करते हैं,ऐसा ज्ञान मनुष्यों को है, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु केवल मनुष्य ही ऐसे ज्ञान के अधिकारी नहींहैं पशु पक्षी तथा मृगादि को भी ऐसा ज्ञान प्राप्त है ।३६। दिखाई पड़ने वाले विषय का ज्ञान पशु, पक्षी और मनुष्यों का समान ही है, उसमें कुछ भेद नहीं है ।३७। परन्तु ऐसा ज्ञान होने पर भी पारस्परिक विषय में कितनी विभिन्नता है । देखो यह पक्षी स्वयं क्षुधातुर होकर भी अपने बालकों की चोंच में मोह के वशीभूत होकर ही धान्यादि को डालते हैं ।३८। और मनुष्य भी अपनी संतान के प्रति प्रीतिमान् होकर उनका भरण-पोषण करते हैं, परन्तु मनुष्य का यह कार्य प्रत्युपकार के लोभसे ही है ।३९। इस प्रकार आशा से रहित होकर भी जीव महामाया के प्रभाव से मोह रूप गर्त में पतित होते हैं ।४०। इस विषय में विस्मय की

कोई बात नहीं है, जगदीश्वर श्री विष्णु की योग निद्रा स्वरूपिणी महामाया ही इस विश्व को विमोहित करती है ।४१। वही ज्ञानियों के चित्त का आकर्षण करके मोह में गिराती है ।४२।

तयाविसृज्वतेविश्व जगदेतच्चराचरम् ।
सैषाप्रसन्नाघरदानृणांभवतिमुक्तये ।४३
सविद्यापरमामुक्तेर्हेतुभूतासनातनीं ।
संसारबधहेतुश्चसैवसर्वेश्वरी ।४४
भगवन्काहिसादेवीमहामायेतियाभवान् ।
ब्रवीतिकथमुत्पन्नाकर्मचास्याश्चकिंद्विज ।४५
यत्प्रभावाचसादेवीयत वरूपायदुद्भवा ।
तत्सर्वंश्रोतुमिच्छामि त्वत्तोब्रह्मविदांबर ।४६
नित्येवसाजगन्मूर्त्तिस्तयासर्वमिदंततम् ।
तथापितस्समुत्पत्तिर्बहुधाश्रूयतांमम ।४७
देवनां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवतिसायदा ।
उत्पन्नेतितदालोकेसानित्योप्यभिधीयते त ।४८

देवी ने इस विश्व को उत्पन्न किया है और वही जब प्रसन्न होती है तब मनुष्यों को मोक्षदायक वर देती है ।४३। मोक्ष की सर्वोत्तम हेतु स्वरूपा, ब्रह्मज्ञान स्वरूपा विद्या एवं संसार-बन्धन की कारण रूपा वही है, वही ईश्वर की भी अधीश्वरी है ।४४। राजा ने कहा—हे भगवन् ! जिसे आपने महामाया बताया है, वह कौन है । उनकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई और उनके कर्म किस प्रकार के हैं ?, ।४५। उसका स्वभाव और स्वरूप कैसा है ? हे ब्रह्मविद श्रेष्ठ ! यह सब मैं आपसे सुनना चाहता हु ।४६। ऋषि ने कहा—वह जगन्मूर्ति नित्य है तथा सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हैं फिर भी उनके अनेक प्रकार से उत्पन्न होने का वृतान्त तुमसे कहता हूँ, श्रवण करो ।४७। जब देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये उनका आविर्भाव होता है, तब नित्य होती हुई भी लोक में उत्पन्न हुई कहलाती है ।४८।

योगनिद्रांयदाविष्णुर्जगत्येकार्णवकृते ।
आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पांतते भगवान्प्रभुः ।४९
तदाद्वावसुरौघोरौविख्यातौमधुकैटभौ ।
विष्णुकर्णमलोद्भू तौहंतु ब्रह्माणमुद्यतौ ।५०
सनाभिकमलेविष्णोःस्थितोब्रह्माप्रजापतिः ।
दृष्ट्वातावसुरौचोग्रौप्रसुप्तंचजनार्दनम् ।५१
तुष्टावयोग नितांतामेकाग्रत्दृयस्थित ।
प्रबोधनार्थायहरेर्हरिनेत्रकृतालयाम् ।५२
विश्वेश्वरीजगद्धात्रीस्थितिसंहारकारिणीम् ।
स्तौमिनिद्रांभगवतीविष्णोरतुलतेजसः ।५३
त्वस्वाहात्वंस्वधात्वंहिवषट्कारःस्वरात्मिका ।
सुधात्वमक्षरेनित्येत्रिधामात्रात्मिकास्थिता ।५४
अर्धमात्रस्थितानित्यायनुच्चार्याविशेषतः ।
त्वमेसंध्यासाविन्नित्वदेविजननीपरा ।५५
त्वयैतद्धायत विश्वंवत्यैतत्सृज्यतेजगत् ।
त्वमेसंपाल्यतेदेवित्वमत्स्यंतेचसर्वदा ।५६

तथा जब कल्पान्त में यह विश्व जल मग्न हो गया था, तब भगवान् विष्णु शय्या पर शयन करने योग निद्रा में निमग्न हो गये ।४९। तभी मधु कैटभ नामक दो अत्यन्त भयङ्कर एवं प्रसिद्ध असुर भगवान् विष्णु के कान के मैल से उत्पन्न हुए और ब्रह्माजी का वध करने पर तत्पर हुए ।५०। विष्णु के नाभि कमल में अवस्थित प्रजापति ब्रह्माजी ने उन दोनों भयङ्कर असुरों को देखा और भगवान् विष्णु को निद्रा में निमग्न देखकर ।५१। उन्हें जगाने के लिये एकाग्र चित्त से विश्व की स्थिति और लय करने वाली उन भगवती निद्रा की स्तुति करने लगे ।५२-५३। ब्रह्माजी ने कहा—हे ब्रह्मस्वरूपे ! हे नित्य ! तुम हविर्दान के मन्त्र स्वाहा स्वरूप वाली हो पितरों के श्राद्ध में तुम ही स्वधारूपिणी हो, वषट्कार, इन्द्र के हविर्दान मन्त्र की स्वरूपाभी तुम

हीहो। तुम ही सुधा तथ तुम ही अक्षरों में ह्रस्व दीर्घ और प्लुत स्वरूपा त्रिमात्रा हो ।५४। जिन गायत्री में अर्द्ध मात्रा का उच्चारण विशेष रूप में स्थित हो वह, तुम ही हो और तुम ही सर्वश्रेष्ठ जगज्जननी एवं प्रकृति स्वरूपा हो ।५५। देवि ! इस विश्व को उत्पन्न करने वाली तुम ही हो, तुम ही इसका धारण, पालन एवं प्रलयकाल में ग्रास करने वाली हो ।५६।

विसृष्टसृष्टिरूपात्वस्थितिरूपाचपालने ।
तयासददतिरूपातेजगतोस्यजन्मये ।५७
महाविद्यामहामायामहामेधामहास्मृतिः ।
महामोहाभगवतीमहादेवी महेश्वरी ।५८
प्रकृतिस्त्वञ्चसर्वस्यगुणत्रयविधावनी ।
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहात्रिश्चदारुणा ।५९
त्वश्रीस्त्मीश्वरीत्वह्रस्त्वंबुद्धिर्बोधलक्षणा ।
लज्जापुष्टिस्तणातुष्टित्वशान्तिःशांतिरेवच ।६०
खंनिनोशूलिनीघोरागदिनीक्रिणीतथा ।
शंखिनीचापिनीबाणभुण्डीपरिधायुधा ।६१
सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरो ।
परापराणापरमा त्वमेवपरमेश्वरी ।६२
यच्चदिचित्क्वचिद्वस्तुसदद्वाऽखिलात्मके ।
तस्यसर्वस्ययाशक्तिःमात्वंकिस्तूयसेभया ।६३

सभी काल में सृष्टि और स्थिति रूप हो और विश्व के विनष्ट होते समय तुम ही संहार स्वरूपा हो।५७। तुम ही महाविद्या, महामेधा, महामाया, महास्मृति, महामोहा, महादेवी और महेश्वरी हो ।५८। तुम ही सत्, रज, तम, स्वरूप में सब जीवों की प्रकृति हो, तुम ही कालरात्रि, महारात्रि एवं प्रलय स्वरूप हो, तुम ही भयङ्कर मोहरात्रि हो ।५९। तुम ही श्री, तुम ही ईश्वरी, बुद्धि तथा दिव्यज्ञान की एकमात्र लक्षणा हो, तुम ही लज्जा, पुष्टि, शान्ति तथा शान्ति हो । ६० ।

तुम ही खड्गिनी, शूलिनी, भयंकर स्वरूपा, गदिनी, चक्रिणी, शंखिनी और चापिनी हो। बाण, भृशुण्डी और परिघ अस्त्रों के धारण करने वाली हो। तुम ही सौम्या, सौम्यतरा तथा विश्व के सब सुन्दर पदार्थों में सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्य वाली हो, सत्, असत् वस्तु और उनकी जो शक्ति है वह तुम ही हो, तुम्हारी स्तुति मैं करता हूँ।६१-६३।

ययात्वयाजगत्स्रष्टाजगत्पात्यत्तियोजगत्।
सोपनिद्रावशनीतःकस्त्वांस्तोतुमहेश्वरः।६४
विष्णुःशरीरग्रहणमहमीशानएवच्च।
करितास्तेयतोऽस्तस्त्वांकस्तोतुंशक्तिमान्भवत्।६५
सात्वमित्थंप्रभावैरुदारैर्देविसंस्तुतता।
मोहयेतौदुराधर्षावसुरौमधुकैटभौ।६६
प्रबोधश्चजगत्स्वामीयतामच्युतोलघु।
बोधश्चक्रियतामस्यहंतुमेतोमहासुरौ।६७
एवंस्तुतातदादेवीतामसीतत्रवेधसा।
विष्णोःप्रबोधनार्थायनिहंतुंमधुकैटभो।६८
नेत्रास्यनासिकाबहुहृदयेभ्यथोरसः।
निगर्म्यदर्शनेतस्थौब्रह्मणोव्यक्तजन्मः।६९
उत्तस्थौचजगन्नाथस्तयामुक्तोजनार्दनः।
एकार्णवेहिशयनात्ततःसददृशेचतौ।७०

हे देवि ! जब तुमने विश्व के सृष्टा, पालक और प्रलयकर्ता भगवान् को ही निद्राभिभूत किया हुआ है तब तुम्हारी स्तुति करनेकी सामर्थ्य और किसमें होगी ?।६४। हे देवि ! जब तुमने विष्णु ईशान और मुझे देह प्राप्त करायी है तब अन्य कौन पुरुष तुम्हारे स्तोत्र में समर्थ है? ।६५। हे देवि ! तुम अपने उदार स्वभाव के इस वर्णन से प्रसन्न होकर इन मधु कैटभ नामक दोनों असुरों को मोहित कर दो।६६। तथा विश्वेश्वर विष्णु को शीघ्र जगाकर इन असुरों के संहार के लिये प्रेरित करो।६७। ऋषि ने कहा—ब्रह्माजी ने उन दोनों का संहार करने

के लिए जब इस प्रकार उन तमोगुणी निद्रा देवी की स्तुति की।६८। तब उनके देखते देखते भगवान् विष्णु के नेत्र, नासिका, बाहु औरहृदय से निकल कर भगवती अवस्थित हुई।६९। फिर निन्द्रा से मुक्त होकर भगवान् विष्णु ने एकार्णव में स्थित हुई शय्य से उठकर देखा।७०।

मधुकैटभौदुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ।
क्रोधरक्तेक्षणौहंतृब्राह्मणजवितोद्यमो ॥७१
समुत्थायततस्ताभ्यांयुयुधेभगवान्हरिः।
पंचवर्षसहस्राणिवाहुप्ररणोविभुः ॥७२
तावप्यतिवलोन्मत्तौमहामायाविमोहितौ।
उक्तवन्तौवरोस्मत्तोव्रियतामितिकेशवम् ॥७३
भवेतामद्यमेतुष्टौममवध्यावुभावपि।
किमन्येनवरेणात्रएवावद्धिवृतंमया ॥७०
वंचिताभ्यामितितदासर्वमापोमयञ्जगत्।
विलोक्यताभ्यांगदितोभगवान्कमलेक्षणः ॥७५
प्रीतौस्वस्यवयुद्धेनश्लाह्यस्त्वंमृत्युरावयोः।
आवांजहिनयत्रोर्वीसलिलेनपरिप्लुता ॥७६
तथेत्युक्त्वाभगताशकचक्रगाभृता।
कृत्वाचक्रेणवैच्छिन्नजघनेशिरसीतयोः ॥७७
एवमेषाहमुत्पन्नाब्रह्मासंस्तुतास्वयम्।
प्रभावमस्यादेव्यास्तुभूयः श्रृणुवदामिते ॥७८

क्रोध से लाल नेत्र किये हुए वह मधुकैटभ नामक दोनों दुरात्मा असुर ब्रह्माजी का वध करना चाहते हैं।७१। भगवान् विष्णु नेउठकर उन दोनों असुरों के साथ पाँच सहस्र वर्ष तक बाहुओं से ही युद्ध किया।७२। फिर बल से उन्मत्त हुए उन दोनों असुरों ने महामाया के द्वारा मोहित होकर भगवान् से कहा—हम से वर माँगो।७३। भगवान ने कहा—यदि तुम मुझ पर प्रसन्न हुए हो तो मेरे द्वारा मारे जाओ, यही

वर चाहता हूं, अन्य वर से क्या प्रयोजन है ।७४। ऋषि ने कहा—भगवान् द्वारा छल करने पर उन असुरों ने सम्पूर्ण विश्व को जलमय देखकर उनसे कहा ।७५। हम तुम्हारे साथ युद्ध करके प्रसन्न हुए हैं इसलिए तुम्हारे हाथ से मरना हमें श्लाघनीय है, परन्तु जो स्थान जलमग्न न हो, हमारा वध नहीं करना ।७६। ऋषि ने कहा—ऐसा ही हो कहकर भगवान् विष्णु ने शंख, और गदा को धारण करके उन असुरों के मस्तकों को अपनी जंघा पर रखकर चक्र से काट डाला ।७७। स्वयं ब्रह्माजी द्वारा स्तुति करने पर वह माया देवी इस प्रकार से अवतीर्ण हुए, अब इन देवी का प्रभाव तुम्हारे प्रति कहता हूँ, उसे श्रवण करो ।७८।

७४. महिषासुर सैन्य वध

देवासुरमद्युद्ध पुणमशब्दशतंपुरा ।
महिषासुराण मधिपेदेवानांचपुरंदरे ।।१
तत्रासुरमंहानोयंदेवसैन्य पराजितम् ।
जित्वाचसकलान्देवानिन्द्रोभून्तमहिषासुर: ।।२
तत: पराजितादेवा:पद्मत्रानिप्रजापतिम् ।
पुरस्कृत्यगतास्तत्रयत्रशगरुडध्वजौ ।।३
यथावृत्त यतोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टतम् ।
त्रिदशा:कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ।।४
सूर्येन्द्राप्न्यनिलेद्नायमस्यहरुणस्यच ।
अन्येषाचाधिकारान्सस्वयमेवाधितिष्ठति ।।५
स्यर्गान्निराकृता:सर्वेतेनदेवगणभुवि ।
विचरतियथामर्त्यामहिषेदुरात्मना ।।६
एतद्वकथितसर्वममारारिविचेष्टितम् ।
शरण व: मुपन्ना:स्मोवधस्तस्यविवित्यताम् ।।७

मुनि ने कहा-आदिकाल में जब देवाधिपति इन्द्र ने और महिषासुर

दानवों का अधिपति था, उस काल में एक सौ वर्ष तक निरन्तर देवता और दानवों का युद्ध हुआ ।१। उस युद्ध में महापराक्रमी दानवों ने देवसेनाओं पर विजय प्राप्त की एवं सभी देवगण को जीतकर असुराधिपति महिष स्वयं इन्द्र बन गया ।२। तदुपरान्त पराजित देवगण प्रजापति ब्रह्माजी के पास आये और शिवजी और विष्णु के निकट भी पहुंचे ।३। देवगण ने शिवजी व भगवान् विष्णु को सम्पूर्ण युद्ध वृत्तांत कह सुनाया और महिषासुर की विजय व उसके इन्द्रासन पर अधिकार की बात विस्तार से कही ।४। देवताओं ने कहा कि, महिषासुर ने सूर्य इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्र, यम, वरुण और दूसरे देवताओं के कार्यों पर अधिकार कर लिया ।५। महिष द्वारा स्वर्ग से निष्कासित देवता मर्त्यलोक के मनुष्यों के तुल्य पृथिवी पर विचरण कर रहे हैं ।६। हमने अपने उन दानवों के अत्याचार का वर्णन किया । हम आपकी शरणागत हैं आप महिषासुर के विनाश के लिए विचार करिए ।।७

इत्थनिशम्यदेवानांचासिमसूदनः ।
चकारकोपशम्भुश्चभृकुटीकुटिलाननौ ।।८
ततोतिकोपपूर्णस्यचक्रिणोवदनात्ततः ।
निश्चक्राममहत्तेजोब्राह्मणःशङ्करस्यच ।।९
अन्येषांचैव देवानांशक्रादीनांशरीरतः ।
निर्गतंसुतहत्तास्तच्चैक्यंसमगच्छ । १०
अतीवतेजसंकूटंज्वलन्तमिवपर्वतम् ।
तद्दृशुस्ततंसुरास्तत्रज्वालाव्याप्तदिगंतरम् ।।११
अतुलंतत्रत्तोजःसर्वनेवशरीरजम् ।
एकस्थतदभून्नारोव्याप्तलोकत्रयंत्विषा ।।१२
यवगच्छांभवतेअजस्तेनाजयतसन्मुखम् ।
याम्येनचमूवन्कैशावाहवीविष्णुतेजसा ।।१३
सौम्येनस्तनयौयूरमध्यमैन्द्रेणचावत् ।
वारुणेनचजंघोरुनितंनस्तेजसाभुवः ।।१४

मुनि ने कहा—देवगण के ऐसे वचन सुनते ही शिवजी और विष्णु भगवान् अत्यन्त कुपित हुए, और क्रोध से उन दोनों के मुख तथा भृकुटी कुटिल हो गई।८। तदुपरान्त क्रोध से युक्त विष्णु भगवान्, शिवजी एवं ब्रह्माजी के मुखों से एक विस्तृत तेज प्रकट हुआ।९। इसी प्रकार इन्द्र एवं अन्य दूसरे देवताओं के मुखों से भी तेज निकला। अन्तत: निकला हुआ समस्त तेज मिलकर एक हो गया।१०। इसके पश्चात् मिलकर एक हुए जब अत्यन्त तेज पूजा को, जिसकी ज्वालायें सम्पूर्ण दिशाओं में फैल गईं, पर्वत के तुल्य जलते देखा।११। फिर वह एकत्रित त्रिभुवन को अपनी आभा से प्रकाशित करने वाला तेज-पुंज स्त्री रूप में परिवर्तित होने लगा।१२। शिवजी के मुख से प्रकट हुए तेज से उसका मुख, यम के तेज से केश तथा विष्णु के तेज से उसकी दो भुजायें बन गईं।१३। चन्द्र के तेज से दोनों स्तन, इन्द्र के तेज से मध्यप्रदेश, वरुण के तेज से जंघा और उरु, पृथिवी के तेज से नितम्ब।१४

ब्राह्मणस्तेजसापादौतदगुल्योर्कतेजसा।
वसूतांचकारांगुल्य: कौबेरेणचनासिका ॥१५
तस्यास्तुला: संभूता: प्रजापत्येनतेजसा।
नयनत्रितयजज्ञे तथापावकतेजसा ॥१६
भ्रुवोचसध्ययास्तेज: श्रवणावनिलस्यच।
अन्येषांचैवदेवानांसभवस्तेजसांशिवा ॥१७
तत: समस्तदेवानांतेजोराशिसमुद्भवाम्।
तांविलोक्यमुदंप्रापुरमरामहिषार्दिता: ॥१८
ततोदेवाददुस्तस्यैस्वानिस्वान्यायुधानिच।
उचूर्यंयजयेत्युच्चैर्जयंतीतेजयैषिण: ॥१९
शूलशूलाद्विनिकृष्यददौतस्यपिनाकभृत्।
चक्रंचदत्तवान्कृष्ण: समुत्पाट्यस्वचक्रत: ॥२०
शंखंचवरुण: शक्तिददौतस्यैहुताशन:।
मारुतोदत्तावांश्चपंवाणपूणतथेषुधो ॥२१

ब्रह्मा के तेज से चरण, सूर्य के तेज से चरणों की अँगुलियाँ वसुगणों में हाथों की अँगुलियाँ, कुवेर से नासिका।१५। प्रजापति से दंतावलि-अग्नि से त्रिनेत्र।१६। दोनों सन्ध्याओं से भ्रकुटि पवन से दो कान बने एवं अन्य दूसरे देवताओं विश्वकर्मा आदि के तेज से भी उसकेअङ्ग सम्पूर्ण होकर उस मङ्गलकारी देवी ने जन्म लिया।१७। सम्पूर्ण देवताओं के तेज-पुंज से उत्पन्न उन देवी को देखकर महिषासुर से त्रसित वह देवगण अत्यंत हर्षित हुए।१८। फिर सभी देवताओं ने उन्हें अपने-२ युद्धास्त्र प्रदान किये और विजय के आकांक्षी वह देवता जयन्ती देव की जय-जयकार करने लगे।१९। शिवजी ने अपने शूल उत्पन्न करके उन्हें प्रदान किया। विष्णु भगवान् ने अपने चक्र उत्पन्न करके दिया।२०। वरुण ने उन्हें शंख, हुताश ने शक्ति एवं वचन ने धनुय व बाण प्रदान किये।२१।

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्यकुलिशादमराधिपः।
ददौतस्यैसहस्राक्षघन्टामैरावताद्गजात् ।।२२
कालादंडाद्यमोदण्डपाशचांवुनतिददौ।
प्रजापतिश्चाक्षमालांददौव्रह्मांकमण्डलुम् ।२३
समस्तरोमकूतेषुनिजरश्मीन्दिवाकरः।
कालश्चदत्तवान्खगंतस्यैचर्मचनिर्मलम् ।।२४
क्षीरोगश्चामलहारमजरेचतथांवरे।
चूणार्मणितथादिव्यकुण्डलेकटकानिच ।।२५
अर्द्धचंद्र तयाशुभ्रकधूरान्सर्ववाहुषु।
नूपुरौविमलौतद्वग्रवेयकमनुत्तामम्।
अंगुलीयकरत्नानिसमस्तास्वगुंलीषुच ।।२६
विश्वकर्माददौतस्यैपरशुंचातिनिर्मलम्।
अस्त्राण्यतेकरूपाणितथाभेद्यंचडंशनम् ।।२७
अम्लानपङ्कजामालांशिरस्युरसिचापराम्।
अददाज्जलधिस्तस्यैपंकजचातिशोभनाम् ।२८

सहस्राक्ष अमरेश्वर इंद्र ने अपने वज्र से उत्पन्न करके दिया और ऐरावत हाथी का घण्टा खोलकर दिया ।२२। यमराज ने काल दण्ड से एक उत्पन्न कर उन्हें प्रदान किया । वरुण ने पाश, दक्ष प्रजापति ने अक्षमाला एवं ब्रह्माजी ने उन्हें कमण्डल प्रदान किया ।२२। दिनकर ने उन कल्याणी देवी के समस्त रोम-रोम को अपनी किरणें प्रदान की, काल ने उन्हें स्वच्छ तलवार और ढाल दी ।२४। क्षीरोद्र समुद्र नें भी पूर्ण उज्ज्वल मोतियों का हार दो उत्तम वस्त्र, सुंदर चूड़ामणि, दिव्य कुण्डल और कङ्कन प्रदान किये ।२५। अर्द्धचंद्र ने भी सुंदर पायल, दोनों बाहुओं में बाजूवन्द, कण्ठ के लिए सुन्दर आभूषण एवं समस्त अँगुलियों में अनुपम अँगूठियाँ दीं ।२६। विश्वकर्मा जी ने अनुपम परशु और अकाट्य कवच उन्हें प्रदान किया ।२७। समुद्र ने खिले हुए कमल पुष्पों की शोभायमान मालाएँ ।२८।

हिमवान्वाहसिंहरत्नानिविधानिच ।
ददावशून्यंसुरयापानपात्रंधनाधिपः ॥२९
नेषश्चसर्वजागेशोमहामणिबिभूषिताम् ।
नागहारददौतस्यैक्षत्तोय पृथिवीभिमाम् ॥३०
मन्यैरपिसुरैर्देवीभूषणैरायधैस्तथा ।
समानितानानादौच्चैःसाठ्ठाहासंमुहुर्मुहुः ॥३१
सस्यानादेनघोदेणकृप्स्नमापूरितनमः ।
अमायतातिमहयाप्रतिशब्दोमहानभूत् ॥३२
चक्षुभुःसकलालोकाःसमुद्राश्चचकपिरे ।
चचालवसधाचेलुः सकलाश्चमहीधराः ॥३३
जवेतिदेवाश्चमुदातामूचुःसिंहवाहिनीम् ।
तुष्टुवमुंनयश्चैनांभक्तिनम्रात्ममूर्त्तयः ॥३४
दृष्ट्वासमस्तंसक्षुब्धत्रैलोक्यममरारयः ।
सन्नद्धाखिलसैन्यास्तेसमुत्तन्थुरुदायुधा ॥३५

हिमालय ने देवी सवारी की लिए सिंह और विभिन्न रत्न

प्रदान किए। धनपति कुवेर ने उन्हें सुरा युक्त सुरा पान पात्र दिया ।२९। पृथिवी के आधार अनन्त नागेश में देवी जी को महामणि युक्त नागहार प्रदान किया ।३०। अन्य दूसरे देवताओं ने भी उन्हें विभिन्न प्रकार के अस्त्र एवं आभूषण प्रदान किये। इस प्रकार देवताओं द्वारा सम्मानित वह देवी अट्टहास के साथ भीषण गर्जन करने लगी ।३१। उस भयंकर गर्जनासे समस्त आकाश, पूर्ण हो गया फिर आकाश में एक अचानक घोर प्रति शब्द हुआ ।३२। जिससे तीन लोक हिल गये समुद्र काँप गये, पृथ्वी डगमगाने लगी और सभी पर्वत कम्पायमान होने लगे ।३३। तब सुरगणसिंह पर सवार उन भगवती की प्रसन्नता से जय जय करने लगे ।३४। तीनों लोकों को इस प्रकार क्रियाशील देखकर दानव गण सम्पूर्ण सेना को सज्जित कर तैयार हो गये ।३५।

आ:किमेयदितिक्रोधादाभाष्यमहिषासुर: ।
अभ्यधावतमशब्दशेषैरसुरर्वृत: ॥३६
सददर्शततोदेवीव्याप्तलोकत्रयांत्विषा ।
पादक्रात्यानभुवंकिरोल्लिखतांवराम् ॥३७
क्षोभिताशेषपातालांधनुर्ज्यानि.स्वेनेनताम् ।
दिशोभुजसहस्रेणसमताव्याप्यसंस्थाताम् ॥३८
तत:प्रवृतेयुद्धे युद्धंतयादेव्यासुरद्विषाम् ।
शास्त्रात्त्रै बंहुधामुक्तैरादीपतिदिगंतरम् ॥३९
महिषासुरसेनानीश्चिक्षु राख्योमहासर: ।
युयुधेचामश्वचान्यश्चसुरगवलान्वित: ॥४०
रथानामयुतै: षंभिरुदग्राख्योमहासुर: ।
अयुध्यतायुतानाचसहस्रेणमहाहनु: ॥४१
पंचाद्भिश्चनियुतैरसिलोमामहासुर: ।
अयतनांशतै:षड्भिर्वाष्कलोयुयुधेरणे ॥४२

'अहा! यह क्या होता है' कुपित महिषासुर ऐसा कहकर

समस्त असुर सेना सहित उस ओर दोड़ पड़ा ।३६। तो महिषासुर ने देखा कि वह देवी अपनी आभा बिखेरती हुई त्रैलोक्य में व्याप्त विद्यमान है एवं जिनके चरण पृथिवी पर हैं और उनका मुकुटआकाश को चूम रहा है ।३७। जिनमें धनुष की प्रत्यञ्चा के शब्द से समस्त भूगर्भ भी कम्पित हो रहा था और वह कल्याणी देवी अपनी सहस्र भुजाओं से सम्पूर्ण दिशाओं को आच्छादित करते हुए शोभायमान थी ।३८। तत्पश्चात् देवी के साथ दानवों का युद्ध प्रारम्भ हो गया ।३९। महिषासुर का सेनाध्यक्ष चिक्षुर घोर दानवी युद्ध करने लगा। चतुरंगिनी सेना से सज्जित चामर नाम का असुर अन्य सेना के साथ मिलकर युद्ध करने लगा एवं महाहनु नाम का असुर भी एक करोड़ रथों को लेकर रणक्षेत्र में उतर आया ।४१। असिलोम नाम का महाअसुर पाँच करोड़ रथ और महादानव शाष्फल ६० हजार रथों को लेकर युद्ध करने लगा ।४२।

गजवाजिससहस्रोधैरनेकैरुग्रदर्शनः ।
कृतोरथानांकोटव्गाचयुद्धे तस्मिनयुध्यत् ॥४३
विडालाख्योमहादैत्य पंचाशद्भिरथायुतैः ।
युवृधेसयूगेतत्ररथानांपरिवारितः ॥४४
वृतःकालोरथानांचरणेपंचाशतायुतैः ।
युयुधेसयूगेत त्ररथानांपरिवारिताः ॥४५
अन्योचतत्रायुवशो रथानागहहवृ त्ताः ।
युयुधुसंयुगेदेव्यासहतत्रमहासुराः ॥४६
कोटिकोटिसहस्रै स्तु रथानादतिनांतथा ।
हयनांकवृतोयुद्धे तत्राभून्महिषासुरः ॥४७
तोमरर्भिदिपालैश्च शुक्तिभिर्मु शलैस्तथा ।
युयुधुःसयुयेदेव्याखगपरशुपट्टिशौः ॥४८
केचिच्चचिक्षिपुःशक्तो केचित्प्राणांस्तथापरे ।
देवीखगप्रहारैस्तुतेतांहतुप्रचक्रमुः ॥४९

उग्रवाहन असुर सहस्त्रों हाथी घोड़ों और करोड़ों रथों सहित उनमें मिलकर युद्ध करने लगा ।४३। महाअसुर विशाल पाँच लाख रथों को लेकर युद्ध क्षेत्र में युद्धरत हो गया ।४४। एवं इतने रथों सहित काल नाम का महादैत्य विशाल सेना सहित युद्धरत हो गया ।४५। साथ ही अन्य दूसरे अनेक घोर असुर करोड़ों रथ हाथी और घोड़ों से युक्त उस देवी के साथ युद्ध करने लगे ।४६। करोड़ों, हजारों रथ हाथी और घोड़ों से सज्जित होकर वह महिषासुर उस युद्ध में आया तथा तासर, भिन्दिहाय, शक्ति, भूतल, तलवार, फरसा व पटिटवा द्वारा देवीकेसाथ युद्ध करने लगे । किसी ने शक्ति, पाँश और किसी ने खड्ग चलाकर देवी पर वार करने के प्रयास किये ।४७-४६।

सापिदेवीततस्तानिशस्त्राण्यस्त्राणिचण्डिका ।
लोलयैवप्रचिच्छेदनिजशस्त्रास्त्रवर्षिणी ।५०
अनायस्तानना देवीस्तूयमानासुरर्षिभिः ।
मुमोजासुरदेहेपुशस्त्राण्यस्त्राणिचेश्वरी ।५१
सोपिक्रुद्धोधुतटोदेव्यावाहनकेसरी ।
चचारासुरसैन्येषवनेष्विवहुताशन ।५१
निश्वासमुसयांश्चयुध्यमानरणेम्बिका ।
तएबसद्यःसभूतागणाःभतसहस्त्रशः ।५३
बयुधुस्तेपरशुभिर्भिमन्दिपालासिपट्टिशैः ।
नाशयन्तोसु गणादेवीशक्त्युपवृंहिताः ।५४
अवादयन्तपटहान्गणा शंखास्तणापरे ।
मृदगाँश्चतथैवान्येतस्मिन्युद्धमहोत्सवे ।।५५
ततोदेवौत्रिशूलेनगदयाशरवृभिः ।
खड्गदिभिश्वशतशोनिजधानमहासुराम् ।५६

फिर उन देवी ने भी अपने शास्त्रास्त्रों की वर्षा करके लीलापूर्वक उन दानवों के सभी अस्त्र-शस्त्र नष्ट कर डाले।५०। उस समय-प्रसन्नता पूर्ण उस देवी का समस्त देवता और मुनिगण गुण-गान करने लगे । उसके पश्चात् देवी असुरों पर शस्त्रास्त्रों की वर्षा करने लगी ।५१।

देवी वाहन सिंह भी केशर कम्पित कर अग्नि के समान दैत्य सेनाओं में विचरण करने लगा ।५२। युद्ध में रत देवी के नि:श्वासों से ही शत सहस्र गण तुरंग उत्पन्न हो गये और असुर सेनाओं से युद्ध करने लगे ।५३। देवी के प्रभावसे बलशाली वह गण फरसा, भिंदिवाल, असि और पट्टिश से दानवों को नष्ट करने लगे ।५४। गण युद्ध क्षेत्र में शंखनाद भी करते थे और मृद्दंग भी बजाते थे ।५५। इसके पश्चात् देवी ने भी त्रिशूल, गदा शक्ति, वृष्टि, खड्ग वगैरह से शत-शत-वार दानवों का शमन किया ।५६।

पातयामासचैवान्यान्घंटास्वनविमोहितान् ।
असुरान्भुविपाशेनबद्धावान्यन्नकर्षयत् ।५७
केचिदद्विधाकृतान्तीक्ष्णै खड्गपातुस्तथापरे ।
विपोथितानिपालेनगदयाभुविशेरते ।५८
वेसुश्चकेचिद्रुधिरसुसलेनभृशहत: ।
केचिन्नपतितामूमोभिन्नाशूलेननवक्षसि ।५९
निरन्तरशरौधेणकृत्ताकेचिद्रणाजिरे ।
शैलानुकारिण:प्राणिन्मुमुच स्त्रिदशदर्दना: ।६०
केषांचिद्बाहवश्चिन्नग्रीवास्तथापरे ।
शिरांसिपेतुरन्येमषामन्येमषामध्येविदारिता: ।६१
विच्छिन्नजघास्त्वपरेपेतुरुव्यांमहासुरा: ।
एकबाह्क्षिरणा:केचिद्देव्याद्विधाकृता: ।६२
छिन्नेपिचान्येशिरसिपतिता: पुनरुत्थिता: ।
कबधायुयुर्देव्यागहीतपरमायुधा: ।६३

कई को घन्टे घन्टे से मोहित कर मारा और दूसरे बहुत से राक्षसों को पाश में बांधकर धरातल पर खींचा ।५७। कई को अपनी तलवार की तीव्र धार से दो टुकड़े कर डाला और कई को गदा के प्रहारों से चूर्ण कर डाला ।५८। कोई-कोई मूसल के प्रहार से निरन्तर रक्त-वमन करने लगा । ।५९। युद्ध भूमि में देवी के वाणों के प्रहारों से

निरन्तर असुरों की सेनाओं की सहायता करने वाले देवताओं के शत्रु इस प्रकार मरते जाते थे ।६०। किसी असुर की भुजाऐं कटीं किसी की गर्दन, अन्य दूसरों के मस्तक धड़ से अलग हो गये और किसी के दो टुकड़े हो गये ।६१। किसी भयंकर असुर की जाँघ कटकर धरती पर गिरी व किसी के बीच से खण्ड कर दिये गये ।६२।कोई-कोईअसुरमस्तक कट जाने से पृथ्वी से गिरकर पुन: उठकर जब कबंध या धड़ पुन: शस्त्र लेकर देवी से युद्ध करने लगे ।

ननृतुश्चापरेतत्रयुद्धेयंलयाश्रिता: ।
कबधाश्छिन्नशिरस खड्गशक्ष्युष्टिपाणव: ।६४
तिष्ठतिष्ठेतिभाषतोदेवीमन्येमहासुरा: ।
रुधिरौधलतांगा:संग्रामोलोमहर्षणे ।६५
पातितेरथनायाश्वैरसुरैश्चमसुन्धमा ।
अगम्यासाऽभवत्तत्रयत्राभूत्समहारण: ।६६
शोणितौवामामहानद्य सद्यलतत्रविसुस्रुबु: ।
मध्येचासुरसैन्यस्यवारणासुरवाजिवाम् ।६७
अणनतन्महासैन्यमसुराणांतथांविका ।
निन्येक्षयययथाबन्निस्तृणदारुमहाचयम् ।६८
सचसिंहोमहांनादमुसृजन्धुतकेसर: ।
शरीरेभ्योसरारीणामसूनिबबिचष्यति ।६९
देव्यागणैश्चतैस्तत्रकृतयुद्धंमहासुरै: ।
यथैनांतुष्टुबृर्देवापुष्पबृष्टिमुचोदिवि ।७०

अनेक कबन्ध या धड़ नृत्य करने लगे और उस महायुद्ध में अनेक भयंकर महादैत्य मस्तक कट जाने पर केवल कबन्ध ही रह गये थे। जोकि हाथों में तलवार, शक्ति और दोनों ओर धार वाली तलवार पुन: लेकर ।६३। 'ठहरो, ठहरो !' देवी से कहते थे। जिस क्षेत्र में यह विदारक महायुद्ध हुआ घिरे हुए हाथी, घोड़ों दानवों और उनके रथों से आ वह पट सा गया और ऐसा हो गया कि पैर रखने को भी स्थान

नहीं था। ६५-६६ तत्तकाल ही उस स्थान पर युद्ध में असुर सेनाओंके हाथियों घोड़ों व सैनिकों के रक्त-समूह से रक्त की नदियाँ बहने लगीं।६७। सूखे हुए काष्ठ को अग्नि जिस प्रकार पलभर से राखकर देती है; उसी प्रकार उन अग्नि का देवी ने राक्षसों की महा:सेनाओं कोपलमात्र में नष्ट किया।६८। देवी वाहन सिंह भी महानाद करते हुए; अपनेवालों को कम्पित करता हुआ अत्यन्त क्रोध पूर्वक सभी पदार्थों के प्राणों को हरने लगा। ६९। एवं घूम घूमकर असुरों के शरीरों से ही जैसे वह प्राणों को ही खोलने लगी। देवी के सम्पूर्ण गणों ने भयंकर असुरों से पराक्रम पूर्वक युद्ध किया, जिससे देवता प्रसन्न होकरस्वर्गसे उन पर पुष्प-वर्षा करने लगे।

७५. महिषासुर वध

निहन्यमानन्तत्सैन्यमवलोक्यामहासुरः।
सेनानीश्चिक्षुराकपाद्ययौयोदधुमथांबिकाम्।१
सदेवीशरवर्षेणवर्षसररेऽसुरः।
यणामेरुगिरे श्रृङ्गतीयर्षमतोयदः।२
तस्याच्छित्वातदेवीपलर्यबशरोत्करान्।
जघानतुरंगान्वाणैर्वैत रचैश्वाणिनाम्।३
चिच्छेदचध्रवसद्योध्वजचातिसमुच्छितम्।
विव्याधचैनगात्रेपुच्चिन्नधब्बानमाशुनः।४
सच्छिन्नवन्धांविरणोहताश्वोहतसारथिः।
अभ्यधाचततादेवीशिङ्गचर्मधरासुरः।५
सिंहमाहत्यखगेतोक्ष्णधारेणमूधीन।
आजधासभुजेव्यंदेवोमप्यतिवेगवान्।६

उन सब असुर देवताओं को नष्ट हुआ देखकर महिषासुर कासेनाध्यक्ष चिक्षुर युद्ध निमित्त अम्बिका देवी के समीप आया।१। सुमेरु पर्वत के शिखर पर बादलों की वर्षा के समान वह महाअसुर देवी पर

शर वर्षा करने लगे ।२। देवी ने उसके सभी वाणों को काटकर लीला पूर्वक उनके रथ घोड़ों और सारथी को अपने बाणों से नष्ट कर डाला ।१। देवी ने तत्काल उस चिक्षुर का धनुष और अत्यन्त उच्च ध्वजाको काटकर उसका शरीर बाण वर्षा से छेद डाला । उसका जब धनुष नष्ट हो गया, रथ नष्ट होगया तथा घोड़े या सारथी सभी समाप्त हो गये तो वह दैत्य सेनापति तीव्र तलवार व ढाल देकर देवी की ओर दौड़ा ।५। और घोर गति से अपनी तीक्ष्ण धार की तलवार से सिंह के माथे पर प्रहार करके देवी के भी बाँये हाथ पर प्रहार किया ।६।

भूतस्य(:खङ्गोजप्राप्यपकालनृहनन्दन ।
तयोजग्राहशूलंसकोपादारुणलोचनः ।७
विक्षेपघतततस्तनुभद्रकाल्यांमहासुरः
आज्वलयमःनन्तेजोभीरर्बिबिगभिवांववरात् ।८
दृष्टालदापच्छूलदेवीशूलममुचंत ।
तेनतच्छतधानोशुलसचमहासुरः ।९
हतेतस्मिन्महावीर्येमहिषस्यचभूपतौ ।
आजगामगजारूढश्चामस्त्रिदशार्द्दनः ।१०
सीपिशक्तिभुमोचाथदेव्यास्तामम्बिकाद्रुतम् ।
हकराभिहताभूमोपातयामाभनिष्प्रभाम् ।११
भन्नाँशक्तिनिपतिताँदृष्ट्वाक्राधसमन्वितः ।
चिक्षोपचामरशूल बाणैस्तदपिसाच्छिनत् ।१२
सतःसिहसमुत्पयगजकुंभांतरेस्थितः ।
बाहुयुद्धोनयुयुधतेनोच्चैस्त्रिद्रशारिणा ।१३
युध्यमानोततस्तौतुतन्मन्नागान्ममीगतौ ।
युयुधातेतिसरब्धौप्रहारैरतिदारुणैः ।१४

हे नृप ! उस दैत्यराज का खंग देवी के हाथ के स्पर्श मात्र से ही टूट गया । फिर क्रोधपूर्वक रक्तिम नेत्र वाले उसे महादानव ने त्रिशूल लेकर ।७। भद्रकाली पर वार किया तो देवी ने तेज से प्रशाशमा एवं

प्रकाश से गिरते हुए सूर्य मण्डल के तुल्य ।८। उस त्रिशूल को देखकर अपना शूल ग्रहण किया देवी द्वारा बार किये त्रिशूल से उस असुर से त्रिशूल के सौ टुकड़े हो गये एवं दैत्य सेनाधिपति चिक्षुर के भी सौ टुकड़े होगये ।९। महिषासुर के सेनापति महापराक्रमी चिक्षुर केसमाप्त होने पर सुरगणों का शत्रु महादानव चामर हाथीपर सवार होकर युद्ध करने के लिए देवी के सामने आया ।१०। उस महादानव ने देवी पर लक्ष्य करके शक्ति फेंकी, परन्तु वह शक्ति देवी की हुंकार के घोर शब्द में अभिहत व प्रभाहीन होकर धरातल पर गिर पड़ी । शक्ति को इस प्रकार नष्ट हुआ देख असुर, चामर ने क्रोधित होकर त्रिशूल चलाया परन्तु देवी ने अपने शरों से उस त्रिशूल को भी भेद दिया ।११। इसके पश्चात् देवी-वाहन सिंह छलांग लगाकर हाथी के मस्तक पर चढ़ गया एवं हाथी की पीठकर बैठ उस महासुर से वाहु युद्ध करने लगा ।१३। सिंह एवं असुर चामर दोनों ही युद्ध करते हुए उस गज से नीचे गिरे व अत्यन्त क्रोध पूर्वक आपस में भीषण प्रहार करने लगे ।१४।

ततोवेगातखमुत्पन्यनिपत्यचमृगारिणा ।
करप्रहारेणशिरश्चामरस्यदृथकृतम् ।१५
उग्रश्चयणेदेप्राशिलावृक्षादिभिर्हतः ।
दन्तमुष्टितलेश्चैवकरालश्चनिपाततः ।१६
देवीक्रुद्धानदापातैश्चूर्णयामःसचोद्धतम् ।
उष्कलैभिन्दिपालेनवाणैस्ताभ्रताथांकधम् ।१८
उग्रास्यमुग्रवायैचतसैवभहाहनुम् ।
त्रिनैत्राचत्रिशूलेनजघानपरमेश्वरो ।१८
बिडालस्थ सिनाकायात्पातयामाससवैशिरः ।
युर्धरदुर्मुखचोभौशरैर्निन्येयमक्षयम् ।
कालचकादण्डेनकालरात्रिरपातयत् ।१९
उग्रदर्शनमत्युग्र खड्गपातैरताडयत् ।
असिनंवासिलोमानमच्छिदत्सारणोत्सवे ।

गणैसिंहेनदेव्यांचजयक्ष्वेडाकृतोत्सर्व ।२०

एवसक्षोयमाणंतुस्वसैन्येमहिषासुरः ।

माहिषेणस्यरूतेणत्रासयामासतान्गणान् ।२१

इसके बाद कुछ समय में ही सिंह ने एक दम आकाश में छलांग लगाई और फिर पृथिवी पर गिरकर अचानक पंजों से आघात करते हुए असुर चामर का मस्तक उसकी देह से अलग कर दिया ।१५। उदग्र नाम असुर को देवी ने पत्थर और वृक्षों की वर्षा करके और असुर कराल को दाँत व मुष्टिका प्रहारों से समाप्त कर डाला ।१६। अत्यन्त कुपित उस देवी ने गदा के आघात से उछत नाम के दानव को पीस डाला । फिर भिंदिपाल से असुर पाष्कल एवं ताम्र व अन्धकनामक दो असुरों को शरों समाप्त कर दिया ।१७। त्रिनेत्रा परमेश्वरी देवी ने त्रिशूल द्वारा उग्राम्य, उग्रवीर्य व महाहनु नामक दानवों को नष्ट कर दिया ।१७। तलवार द्वारा असुर विडाल का मस्तक काटकर गिरादिया वाणों के प्रहार से दुर्द्धर व दुमुख नाम के दो दानवों को यमलोक भेज दिया । कालरात्रि ने काल असुर को कालदण्ड से मार दिया ।१९। उग्र खग के बार से उग्रदर्शन, असि से असिलोमा को समाप्त कर दिया तो सिंह व देवी के गणों ने जय-नाद किया ।२०। इस प्रकार अपनी समस्त सेना को नष्ट होतादेख त्रिलोक में राक्षसराज महिषासुर अथवा महिष-रूप धारण करके देवी के गणों को भयभीत करने लगा ।२१।

कांश्चित्तुण्डप्रहारेणक्षुरक्षीपैस्तथापरान् ।

लत्गुलताडितांश्चान्यञ्गाभ्याचविदारितान् ।२२

धगेनकाश्चिदपरान्नादेनभ्रमणेनच ।

विश्वासपवनेनन्यागपातयामासभूतले ।२३

निषात्यप्रमथानीकमभ्भावससोसुरः ।

सिंहसतुमहादेव्याः कोषचक्रे ततोम्द्रिका ।२४

सोपिकोपान्महावीर्यक्षुक्षुण्णमहीतलः ।

शृंगाभ्यापर्वतानुच्चैश्चिक्षेपवननादच ।२५

वेगभ्रमाविक्षुण्णमहीतस्यव्यशीर्यतः ।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिःप्लावयामाससर्वतः ।२६
धुतशृङ्गविभिन्नाश्चखडंखडययुर्धनाः ।
श्वासानिलास्ताःशतशोनिपतनैभसोऽचलाः ।२७
इतिक्रोधमाध्यातमातंतंमह सुरम् ।
दृट्वासाचंडिकाकोपतद्वध यतदानरोत् ।२८

किसी गण को मुष्ट प्रहार से, किसी पर खुर से आघात करके किसी को पूँछ के आघात से त्रसित करने लगा ।२२। किसी को तीव्र गति द्वारा किसी को घोर गर्जना द्वारा किसी को भ्रमण द्वारा और किसी को श्वांस की वायु से विदारण कर डाला ।२३। इस प्रकार देव गणों को गिराकर वह दैत्यराज महादेवी के वाहन सिंह को समाप्त करने की आकांक्षा से दौड़ा, तो देवी एक दम क्रोधित हुई ।२४। महाप्रतापी महिषासुर भी क्रोधपूर्ण होकर खुरों से धरती को कुरेदता हुआ और दोनों तीक्ष्ण सींगों द्वारा उच्चारण पर्वत मालाओं को उखाड़ता हुआ गर्जने लगा ।५। उसके वेग से इस प्रकार घूमने पर पृथिवी कोमल हो गई और गड्ढे हो गये तथा पूँछ से ताड़ित समुद्र भी सभी ओर फैलने लगा ।२६। कँपा देने वाले सीगों से घिरे हुए बादल खण्ड खण्ड हो गये । और उसके श्वांस की तीव्र वायु से अनेकों पर्वत गिर पड़े ।२७। ऐसे दैत्यराज को देवी क्रोधित हो मारने को उद्यत हो गई ।२८।

साक्षिप्तातन्यवपाशन्तंववधसहासुरम् ।
तत्याजमाहिषरूपंसोपिगदधोमहामृधं ।२९
तत सिंहोभवत्सद्योयावत्तस्याविकाशिरः ।
छिनत्तितावत्पुरुष खड्गपापिणरदृश्यतः ।३०
ततएवःशुपुरुषदेवीचिच्छेदसायकः ।
तंखगचर्मणासार्धंततःसोभून्महागजः ।३१
करेणचमहासिंहतंचकर्षजगर्जच ।
कर्षस्तुकरदेवीखड्गेननिकृतत ।

ततोमहासुरौमयोहर्षिपुराश्रितः ।
तपवक्षोभयामानत्रै लोक्य सचराचरम् ।।३३
तत युद्धाजगन्मातचण्डिकापानमुत्तमम् ।
पर्पौपुनःपुनश्चैवजहासारुणलोचना ।।३४
ननद्चासुर सोपिवलवीर्यमदोद्धतः ।
विषाणाभ्यांयचिक्षेपच्च डिकांप्रातभूधरा ।।३५

देवी ने पाश फेंका, जिसमें महिषासुर बांध लिया तथा उसी महिषासुर ने अपना महिष रूप छोड़ दिया ।२९। और तुरन्त ही उसने सिद्ध रूप ग्रहण किया, इसके पश्चात् जैसे ही अम्बिका देवी उस दैत्यराज का सिर काटनेको आगे बढ़ी, त्योंही वह तलवार हाथमें लेकर पुरुष दीखने लगा ।३०। तदुपरान्त अपनी तीक्ष्ण बाण वर्षा द्वारा ढाल व तलवार सहित उस पुरुष महिषासुर को बीध डाला, तभी वह अत्यन्त विशाल हाथी बनकर अपनी सूंड से सिंहको खींचता युद्ध करने लगा । देवी ने सिंह को खींचकर तलवार मे हाथी की सूँड काट डाली ।३१-३२। इसके पश्चात् महादैत्यत्रनर्वार महिष रूप मे पहिले के हीं प्रकार से वह तीनों लोकों को पुनः त्रासित् करने लगा ।३३। तत्पश्चात विश्व-माता चण्डिका क्रोध पूर्वक उत्तम मधु-पान करने लगी तथा रक्तिम नेत्रों सहित बार-बार हँसने लगी ।३४। तब वह दानव भी सींगों से चण्डिका देवी पर पर्वत उखाडकर फैंकने लगा ।३५।

साचतान्प्रहितास्तेनचूर्णयंतीशरोत्करैः ।
नवाचतंकदोद्धतसुखरोगाकुलाक्षरम् ।।३६
गर्जगजक्षणमूढमयुधावत्पिवाम्यहम् ।
मयात्वयिहतेत्रैवगर्जिष्यत्याशुदेवता ।।३७
एवमुक्त्वासमुपत्यारूणातंमहासरम् ।
पादेनाक्रम्यकठेंचशूलेननमताडयत् ।।३८
ततःसोपिपदाक्रांतस्यानिजमुखोततः ।
अर्द्ध नष्क्रांतएसद्देव्यावीर्येणसबृतः ।।३९

अर्द्ध निष्क्रांतगवासौयुध्यमानोमहासुरः ।
तयामहासिनादेव्याशिरश्छत्वानिषातितः ।।४०
एवसमहिषोनामससैन्य ससुहृद्गणः ।
त्रैलोक्यंयोहपित्यातुतदेव्याविनाशित. ।।४१
त्रैलोश्यस्थैस्तदाभतैमंह्िषेविनिपातिते ।
जयेत्युक्त ततःसर्वे सदेवासमावेः ।।४२
ततोहाहाकृतसवंदत्यननाशयत् ।
प्रहषघवारजग्मुःसकलादेवतागणाः ।।४३
तुष्टुभुस्तांसुरादेवीसहार्दिब्यैमंहर्षिभिः ।
जगुगंधर्वपततोननृतुश्चाप्सरोगणः ।।४४

देवी भी अपनी बाण-वर्षा द्वारा उन समस्त पर्वतों को चूर्ण करके युद्ध करने लगीं। उस समय चूँकि मद्य मान से देवी का शरीर रक्त वर्ण हो गया था एवं सभी शब्दों का स्पष्ट उच्चारण नहीं हुआ ।३६। देवी ने कहा—अरे मूर्ख ! जब तक मैं मद्य पोती हूँ तभी तक तू गर्जना करले फिर मेरे द्वारा तुझे निहत हुआ देख देवतागण यहाँ तेरे स्थान पर गर्जना करेंगे। ऋषि ने जहा—देवी ऐसा कहकर छलाँग लगाकर उस महादानव पर सवार हो गई तथा उसे अपने चरणों में दबाकर उस असुर के कण्ठ में त्रिशूल से प्रहार करने लगी ।३८। इसके पश्चात् उस महादानव की आभा प्रायः समाप्त हो गई और देवी के पैरों से दबा होने से अन्तसा होगया ।३९। उसके बाद देवीके संघर्ष करते हुए उस महादानव का महाअति से शिर कलम कर उसे समाप्त कर दिया ।४०। उस प्रकार से वह महिषासुर अपनी सेना और असुरगणों के समेत त्रैलोक्य को त्रसित कर अंत में देवी द्वारा विनाश कर दिया गया ।४१। उस समय महिषासुर निहत होने पर तीनों लोकों के देवता, मनुष्य और भू-पाताल निवासी बलि आदि सभी ने देवी का जयघोष किया ।४२। उसके पश्चात् देवी ने हाहाकार करती शेष दैत्य सेना को भी नष्ट कर दिया, जिससे कि सुरगण अत्यन्त आनन्दित हुए ।४३। देवता व ऋषि-मुनीगण देवी का गुण-गान करते

लगे। गन्धर्व पति गायन करने लगे एवं अप्सराएं नृत्य करने लगीं।४४।

७६. शक्रादिकृत देवीस्तव

ततः सुरगणाःसर्वेदेव्याइन्द्रपुरीगमा।
स्तुतिमापेकत्त निहथेमहिषासुते ॥१
शक्रादय सरगणनिहतेतिवीर्येतस्मिन्दुरात्मनिसुरारिबलेचदेव्या।
तांतुष्टुवुत्रणातिनम्रशिरोधसावाग्भि प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहा।
देव्यायवधातमिदजगदात्मशक्त्यानिःशेषदेवगणशक्तिसमुहंगूर्त्या।२
ताभिविकामखिलदेवमहर्षिपूज्यांभक्तत्याताःस्मविदधातुशु-
भानिसन ॥३
यस्या प्रभावमतुलभगवाननतोब्रह्मसाहरश्चनहिबक्तुमलवलच
साचण्डिकाखिगत्परिपलनायनाशांयचाशुभभयस्यमतिकरौतु ।४
याश्री स्वयसुकृतिनांभवनेष्वलक्ष्मीःपातमनांकृतधियांहृदयेषुबुद्धि
श्रद्धासत्ताकुलजनप्रभवस्यलज्जातांनताःस्मपपिपालयदेविविश्वम्
किंबणयामतंवरूपमचिंत्यमेतर्तिकचातिवीर्यमसुरत्रयकारिभुरि।
किंचाहदेषुचेरितानितयाद्भूतानसर्वेषुदेव्यसुरदेवगणाब्रिकेषु ।६
हेतसस्तजयतांत्रिगुणापिदेव्वेर्तज्ञांयसेरिहसदिभिरप्यमारा।
सर्वाश्रयाखिलभिदजगभुनतव्याकृताहिपरमाप्रकृतिस्त्वाद्या ।।७

ऋषि ने कहा—उस काल इन्द्र सहित समस्त सुरगण देवी द्वारा महिषासुर का वध किया जाने से देवी का गुणवान करने लगे। १। भगवती देवी ने दैत्यराज महिषासुर का वध कर दिया तो इन्द्र सहित सम्पूर्ण सुरगणोंके सुशोभित समुदाय इस आनन्दसे और अधिक पुलकित हो उठे, दुर्गा की स्तुति करने लगे ।२। देवताओं ने कहा—इस प्राणि जगत् का अपने प्रभाव से विस्तार करने वाली, समस्त देवगणों की एकत्रित शक्ति से उत्पन्न होकर साकार रूप से परिणत हुई है एवं जो समस्त सुरगणों एवं महामुनियों का पूज्य है, हम उस अम्बिका देवी को प्रणाम करते हैं वह इस सबका कल्याण करें।३। भगवान ब्रह्मा एवं

महेश भी जिनकी शक्ति और प्रभाव का वर्णन करने में असमर्थ हैं वह देवी चण्डिका समस्त विश्व का पोषण करने के लिए और उसके अहित व भय के नाश के लिये आकांक्षित हों ।४। पुनीत कार्य करने वाले प्राणियों के गृह में लक्ष्मी स्वरूप पान-कर्म करने वाले के गृह में दरिद्र सदाचरण वालों के लिए श्रद्धा स्वरूप और पवित्र कुल में उत्पन्न प्राणियों की लज्जास्वरूप है, उस देवी को नमस्कार करते हैं। हे देवि, आप जगत का पोषण करें ।५। आपका अचिन्त्य स्वरूप वर्णन करने में हम असमर्थ हैं। देवि ! आपको दानवों का विनाश करने वाला अपरिमित वीर्य दानवों व देवगणों के प्रति द्रक्ष-क्षेत्र में आपका अनुपम आचरण हम किस प्रकार कहें ।६। हे देवि ! आप विकार हीन आद्याप्रकृति हैं अथवा सत्व, रज एवं तमोगुण वाली होने पर भी आप विश्व के लिए कल्याणकारी हो। राग-द्वेष आदिसे युक्त विष्णु व महेश आदि भी आपका प्रकृत तत्व नहीं जानते, हे देवि ! आपअपार है और आश्रय स्वरूप हैं यह विश्व आपका ही अंश स्वरूप है ।७।

यस्या:समस्तसरता:सधुदीरणेतृप्तिप्रवाँतिसकलेषुसखेषुदेवी ।
स्वाहासिवपितृगणस्यचतुप्तिहेतुरुच्चायसेत्वतनएवजनेस्वधाच।८
यामुक्तिहेतुविचित्यमहाव्रतात्वमभ्यस्यसेसुनियतेस्यतत्वासारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिअस्तसमस्तदार्षैर्विद्यासिसाभगवतोमाहिदेवी।
शव्दामिकासृविमलग्यंजुषांन्धिानमुगगीथदश्यपदषाटवताँच्सा-
म्नाम् ।
देवात्वमीभगवतोभगवनायवर्त्तासिसर्वगतापरमार्त्तिर्हंत्री ।।१०
मेधामिदेविदिताखिलशास्त्रसारावुर्गासिमृगभवसागरनौगरसगा ।
श्री कटभारिहृदयंककृताधिवासीरीत्मेवश शिमोलिकृतवतिष्ठ
ईषत्सहासममलपरिपूर्णचद्रविधानुकारिकनकौत्तमकातिकांतम् ।
अत्यद्भुतप्रहृतमातरुषातथापिवक्त्रविलोकसहलामहिषासुरेणः।१२
दृष्टयातुदेविकुपतिभृकुटोकरालमुद्यनसाँदसदृशच्छवियन्नसद्यः ।
प्राणांमुमोचमहिषस्तदतीवचित्रकाव्यितादकपितांतकदर्शदेना।१३

देविप्रसोदपरमाभववीभवायसद्योविनाशवसिकोपवतीकुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनवयदस्तमेतन्नीतबलसुविपुलमहिषासुरस्य ।१४

हे देवि ! आपके नाम उच्चारण से ही सम्पूर्ण यज्ञों में देवगण तृप्ति प्राप्त करते हैं, चूँकि आप ही ऋषिगण एवं सुरगण को तृप्त करने वाले स्वाहा एवं स्वधा स्वरूप उच्चारण की जाती हो ।८। हे देवि ! आपकी महान आराधना का विषय अचिन्त्य है और जितेन्द्रयोसत्वसार तथा दोष-विहीन, मोक्ष के आकांशी ऋषिगण आपकी मुक्ति का कारण मानते हैं । हे देवि ! इसलिए आप ही भगवती सर्वश्रेष्ठ मोक्ष विद्या हैं ।९। हे देवि ! आप शब्दयुक्त तीन वेद स्वरूप हैं और प्रथम युक्त अनुपम पद वाले ऋक् यज् व सामवेद का आशय स्वरूप है, आप ही सम्पूर्ण ऐश्वर्य से पूर्ण हैं, आप ही विश्व का जीवन-रक्षक कृषि-स्वरूप हैं, हे देवि !समस्त विश्व की घोर विपत्ति का ज्ञानशमन करतीहै।१०।आप ही बुद्धि स्वरूपहैं, कठिन भव-सागर से निस्तार करने वाली अनुपम नौका स्वरूप हैं । कैटभशत्रु के वध कर्ता भगवान विष्णु के निवास करने वाली लक्ष्मी आप ही हैं और महादेवजी के बांये अङ्ग पर प्रतिष्ठित गौरी आप ही हैं ।११। इस पर भी आपका मन्द हास्य पूर्ण, स्वच्छ, पूर्ण चंचतुल्य सुन्दर वर्ण, कांति युक्त अनुपम मुख देखकर भी महिषासुर समस्त त्रिभुवन को मोहित करने वाली आपकी मुख-कांति से भी जब दुष्ट मोहित नहीं हुआ ।१२। हे देवि अत्यन्त क्रोध-पूर्ण तपी हुई भृकुटि सहित उदितपूर्ण चन्द्र के समान आपके मुख को देखकर भी तुरन्त ही महिषासुर ने प्राण त्याग नहीं किया, यह आश्चर्यपूर्ण है क्योंकि क्रोध युक्त यमराज को देखकर भी कोई जीवित रह सकता है ? ।१३। हे भगवती, आप प्रसन्न हो विश्व का कल्याण करने वाली लक्ष्मी आप ही हैं, हे देवि क्रोधित होने पर आप समस्त कुल का नाश कर देती हैं, यह हम जान गये हैं ।१३।

तेतमताजनपतेषुधनानिदेषायणांसिनचसोंदभिर्वधुवर्गः ।

धन्वास्तलवनिभृत्यदारायेषांसदाभ्यदाभ्यदाभवतोप्रन्न ।
धर्म्याणिदेविसकलानिसदैयकमण्यित्यादुतप्रतिदिनन्सुकृतीकरोति
स्वगप्रयातिचततोभवतीप्रसादाल्लोकत्रयेपिफदानुनुदेवितेन ।१६
दुर्गेस्मृताहरसिभीतिमशेषजतोस्वस्थैः मृतामतिमतीबलुभांददासि
दारिद्यदुःखमयहारिणिकात्वदन्यासर्वोपकारकरुणायसदार्द्रं चित्तः
एभिहतैर्जगदुपैविमुखतथतेकेर्वतुनानागनरकायचिरापमम्ः ।
संग्राममृत्युमधिगन्यदिवप्रयातुत्वेतिनूनमहितान्विनिह सदेवि ।१८
दृष्टयैवकिनभवतीप्रकरोतिभस्ससर्वासुरानरिषुपत्प्रहिरणीषिणस्त्रम्
लोकान्प्रयांतुरिपवोपिहिशस्त्रपताइत्थमतिभवाततेप्वहितेषुसांध्वी
जगप्रभानिकरविस्फुटर्णैस्तथोग्रै शूलाग्रकाँतिनिवहेतदशेसुराम् ।
यन्नागताविलयमशुभदिदुःखडयोग्यानन्तविलोकत्ताँतदेतत् ।२०
दुर्बत्तशमनतव देविशीलरूपथैतविचित्रमतुल्यमव्यैः ।
वीर्यचहंतृहृतदेवपराक्रमाणावरिष्वपिप्रतठितैहृदयांत्वयेत्थम् ।२१

हे दुर्गे ! आप सन्तुष्ट होकर जिनको कल्याण देती हैं, उन्ही को धन और प्रसिद्धि प्राप्त होती है ।१४। हें देवी ! आपके ही प्रसाद से व्यक्ति नित्यप्रति पूर्ण आदर सहित धर्मानुरत कार्य करते है तथा मृत्यु-परांत आपकी ही कृपा से स्वर्ग प्राप्त करते हैं, इसलिए हे अम्बिका ! आप ही त्रैलोक्य की फलदायक हों ।१५। हे देवि ! त्रसित मनुष्य जब आपका नाम स्मरण करते हैं तो आप उन्हें भयभीत बनाती हैं और स्वस्थ हृदय प्राणि जब आपका स्मरण करते हैं तो आप उन्हें कल्याण दाता बुद्धि प्रदान करती हैं। वे दरिद्र का दुःख व भय हरण करने वाली हैं ! आपके अतिरिक्त अन्य किसका हृदय सभी के हितार्थकृपालु अथवा दयापूर्ण रहता है ? ।१७। समस्त असुरों के निहित होने से विश्व सुखी होवे और नरक प्राप्ति के लिए वहुत अवधि तक पापकर्म करके इस रण-क्षेत्र में निहित होकर स्वर्ग को प्राप्त करे ऐसासोचकर आप देव शत्रुओं का शमन करती हैं ।१८। आपकी तो दृष्टि मात्र सेही

स्वर्ग में पहुंचने के लिए आपके असुरों पर शस्त्र चलाना निःसन्देह आपकी असुरों का हित करने वाली मति सर्वश्रेष्ठ है ।१९। हे देवि ! आपके खड्ग की तीव्र आभा और त्रिशूल के अग्रभाग की कांति से भी उन सभी दैत्य की दृष्टि समाप्त नहीं हुई, इसका केवल कारण यही है कि आपके शोभायुक्त इन्द्र की आभा पूर्ण किरणों से इनके नेत्र अत्यन्त शीतल हो गये थे ।२०। हे दुर्गे ! आपका स्वभाव दुराचारी मनुष्यों के दुराचार का विनाश करने वाला एवं आपका रूप अतुलनीय व अचिन्त्य है । हे देवि ! आपका वीर्य देवगण के बल को हरने वाले दैत्यों का विनाश करता है अतएव शत्रुओं पर भी आपकी कृपा पूर्ण स्पष्ट है ।२१।

केनोपभावतुतेस्यपराक्रमभस्यरूरशत्रु भयकायतिहारिकुत्र
चित्तोकृपासमरमिष्ठुरताचदृष्टात्वय्येवदेभुवमत्रयेपि ।२२
त्रैलोक्यमेतखिलारिपुनपुनाशनेत्रात्रतत्वयासमरमद्धनितेविहृत्वा
नीतादि वंरिपुगणांभयमष्यषास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवतेमस्ते
शेलेतपाहिनोदेविविपाहिख गेननांम्बिक ।
घण्टास्वनेपःपाहिचापज्यानिःस्वनेनच ।२४
प्राच्यांरक्षप्रतीच्चचडिकेक्षदक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशस्यषत्तरस्तांतथेश्वरि ।२५
सौम्यानिपानिरूपाणित्रलोक्येबिचरंतिते ।
यानिचान्यतघोराणि रैक्षाम्षास्तथाभुवम् ।२६
खेगशूलगदादीनियानिचास्त्राणितेम्बिचे ।
करपल्लवसंगीनितैरस्मान्मक्षसर्वतः ।२७
एवमस्तुतासुरैब्बिकुसुमैर्नन्दभवैः ।
अचिताजगांधात्रींतयागधानुलेषनैः ।२८

हे देवी ! आपका पराक्रम किसी अन्य के साथ तुलना नहीं किया जा सकता । आपका रूप शत्रुओं को भयदाता एवं अत्यन्त अनुपम है । ऐसा अनुरूप स्वरूप स्वर्ग, पृथ्वी व पाताल में अन्य किसी का नहीं । हे अम्बिके ! आपका हृदय दशापूर्ण तो है ही, साथ ही रण क्षेत्र में निष्ठुरता पूर्ण नहीं है, ऐसा समस्त तीनों लोकों में आप ही हैं।२२। हे देवी!

आपने शत्रुओं का विनाश करके तीनों लोकों की रक्षा की है, युद्ध क्षेत्र में उन्हीं शत्रुओं को निहित करके स्वर्ग प्रदान किया एवं उन्हीं मदमत्त दैत्यों के कारण हमारा भय भी समाप्त हो गया, हे देवि ! आपको नमस्कार है ।२३। हे दुर्गे शूल द्वारा हमारी रक्षा करें । हे अम्बिके खड्ग द्वारा हमारी रक्षा करे हे देवि ! घण्टा एवं धनुष प्रत्यंचा केशब्द द्वारा हमारी रक्षा करें ।२४। हे चण्डिके ! शूल घुमाकर आप हमारी पूर्व पश्चिम, उत्तर व दक्षिण में रक्षा करें ।२५। लोकों में विचरण वाले आपके जितने सौम्य रूप एवँ भयंकर रूप हैं, उसके द्वारा हमारी व मृत्युलोक की रक्षा कीजिए ।२६। हे अम्बिका देवि ! अपनेकरकमलों में सुशोभितखड्ग, शूल, गदा आदि अस्त्रों द्वारा चारों ओर हमारी रक्षा करें ।२७। ऋषि ने कहा—सुरगणों ने इस प्रकार उस देवी का गुणगान किया और नन्दन कानन में उत्पन्न हुए पुष्प दिव्य गन्ध और धूपादि के द्वारा भक्ति पूर्वक उन जगज्जननी की पूजा की ।२८।

भक्त्यासमस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यधपै सुधुपिता ।
प्राहप्रसादसुमुखासमस्तान्प्रणत्तान्सरान् ।२९
ब्रियतांत्रिदशाः सर्वेयदस्मत्तोभिवांछतम् ।
दराम्यहमतिप्रीत्यास्तावैरेक्षिःसुपूजिता ।३०
कर्त्तव्यमपरं यच्चदुष्करं तन्नाविद्महे ।
इत्वाकर्ण्य वाचोदेव्य प्रत्यूचुस्तेदियोकूसः ।३१
भगवत्याकृतसर्वैनेकिंचिदवशिष्यते ।
यदयंनिहुतः शत्रूरस्माकमहिषासुरः ।३२
यनिचापिवलेदेयस्यन्वयाकंमहेश्वरि ।
संस्मृतासंस्मृतात्वनोहिसांभाः यस्मापदः ।।३३
यश्चसत्यंम्तवैरेभिस्तास्तोष्यत्यतलानने ।
तस्यवित्ताद्धिविभवर्धनदारादिसंपदाम् ।
वृद्धयेस्मत्तप्रपन्नत्वंमवेथाः सर्नदाभ्यिके ।३४
इथिप्रसादितातेवैर्जगतोर्थेतथात्मनः ।
तथेत्युक्त्वाभद्रकालीभभूवांतर्हितानूप ।३५

इत्येतत्कथितंभूपसभूतसायथापुरा ।
देवीदेवशरीरेभ्योजगत्त्रहितैषिणी ।३६
पुनश्चगोरीदेहात्सासमुद्भुतायथाभवत ।
वधायदुष्टदैत्यानांतथाशु भनिशुभयो ।३७
रक्षणायचलोकामादेवानामुपकारिणी ।
तच्छृणष्वमयाख्यातयथावत्कथयामिते ।३८

उस समय वर प्रदान करने की इच्छा से उनका मुख मण्डल अत्यन्त शोभायमान हो गया और उन्होंने सभी विनीत देवताओं के प्रति कहा ।२६। देवी ने कहा—हे त्रिदशगण ! अपना इच्छित वर मुझसे माँगो तुम्हारे स्तवन से मैं परम संतुष्ट हूँ, इसलिए प्रीति सहित वर प्रदान करूंगी ।३०। इस महिषासुर का वध करने के पश्चात् क्या करना है, यह मैं नहीं जानती, अब तुम्हें जो कुछ दु साध्य हो, वही मुझे बताओ, देवी के ऐसे वचन सुनकर, देवगण बोले ।३१। देवताओं ने कहा—हे भगवती ! आपने हमारे हितार्थ इस प्रश्न शत्रु महिषासुर को मार डाला इससे हमारा सम्पूर्ण कार्य सिद्ध हो गया है, अब कुछ कार्य शेष नहीं रहा ।३२। फिर भी यदि आप वर देने की इच्छा ही करती हो तो हमें यही वर दीजिए कि जब कभी हम आपका स्मरण करें तभी आप हमारे सङ्कट को दूर करें ।३३। जो मनुष्य हमारे इस स्तोत्र द्वारा आपकी स्तुति करें उनको आप प्रसन्न होकर ज्ञानाधिक्य ऐश्वर्य युक्तधन, पत्नी आदि वृद्धि करना, क्योंकि आप सब कुछ देने में समर्थ हैं ।३४। ऋषि ने कहा हे राजन् ! देवताओं द्वारा विश्व के हितार्थ प्रसन्न की हुई भद्र काली 'ऐसा ही होगा कहकर अन्तर्द्धान हो गई ।३५। देवताओं के देह से जिस प्रकार विश्व का हित करने वाली वह देवी पूर्वकाल में आविर्भूत हुई, वह तुमसे वर्णन किया ।३६। अब जिस प्रकार भगवती गौरी के शरीर से उत्पन्न होकर शुम्भ और अन्य असुरों का नाश ।३७। लोकरक्षार्थ और देवोपकारार्थ किया, उसे यथावत् तुम्हारे प्रति कहता हूँ श्रवण करो ।३८।

७८-देवी से शंभू के दूत का कथन

पुराशुम्भनिशुम्भभ्गामसुराभ्यांशचीपते ।
त्रैलोक्यंयज्ञभागाश्चदेतामदवलाश्रयात् ।१
तायेवसूर्ययांतद्वदधिकारंतथादवम् ।
कोवेरमयाम्यंचचक्रातेवरुणस्यच ।२
यावेवपवनर्द्धिचचक्रतुर्वह्निकर्मच ।
अन्येषाँचाधिकारारान्स: स्वयमेवाधितिष्ठति ।
ततोदेवाविनिर्धूताभ्राज्या: पराजित: ।३
हृतधिकारास्त्रिदशास्ताभ्साँसर्वेनिराकृता: ।
महासुरभ्यांतांदेवीसस्मरत्यपराजिताम् ।४
तस्यास्माकवरादत्तोयथापत्सुस्मृताखिला: ।
भवताँनाशयिष्यामितत्क्षणत्परमापद: ।५
इतिकृत्वा तिदेवाहिमवंतंनगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्रततोदेवीविष्णुमायाँप्रतुष्टवु: ।६

ऋषि ने कहा—पुराकाल की बात है शुम्भ-निशुम्भ नामक दो असुरों ने अपने अहबल से शचीपति देवेन्द्र के त्रैलोक्य का राज और सम्पूर्ण यज्ञ भाग को छीन लिया ।१। उन निशुम्भ ने चन्द्र सूर्य, कुबेर, वरुण के अधिकार को अपने हाथ में लिया और उस पवन तथा अग्नि का कार्य भी स्वयं करने लगे तथा सभी देवताओं के पदों पर उन्होंने अधिकार कर लिया ।२। फिर दोनों घोर असुरों के द्वारा अधिकार से भृष्ट और तिरस्कार को प्राप्त हुए, राज्य से हीन एवं पराजित ।३। देवगण अपराजिता भगवती का स्मरण करने लगे ।४। देवी ने उन्हें विपद्काल में स्मरण करते ही विपत्ति नष्ट करने का वर दिया था, अब घोर विपत्ति आ गई, इसलिये उन्हीं की शरण में जाना उचित है ।५। इस प्रकार विचार करके देवतागण पर्वत श्रेष्ठ हिमालय में जाकर विष्णु की उन माया का स्तव करने लगे ।

नामोदेध्यैमहादेव्यैशिवायैसत्ततनम् ।
नमः प्रकृत्यैभद्राथैनियताः प्रणताः स्मताम् ।७
रौद्रायैनमोनित्यायैगौर्य्यैधात्र्यैनमोनमः ।
नमोजगत्प्रतिष्ठायदेव्यैकृत्यैनमोनमः ।८
ज्योत्स्नायचद्ररूपिण्यैसुखायैसततनम्ः ।
कल्याण्यैप्रतामृध्यै सिद्ध् तेकर्य्यनमोनमः ।९
नैऋर्त्यैभूभृर्यालम्य्यैतेनमोनमः ।१०
दुर्गायैदुर्गपारायैसारायैसवमारिणि ।
ख्यात्य तथैवकृष्णायैधूम्रायैसततैनमः ।११
अतिसौम्यातिरोद्रायनमस्ततैनमः ।
नमोजगत्प्रतिष्ठाययदेव्यैत्क्रयनमोनमः ।१२
यादेवीसर्वभूतेषुविष्णुमायेतिशब्दिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमतस्तस्यैनमोनमः ।१३
यादेवीसर्वभूतेषुवुद्धिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ।१४

देवताओं ने कहा—देवी को नमस्कार है, महादेवी, शिव, प्रकृति और भद्रा को बारम्बार नमस्कार है, हम विनीत होकर उन भगवती को बारम्बार नमस्कार करते हैं ।७। रोद्रा, निन्द्रा, गौरी, धात्री जगत् की प्रतिष्ठा और कृत्या को हमारा बारम्बार नमस्कार है ।८। हम उन प्रकाश स्वरूप चन्द्ररूपा तथा परमानन्द स्वरूपिणी देवी को नमस्कार करते हैं, उन कल्याणि, बुद्धि रूपिणी एवं साक्षात सिद्धि को नमस्कार करते हैं ।९। नैऋति स्वरूप और राजाओं की राज्य-लक्ष्मी स्वरूपादेवी को नमस्कार है । शर्वाणि, दुर्गा, दुर्गजरा, सारा-सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और घूमा स्वरूपिणी भगवती को नमस्कार करते हैं ।१०। जो अति सौम्य तथा अत्यन्त रौद्र है, उनको हम विनय पूर्वक नमस्कार करते हैं, जग-प्रतिष्ठा रूपिणी एवं कृति स्वरूपा देवीको नमस्कार करते हैं ।११। जो सब प्राणियों में विष्णुमाया नामसे प्रसिद्ध है उनको बारम्बार नमस्कार है ।१२। सब प्राणियों में चेतना रूप वाली देवी को

हम नमस्कार करते हैं ।१३। सब प्राणियों में बृद्धि रूप से स्थित रहने वाली भगवती को वारम्बार नमस्कार है ।१४।

यादेवीसर्वभूतेषुनिद्रारूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्तैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।१५
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।१६
यादेवीसर्वभूतेसुच्छायारूपेणसंस्थितां ।
नमस्तस्यैनमस्मस्तयैनमस्तस्यैनमोनमः ।१७
यादेवीसर्वभूतेषुशक्तिरूपेणसंस्थिताः ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।१८
यादेवीसर्वभूतेषुतृष्णारूपेणसँस्थिताः ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।१९
यादेवीसर्वभूतेषुक्षांतिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२०
यादेवीसर्वभूतेषुजातिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२१

सब प्राणियों में निद्रारूप से स्थित देवी को वारम्बार नमस्कार हैं ।१५। जब जीवों में क्षुधा रूप से स्थित रहने वाली देवी को वारम्बार नमस्कार है ।१६। जो देवी सब भूतों में छाया रूप से अवस्थित रहती है, उनको नमस्कार, नमस्कार है ।१७। सब प्राणियों में शक्ति रूप से विराजमान देवी को अनेक बार नमस्कार ।१८। सब प्राणियों में तृष्णा रूप से प्रतिष्ठित भगवती को वारम्बार नमस्कार ।१९। सब प्राणियों में शान्ति रूप से अवस्थित देवी को नमस्कार ।२०। सब जीवों में जाति रूप से निवास करने वाली देवी को नमस्कार ।२१।

यादेवीसर्वभूतेषुलज्जारूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२२
यादेवीसर्वभूतेषुशांतिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२३

यादेवीसर्वभूतेषुश्रद्धारूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२४
यादेवीसर्वभूतेषुकान्तिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२५
यातेवीसर्वभूतेषुलक्ष्मीरूषेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२६
यादेवीसर्वमूतेषुधृतिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनसस्तस्यैनमोनमः ।२७
यातेवीसर्वभूतेषुवृत्तिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ।२८

जो सब प्राणियों में लज्जा रूप से रहती है, उन देवीको बारम्बार नमस्कार ।२२। सब प्राणियों में शान्तिरूप में अवस्थान करने वाली देवी को नमस्कार ।२३। सब जीवों में श्रद्धारूप से स्थित भगवती को नमस्कार ।२४। सब जीवों में काँतिरूप से विराजमान देवी को नमस्कार ।२५। सब जीवों में धृति रूप से अवस्था से करने वाली महामाया को नमस्कार ।२६। सब प्राणियों में वृत्ति रूप से अवस्थित देवी को नमस्कार ।२७।

यादेवीसर्वभूतेषुस्मृतिरूपेणसंस्थिताः ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।२९
यादेवीसर्वभूतेषुदयारूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।३०
यादेवीसर्वभूतेषुतुष्टिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनलस्तस्थैनमस्तस्यैनमो नमः ।३१
यादेवीसर्वभूतेषुतुष्टिरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।३२
यादेवीसर्वभूतेषुतेषुमातृरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः ।३३

यादेवीसर्वंभूतेपुभ्रांतिरूपेणसंस्थिता: ।
नमस्तस्यै नमस्यस्यैनमस्तस्यैनमोनम: ।३४

सब प्राणियों में स्मृति रूप से अवस्थित देवी को नमस्कार ।२६। सब प्राणियों से दया रूप से अधिष्टित देवी को नमस्कार है ।३०। सब प्राणियों में दया रूप से स्थित देवी को नमस्कार ।३१। सब जीवों में तुष्टि रूप से स्थित भगवती को नमस्कार ।३२। जब जीवों में पुष्टरूप से निवास करने वाली देवी को नमस्कार ।३३। सब प्राणियों में मातृ रूप से स्थित देवी को नमस्कार है ।३४। सब प्राणियों में भ्रांति रूप से अवस्थित देवी को नमस्कार ।३५।

इन्द्रियाणामधिष्ठात्रीमूतानखिलेषुया ।
भूतेषुसपतव्याप्त्योंतस्पयदेव्यौममोनम: ।३६
वितिरूपैंगयाकृन्स्नसेनाव्द्या प्यस्थिताजगत् ।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनम: ।६७
स्मृतासुरैपूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथासुरेन्द्रणदिनेशसेविता ।
करोतुमान: शुभहेतुरीब्वराभुभानिभद्राण्यभिहतु चापद:।३८
यासांप्रतचोद्धतदेत्यतापितैरस्माभिरीशाच्चसुरैनमस्यते ।
याचस्मृतातत्क्षणमेयहतिन सर्वारदोभक्तिविनम्रमूर्तिभि:।३९
एवंस्तवाभिषुक्तानांदेवानांतत्रपार्वतें ।
स्नातुमभ्याययौतोयेजाह्नव्थानृपनन्दन ।४०
सोऽब्रवीत्ताहुराप्सम्रुर्भवद्भिस्तूयतेत्रका ।
शरीरकोशतश्चास्या: वमुद्भूताब्रवोच्छिवा ।४१
स्तोत्रं ममैतात्क्रियतेशुभदैत्यनिराकृतै ।

सब जीवों और इन्द्रियों की अधिष्ठात्री और सब प्राणियों में व्याप्त रूप से विद्यमान देवी को नमस्कार ।३६। चैतन्य रूप से सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त रहकर अधिष्ठान करने वाली भगवती को बारम्बार नमस्कार है ।३७। पुराकाल में इच्छित को प्राप्त करके हमने जिन देवी

की स्तुति और जो मंगलों के करने वाली है, उन्हीं भगवती को; प्रचण्ड असुरों से पीड़ित हुए हम नमस्कार करते हैं, भक्ति से झुकते हुए देह वाले जब हम आपका स्मरण करते हैं तब तो तुरन्त ही हमारी विपत्ति को दूर करती हैं वह देवी हमारी विपत्ति को नष्ट करके सब प्रकार से हमारा मङ्गल करें ।३७-३६। ऋषि ने कहा-हे नृप पुत्र ! देवगण इस प्रकार से स्तुति कर रहे थे तभी भगवती पार्वती गङ्गा वह पार्वती जी देवताओं से पूछने लगीं—हे देवगण ! तुम किस की स्तुति कर रहे हो, इतनी वार्त्ता के साथ ही पार्वती जी के देह कोश से भगवती शिवा उत्पन्न होकर बोली ।४१। युद्ध में निशुम्भ द्वारा पराजित और शुम्भ द्वारा निष्कासित यह देवगण मेरी स्तुति कर रहे हैं ।४२।

शरीरकोशाद्यत्तस्या पार्वत्यानिः सृताँविका ।
कौशिकीतिसमस्तेषुततोलोकेषुगीत ।४३
तश्याँकिनिर्गतायांकृष्णामूत्सापिपावती ।
कालिकेतिसमाख्याताहिमाचलकृताहृय ।४४
तोम्बिकांपररूपविभ्राणांसुमनोहरम् ।
ददर्शंचन्डमुण्डश्चभृत्यौशंभयोः ।४५
ताभ्यशुम्भायचाख्याताअतीवसुमनोहरा ।
काप्यास्तेस्त्रामहाराभासयतीहिमाचलम् ।४६
नैवताहक्काचिद्रूपहक्केनांछिदुत्तमम् ।
ज्ञायतांकाप्य यौदेवीगृह्यताचासुरेश्वरः ।४७
स्त्रीरत्नमविगीद्योतयतदिशास्त्विषा ।
सातुतिष्टतदैत्येन्द्रताभवान्द्रष्टुमर्हति ।४८
यानिरप्नानिमणयोगजाश्वातीनिवैप्रभो ।
त्रैलोक्येतुसमस्तानिसाँ ततानितेगृहे ।४६

पार्वती जी देह कोश से उत्पन्न होने के कारण यह शिवा 'कौशिकी' नाम से प्रसिद्ध हुई ।४२। जब पार्वती जी के देह से वह कौशिकी देवी निकल गई तब उन्होंने कृष्ण वर्ण धारण करके कालिका

नाम से प्रसिद्ध होकर हिमाचल में निवास किया ।४४। तदुपरान्त अम्बिका ने अत्यन्त मनोहर रूप धारण किया और शुंभ निशुंभ असुरों के मृत्यु चण्ड मुण्ड ने उस रूप को देखा ।४५। तथा चण्ड-मुण्ड शुम्भासुर के पास गये और उनसे बोले-हे महाराज ! एक अत्यन्त रूपवती स्त्री हिमाचलको सुशोभित करती हुई वहाँ रह रही है ।४६। ऐसा श्रेष्ठ स्वरूप किसी ने भी न देखा होगा, इसलिए यह स्त्री कौन है, इसका पता करके, उसे ग्रहण कर लीजिये ।४७। वह सुन्दरांगी स्त्रियों में रत्नरूप है। असुरेन्द्र ! वह स्त्री अपने शरीर की काँति से सब दिशाओं को प्रकाशित कर रही है, आपको उसे अवश्य देखना चाहिए ।४८। हे प्रभो ! तीनों लोकों में हाथी, घोड़े, रत्नादिकाओं सर्वश्रेष्ठ धन है, वह सभी आपके घर में सुशोभित हैं ।४९।

ऐरावतः समानीतोगजरत्नपुरंदरात् ।
पारिजातरुश्चायतथैवोच्चैः श्रवाहयः ।५०
बिमानहंसंयुक्तमेतत्तिष्ठस्तिगणे ।
रत्नभूतमिहानीतयदासोद्ध धसोद्भतम् ।५१
निधिरेषसाद्य समाँगीतोधनेश्वरात् ।
किंजल्किनोददौचाब्धिर्मालानपंकजाम् ।५२
छत्रतेवारुणगेहेकांचनस्राबितिष्ठिति
तथायस्यन्दनवरोयः पुरः सीतत्प्रजापतेः ।५३
मृत्योरुत्क्रान्तिदानात्रश्चक्तिरीशत्वंयात्हता ।
पाशः सलिलराजस्यभ्रांतुस्तवपरिगृहे ।५४
निशुंभस्याब्धिजाताश्चसमस्तारत्नजातयः ।
ह्वनिश्चापिददौतुभ्यमग्निः शीचेचवाससा ।५५
एंथैद्ररत्नोलिसमस्तान्याष्द्रतानित ।
स्त्रीरत्नमेषाकल्याणीत्वायाकस्मान्वगृह्यते ।५६

गजरत्न ऐरावत, सुरम्भ पारिजातवृक्ष, और उच्चैश्रव अश्व, इन्द्र के यहाँ से लिया गया ।५०। विधाता का हंसयुक्त रत्न रूप विमान भी

यहाँ लाकर आपके आँगन में स्थित किया गया ।५१। महापद्म नाम की यह निधि कुवेर से और किञ्जल्किनि नामक कभी भी न मुरझाने वाली पंकजमाला भी समुद्र से प्राप्त की गई ।५२। वरुणका काँचनस्त्रादि छत्र और प्रजापति का यह श्रेष्ठ रथ भी यहाँ विद्यमान है ।५३। यम की मरणादियनी शक्ति भी आपने छीन ली और आपके भाई निशुंभके यहाँ वरुण के पाश ।५४। और समुद्र से प्राप्त हुए सब रत्न विद्यमान हैं, अग्नि ने उनको पवित्र करके वस्त्र एवं उत्तरीय दिया है ।५५ हे असुरेन्द्र ! इस प्रकार यह सभी रत्न आपने ग्रहण किये हैं तो इस स्त्री रत्न को ही ग्रहण क्यों नहीं करते ? ।५६।

निशम्येतियचःशुभः सतदाचण्डमुण्डपोः ।
प्रेसयामासुग्रीवद्तंदेव्यामहाँसुरः ।५७
इतिचेतिचवक्तश्यासागत्वावचनान्मम ।
यथाचाभ्यैतिसप्रीत्यातथाकार्यंत्वयालघु ।५८
सतत्रगत्वायत्रास्तेशैलोद्देशेतिशोभने ।
तांचदेवींततः प्राहश्लक्ष्णंमधुरयागिरा ।५९
देवदैत्येहृत्वरशुः भम्त्रैलोक्येपरमेश्वरः ।
दतोहप्रेषितस्तेनत्वतसकाशमिहागतः ।६०
अव्याहताज्ञः सर्वासुयः सदादेवयोनिषु ।
निर्जिताखिलदैत्यारिःसयदाहसशणुष्वतत् ।६१
ममत्रैलोक्यमखिलंसमदेवाशानुगाः ।
यज्ञभागानहंमवाँनुपाश्नामिपृथक्पृथक् ।६२
त्रैलोक्येवरत्नानितमवश्यान्यशेषतः ।
तथैवगजरत्नचहृतदेवेन्द्रवाहनम् ।६३

ऋषि ने कहा—चण्डमुण्ड के वचन सुनकर महादैत्य शुम्भ ने अपने सुग्रीव नामक को देवी के पास भेजा ।५७। शुम्भ बोला— तुम वहाँ जाकर ऐसी बात करना जिससे वह अत्यन्त प्रसन्न होकर शीघ्र ही यहाँ आकर उपस्थित हो जाय ।५७। जिस अत्यन्त सुशोभित पर्वत-

प्रान्त में पार्वती जी निवास कर रही थीं, उस स्थान में पहुँच कर वह दूत उनसे बोला ।५९। दूत ने कहा—हे देवि ! दैत्येन्द्र शुम्भ तीनों लोकों के ईश्वर हैं उन्होंने मुझे अपने दूत रूप से तुम्हारे पास भेजा है, इसी लिये मैं आया हूँ ।६०। उनकी आज्ञा सब देवताओं को अटल रूप से मान्य है, क्योंकि उन्होंने देवताओं को परास्त कर दिया है, अब उन्होंने जो कहा है, उसे मुझ से श्रवण करो ।६१। उन्होंने कहा है—तीनों लोक मेरे हैं, सभी देवता मेरे वश में और मेरे अनुगत हैं, समस्त यज्ञ के भाग को भी मैं ही भोगता हूँ ।६२। तीनों लोकों के सम्पूर्ण मेरे वशीभूत हैं, सभीश्रेष्ठ हाथी तथा गजरत्न ऐरावत भी मैंने ले लिया हैं ।६३।

क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नममामरैः ।
उच्चैःश्रवसंज्ञतुप्रणिपत्यसमर्पितम् ।६४
यानिचान्यानिदेवेषुगन्धर्वेषुरगेषुच ।
रत्नभूतानिभूतामिमनिथ्येवशोभकृः ।६५
स्त्रीरत्नभूतांत्वांदेविलोकेमन्यामहेवयम् ।
सात्वमस्मानुपागच्चयातोरत्नभुजोवयम् ।६६
मांवाममानुजवापिनिशुंभमुरुविक्रमम् ।
भचत्वंचचलापांगिरत्नभूतासिवैयतः ।६६
परमैश्वर्यमतुलंप्राप्स्यसेमत्परिग्रहात् ।
एतद्बुद्धयासमालोच्यमत्परिग्रतांव्रज ।६८

समुद्र मंथन से निकला हुआ उच्चैश्रवा घोड़ा भी देवताओं ने विनय पूर्वक मुझे, भेंट किया ।६४। देवताओं और नागों के सभी रत्न इस समय मेरे ही हैं ।६५। हे देवी ! लोक में तुम्हें हम स्त्री-रत्न मानते हैं, हम सभी रत्नों के भोगने वाले होने से, तुम रत्न स्वरूपा को हमारे घर आना चाहिए ।६६। हे चंचल कटाक्ष वाली ! तुम मुझे या मेरे अत्यन्त पराक्रमी भ्राता निशुम्भ को स्वीकार करो, क्योंकि तुम रत्न स्वरूप हो ।६७। मेरी कामना करने से अतुलनीय परमेश्वर्य की प्राप्ति होगी, इन बात को बुद्धिसे विचार कर मेरा ही चिन्तन करो ।६८

दुर्गाभगवतीभद्रायययेदधार्यतेजगम् ।६९
सत्यमुक्तत्वयातात्रमिथ्याकिंचित्वयोदितम् ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुंभोनिश भश्चापिताहृशः ।७०
किंत्वत्रयत्प्रतिज्ञातमिथ्यातत्क्रियेकथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञायाकृतापुरा ।७१
योम जयतिसंग्रामेयोमेदर्पव्यपोहति ।
योमेप्रतिबलोलोके मेभर्त्ताभविष्यतिः ।७२
तदागच्छतशुंभोत्रशुंभोवामहासुरः ।
मांजित्वाकिंचिरेथात्रपाणिगहृणापुमेलघु ।७३
अवलिप्तासिमैवणवदेविब्रूहममाग्रतः ।
त्रैलोक्येकः पुमाँस्तिष्ठदग्र शुंभनिशुम्भयोः ।७४

ऋषि ने कहा—दूत की बात सुनकर विश्व को धारण करने वाली भगवती दुर्गा ने गम्भीर भाव पूर्वक कुछ हँस कर कहा ।६९। देवी बोली—हे दूत ! तुम्हारा कथन यथार्थ है। शुंभ तीनों लोकों के स्वामी हैं और निशुम्भ भी उन्हीं के तुल्य है ।७०। किन्तु मैंने एक प्रतिज्ञा की हुई है, उसे किस प्रकार तोड़ दूं ? अल्प बुद्धि के वश में होकर जो प्रतिज्ञा मैंने की है उसे श्रवण करो ।७१। जो पुरुष युद्ध में मुझे परास्त करेगा, जो मेरा दर्प खण्डित करेगा और जो मेरे समान बलवान् होगा, वही पुरुष मेरा पति होगा ।७२। अब वह शुम्भ या निशुम्भ यहाँ आकर उनमें जो समर्थ हो वह मुझे परास्त करके ग्रहण करलें विलम्ब न करें ।७३। दूत ने कहा-हे देवि ! तुम्हें अत्यन्त गर्व है, मुझसे ऐसा न कहो, शुम्भ-निशुम्भ का सामना तीनों लोकों में कौन कर सकता है ।७४

अन्येषामपिदैत्यानासर्वेदेवनवैयुधि ।
तिष्ठन्तिसंमुखादेविकिंपुनः स्त्रीत्वमेकिका ।७५
इन्द्राद्याः सकलादेवास्तथुर्येषानसंयमे ।

शुम्भादीनांकथतेषु स्त्रीप्रस्यसिसंप्रमुखम् ।७६
सात्व गच्छमयेवोक्ताश्र्वशुम्भनिशुम्भाः ।
केशाकर्षणनिद्धुतगौरवामागमिष्यसि ।७७
एवमेतद्बलोशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किंकरोमिप्रतिज्ञामेयदनालोचितापुराः ।७८
सत्वगच्छमयैवोक्तदेतत्सर्वमाहृतः ।
तदावक्ष्वाफुरेन्द्रायशचयुक्तं करोतुतत् ।७९

शुम्भ निशुम्भ का तो कहना ही क्या है, उसके अनुचर दैत्यों के सामने ही सब देवता मिलकर भी नहीं ठहर सकते तो तुम स्त्री होकर उनसे किस प्रकार संग्राम करोगी ? ।७६। इसलिये तुम मेरी बात मानकर शुम्भ-निशुम्भ के पास चलो, अन्यथा मैं ही तुम्हारे केश पकड़कर घसीट ले चलूंगा जिससे तुम्हारा सब गर्व चूर्ण हो जायगा ।७७। देवी ने कहा—हे दूत ! शुम्भ निशुम्भ दोनों ही निःसन्देह ऐसे महाबलवान हैं, परन्तु क्या करूं, पहिले इस बात को जानकर अल्प बुद्धि से ऐसी प्रतिज्ञा कर बैठी ।७८। इसलिए तुम वहाँ जाकर मैंने जो कहा है, वह आदर पूर्वक उससे कहो इसके पश्चात् जो कुछ उचित समझें, वह करेंगे ।७९।

७८—धूम्रलोचन वध

इत्याकर्ण्य वचोदेव्याः सदूतोमर्षपूरितः ।
सामचष्टेसमागम्यदेत्यराजायविस्तरात् ।१
तस्यदतस्यद्वाक्यमाकर्ण्यासुराटततः ।
सक्रोधः प्राहदैत्यानामधिपधूम्रलोचनम् ।२
हेधुम्रलोचनाशुत्वंस्वसैन्यपरिवारितः ।
तामानयबलाद्दुष्टाँकेशाकर्षणविह्वलाम् ।३
तत्परित्राणादः कश्चिद्य देवोतिष्ठतेपर ।
संहतश्योमरोवापियक्षीगन्धर्वएववा ।४
तेनाज्ञप्तस्तत शीघ्रं सदैत्योधूम्रलोचन. ।

वृतः षष्टयासहस्त्राणामसुराणांद्रुतंतयौ ।५
सदष्टवांतांततोदेवोतुहिनाचलसंस्थिताम् ।
जगादोच्चैः प्रयाहीतिमलशुम्भयोः ।६
नचेत्प्रीत्याद्यभवतीमद्भर्त्तारमुपैष्यसि ।
ततोवलान्नयाम्येषशाकवर्षशहिट्वलाम् ।७

ऋषि ने कहा—देवी के यह वचन सुनकर दूत अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसने दैत्येश्वर के पास जाकर सब वृतान्त उन्हें सुनाया ।१। दूत की बात सुनकर दैत्यराज शुम्भ ने क्रोध पूर्वक दैत्यों के अधिपित धूम्रलोचन से कहा ।२२। हे धूम्रलोचन ! तुम सेना सहित वहाँ जाकर उस दुष्टा के केश पकड़कर यहाँ घसीट लाओ ।३। यदि कोई उनकी रक्षा में तत्पर हो,तो वह देवता, यक्ष, गन्धर्व कोई भी हो उसे मार डालो ।४। ऋषिने कहा शुम्भ की आज्ञा सुनकर धूम्रलोचन साठ हजार दैत्यों को साथ लेकर शीघ्र ही वहाँ पहुँचा ।५। और हिमाचल में बैठी हुई देवी से उस धूम्रलोचन ने उच्च स्वर से कहा-शुम्भ निशुम्भ के पास चलो ।६। यदि तुम स्वेच्छा से उनके पास न चलोगी तो मैं तुम्हारे केश पकड़ कर बल-पूर्वक वहाँ ले चलूँगा ।७।

दैत्यश्वरेणप्रहितोबलवादान्वसंबृतः ।
बलान्नयसिमामेवततः किंतेकरोक्ष्यहम् ।८
इत्युक्तः सोभ्यदावक्तामसुरोधूम्रलोचनः ।
हुँकारेणैवतंभस्मसाचकारांविकामतः ।९
अथक्रुद्धं महासैन्यमसु राणांतथाम्बिका ।
ववर्षसायकैष्तथाशक्तिपरश्वधैः ।१०
ततोधुटसतः कोपात्वानादसुभैरवम्ः ।
पपातासुरसेनायांसिहोदेश्यास्तुवाहनः ।११
कःश्चित्करप्रहारेणत्यानास्येनचापरान् ।
आक्रम्यरणेमान्यान्निजघानमहासुरान् ।१२

केषांचित्पाटयासासनखैः कोष्टानिकेसरी ।
तथातलप्रहारेणशिरांसिकृतवान्पृथक ।१३
विच्छिन्नावाहुशिरसः कृताँस्तेनवतथापरे ।
पपौचरुधिर कोष्ठादम्येषन्धुत केसरा ।१४

देवी ने कहा—तुम्हें दैत्यों के अधिपति शुम्भ ने यहाँ भेजा है, तुम स्वयं बलशाली और सेना के सहित यहाँ आये हो, यदि तुम बल पूर्वक ले जाना चाहोगे तो भी मैं तुम्हारा क्या कर सकूँगी ? ऋषि ने कहा- देवी की बात सुनते ही धूम्रलोचन उनकी ओर दौड़ा परन्तु देवी के हुंकार से ही भस्म हों गया ।८-६। तब उसकी सेना ने क्रोध करके देवी के ऊपर तीक्ष्ण वाण, परशु और शक्ति की वर्षा की ।१०। यह देखकर देवी के वाहन सिंह ने क्रोध से कंपायमान होकर भयंकर गर्जन किया और असुर-सेना पर टूट पड़ा ।११। उसने किसी को पंजे से, किसी को होठ से आक्रमण पूर्वक मारा ।१२। किसी का हृदय नख से चीर दिया, किसी का मस्तक हथेली के प्रहार से, शरीर से अलग किया ।१३। अनेक असुरों के वाहु और मस्तक छिन्न-भिन्न कर डाले और वहुतोंका रक्त पान कर लिया ।४।

क्षणेनतद्बलसर्वेक्षयंन तमहात्मना ।
तेनकेसारिणादेव्यावाहनेनातिकोपिना ।१५
श्रुत्वातमसुरंदैव्यानिहतंधूम्रलोचनम् ।
वलचक्षयितकृत्स्नदेवीकेसरिणातता ।१६
चुकोपदैत्याधिपतिः शुम्भ प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञापयामासचतौचण्डौमहाखरौ ।१७
हेतण्डहेमुन्ढबलैबैहुभिः पारिवारितौ ।
गच्छततत्रगत्वाचसासमानीयतांलघु ।१८
केशेश्वाकृष्लवद्धावापदिवः समयोयुधि ।
तदाशेषायुधैः सवेरसुरैर्विनिहन्यताम् ।१९
घत्पुक्तासातदादेवोगंभीराः स्मिताजगौ ।

तष्याहतायांदुष्टायाँसिहेचयिनिपातिते ।
शीघ्रमागम्यताबद्धागृहीत्वातामथाक्षिवकाम् ।२०

क्षण भर में ही उस सिंह ने असुरों की उस विशाल सेना को नष्ट कर डाला ।१५। धूम्रलोचन का देवी के द्वारा और सम्पूर्ण सेना का उनके वाहन सिंह द्वारा माराजाना सुनकर ।१८। दैत्येश्वर शुम्भ अत्यन्त क्रोध में भर गया, उसके होठ फड़कने लगे और उसने चण्ड-मुण्ड को इस प्रकार आज्ञा दी ।१३। हे चण्ड ! हे मुण्ड ! तुम बहुत-सी सेना लेकर वहाँ जाओ उसी स्त्री को तुरन्त पकड़ लाओ ।१८। उसके केश पकड़ कर खींच लाओ या उसे बाँध कर ले आओ, यदि ऐसा न कर सको तो पूर्ण वल लगाकर उसका वध कर देना ।१६। उसको और उसके सिंहको मार कर उसी दशा में यहाँ ले आओ ।२०।

७६-चण्ड मुण्ड वध

आज्ञप्तास्तेततोदैंत्याश्चडमुंण्डपुरोगमा ।
चतुरवलोतेतायथरभ्युद्यतायुधाः ।1
ददृशुस्तेततोदेवीमीपद्धासाँव्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरिशैभेन्द्रगेमहतिकांचने ।२
तेपष्टवाताँससादातुमुद्यमचक्र रुद्यताः ।
आकृष्टचापसिधरांस्तथन्येतत्समीपगाः ।३
ततः कोपचकारोच्चरबिकातानरीन्यति ।
कोपेनचास्यावदनमषीवर्णमभूत्तदा ।४
भृकुटीकुटिलात्तस्याललटफलकाद्द्रूतम् ।
कालीकरालवदनाविनिष्क्राँतासिपाशिनी ।५
विचित्रखट्वाँगधराँनरमालाविभूषणा ।
द्वींपिचर्मपरीधानाशुष्कमाँसातिभैरवा ।६
अत विस्तारवदनाजिह्वावलनभषीणा ।
निमग्नारक्तनयाननादापूरितदिङ्मुखा ।७

सावेगेनाभिपतिवाघातयतीमहासुरान् ।
सौन्येतत्रसुरारोणामभक्षयततद्जलम् ।८

पार्ष्णिग्राहांकुशग्राहयाधघन्टासमन्विताम् ।
समादायेकहस्तेनमुखेचिक्षेपवारणान् ।६

तथैवयोधतुरगैरथंसारथिनासह ।
निक्षिप्यवक्त्रेदशनैश्चर्वयत्सभैरवम् ।१०

एकजग्राहकेशेषुग्रीवायामथचापरम् ।
पादनाक्रम्यचैवन्यमुरसभ्यपोथयत् ।११
मुखेनजग्राहषादशनैर्मथितान्यपि ।१२

बलिनांतद्वलसबंमसुराछांदरात्मनाम् ।
ममर्दाभक्षनच्चास्यान्यांश्चाताडयत्तथा ।१३

असिनानिहताः केचिष्खट्वांगताडितां ।
जग्मुर्विनाशमसुरादताग्राभिहतारणे ।१४

ऋषि ने कहा—शुम्भ की ऐसी आज्ञा प्राप्त होते ही चण्ड-मुण्ड अपने साथ चतुरंगिणी सशस्त्र सेना लेकर वहाँ गये और उन्होंने देखा कि हिमालय के स्वर्णिम शिखर पर सिंहारूढ देवी मन्द-मन्द मुस्करा रही हैं ।१-२। वह असुर और उनके साथी देवी को इस प्रकार स्थित देख, धनुष खेंच कर और तलवार उठाकर उसको पकड़ने का प्रयत्न करने लगे ।३। तब देवी ने उन सबके प्रति अत्यन्त क्रोध किया, इस कारण देवी का मुख कृष्ण वर्ण का हो गया ।४। फिर देवी ने जैसे ही भृकुटी चढ़ाई वैसे हो उनके ललाट से खड्गपाश धारिणी कराल वदना भयङ्कर काली उत्पन्न हुई ।५। वह विचित्र खट्वाङ्ग युक्त मण्डमाल से सुशोभित, वाघम्बर धारण किए अत्यन्त शुष्क माँस वाली जिह्वा को लपलपाती हुई, भीतर की ओर घुसे हुए नेत्र वाली उत्पन्न होकर अपने घोर शब्द से दिशाओं को परिपूर्ण करने लगी ।६-७।

तदुपरान्त वह देवी दैत्य-सेनाके ऊपर वेग सहित टूट पड़ी और सब असुरों को नष्ट करती हुई उनके भक्षण में तत्पर हुई।८। तथा पार्श्व रक्षक, अंकुश हाथ में लिये हुये योद्धा और घटाओंके सहित ही हाथियों को पकड़ पकड़ कर मुख में निगलने लगी।९। अश्व, रथ और सारथी सहित सबको मुख में डाल कर भयंकर रूप बनाने लगी।१०। उस काली ने किसी के केश पकड़ किसी का कण्ठ दबाया और किसी की छाती पर चढ़कर पैर को ठोकर से उसे मार डाला।११। उन असुर के शस्त्रास्त्रों को भी क्रोधपूर्वक मुख में लेकर दाँतों से चबाने लगी।१२। वह काली उन महावली एवं विशाल शरीर वाले असुरों के दल को मसलते-मसलते किसी को भक्षण कर रही थी।१३। कोई असुर खड्ग के प्रहार से कोई खट्वांग के द्वारा ताडित होने से और कोई दांतों के अग्रभाग द्वारा चवाये जाने से नष्ट हो गये।१४।

त्रणेनन्महासेन्यमसुराणांनिपातितम्।
दृष्ट्वाचण्डोभिदुद्रावतांकालीमनिभीषणाम्।१५
शरवर्षैमहाभीमाक्षीतांमहासुरः।
छादयामांसचक्रै श्चमुडधिप्तसहस्रशः।१६
तानिचक्राण्यनेकानिविशमानानितन्मुखम्।
वभुर्यथार्कविनिसुवहूहिचनोदरम्।१७
ततोजहासातिरुषाभीमर्भैरवनादिनी।
कालीकरालवक्त्रांतदुर्ददत्रोज्ज्वला।१८
उत्थायचहासिंहदेवीचटमधावत।
गृहीत्वाचास्यकेशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत्।१९
छिन्ने शरसिधैत्यैद्रश्चक्रे नाद्वसुभैरवम्।२०

उस असुर सैन्य के इस प्रकार क्षणभर में नष्ट हो जाने से क्रोधित हुआ चण्ड अत्यन्त वेगपूर्वक काली की ओर दौड़ा।१५। और उसने उन भीमाक्षी देवी पर भीषण बाण-वर्षा की तथा सहस्रों चक्रों को घुमा कर उन्हें आच्छादित कर दिया।१६। वह सभी चक्र देवी के मुख में

घुसने लगे और मेघमण्डल में प्रविष्ट अनेक सूर्य मण्डलों के समान सुशोभित हुए ।१७। फिरघोर निनाद करती हुई काली ने भीषण अट्टहास किया, उस समय वह अपनी दुर्वर्श दन्त प्रभा से दमकने-लनीं ।१८। वह देवी अपने महावाहन सिंह पर खड़ी होकर चण्ड की ओर वेग के दौड़ी और इसके बाल पकड़ कर अपने अङ्ग से आपका शिर काट डाला ।१९ शीश काटते समय चंडासुर ने घोर गर्जना की, जिनसे तीन लोक त्रसित हो गये ।२०।

अथमुण्डोभ्यधावत्ताँष्ट् वांचडनिपातितम् ।
तमप्यपातयद्भमौखट्वाँगाभिहतंरुषा ।२१
हतमेषंततः सैन्यदृष्ट्वाचंड निपातितम् ।
मुण्डचसुहावीर्यदिशोभेजेभ्यातुरम ।२२
शिरंश्चण्डस्यकालीसागृहीत्वाममुण्डमेवच ।
प्राहप्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्यचण्डिकाम् ।२३
मयातवात्रौंपहृतौचण्डमुण्डोमपाषश्रू ।
युद्धयज्ञे स्वयशुम्भानिशुम्भंचहनिष्पसि ।२४
तवानोतौततोदृष्ट्वाचण्डमुण्डौपहासुरौ ।
उवाचकालींकल्याणीललितचण्डिकावचः ।२५
यस्माच्चण्डमुण्डचगृहीत्वमुपागता ।
चामुण्डेतित्तलोकेख्यातादेवीभविष्यसि ।२६

चण्ड को मरा हुआ देखकर मुण्ड काली की ओर दौड़ा, तब देवी ने उसे भी खट्वांग से काट कर गिरा दिया ।२१। फिर बची हुई सेना भी चण्ड-मुण्ड का बध देखकर भयातुर हुई इधर-उधर भाग चली ।२२। फिर वह काली चण्डमुण्ड के कटे हुए मस्तक उठाकर चण्डिका के पास गई और प्रचण्ड अट्टहास पूर्वक बोली ।२३। महा पशुचण्ड-मुण्ड नामक दो असुरों को मारकर यह उपहार प्रस्तुत हैं, अब शुम्भ-निशुम्भ का वध आप स्वयं ही करना ।२४। ऋषि ने कहा-उस चण्ड मुण्ड नामक असुरों को दशा में यहाँ देखकर चण्डिका देवी ने काली से कहा ।२५।

देवी बोली—तुम चन्द्र-मुण्ड को लेकर यहाँ आई हो, इसलिए इस लोक में तुम्हारा 'चामुण्डा' नाम प्रसिद्ध होगा ।१६।

८०—रक्त बीज बध

चण्डेवनिहतेदैत्येमुण्डेचविनिपातते ।
बहुलेषुसैन्येषुक्षयितेष्वसुरेश्वरः ।1
ततः कापपराधीनचेताः प्रतापवान् ।
उद्योगसर्वसैन्यानांदैत्यानामादिदेशह ।२
अद्यसर्वेबलदैत्याः षडशीतिरुद्मायुधाः ।
कंबूनांचातुराशीनिर्यान्तुस्ववलैर्वृ त्ताः ।३
कोटिवीर्याणिषचादसुराणांकुलानिवैः ।
शतकलानिधम्रानिर्गच्छतुममाज्ञया ।४
कालकादौहृदामौय कालकेयास्तथासुराः ।
युद्धायसजनिर्यान्तुआज्ञयात्वरितामम ।५
इत्याज्ञाप्यासुरपति शुम्भौभैरवशासनः ।
निजगाममहासैस्ययहस्रैलहुभिर्वृ यः ।६
आयांतचण्डिकादृष्ट्वातत्सैन्यमतिभीषम् ।
च्यास्वनैः पुरया तसधरशीगगनांतरम् ।७

ऋषि ने कहा-चण्ड-मुण्ड के साथ ही समस्त सेना के नष्ट होने के कारण असुरेश्वर ।१। प्रतापी शुम्भ ने सम्पूर्ण असुर सेना को वहाँ जाकर युद्ध करने की आज्ञा दी ।२। सम्पूर्ण सेना लेकर उदायुध नामक छियासी और कन्दुनामक चौरासी दैत्य वहाँ जांय ।३। कोटिवीर्य नामक पचास कुलके धूम्रवंश नामक एक सौ कुलक असुर मेरी आज्ञा से निकलें ।४। काला, दाहृद मौर्य और कालकेय वंश के असुर भी संग्राम में पहुँचे ।१५। असुरेन्द्र शुम्भ इस प्रकार आज्ञा देकर महासेना को लेकर स्वयं भी संग्राम के लिये चला ।३। उस दैत्य-समूह को आता देखकर चंडिका ने प्रत्यंचा की घोर ध्वनि से पृथिवी-आकाश को भर दिया ।७।

सचसिंहोमहानादमतंवक्तवान्नृप ।
घन्टास्वनेनतन्नादमम्बिकाचाप्यवृंहयत् ।८
धनुर्ज्यासिंहघन्टानांदापुरितदिङ्मुखाः ।
निनादैर्भीषणैः कालीजिग्येविस्तारिताननां ।९
तन्निनादमुपश्रुत्यदैत्यसैन्वश्चतुर्दिशम् ।
देवीसिंहस्तथाकालीशरोषैः परिवारिता ।१०
एतस्मिन्नतरेभूपदिवनाशयसुरद्विषाम् ।
भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विता ।११
ब्रह्म शगुहविष्णुनांतथेन्द्रस्यचशक्तयः ।
शरीरेभ्योविनिष्क्रम्यतद्रुपैश्च डकांतियुः ।१२
यस्यदेवस्ययद्रूपयथाभूषणावाहनम् ।
तद्देवहितच्जक्तिरसुरान्योद्ध मायया ।१३
हंसयुक्तविमानस्थाजाक्षसूत्रकमण्डलः ।
आयाताब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणीसाभिधीयते ।१४

हे राजन् ! देवी ने अपने घन्टा के शब्द से उस नाद को द्विगुण कर दिया ।८। प्रत्यंचा की टंकारसे और सिंह तथा घन्टा के नाद से दिशाएँ परिपूर्ण हो गई और तब तक काली ने भी घोर नादपूर्वक जय-जयकार किया ।९। उन नादको सुनकर दैत्य सेना ने चण्डिका, काली और सिंह को चारों ओर से क्रोधपूर्वक घेर लिया ।१०। हे राजन् ! तभी असुरों के नाश और देवताओं के हित के लिये अत्यन्त बल, पराक्रम से युक्त ।११। ब्रह्म, शिव, विष्णु, कार्तिकेय और इन्द्र की शक्तियाँ उनके देह से प्रकट होकर, उन्हीं देवताओं का रूप ग्रहण कर चण्डिका के निकट आईं ।१२। जिस देवता का जो स्वरूप और वाहन था, वैसेही रूप और वाहन आदि से सज्जित हुए शक्तियाँ असुरों से संग्राम करने को उद्यत हुई ।१३। ब्रह्माजी की शक्ति हाथ में अक्षमाला और कमण्डल धारण किये हंस युक्त विमान आरूढ़ होकर वहाँ आई, उस शक्ति का नाम ब्रह्माणी हुआ ।१४।

माहेश्वरीवृषारूढ़ात्रिशूलवरधारिणी ।
महाहि लयाप्राप्ताचन्द्रलेखाबिभूषणा ।१५
कोमारीशक्तिहस्ताचमयूरवरवाहना ।
योद्धमभ्याययोदैत्यानविकाम्हरूपिणी ।।१६
तथैववैष्णवीशक्तिर्गरुडोपरिसंस्थिता ।
शङ्खणक्रगदाशार्ङ्ग खड्गहस्ताभ्युपापयौ ।।१७
यज्ञ वाराहमतुलरूपंयाविभ्रतींहरेः ।
शक्ति साप्यायषौतत्रवाराहीं वभ्रतीतनुम् ।।१८
नारसिंहीनृसिंहस्यविभ्रतोसदृशवपुः ।
प्राप्तातत्रसटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहितः ।१९
वज्रहस्तातत्त वैन्द्रीयजराजोपरिस्थिताः ।
सहस्रनयना प्राप्तायथापक्रस्तथैवसा ।२०
ततः परिवृतस्ताभिरानानोदेवशक्तिभिः ।
हन्यतामसुराः शीघ्रं ममप्रौत्याहचंडिकाम् ।२१

शिवजी की शक्ति त्रिशूल को धारण किए चन्द्ररेखा से सुशोभित, नागों के आभूषण धारण करके और बैल पर चढ़कर आई, वह माहेश्वरी नाम से प्रसिद्ध हुई ।१५। कौमारी शक्ति हाथ में शक्ति धारण किये, सुन्दर मोर पर चढ़कर आई ।१६। विष्णु की शक्ति वैष्णवी शंख, चक्र गदा, शार्ङ्ग धनु और खड्ग धारण करके युद्ध के लिये आई ।१७। यज्ञ बाराह रूपधारी भगवान् विष्ण की शक्ति भी वाराहरूप में वहाँ आई ।१८। नारसिंही शक्ति, नृसिंह रूप में वहाँ आई, उनके सटाक्षेप से नक्षत्रों की पंक्ति चलायमान हो गई ।१९। इन्द्र की शक्ति हाथ में वज्र धारण कर, हाथी पर चढ़ी हुई युद्ध क्षेत्र में आई उसका नाच ऐन्द्री-शक्ति हुआ ।२०। फिर उन सब देव-शक्तियों के सहित चण्डिका से भगवान् शङ्कर ने कहा—मेरी प्रसन्नता के लिए इन सब असुरों का शीघ्र ही वध कर डालो ।२१।

ततोवोसरीत्त्तविनिष्क्रांतातिभीणा ।

चण्डिकाशक्तिरत्युग्रशिवाशतनिनान्दिनी ।२२
साचहधम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूतत्व गच्छभगवन्नपार्श्वंशुम्भनिशुम्भयो: ।२३
ब्रूहिशुम्भनिशुम्भचदानवावतिगर्वितौ: ।
येचान्येदानवास्त्रयुद्धायमुपस्थिता: ।२४
त्रैलोक्यमिन्द्रोलभतांदेवा: सन्तुहविर्भुजः ।
ययंप्रयातपातालायदिजीवितुमिच्छथ: ।२५
बलावलेपादथचेद्भवन्तो युद्धकांक्षिण: ।
तदागच्छततृप्यन्तुच्छिवा: पिशितेनव: ।२६
यतोनियुक्तोदत्येनतयादेव्याशिवा:स्वयम् ।
शिवदूतीलोकेस्मिस्तत: साख्यातिमागता ।२७

फिर देवी के देह से अत्यन्त भयङ्कर सौ शिवाओं के सम्मिलित नाद करने के समान भीषण नाद करती हुई चण्डिका शक्ति प्रकट हुई ।२२। तब उन अपराजिता चण्डिका देवी ने भगवान् शङ्कर से कहा, हे भगवान् शुम्भ निशुम्भ के पास जाकर दैत्य कर्म कीजिए ।२३। वहाँ पहुंच कर सब युद्धाभिलाषी दैत्यों से कहिये ।२४। दैत्यों ! इन्द्र तीनों लोकों को पावें, देवता पुन: यज्ञ भागको भोगने वाले हों तुम यदि जीवनकी इच्छा करते हो तो पाताल लोक में जाकर रहो।२५। अथवा बल से गर्वितहुए तुम युद्ध करना चाहते हो तो जाओ, मेरी शिवाएं तुम्हारे रक्त पान से तृप्त होंगी ।२६। देवी शिवजी को दैत्य कर्म से नियुक्त किया इसलिये उन्हें शिव दूती कहा गया ।१७।

तेपिश्रुत्वावचोदेव्या: शर्वविख्यातं महासुरा: ।
अमर्षापूरिताजग्मुर्यत्रकात्यायनीस्थिता ।२८
तत: प्रथममेवाग्रे शरैशक्त्यृष्टिभि: ।
ववर्षरुद्धतामर्षास्तांदेवीममरायः ।२९
सांचततप्रहितान्याणांचलशक्तिपरश्वधान् ।
चिच्छेदलीलानुथयाध्मात धनुर्मुतैर्भहेषुभि: ।३०

तस्याग्रतस्तथाकालोशूलपाशाविदारितान् ।
खट्वांङ्गपोतिथांश्चारोन्कर्वतीव्यचरत्तदा ।३१
कमललुलांक्षपहतवीर्यान्हतौजसः ।
ब्रह्मणीवाकरोच्छत्रन्येनयेनस्मधावित ।३२
माहेश्वरीत्रिशूलेनतथाचकैणवैष्णवी ।
दैत्यांजघाकौमारीतथाशक्त्यांतिकोपना ।३३
ऐन्द्रीकुलिशपातेनशतशोदैत्यदानवः ।
पेतुर्विदारिताः पृथ्यांरुधिरौघप्रवर्षिणः ।३४
तुन्डप्रहारविध्वस्तादंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।
वाराहमूर्त्यान्यपतश्चक्रेणचविदारिताः ।३५

शिवजी के द्वारा सन्देश प्राप्त करके वह घोर असुर क्रोधपूर्वक उन देवी कल्याणी के समीप पहुँचा ।२८। फिर वे उन देवी के समक्ष बाण, शक्ति और योष्ट आदि की भयङ्कर वर्षा करने लगे ।२६। असुरों द्वारा चलाये गये सभी अस्त्रास्त्रों को चण्डिका देवी ने अपने बड़े-बड़े वाणी से लीला पूर्वक काट डाला ।३०। तभी उन चण्डिका देवी के सामने काली देवी किसी असुर को शूल से विदीर्ण करती और खट्वांग मारती हुई घूम रही थी ।३१। जिस-जिस ओर शत्रुगण दौड़ रहे थे, उसी-उसी ओर जाकर ब्रह्माणी शक्ति उन पर जल छिड़क कर उन्हें वीर्य और तेज से हीन करने लगी ।३२। माहेश्वरी त्रिशूल से, वैष्णवी चक्र से और कौमारी शक्ति के द्वारा ही बहुत से दैत्यों को मार रही थी ।३३। ऐन्द्री शक्ति के वज्र-प्रहार से ताड़ित हुए सैंकड़ों दैत्य रक्त वमन करते-करते धराशायी होने लगे ।३४। बाराह शक्ति के मुख प्रहार और दंष्ट्रा के अग्रभाग से ताड़ित अनुपगण हृदय विदीर्ण होने के कारण पृथिवी पर गिरने लगे ।३५।

नखेर्विदारिताश्चान्याग्भक्षयन्तीमहासुरान् ।
नारसिंसहींचचाराजौनादपूर्णदिगतरा ।३६

चंडाट्टहासैरसुरा: शिवदत्यभिदूषिता: ।
पतु पृथिव्यांपतितांस्तास्ताञ्छखादाथसातदा ।३७
इतिमातृगणैक्रुद्धसतूयंतंमहासरान् ।
दृष्टवाभ्युपायैर्विविधेर्नेशूर्दैवारिसैनिका: ।३८
योद्धुमभ्याययौक्रुद्धौरक्तबीजोमहासुर: ।३९
रक्तबिंदुर्यदाभूमौहत्यस्यशरोन्त ।
पलायनपरान्दृट्पादैत्यान्मातृगणार्दितान् ।
समुत्पततिमेदिन्यास्तत्प्रमाणीवहासुर: ।४०
युयुधेसगदापाणिरिद्रसक्त्यामहासुर: ।
ततश्चैन्द्रस्ववज्रेणरक्तबीजमताडयत् ।४१
कुशिशेनाहतस्याशु बहुस्रावशाणितम् ।
समुत्तस्थततोयोधास्तद्रूपास्तत्तपर क्रमा: ।४२
यावत: पत्तितनस्यशरीराद्रक्तविंदव: ।
तावत: पुरुषांजातास्तद्वोर्यवलविक्रमा: ।४३

नारसिंही शक्ति अपने गर्जन से दिशाओं और आकाश को परिपूर्ण करके दैत्यों को नख से विदारण कर भक्षण करते करते इस भयङ्कर युद्ध भूमि में घूम रही थी ।३६। शिवदूती के प्रचण्ड अट्टहास से अभिभूत होकर राक्षसगण धराशायी होने लगे और फिर उन गिरे हुए असुरों को वह शिवदूती भी भक्षण करने लगी ।३७। इस प्रकार उन्हें क्रोधपूर्वक मर्दन करते देखकर दैत्य-सेना भाग पड़ी ।१८। उनको भागता हुआ देखकर रक्तवीज नामक दैत्य क्रोधपूर्वक युद्ध के लिए आया ।३६। जैसे ही इस असुर के शरीर से रक्त की एक बूँद पृथिवी पर टपकती वैसे ही उसी के समान एक दैत्य उत्पन्न हो जाता ।४०। गदा ग्रहण पूर्वकवह असुर ऐन्द्री शक्ति के साथ युद्ध करने लगा तब ऐन्द्री शक्ति ने उस पर वज्र प्रहार किया ।४१। वज्र-प्रहार के कारण रक्तबीज के देह से टपकते हुए रक्त से उसी के समान रूप और पराक्रम वाले अनेक वीर उत्पन्न हो गये ।४२। रक्त की जितनी बूँदे टपकती उतने ही योद्धा

उत्पन्न हुए. वे सब योद्धा बल, वीर्य, पराक्रमादि में रक्तबीज के ही समान थे।

तेचापियुयुधुस्तत्रपुरुषाणक्तसम्भवाः ।
सममातृभिरत्पुग्रं शस्त्रपातातिभीषणम् ।४४
तुनश्चवज्रपातेनक्षतमस्यशिरोयदा ।
ववारक्तं पु षास्ततोजाताः सहस्रशः ।४५
वैष्णवीसमरेचैनंचक्रे णाभिजघानह ।
गदयाताडयामासएन्द्रीतमसुरेश्वरम् ।४६
वैष्णवीचक्रभिन्नस्यरुधिरस्रावसम्भवेः ।
सहस्रशोजगद्व्याप्ततत्प्रमाणैर्महासुरैः ।४७
शक्त्या जघादकौमारीवाराहीचतथासिनाः ।
माहेश्वरीत्रिशलेनरक्तबीजसुरम् ।४८
सचापिगदयदैत्यासर्वाएवाहनपृथक् ।
मातृ कोपसमाविष्टोरक्तबीजोमहासुरम् ।४६

रक्त की बूँदों से उत्पन्न हुए योद्धागण उन उन मातृगणों के अत्यन्त तीक्ष्ण शस्त्रों द्वारा घोर संग्राम करने लगे ।४४। जब एन्द्री शक्ति ने उसके मस्तक को पुनर्वार छिन्न किया, तब क्षत स्थान से प्रवाहित हुए रक्त से सहस्रों असुर उत्पन्न हो गए ।४३। वैष्णवी शक्ति से उसे चक्र से तथा ऐन्द्री शक्ति ने वज्र से मारा ।४६। वैष्णवी शक्ति के चक्र से कटकर उस दैत्य के देह से प्रवाहित हुआ, उससे उसी के समान उत्पन्न हुए सहस्रों विकराल असुरों से यह संसार व्याप्त हो गया ।४७। तब उस रक्तबीजासुर को कौमारी अपनी शक्ति से बारही खड्ग से और मोहेश्वरी त्रिशूल से मारने लगीं ।४८। तब वह घोर राक्षस रक्तबीज भी सब मातृगणों पर गदा प्रहार करने लगा ।

तस्याहतस्यवठुधाशक्तिशूलादिभिर्भुवि ।
परा योवैरक्तोखस्तेनासक्रछतश सुराः ।५०

तैश्चासुरसृक्संभूतैसुरैः सकलजगत् ।
व्याप्तमासीत्ततोदेवाभयमाजग्मुरुत्तमम् ।५१
तान्विषण्णान्सुरात्दृष्ट्वाचण्डिकाप्राहसत्वरा ।
उवाचकालीचामंडेविस्तीर्णवदनकुर ।५२
मच्छस्त्रपातसम्भूतानरक्तविंदुन्महासुरान् ।
रक्तबीजान्प्रतोच्छत्ववक्त्रेणानेनवेगिना ।५३
भक्षयन्तीचररणेतदुत्पन्नान्महासुरान् ।
एवमषयदैत्यः क्षीणरक्तोगमिष्यति ।
भक्ष्यमाणस्त्वयाचोग्रानैवोत्पस्यतिचाहरे ।५४
यत्युक्त्वातांततोदेवीशूलेनाभिजघानतम् ।
मुखेनकालीजगृहेरक्तबीजस्यशोणितम् ।५५

शक्ति शूल आदि विभिन्न प्रकार के अस्त्रों से आहत हुए उस रक्त बीज के देह से पृथिवी पर पतित हुए रक्त विन्दुओं द्वारा सैकड़ों असुरों की उत्पत्ति हुई ।५०। उसके रक्त से उत्पन्न हुए असुरों से सम्पूर्ण विश्व व्याप्त हो गया, इससे देवगण अत्यन्त भयभीत हुए ।५१। सब देवताओं को भयभीत देखकर चण्डिका ने काली से कहा—हे चामुण्डे ! तुम अपना मुख फाड़ो ।५२। और मेरे द्वारा शस्त्र मारने से गिरती हुई रक्त की बूँदों या उससे उत्पन्न होने वाले असुरों को वेग पूर्वक अपने मुख में लेती जाओ ।५३। तथा उससे उत्पन्न हुए राक्षसों का भक्षण करती हुई युद्ध भूमि में घूमती रहो, इस प्रकार रक्तके क्षीण होने पर ही यह नष्ट हो सकेगा ।५४। इस प्रकार तुम उसका भक्षण प्रारम्भ करोगी तो उसका पुनः उत्पन्न होना रुक जायगा, ऋषि ने कहा—काली के प्रति ऐसा कह कर चण्डिका देवी ने उस असुर को त्रिशूल से आहत किया और उस गिरे हुए रक्त को काली ने अपने मुख में ग्रहण कर लिया ।५५।

ततोसावाजघानाथगदयातत्रचंडिकाम् ।
नचास्यावेदनांचक्रे गदापातोल्पिकामपि ।५६

तस्याहतस्तदेहात्तु वहुसुस्रः वशोणितम् ।
यतस्ततः स्ववक्त्रेत्रचामुण्डासप्रतोच्छती ।५७
मुखेसनद्गतायेस्यारक्तपातान्महासुराः ।
तांचखादाथचामुन्डापपौतस्यचशोणितम् ।५८
देवीशूलेनचक्रेणवाणैरसिभिरिष्टिभिः ।
जवानरक्तबीजतंचामुण्डापीतशाणितम् ।५९
सपपातमहीपृष्ठेशस्त्रसहिततोहतः ।
नीरक्तश्चमहीप लरक्तबीजोमहासुरः ।६०
ततस्तेहर्षतुलवमवापुस्त्रिदशानृप ।
तेषांमातृगणामत्तोननर्तांमृङ्मदोद्धतः ।६१

फिर उस रक्तबीज ने देवी पर गदा का प्रहार किया, परन्तु उससे देवी को किंचित भी वेदना नहीं हुई ।५३। इधर रक्तबीज के देह से गिरते हुए रक्त को चामुन्ड अपने मुख में लिये जा रही थी।५७। काली के मुख में गिरे हुए रक्त से जो असुर उत्पन्न हुए उनका भी उसने भक्षण कर लिया ।५८। जब इस प्रकार चामुण्डा ने रक्तबीक का रक्त पान किया तब चण्डिका ने उसे शूल, चक्र बाण खड्ग और यष्टि से मारा ।५९। फिर वह घोर असुर शस्त्रों द्वारा क्षत-विक्षत तथा रक्त-हीन होकर पृथिवी में गिर पड़ा ।६०। हे राजन् ! इस पर देवताओं को महान हर्ष हुआ वे मातृगण उन असुरों का रक्त पान करके मदोन्मत्त हुईं नाचने लगीं ।६१।

—:※:—

८१–निशुम्भ वध

विचित्रमिदमाख्यातभगवन्भवताभम ।
देव्याश्चस्तिमाहात्म्यंरक्तबीजवधाश्रितम् ।१
भूयश्नेच्छाम्यह श्रोतुरक्तबीजेनिपातिते ।
चकारशुम्भयोत्कर्मनिशुम्भश्चातिकोपनः ।२

चकारकोवमतुलरक्तबीजेनिपातिते ।
शुम्भासरोनिशुम्भश्चतेष्वन्तेषुचाहवे ।३
हन्यमानंसहासैन्यविलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोथमुख्ययासुरसेनया ।४
तस्याग्रतस्तापृष्ठेपार्श्वंथोश्चमहासुरः ।
सदष्टौष्टपुटा क्रुद्धाहतु देवीमुपाययु ।५
साजगांमममहावीर्यं शम्भोपिस्ववलैतः ।
निहंतुं चडिकांकोपात्कृत्वायुद्धतुमातभिः ।६
ततोयुद्धमतीवासीद्देव्याः शुम्भनिशुम्भयो ।
शरवर्षमयोत्रोग्रमेघवोरिववर्षतोः ।७

राजा ने कहा—हे भगवन् आपने मुझ से रक्तबीज के वध के विषय में देवी चरित्र के अद्भुत माहात्म्य का वर्णन किया ।१। अत्यन्त क्रोधित शुम्भ ने रक्तबीज के मारे जाने पर जो कार्य किया, मैं अब उसे सुनना चाहता हूँ ।२। ऋषि बोले—युद्ध में रक्तबीज के समाप्त होने पर एवं विभिन्न सेनाओंके मारे जाने पर दोनों राक्षस शुम्भ और निशुम्भ बहुत क्रोधित हुए ।३। इस प्रकार उस सभी सेना को मरता देखकर निशुम्भासुर अत्यन्त क्रोध सहित राक्षसों की मुख्य सेना को साथ लेकर देवी के सामने दौड़ा ।४। उग घोर असुर के सम्मुख पृष्ठ भाग में एवं अगल-बगल बड़े-बड़े राक्षस अपने ओठों को भींचते हुए क्रोध सहित देवी को समाप्त करने के लिये आये ।५। तत्पश्चात महाबलशाली असुरशुम्भ अपनी सेना को साथ लेकर देवी के गणों के साथ युद्ध करते हुए देवी को मारने के निमित्त क्रोधपूर्वक आया ।६। तब मेघों के समान अत्यन्त प्रचण्ड बाण-वर्षा करते हुए शुम्भ व निशुम्भ का देवी के साथ भयङ्कर युद्ध होने लगा ।७।

चिच्छेदास्ताञ्छरास्ताभ्याचंडिकास्वशरीत्करैः ।
ताडयामचागेषुशस्त्रौघरसुरेश्वरो ।८

निशुम्भोनिशसखड्गचर्मंचादायसुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्निसिंहदेव्यावाहनमुत्तमम् ।६
ताडितेवाहनेदेवीक्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भयाशुचिच्छेदचमचाप्तष्टचन्द्रकम् ।१०
छिन्नचर्मणिखङ्ग चशक्तिंचिक्षेपसोसुरः ।
तामप्यस्यद्विधाचक्रेणाभिमुखागताम् ।११
कोपाध्मातोनिशुम्भौथशूलजग्राहदानवः ।
नार्यातमुष्टिपातेर्देवीतच्चाप्यचर्णयत् ।१२
अथादायगदांसोक्षेपचन्डिकांप्रति ।
सापिदेव्यात्रिशूलेनभिन्नाभस्मत्वमागता ।१३
ततः परशुहस्तंनमायांतंदैत्यपुङ्गवम् ।
आहत्यदेवीणौर्धरपातयतभूतले ।१४

चण्डिका देवी उन दोनों राक्षसों द्वारा चलाये गये वाणों को अपने वाणों के द्वारा जल्दी से काटकर अपने शस्त्रों से दोनों विकराल असुरों के अङ्गों पर वार करने लगी ।८। तेज धार वाली तलवार चमकती ढाल लेकर निशुम्भने देवी के श्रेष्ठ वाहन सिंह के मस्तक में मारी ।६ वाहन पर आक्रमण हुआ देखकर देवी ने क्षुरप्र नाम के अस्त्र से निशुम्भ की तेज तलवार काटकर उसकी अष्टचन्द्रका ढाल भी काट डाली ।१०। तलवार और ढ़ाल के कट जाने पर असुर निशुम्भ ने देवी पर शक्ति छोड़ी लेकिन देवी नें चक्र द्वारा उस सम्मुख आती हुई शक्ति के भी दो टुकड़े कर दिये ।११। फिर क्रोध में भरे राक्षस ने शूर लेकर चलाया और देवी ने आक्रमण से शूल को भी घूँसा मार कर चूर्णकर डाला ।१२। तब उस दानव ने घुमाकर गदा चलाई, किन्तु देवी ने उस गदा को भी अपने त्रिशूल से खण्ड करके भस्म क्रर दिया ।१३। फिर जब वह महादानव फ़रसा हाथ में लेकर आया तो देवी ने उसे वाणों से घायल कर धरती पर गिरा दिया ।१४।

तस्मिन्निपतितेभूमौनिशुम्भेमामविक्रमे ।

भ्रातर्यंतीवसंक्रुद्धन्प्रययोहेतुमाम्बिकाम् ।१५
सरथस्थतदात्युच्चगृहीतपरमायुधैः ।
भुजरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशषंवभौतभः ।१६
समायांततमालोक्यदेवींशशङ्खमवादयत् ।
ज्याशब्दचापिधट्षश्चक्रारातीवदुः सहम् ।१७
पूरयामासाककुभोनिजघन्टास्वनेनच च ।
समस्तदैत्यसैन्यानांतेजोवधविधायिना ।८
ततः सिहमहानादैत्याजितेभमहामदैः ।
परमाससगगनंगातथैवदिशोदशः ।१६
ततः कालीसमुत्पत्यगगनक्ष्माताडयत् ।
कराभ्यांतन्निादेतप्राक्रस्वनास्तेतिरोहिताः ।२०
अट्टाट्टहासमशिवन्दूतीचकारह ।
तै शस्त्ररसुरास्त्रेसुशुम्भःकोपपरययौः ।२१

महाबली भयङ्कर भाई निशुम्भको पृथ्वी पर गिरता देखकर राक्षस शुम्भ अत्यन्त क्रोधपूर्वक देवी को मारने आया ।१५। तथा बहुत लम्बी महापराक्रम युक्त अष्टभुजाओं सहित और बड़े-बड़े अस्त्र देघार रथ में बैठ कर वह सम्पूर्ण आकाश में फैला हुआ दीखने लगा ।१६। उसे आता देखकर देवी ने शंख बजाकर अत्यन्त असहनीय शब्द धनुष की प्रत्यञ्चा से किया ।१७। तथा सम्पूर्ण असुरों की सेना का गतिशील विनाश करने वाले अपने घण्टे को शब्दावली से सम्पूर्ण दिशाओं में भर दिया ।१८। अनन्तर सिंह ने भी हाथियों के महानद नष्ट करने वाले महानाद से आकाश, पृथ्वी एवं दस दिशाओं को पूर्ण कर दिया ।१६। फिर देवी काली ने आकाश में उछल कर अपने दोनों हाथों से पृथ्वी पर आघात किया जिसकी शब्द-ध्वनि से पहिली समस्त शब्द ध्वनि मन्द हो गयी ।२०। शिवदूती भी शत्रु राक्षसों का अमंगल करने वाले तेज हँसी से हँसी, उसके शब्द से राक्षस लोग दुःखी हुए शुम्भ अत्यन्त क्रोधित हुआ ।२१।

शुश्भैनागत्ययाशक्तिमुं क्ताइवालातिभीषणा ।
आयांतोवह्निकूटामासानिरस्तमहोल्कया ।२२
मिहनाद शम्भुस्यव्याप्तलोकत्रयांतरम् ।
निर्घातनि स्वनोघोरोजितवानवनीपते ।२३
शुम्भत्ताञ्चरान्देवीशुम्भस्तत्प्रहिताञ्छराम् ।
चिच्छेदस्वररैरुग्रैः शतशायसहस्रशः ।२४
ततः साचण्डिकाक्रुद्धामुलेनाभिझनतन् ।
सतदाभिहतोमूर्छितोनिपातह ।२५
ततोनिशुम्भः संप्राष्यचेतामात्तकामुंक ।
आजघानशरैर्देवीकालीकेसरिणतथा ।२७
पुनश्चकृत्वाबाहुनमिपुतदजेस्वरः ।
चक्रायूतेनदितिजश्छादयामासछण्डिकाम् ।

आकाश में स्थित देवगण जय-जय करने लगे । तब अम्बिका ने शुम्भ से कहा 'दुरात्मन् ! ठहर, ठहर' ।२२। असुर शुम्भ ने अत्यन्त भयंकर तेज अग्नि वाली शक्ति छोड़ी, अग्नि के समान आती हुई उस शक्ति को देवी ने महोल्का नाम्नी शक्ति से काटकर दूर फेंक दी ।२३। फिर तीनों लोक शुम्भ दानव के सिंह से पूर्ण हो गये, तब हे अवनी-पाल ! आकाश से उत्पन्न विद्युत की भयानक शब्द-ध्वनि ने शुम्भ के नाद पर विजय पा ली ।२४। शुभ द्वारा चलाय गये सौ सहस्र शरों को देवी ने अपने तेज वाणों से काट डाला और देवी द्वारा चलाये गये सैकड़ों सहस्र वाणों को शुम्भ ने अपने तेज बाणों से काट डाला ।२५। तत्पश्चात् चण्डिका देवी ने क्रोध सहित शूल द्वारा शम्भु को घायल किया और शूल से आहत असुर शुम्भ अचेत होकर धरती पर गिर गया ।२६। इसके बाद चेतना आने पर निशुम्भासुर धनुष के बाण से देवी और सिंह को आहत करने लगा ।२७। फिर राक्षसराज दैत्य निशुम्भ ने दस हजार भुजाएँ धारण कीं और उनसे चक्र व युद्धास्त्रों द्वारा चण्डिका देवी पर छा गया ।२८।

ततोभगवतोक्रुद्धादुर्वांदुर्गार्तिनशिनी ।
चिच्छेदतानिचक्राणिस्वशरैः सायकाश्चतान् ।२९
ततोनिशुम्भोवेगृनगदामातचण्डिकाम् ।
अभ्यधावतवह तुदैत्यसेनसमावतः ।३०
तस्यापतएवाशुगदाचिच्छेदचण्डिका ।
खगेनशितधारेणसचशूलममाददे ।३१
शूलहन्ततम यांतनिशुम्भ मराद्र्दनम् ।
हृदिविव्याधशूलेनवेगाविद्धेनचाण्डका ।३२
भिन्नस्यतस्यशुहृदयान्नि सृतोपरः ।
महाबलोमहावीर्यस्तिष्टेतिपुरुषावदन् ।३३
तस्यनिष्क्रामतोदेवीद्रहस्यवनतत्तत ।
शिरश्चिच्छेदखङ्गेनततोसावपतत्भुवि ।३४
ततः सिंहश्चखादग्रबंष्ट्राक्षीण्णशिरोंधरान् ।
असुरांस्तथाकीशिवदूतीतथपारान् ।३५

इसमें क्रोधित हुए संकट नाशिनी देवी दुर्गा ने उस सम्पूर्ण बाणों और चक्र को काट डाला ।२९। इसके पश्चात् निशुम्भ दैत्यों की सेना सहित गदा लेकर उन देवी को नष्ट करने के लिए अत्यन्त तेजी से दौड़ा ।३०। तब निशुम्भ राक्षस की उस आती हुई गदा को चण्डिका देवी ने अत्यन्त तेज धार वाली तलवार से काट डाला फिर निशुंभ ने शूल ले लिया ।३१। फिर शूल लेकर सामने आते हुए असुर निशुम्भ को देवी ने महान् गति से अपना त्रिशूल चलाकर हृदय के बीच वेध दिया ।२३। तो शूल ने विंधे-असुर हृदय से एक दूसरा महाबली और महा, वीर्यवान् पुरुष देवी से 'ठहर' शब्द कहता हुआ निकला ।३३। तब देवी ने हंसकर नाद करते हुए उस बाहर आये हुये असुर का सिर तलवार से काट डाला और वह धरती पर गिर पड़ा ।३४। इसके बाद सिंह तेज दाँतो से गर्दन चबाकर असुर का भक्षण करने लगा तथा शिव दूती और काली अन्य दूसरे राक्षसों का भक्षण करने लगे ।३५।

कौमारीशक्तिशिर्भिन्ना केचिन्नेशुर्महासुराः ।
ब्रह्माण मंत्रपूतेनतोयेनान्नेनिराकृता ।३६
माहेश्वरीत्रिशलेनभिन्ना पेतुस्तथापरे ।
वाराहीतु डवातेनकेचिच्चुर्णीकृताभुवि ।३७
खडब्रडवचक्रेणवैस्णव्यादानवाः कृता ।
वज्रेणचैद्रीहस्ताग्रविमुक्तेनतथापरे ।३८
केचिद्बनेशु रसुराः केविन्नष्टामहापात् ।
भक्षिताश्चापरेकालीशिवदूतीमृगाधिपः ।३९

कई विकराल राक्षसी कौमारी-शक्ति के बल से कट कर मर गये ब्रह्माणी के मन्त्रपूत्र जल को छूने से ही अपने आप अनेक राक्षस समाप्त हो गये ।३६। माहेश्वरी के त्रिशूल की चोट से वहुत से दानव अलग-अलग होकर गिरपड़े और कोई-कोई दानव उपराही के मुख के आघात से पिसकर भूमि पर गिर गये ।३५। व्रैष्णवी ने चक्र से अन्य दूसरे असुरों को टुकड़े-टुकड़े कर डाला और ऐन्द्री द्वारा छोड़े गये वज्र से घायल होकर ।३८। उन दानवों में कोई समाप्त हुए और कोई कोई महायुद्ध से भाग गये । तथा जो बचे, उनका काली, शिवदूती और सिंह ने भक्षण कर लिया ।३६।

—×—

८२—शुम्भ वध

निशुम्भनिहतंदृष्ट्वाभ्रातरप्राणासमितम् ।
हन्यमानंवलंमैवशुम्भक्रुद्धोब्रवीद्विचः ।।
वलावलेपाद्दुष्टेत्वमादुर्गेगर्वमांवद ।
अन्यासांवलमाश्रित्यपृध्यसेयातिमानिनी ।२
एकँवाहंजगप्यत्रर्दितायाकाममापरा ।
पश्यैतादुष्टमय्येयवि त्योमद्विभूतयः ।३
ततः समस्तास्तादेव्याब्राह्मणीप्रमुखालयम् ।
तस्यादेव्यास्तनौ जग्मुरेकेवासीत्तदांविका ।४

अह्वविभुत्याब्रहुभिरिरूपेर्दयास्थिता ।
तत्संहृर्तसर्थकैवतिष्टाम्याजौस्थिरोभव ।५

तत प्रवृतेयुद्ध देव्याशुम्भस्यस्यचोभयो: ।
पश्यतांसर्वदेवानामापुराणांचदारुणम् ।६

शरवर्षै: शितै: शास्त्रैस्तथाचास्त्रै सुदारुणै: ।
ततोर्युद्धमभूद्भूय सर्वलोकभयकरन् ।७

ऋषि बोले—शुम्भ ने प्राणों के समान आई निशुम्भ और सेना को मरा देखकर क्रोधपूर्वक कहा ।४। हे दुष्टे दुर्गे ! तू बल का अभिमान न कर, तू दूसरों के बल पर आश्रित होकर मानवों के समान युद्ध करती है ।२। देवी ने कहा—अरे दुष्ट ! इस समय में, केवल एक मैं ही हूँ, मेरे अलावा दूसरा कौन है ? देख, यह मेरी सब विभूति मुझमें ही विद्यमान है ।३। ऋषि ने कहा-इसके पश्चात् ब्रह्माणी और समस्त शक्तियाँ देवी के देह में विलीन हो गई और तब अकेली अम्बिका ही सम्मुख रह गई ।४। फिर देवी बोली—अरे शुंभ ! इस स्थान पर मैं अपनी विभूति द्वारा अनेक रूप में विद्यमान थी अब उन सभी रूपों को नष्ट करके मैं युद्ध क्षेत्र में अकेली ही रही हूँ, तू स्थिर हो ।५। ऋषि ने कहा—'तदन्तर यह दानवों का भयङ्कर होने लगा ।६। फिर देवी और शुंभासुर में परस्पर बाण वर्षा, शोणितंव दारुण अस्त्रों के प्रसार द्वारा ऐसा युद्ध हुआ, जो सम्पूर्ण लोगों में भय उत्पन्न करने वाला था ।७।

दिव्यान्यस्त्राणिसत शोमुमुचेयान्यथांविका ।
वभजितानिदैष्येन्द्रस्ततत्प्रतोघातकतृभि: ।८
मुक्तानितेनचास्त्राणिदिव्यानिपरमेश्वरी ।
वभञ्जलोलयैवोग्रहुँकारौच्चारणादिभि: ।९
तत: शरणतैर्देवीमाच्छादयतसोसुर: ।
साचतत्कुपितादेबीथनुश्चिच्छेरचेषुभि: ।१०

चिन्नेधनुषिदैत्येन्द्रस्तथाशक्तिमथाददे ।
चिच्छेददेवीचक्रेणतामप्यस्यकरेस्थिताम् ।।११
ततः खड्गमपादायशतचन्द्रभानुमत् ।
अभ्यधावततांहतुंदैत्यादामधिपेश्वरः ।।१२
तस्यापततएवाशुखड्गंचिच्छेदचण्डिका ।
धनुर्मुक्तैःसितैर्वाणैश्चर्मचार्ककरामलम् ।।१३
अश्वाँश्चपातयामासरथिनासह ।
हताश्वः सतदादैत्यश्छिन्नधन्वाविसारथिः ।
अग्राहमुभ्गरघोरमन्बिकानिधनोत्ततः ।।१४

अम्बिका द्वारा छोड़े गए शत शत दिव्य अस्त्रों को उस दैत्यराज शुंभासुर ने काटने वाले शस्त्रों से सभी अस्त्रों को काट डाला ।८। और शुंभासुर द्वारा जोड़े गये सभी दिव्यास्त्रों को चण्डिका देवी ने अपनी लीला से व हुँकार द्वारा तोड़ डाला ।९। फिर उस भयङ्कर शत्रुने सैंकड़ों वाणों की वर्षा द्वारा देवी को आच्छादित कर दिया । तब देवी ने भी क्रोध से वाणों द्वारा उसका धनुष काट डाला ।१०। धनुष कट जाने पर शुंभ राक्षस ने शक्ति ले ली किन्तु देवी ने उस शक्ति को भी चक्र से उसके हाथों ही में काट डाला ।११। तब वह दैत्यराज दीप्ति युक्त विशिष्ट चंद्र ढाल और तलवार लेकर देवी पर आक्रमण वाला हुआ।१२ तब देवी ने शुंभ की तलवार एवं सूर्य की किरणें के समान उज्ज्वल ढाल को धनुष से तीक्ष्ण वाण छोड़कर काट डाला ।१३। जब उस राक्षस-राज के रथ घोड़ा निर्जीव हो गये । धनुष खण्डित हो गया तब वह भयङ्कर मुद्गर लेकर अम्बिका को मारने के लिए तैयार हुआ ।१४

चिच्छेदापततस्तस्यमुद्गरनिशितैः शरैः ।
तथापिसोभ्यधांवत्तांमुष्टिमुद्यस्यवेगवान् ।।१५
समुष्टिपातयामाहृदयेदन्यपुङ्गपः ।
देव्यास्तचासिसादेवीतलेनोरस्वयाडयम् ।।१६

तलप्रहाराभिहतोनिपापतमहीतले ।
दैत्यराजः सहसापुनरेवतथोत्थितः ।१७
उत्पत्यचगृह्यौच्चैर्देवोगगनमास्थितः ।
तत्रापिसानिराधारायुयुवेतेनचण्डिका ।१८
नियुद्धखेतदादैत्यश्चन्डिकाचपरस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमसिद्धमुनिविस्मयकारकम् ।१९
ततोनियुद्धं सुचिर कृत्वातेनाविकासह ।
उत्पात्यभ्रामयामासचिक्षेपधरणीतले ।२०
सक्षिप्तोधरणीप्राप्यमुष्टिमुत्तल्यवेगितः ।
अभ्यधावयदुष्टात्माचन्डिका निधनेच्छया ।२१

तब सामने आये दानव का मुद्गर देवी ने तीक्ष्ण वाणों से नष्टकर दिया, किन्तु फिर भी वह महादानव मुष्टिका तानकर तेज गति से देवी पर दौड़ा ।१५। महादानव ने वह मुष्टिका प्रहार देवी के हृदय पर किया। तब देवी ने भी थप्पड़ द्वारा उनके सीने पर आघात किया ।१६। थप्पड़ के आघात से पीडित दैत्यराज पृथिवी पर गिरा और तुरन्त ही पुनः उठा ।१७। इसके पश्चात् उछल कर देवी को लेकर शुभ आकाश में पहुँच गया और देवी भी आकाश में निरालव होकर केवल भुजाओं से युद्ध करने लगी ।१८। आकाश में शुंभ व चण्डिका देवी अद्वितीय और मुनियों को अचम्भे से डालने वाला युद्ध करने लगे ।१९। उस दानव के साथ बिना अस्त्र केवल भुजाओं से युद्ध करके उसे उछाल कर ऊपर घुमाया और धरती पर पटक दिया ।२०। धरती पर गिरकर वह दुष्टात्मा दानव मुष्टिका उठाकर चंडिका को मारने की इच्छा से आक्रमक हुआ ।२१।

तमायाँततोबेवीसर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्यांपातयामासभित्वाशूलेनवक्षसि ।२२
सततासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयासकलांपृथ्वीसाब्धिद्वीपांसपर्वताम् ।२३

ततः प्रसन्नमखिलहृतेतस्मिन्दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतोवापनिर्मलचाभवेन्नभः ।२४
उत्पातमेधाः सोल्कायेप्रागासस्ते शमययुः ।
सरितोमार्गवाहिन्यस्तथाशुम्भेनिपतिते ।२५
ततोदेवगणः सर्वहर्षनिभरमानसाः ।
वभवुर्निहतेतस्मिन्गंधर्वाललितजगुः ।२६
अवादयंस्तथंवान्येननतुश्चाप्सरोगणाः ।
ववुः पुण्यास्तथावाताः सूप्रभोभूद्दिवाकरः ।२७
जज्वलश्चाग्नयः शांताः शांत दिग्जनितस्वनाः ।२८

उस दैत्यराज शुंभ को आक्रामक देख देवी ने अपने शूलसे उसका हृदय वेध दिया और उसको पुनः पृथ्वी पर गिरा दिया ।२२। देवी के शूल के अग्र भागसे शुंशका हृदय आहत हुआ । जब वह निर्जीव होकर पृथ्वी पर गिरा तो उस समय समुद्र, द्वीप, और पर्वत सहित समस्त पृथ्वी चिचलित हो गई ।२३। उस दुरात्मा दानव के मारे जाने पर सभी आनन्दित हुए, संसार बहुत स्वस्थ और आकाश पूर्णतः स्वच्छ हो गया ।२४। शुंभ के रहते हुए जो भी अनिष्टकारी मेघ और उल्कागण विद्यमान थे वे सब शुंभ के मृत्युपरान्त अदृश्य हो गये और नदियाँ भी अपने समुचित मार्गों में बहने लगीं ।३५। उस दानव के समाप्त होने पर सम्पूर्ण देवगण के चित्त में अत्यन्त हर्ष हुआ और गन्धर्व मधुर गान करने लगे ।२६। कोई वाद्य बजाने लगा और अप्सराए नाचने लगीं, शीतल मन्द वायु चलने लगी और सूर्य ने भी सुन्दर आभा फैला दी ।२७। यज्ञ की बुझी अग्नि जलने लगी और दिशाओं में शान्त शब्द फैला प्रतीत हुआ ।२८।

—*—

२८—देवी स्तोत्र

देव्याहतेतत्रमहासूरेन्द्रेसेन्द्राः सुरावह्निषुपोगमास्ताम् ।
कात्यायनीतुष्टुबुरिष्टलाभाद्विकासिवक्राब्जविकासिताशः ।१

देवाऊचदेविप्रपन्नातिहरेप्रसीदप्रसौदसातजगतोखिलस्य ।
प्रसीदविश्वेश्वपाहिविश्वत्वमीश्वरीदेविचराचरस्य ।२
आधारभूताजगतस्वमेकामहीस्वरूपेणयतः स्थितासि ।
अपाँस्वरूपेस्थितयात्वयैतदाऽबत्स्नमध्यवीर्ये ।३
त्ववैष्णवीशक्तिरनैतवीर्याविश्वस्यवीजपरमासिदेवि ।
मायासमोहितदेविसयस्तशेतत्ववैप्रसन्नाभुविमुक्तिहेतुः ।४
विद्याः समस्तास्तवदेविभेदाः स्त्रिय समस्ताः सकलजगश्च।
त्वयैकयापूरितमवयेतत्कस्तेस्तुति स्तव्यपरापरोत्ति ।५
सर्वंभूतायदादेवीभूक्तिमुक्तिप्रदायिनी।
त्वस्तुतास्तुतयेकावाभवतिपरमोक्सयः ।६
सर्वस्यबुद्धिरूपेणजनस्यहृदिसस्थिते ।
स्वर्गापवगदेदेविनारायणिनमोस्तुते ।७

ऋषि ने कहा—देवी ने जब उस महा दानव को नष्ट कर दिया तो समस्त देवता समस्त दिशाओं को प्रकाशित कर कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे ।१। देवता बोले—हे शरणागत दुःख भंजन देवि ! प्रसन्न हों, सम्पूर्ण जगत् की जननी प्रसन्न हो ! हे विश्वेश्वरि ! प्रसन्न हो, तुम विश्व की रक्षा करो; हे देवि ! चराचरों की तुम ही ईश्वरी हो ।२। हे देवि ! तुम ही जगत् आधार रूप हो, क्योंकि पृथिवी का रूप तुम्हीं में स्थित है हे देवि ! जल का स्वरूप भी हो धारण करके इस सम्पूर्ण जगत को तृप्त करती हो हे देवि तुम्हारा वीर्य उल्लंघन नहीं किया जा सकता ।३। हे देवि ! अनन्त वीर्य वैष्णवी शक्ति तुम ही हो संसार को हेतुभूत परमलीला तुम ही हो, सम्पूर्ण जगत् को तुमने ही मोहित कर रखा है । हे देवि ! तुम जब प्रसन्न होती, तब ही पृथ्वी पर मुक्ति का कारण होती हो ।४। हे देवि ! तुम्हारी मूर्ति विशेष में ही समस्त विद्या विद्यमान है और त्रिलोक में समस्त स्त्रियाँ तुम्हारी मूर्ति विशेष हैं । हे जननी ! तुम एक अकेली उस जगत्में व्याप्त हो तुम स्तुति से परे हो और तुम्हारी स्तुतिही श्रेष्ठ उक्ति है और अधिक क्या

स्तुति करें ।५। समस्त प्राणी-स्वरूप में तुम ही प्रकाशमान हो इसलिए तुम्हारी स्तुति करते हैं । किन्तु हे देवि ! तुम्हारे निर्गुण ब्रह्मस्वरूप की स्तुति के लिए कोई भी उक्ति श्रेष्ठ नहीं है, क्योंकि तुम निर्गुण हो और निर्गुण के गुणों की कीर्त्तन रूप स्तुति किस प्रकार सम्भवहै? ।६। तुम बृद्धि के रूप में सबके हृदय में बसी हो । स्वर्ग-मुक्ति दाता ! यह देवि ! हे नारायणी ! तुमको नमस्कार है ।७।

कलाकाष्ठादिरूपेणरिणामप्रदायनी ।
विश्वस्योपरतौशक्तेनारायणिनमोस्तुते ।८
सर्वमङ्गलमांगल्येशिवेसर्वार्थसाधिके ।
शरण्येश्यवकेगौरिनारायणिनमोस्तुते ।९
सृष्टिस्थितिविनाशानांशक्तिभूतेसनातनि ।
गुणाश्रयेगुणमयेनारायणिनमोस्तुते ।१०
शरणागतदीनार्त्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्तातिहरेदेविनारायणिनमोस्तुस्ते ।११
ससंयुक्ताविमानस्थेब्राह्मणीरूपधारिणि ।
कौशांभक्षीरकदेविनारायणिनमोस्तुते ।१२
त्रिशूलचन्द्राहिधरेमहाबृषभवाहिनि ।
माहेश्वरीस्वरूपेणनारायणिनमोस्तुते ।१३
मयूरकुक्कुटवृत्ते महाशक्तिधरेनधे ।
कौमारीरूपसस्थामेनारायणिनमोस्तुते ।१४

हे विश्व-विनाश में समर्थ ! कला एव काष्ठादि रूप से तुम जगत् का विधान करती हो अर्थात् क्षण भर में दानवों को अन्त प्रदान करती हो, हे नारायणी ! तुम को नमस्कार है ।८। हे सर्व-माङ्गल्ये!हे शिवे ! हे सर्वार्थसाधिके ! हे शरणदाता ! हे त्रिनेत्रवाली ! हे गौरी ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार ।९। तुम सृष्टि के स्थित और विनाश की शक्ति रूप हो, हे सनातनि ! हे गुणाश्रये ! हे गुणमये ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ।१०। शरणागत, दीन आर्त व त्रासित का उद्धार

करने वाली सबका दुःख हरती हो, हे देवि ! हे नारायण ! तुमको नमस्कार ।११। हंस युक्त विमान में ब्राह्मी रूप धारण कर युद्ध क्षेत्र में कुशाभिमंत्रित जल छिड़कती हो, हे देवी ! नारायणि ! तुमको नमस्कार ।१२। माहेश्वरी रूप में बैल पर सवार होकर अर्द्धचन्द्र और नाग भूषण सहित त्रिशूल आपने धारण किया, हे नारायणि! तुमको नमस्कार है ।१३। तुमने कौमारी रूपमें मयूर और कुक्कुट युक्त होकर महाशक्ति धारण की हे अनघे ! नारायणि ! तुमको नमस्कार ।१४।

शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।
प्रसीदवैष्णवीरूपेनारायणिनमोस्तुते ।१५
गृहीतोग्रहमहाचक्रे दष्टोद्धृतवसुन्धरे ।
वराहरूपिणिशिवेनारायणिनमोस्तुते ।१६
नृसिंहरूपेणोग्रेणहतदैत्यानकृतोद्यमे ।
त्रैलाक्यत्राणसहितेनारायणिनमोस्तुते ।१७
किरीटिनिमह वज्रेसहस्रस्यनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरेचैंद्रिरारायणिनमोस्तुते ।१८
शिवदूतीस्वरूषेणहतदैत्येमहाबले ।
घोररूपेमहारावेनारायणिनमोस्तुते ।१९
दष्ट्राकरालवनेशिरोमालांविभूषणे ।
चामुन्डेदन्डमथनेनारायणिनमोस्तुते ।२०
लक्ष्मिलज्जेमहाविद्ये स्रद्धे पुष्टिन्ववेध्रुवे ।
महारात्रेमहामायेनारायणिनमोस्तुते ।२१

वैष्णवी रूप में शंख, चक्र एवं शार्ङ्ग धनुष परम आयुधों को तुमने धारण किया, हे नारायणि तुमको नमस्कार ।१५। वाराह रूप में तुमने पृथ्वी को उठाकर महाचक्र ग्रहण किया, तुमको नमस्कार ।१६। नृसिंह रूप में दानवों के नाश को उद्यत हो त्रैलोक्य की रक्षा करने वाली हे नारायणि ! तुम को नमस्कार ।१७। हे ऐन्द्री ! हजारों नयनों से उज्जवल किरीटों के धारण करने वाली तुमको

नमस्कार।१८। शिवदूती के रूप में भयकर स्वरूप धारण कर हे नारायणि ! तुमने महाबली दानवों को समाप्त किया, तुमको नमस्कार ।१६।दष्ट्रा और कराल मुखके सिरोंकी माला धारण कर हे नारायणि! तुमने चण्ड और मुण्डनाम के दानवों को नष्ट किया, तुमको नमस्कार ।२०। लक्ष्मी, लज्ज, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, महारात्रि, महा-माया, ध्रुवा तुम ही हो, हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ।२२।

मेधेसरस्वतिवरेभुतिवाभ्रवितामसि ।
नियतेत्वंप्रसीदेतेनारायणिनमोस्तुते ।२२
सर्वंत: प्राणिपादाँतेसर्वतोक्षिशिरोमुखे ।
सर्वत: श्रवणघ्रणेनारायणिनमोस्तुते ।२३
सर्वस्वरूपशेसर्वशक्तिममन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहिनोदेविदुर्गेदेवीनमोस्तुते ।२४
एतत्त वदनेसौम्यलोचनत्रयभूषितम् ।
पातुन: सर्वभीतिभ्य: कात्यायनिनमोस्तुते ।२५
ज्वालाकरालमत्युगमशेषासुरदसूनम् ।
त्रिशलंपातनोभितेर्भद्रकालिनमोस्तते ।२६
हिनस्मिदै यतेजांसिस्वनेनापर्ययाजितम् ।
साधटापातनोदेविपापेभ्योन: सूतानिव ।२७
असुरत्मृग्वसापकर्चचितस्तेकरोज्ज्वल: ।
शुभायखगौभवतुचण्डिकेत्वाँनतावयम् ।२८

मेधा, सरस्वती, भूति ब्राभ्रव, तामसि तुम ही हो, हे नारायणि ! हे ईश ! हे नियते ! तुम प्रसन्न हो, तुमको नमस्कार ।२। सर्वत्र हाथ, पैर, सिर, मुख, कान, नासिका तुम्हारे ही स्वरूप हैं, हे नारायणि ! तुमको नमस्कार ।२३। सर्वस्वरूप, सर्वश्वरी सर्वशक्ति समन्वित हे देवि ! हे दुर्गे ! भय से रक्षा करो तुमको नमस्कार ।२४। तुम्हारा मुण्ड और उस पर विभूषित त्रिनेत्र वाली हे कात्यानि ! सबसे रक्षा करो, तुमको नमस्कार।२५। ज्वाला से भी अधिक कराल बहुत

तेज और समस्त असुरोंको नष्ट करने वाला तुम्हारा त्रिशूलहे भद्रकालि! हमारी भय से रक्षा करें, तुमको नमस्कार ।२६। अपनी ध्वनि से विश्व को पूरित कर दानवों के तेजको नष्ट करने वाला तुम्हारा घन्टा हमारी रक्षा करे ।२७। असुरगण के लहू और वसा के पक से चर्चित किरणों के समान यह शोभाय्रमान तलवार हमारा कल्याण करें ।२८।

रोगानमेषानपहसितुष्ट ददास्किामान्सकलानभीष्टान् ।
वामाश्रिमानानविपन्नराणांत्वामाश्रिताह्याक्षयतांतयांति ।२९
एतत्कृतंयत्कदनंत्वयाद्यधर्मद्विषादेविमहासुरणाम् ।
रूपैरमेकैवहुधात्ममूर्त्तिकृत्वांविकेतत्पकरोतिकान्या ।३०
विद्यासुशास्त्रेषुविवेकदीपय्वाद्ये षुवाक्येषुचकात्वदन्या ।
ममत्वगत तिमहाँधकारेविभ्रामयदवविश्वम् ।३१
रक्षाँसियन्योग्रविषश्चनागायत्रारयोतस्यूबलानियत्र ।
दावानलोयत्रतथाब्धिमध्येंपत्रस्थितात्वपरिपातिविश्वम् ।३२
विश्वेश्वरीष्वपरिपासिविशवविश्वात्मिकाधारयसौतिविश्वम् ।
विश्वेशवंद्याभवतिविश्वाश्रयायेत्वयिभक्तिपम्राः ।३३
देविप्रसीदपरिपालयनोरिभातेंनित्यंयथासुरवादधुनैवसद्य ।
पापानिसर्वजगदाँप्रशममयाशुउत्पातजनितांश्चमहीपसर्गाम् ।३४
प्रणमानाँप्रसोदत्वदेविविश्वार्तिहारिणि ।
त्रैलोक्यवासिनामीणयलोकानाँवरदाभव ।३५

प्रसन्न होने पर सभी रोगों को नष्ट करती हो एवं अप्रसन्न होने पर सभी आकांक्षित बस्तुओं को छीन लेती हो। तुम्हारे आश्रितों पर कभी कोई विपत्ति नहीं रहती और तुम्हारे आश्रित ही अन्य सबको आश्रय देने वाले होते हैं ।२९। अनेक रूप धारण कर तुमने धर्म के विपक्षी घोर असुरों को मारा, वह क्या कोई दूसरी नारी कर सकती हैं ? ।३०। विद्या, महाशास्त्रों, विवेक दीप और वेदों के आदि वाक्यों के होते हुए भी महाअन्धकार मय ममत्व रूपी गर्त से विश्वको तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कौन बचा सकता है ।३१। जहाँ असुर है विकराल सर्प है, शत्रु है,

चोरों के समूह हैं, दावानल हैं, तुम वहाँ और समुद्र में रहकर जगत् की रक्षा करती हो ।३२। तुम जगत की रक्षा करने वाली विश्वेश्वरी हो, विश्वको धारण करने वाली विश्वात्मिका हो । विश्व इस ब्रह्माजी द्वारा वन्दनीया हो और विश्व के आश्रय ब्रह्माजी भी तुम्हारे प्रति भक्ति-नम्र हैं ।३३। हे देवि ! तुमने जैसे दानवों का नाश करके इस समय रक्षा की है उसी प्रकार अब प्रसन्न होकर शत्रुभय से रक्षाकरो । समस्त विश्व के पापों का नाश करो और जगत् के उत्पातों से हुई महामारी को तुरन्त शान्त करो ।३४। समस्त जगत के दुःखों को नष्ट करने वाली । प्राणियों पर प्रसन्न होओ और हे त्रिलोकवासियों द्वारा पूजा करने वाली देवि ! उन सबको वर दो ।३५

वरदाहंसुरगणा यरयंमनसेच्छथ ।
तवृणुध्वंप्रयच्छातिजगतामुपकारकम् ।३६
सर्वबाधाप्रशमनत्रैलोक्यप्याखिलेश्वरि ।
एवमेत्वयाकार्यमस्मद्वै रिविनाशम् ।३७
वैवस्वतेतरेप्राप्ते अष्टाविंशतिमेयुगे ।
शुम्भोनिशुम्भरश्चवान्याबुत्स्येतेमहासुरौ ।३८
नन्दगोपकुलेजातायशोदागर्भसम्भवा ।
ततोप्तोनाशयिष्यामिविध्वध्याचलनिवासिनी ।३९
पुनरप्यतिरौद्रेणरूपेणपृथिवीतले ।
अवतीर्यहनिष्यामिवैप्रचित्तास्तुदानवान् ।४०
भक्षपंन्याश्चतानुग्रास्वैप्रचित्तान्सुदानवान् ।
रक्तादताभविष्यतिदाडिमीकुसुमोपगः ।४१
ततोमादेवताः स्वर्गेमर्त्यं लोकेचमानवाः ।
स्तुवताव्याहरिष्यतिसततंनरक्तदन्तिकाम् ।४२

देवी बोली हे देवताओ ! मैं वर प्रदान करूँगी, वर माँगी, मैं प्रदान करूँगी ।३६। सुरगणों ने कहा—हे अखिलेश्वर ! तीनों लोकों की सभी प्रकार की विपदाओं को नष्ट करो और इसी प्रकार

-हमारे शत्रुओं को नष्ट करती हो, यही वर हम माँगते हैं ।१७। देवी बोली वैवस्वत मन्वतर के बीच अट्ठाइसवें युग में दो महादानव शुम्भ, निशुम्भ जन्म लेगें। ३८। उस समय मैं यशोदा के गर्भ से गोपनन्द के गृह में जन्म लूँगी और विंध्याचलवासिनी होकर उन दोनों को नष्ट करूँगी। ३९। फिर पृथ्वी पर अत्यन्त विकराल रूप में अवतार लेकर वैप्रचित नाम के असुरों का विनाश करूँगी ।१०। वैप्रचित नाम के भीषण दैत्यों को भक्षण करते हुए मेरी दन्त मुक्ताबलि कुसुम के समान लाल रङ्ग की हो जायगी।४२। इसके पश्चात् स्वर्ग में देवगण और मर्त्यलोक में मानव स्तुति करते हुए सदैव मुझे 'रक्त दन्तिका' के नाम से पुकारेंगे ।४२।

भयश्चशतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनंभसि ।
मुनिभि संस्तुताभमौसंभविष्याम्यणौनिजा ।४३
ततः शतेननेत्राणांनिरीक्षिष्यामितियन्मुनीन ।
कीर्तयिष्यतिमनुजाः शताक्षीमिमांतत ।४४
ततोहमखिलंलोकमात्वदेहसमुद्भवैः ।
भरिष्याभिसुराः श कैराभृष्टैप्राणधारकैः ।४५
शाकभरीतिविख्यातितदायास्या यहभुवि ।
तत्रैवचवधिष्य भिदुर्गमाख्यमहासुरम् ।
(दुर्गादेवीतिविख्थ ततन्मेनामभविष्यति ।
पुनश्चाहयदाभीमरूपकृत्वाहिमाचले) ।४६
रक्षाँसिभक्षविष्यामिसुणीनाँत्र णामारणात् ।४७
तदामाँमुनयः सर्वेस्तोष्यंत्यानम्रमूर्तयः ।
भीमादेवीतिविख्याततन्मेनामभविष्यति ।४८
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधाकरिष्यति ।
तदाहभ्रामररूपकृत्यातख्येयषट्पदम् ।४९
त्रैलोक्यस्यहितायांयवधिष्यामि हासुरम् ।
भ्रामरीतिचमांलोकास्तोष्यस्तिसर्वतः ।५०

इत्थंयदायदावाधादानवोत्थाभविष्यति ।
तदातदावती ह्किरिष्याम्यरिसंक्षयम् ।५१

फिर जव सौ साल तक वर्षा न होगी तो जल न होने यानी सूखा के कारण ऋषिगण मेरी प्रार्थना करेंगे उस समय मैं विना मनुष्य योनि में ही जन्म लूँगी ।४३। उस समय मेरे सौ नेत्र होंगे, जिससे मुनियों को देखूँगी और मुनिगण मुझे 'शताक्षी कहकर कीर्तन करेंगे ।४४। तत्पश्चात् जव तक वर्षा का अभाव रहेगा, तव तक हे सुरगण ! स्वकीय-देह उत्पन्न शाक से समस्त लोकों का पालन करूँगी ।४५। इसलिए जगत् में मेरा शाकम्भरी नाम प्रसिद्ध होगा और वर्षा न होने की उस अवधि से दुर्गम नाम के महादानव को समाप्त करूँगी ।४६। और फिर मैं ऋषियों की रक्षा के लिए हिमालय पर विकराल स्वरूप से असुरों का वध करूंगी ।४७। उस समय भी ऋषिगण विनम्र होकर मेरी प्रार्थना करेंगे और मैं भीमा देवी के नाम से प्रसिद्ध होऊँगी ।४८। जिस काल में अरुण नामक एक महादानव दोनों लोकों में भारी विपत्ति पैदा करेगा, उस समय अनेक षट्पद मनमन्त्रित भ्रमणों का रूप ग्रहण कर ।४९। तीनों लोकों का उद्धार करने के लिये उस महादानव को मारूंगी, इसलिए प्राणी मेरी भ्रामरी' नाम से स्तुति करेंगे ।५०। इस तरह जिस काल में असुरों द्वारा विपत्तियां पैदा की जायँगी उस समय अवतरित होकर मैं उनका नाश करूंगी ।५१।

८४—देवताओं को देवी का वरदान

एभिःस्तवैश्चमांनित्यंस्तोष्यतेयः समाहितः ।
यस्याहंकलांबाधांनाशयिष्याम्यसंशयम् ।१
मधुकैटभनाशचमहिषासुरधातनम् ।
कीर्त्तयिष्यतियेतद्वधणुम्भनिशुम्भयोः ।२
अष्टमयांचचतुर्दश्यांचैकचेतसः ।
स्तौष्यन्तिचैवयंभक्त्यामममाहात्म्यमुत्तमम् ।३

नतेषांद्त्कृतकिंचिदुष्कृयोत्थानचापदः ।
नभविष्यतिदारिद्र् यनचेदेष्टवियोजनम् ।४
शत्रुतोनभयतेषांदस्युतोवानराजतः ।
नशास्त्रानलतोयौधात्कदाचित्सभविष्यति ।५
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यपठितव्यंसमाहितैः ।
श्रोतव्चसदाभक्त्यापरस्वत्ययनमहत् ।६
उपसर्गानिशेषांस्तूमहासारीसमुद्भवान् ।
तथात्रिदिधमुत्पातामाहात्म्यशमसेन्मम् ।७

देवीने कहा—इन सभी वचनों से सचेत होकर जो मनुष्य मेरी प्रतिदिन स्तुति करेगा तो यह सन्देहहीन है कि मैं उनकी सभी विपतियों का विनाश करूँगी ।१। मधुकैटभ शुभ और महिषासुर की कथा का उत्तम माहात्म्य जो मनुष्य एक चित्त होकर भक्ति पूर्वक अष्टमी, चतुर्दशी या नवमी तिथि में सुनें या कहें ।२-३। सो उनको पाप एवं पाप से पैदा कोई बाधा नहीं रहेगी,दरिद्रता न होगी,एवं प्रियजनों का वियोग भी न होगा ।४। दुश्मन, चोर और राजा से किसी स्थान पर भय न होगा और अस्त्र अग्नि व पानी से निडर रहेंगे । इसलिए मेरा वह महात्म्य दत्तचित होकर अध्ययन करे और श्रवण करे । मेरा यह माहात्म्य ही सर्वश्रेष्ठ स्तुति है ।५। यह महामारी अन्य सभी विपदाओं और तीनों प्रकार की विपत्तियों को नाश करता है ।७।

यत्रैतत्पठ्यतेसम्यकनित्यमायतनेमम् ।
सदानतद्विमोक्ष्याभिसांनिध्यतत्रमेस्थितम् ।८
वलिप्रदानेपूजायाभग्निकार्यैमहोत्सवे ।
सर्वममतच्चरितच्चार्यंश्राव्यमेवच ।९
जानताजानतावापिवलिपूजातथाकृताम् ।
प्रतीच्छिण्याम्यंप्रीत्यावह्निहोमतथाकृतम् ।१०
शरत्काललेमहापूजाक्रियतेवार्षिकी ।
तस्यांममैतामाहात्म्यश्रु त्वाभक्तिसमन्वितः ।११

सर्ववाधाविनिर्मुक्तोधानन्यसमन्वितः ।
मनुष्योमत्प्रसादेनभविष्यतिनसंशयः ।१०
श्रुत्वाममैतन्महात्म्यमथोत्पत्तोपृथक्शुभाः ।
पराक्रमांश्चयुद्धेषुजायतेनिर्भयः पुमान् ।१३
रिपवःसक्षययांतिकल्याणांचोपपद्यते ।
नन्दतेचखुलपुं सामाहात्म्यंममशुण्वतम् ।१४

जिस गृह में वह माहात्म्य समुचित विधि से मनन किया जाता है मैं सर्वदा उसी गृह में अथवा उसके समीप वास करती हूँ। पूजा कार्य या वलि अवसर पर तथा यज्ञ कार्य आदि उत्सवों में मेरी यह समस्त कथा बोलनी और सुननी चाहिए।९। प्राणीगण जाने या अनजाने जो पूजा करें वलि दें या अग्नि में आहुति देते हैं वह सब मैं प्रसन्न होकर स्वीकार करती हूँ ।१०। शरद ऋतु में वह सब मैं प्रसन्न होकर स्वीकार करती हूँ ।१०। शरद ऋतु में वार्षिक महापूजा के अवसर पर मेरा यह चरित्र पूर्वक सुनने से ।११। मनुष्य मेरा प्रसाद पाकर समस्त वाधाओं से विमुक्त होते हैं और यह सन्देह से परे है कि वे धन, सम्पत्ति और पुत्र प्राप्त करते हैं ।१२। यह माहात्म्य, शुभ उत्पत्ति को कथा एवं युद्ध-कौशल चरित्र सुनने से भय नहीं रहता ।१३। उसके शत्रुओं का शमन एवं उसका कल्याण होता है ।१४।

शान्ति कर्मणिसर्ववतथानुः स्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडामुचोग्रासुमाहाम्यंशृणुयान्मम् ।१५
देपसर्गा समयाँतिग्रहपीडाश्चदारुणाः ।
दुःस्वप्ननचनृभिर्दृष्टसुस्वप्नमुपजायते ।१६
बालग्रहाभिभूतानाँशव लानशांतिकारकम् ।
संघ तभेदेचनणांमैत्रोकरणमुत्तमम् ।१७
धुर्वृत्तानामशेषाणांबलहानिरकरपरम् ।
रक्षोभतपिशाचानांपठनादेवनाशनम् ।१८
सवममैतन्माहात्म्यममसन्निधिकारकम् ।१९

पशुपुष्पार्घ्यंश्चगन्धदार्पस्तथोमैः ।
विप्राणांभोजनेहोंमैः प्रेवूर्णीयैरहर्निशतः ।२०
अन्यैश्चविविगैर्भोगै प्रदानैवत्सरेणया ।
प्रीतिमौक्रयतेसास्मिन्सकृदुच्चरितश्रुते ।२१

सभी शान्ति कार्यों, भयानक स्वप्न देखने के अवसर पर और घोर पारिवारिक दुःख के समय मेरा यह चरित्र सुनें ।१३। इसके श्रवण से विपदाएं एवं घोर पारिवारिक दुःख मिट जाते हैं और जैसे मनुष्य को दुःखद स्वप्न शीघ्र फलदायक बनते हैं, उसी प्रकार तुरन्त फल प्रदान करते हैं ।१६। मेरी यह कथा पूतना, डाकिनी, शाकिनी, बालकों पर आई ग्रहों को शमन करने वाली हैं और यदि मनुष्यों में आपस में मत-भेद व शत्रुता हो जाय तो श्रेष्ठ विधि से पुनः प्रीति कराने वाली है ।१७। यह समस्या अविचारी व दुष्ट मनुष्यों को निर्बल करती, उनके बल को घटाती है, इसके अध्ययन से असुर, भूत व पिशाच नष्ट हो जाते हैं ।१८। माहात्म्य के अध्ययन से अध्ययन वाला मेरे निकट आता है । यह प्रारम्भ, मध्य और समाप्ति कर मुझे सर्व प्रसन्न करता है ।१९। उत्तम पशु, फूल, अर्घ्य, धूप गन्ध, दीप ब्रह्मभोज, यज्ञ, प्रोक्षनीय एवं ।२०। अन्य दूसरी रीतियाँ से एक वर्ष पर्यन्त दिन रात पूजा करने वाले से मैं जितनी प्रसन्न हो सकती हूँ, उतनी इस माहात्म्य को सिर्फ एक ही बार श्रवण से प्रसन्न हो जाती हूँ ।२४।

श्रुतहरितिपापानितथारोग्यंप्रयच्छति ।
रक्षांकरोतिभूतेभ्योजामनांकीर्त्तनमस ।२२
युद्धेषुचरितंयन्सेदुष्टैत्यनिवर्हणम् ।
तस्मिन्छ्रुतेवैरिकृतंभयपु सानजायते ।२३
युष्याभिः स्तुतयोयाश्चब्रह्मर्मषिभिकृता ।
ब्रह्मणांचकृतायास्ताः प्रयच्चतिशुभांगतिम् ।२४
अरण्येप्रान्तरेवापिता वाग्निपरिवारितः ।
दस्युभिर्तावृतः शून्येखेहीतवापिशत्रुभिः ।२५

सिंहव्याघ्रांनुयातोवावनेवावनहस्तिभिः ।
राजाक्रुद्धे नचाज्ञप्तोवध्योबन्धगतोपिवा ।२६
आघर्णितोवावातेनस्थितः पोतेमहार्णवे ।
पतत्सुचापिस्त्रेषुसग्रामेभृशदारुणे ।२७
सर्वाबाधासुघोरासुवेदनाभ्यर्दितोपिवा ।
स्मरन्ममैतच्चरितनरोमुच्येतसंकटात् ।२८

मेरे माहात्म्य का श्रवण सब पापों का करण-कर्ता है और निरोगिता प्रदान कर्त्ता है, साथ ही मेरे अन्य सम्बन्ध कीर्त्तन करने से भूतों वगैरह से भय जाता रहता है ।२२। घोर दानवों के शमन-युद्धका बर्णन सुनने से मनुष्य को किसी शत्रु से भय नहीं रहता ।२३। हे देवताओ ! तुम्हारी प्रार्थना और ब्रह्म ऋषियों द्वारा की गई प्रार्थनाएँ एवं ब्रह्माजी द्वारा मेरे स्तवन, इन सबको अध्ययन करने से शुभ फल प्राप्त होता है ।२४। ऐसे स्थान पर जहाँ अपना प्रति कोई न हो वहाँ अत्रुओं द्वारा घेरे जाने पर और प्रान्तर में दावानल से ग्रसित होने पर ।२७। शेर व्याघ्र द्वारा बन में घेरे जाने पर, हाथियों के विचरने पर, आग में गिर जाने पर क्रोधित राजा द्वारा बध का दण्ड देने के कारण कारागार होने पर ।२६। विशाल समुद्र में तूफान द्वारा घिर जाने पर, घोर युद्ध अथवा सभी तरह की आपदाओं में ग्रसित होने पर प्राणी यदि मेरी माहात्म्य का चरित्र का स्मरण करे तो वह समस्त आपदाओं से विमुक्त होता है ।२७।

ममप्रभावात्सिंहाद्यादस्युवोवैरिणस्तथा ।
दूरादेवपलायतेस्मरतश्चरितमम ।२९
इत्युक्त्वासाभगवतीचन्डिकाचण्डविक्रमा ।
पश्यतामेवदेवनातत्रैवांतरधीयत ।३०
तेपिदेव्यानिरातंकाःस्वधिकारान्यथापुरा ।
यज्ञभागभुजानवेचक्रुर्विनिहतारयः ।३१
दैत्याश्चदेव्यानिहतेशुम्भेदेवरिपौधियु ।

जगद्विध्वसकेतस्मिन्महोग्रे तुयविक्रमे ।
निशुम्भे चमहावीर्येशेपा:पातालमाययु: ।३२
एव भगवतीदेवीसानित्यापि पुनः पुनः ।
स भूयकुगतेभूपजयत परिपालनम् ।३३
तयैतन्मा ह्यतेविश्वसैवविश्वप्रसूयते ।
सायार्चिताचविज्ञानपुष्टाऋद्धिप्रयच्छिति ।३४

मेरे चरित्र को बार-बार मनन करने वाले प्राणी को देखकर ही मेरे प्रभावसे सिंह जैसे हिंसक पशु, चोर और शत्रु भी पलायन कर जाते हैं ।२९। ऋषि ने कहा अतः ऐसा उपदेश देती हुई महा पराक्रमी चण्डिका देवी सुरगण के सम्मुख एकदम अन्तर्धान हो गई ।३०। तत्पश्चात् शत्रुओं के भयसे निर्भीक सुरगण यज्ञ भाग भोजन करते हुए अपने-अपने कार्यों में व्यस्त हो गये ।६१। विश्व का विनाश करने वाले महा पराक्रमी व देवताओं के शत्रु शुम्भ एवं महाबली निशुंभ को जव रण स्थल में चण्डिका ने नष्ट कर दिया तो शेष असुरगण पाताल को चले गये ।३२। हे राजा ! वह भगवती देवी नित्या होकर भी अनेक बार पृथिवी पर प्रकट होकर इस विश्व का पोषण करती हैं ।३३। सभी भगवती की माया में यह जगत् मोहित, वही, इस जगत् की सृष्टिकर्त्ता है और उसके समीप स्तुति करने पर वह प्रसन्न होकर तत्व ज्ञान एवं धन-धान्य प्रदान करती है ।३४।

व्याप्तं तयैत्सकलब्रह्माण्डमनुजेश्वर ।
महाकाल्यामहाकालेमहामाडोस्वरूपया ।३५
सर्वकालेमहामारीसैवसृष्टिर्भवेत्यजा ।
स्थतिकरोतिभूतानासवकालेसनातनी ।३६
भवकोलेनृणांसैवलक्ष्मीर्बृद्धिप्रदागृहे ।
सेवाभावेतथालक्ष्मीर्बिनाशायोपजायते ।३७
स्तुतासपूजितापुष्पैर्गंधधुपादिभिस्तदथा ।
ददातिवित्तं पुत्राश्चममिधर्मेगतिशुभाम् ।३८

, हे मनुजेश्वर ! समस्त ब्रह्माण्ड उन देवी से युक्त है और प्रलय के समय में यह ब्रह्माण्ड महामारी के रूप में महाकाली से और युक्त होता है ।३५। वही, जब समय आता है तो महामारी बन जाता है, तथा जगत् की उत्पत्ति के अवसर पर वही सृष्टि का स्वरूप हो जाता है और रक्षा के समय वही देवी सनातनी रूप में मनुष्यों की रक्षा करती है ।३६ आनन्द के समय वही प्राणियों के गेह में विभिन्न ऐश्वर्य प्रदान करती है और जब वह नहीं होती तो लक्ष्मी रूपी एश्वर्य चला जाता है व विनाश हो जाता है ।३७। उस देवी की प्रार्थना जो करे और सुगन्ध, धूप, पुष्प, दीप वगैरह से पूजा करे ऐश्वर्य, पुत्र और धर्म भक्ति की प्राप्ति होती है ।३८।

८५—सुरथ और वैश्य को देवी का वरदान

एतत्त कथितंभूपदेवीमाहात्म्मुत्तमम् ।
एवप्रभावासादेवीययेदधार्यतेजगत् ।१
विद्यातथैवक्रियतेभगवद्विष्णुमायया ।
तथात्वमेषवैश्चश्चथैवान्येविवेकिनः ।
मोह्य तेमोहिताश्चैवमोहमेष्यतिचापरे ।२
तामुपैहिमहाराजशरणपरमेश्वरीम् ।
आराधितासैवनृणां भोगस्वर्गापवर्गदा।३
इतितस्यवचःश्रुत्वासुरथःसनराधिपः ।
प्रणिपत्यमहाभागंतमृषिसंशितव्रतम् ।४
निर्विष्णोतिममत्वेनराज्यापहरणेनच ।
जगामसद्यस्तपसेचवैश्योमहामुने ।५
सकर्ननार्थमंवाया नदीपुलिनसंस्थितः ।
सचवैश्यस्तपस्तपदेवीसूक्त परंजनपन् ।६
तौतस्मिन्पुलिनेदेव्याःकृत्वामूर्तिमहीमयीम् ।
अर्हणाचक्रतुस्तस्याःपुष्पधुपाग्नितर्पणैः ।७

ऋषि ने कहा—हे भूप आपको मैंने यह सर्वोत्तम माहात्म्य देवी का वर्णन किया है। वह देवी जो इस विश्व को धारण करने वाली है। माता भगवती की कृपा ऐसी है कि वह मनुष्य को तत्वज्ञान प्रदान करती है और वही तुम्हें और इस वैश्य को एवं अन्य दूसरे बुद्धिमान व्यक्तियों को भी मोहित किये हुए है, साथ ही भविष्य में भी मनुष्य उनके ही द्वारा मोहित रहेंगे।१। हे राजन् ! ऐसी परमेश्वरी भगवती की शरणागत होओ जिनकी पूजा करने से प्राणी को आनन्द, स्वर्ग एवं मुक्ति प्राप्त होती है।३। मार्कण्डेयजी ने कहा हे महर्षि ! भारी ममता एवं राज्य के हरण होने से बहुत दुःखी व कठोर व्रत करने वाला सुरथ मुनि ने इन वचनों को सुनकर और उन मुनि को प्रणाम किया तुरन्त तपस्या करने चला गया एवं वह वैश्य भी तपस्या करने चला गया।४-५। तत्पश्चात् राजा व वैश्य दोनों नदीके तट पर पहुँचे और वहाँ देवी के दर्शन के लिए सर्वोत्तम देवी-सूक्त जपते हुए तपस्या में लीन हो गये।५। वही दोनों ने मिट्टी से देवी की मूर्ति स्थापित की और पुष्प, सुगन्ध, धूप यज्ञ एवं तर्पण से उनकी आराधना की।७।

निराहरीयतात्मानौतन्मनस्कौभमाहितौ।
ददस्तुस्तौबलिंचैवनिजगात्रामृगुक्षिवम्।८
एवंसमाराधयतोस्त्रिभिर्वैर्षर्यतातात्मनोः।
परितुष्टाजगद्धात्रीप्रत्यक्षप्राहचंडिका।९
यत्प्रार्थ्यतेन्वयांभूपत्वयाचकुवन्दन।
मत्तस्तत्प्राप्यतांसर्वंपरितुष्टाददामितद्।१०
ततौवव्रे नृपोराज्यमविभ्रश्यग्रजन्भनि।
अत्रैवचनिजराज्यंहशत्रुगलवलात्।११
सोपिवैश्यस्ततोज्ञानंवव्रे निर्विष्णमानसः।
ममेत्हमितिप्राज्ञासगविच्युतिकारकम्।१२
स्वल्पैरहोभिनृपतेस्वराज्यंप्राप्स्यतेभवान्।
हत्वारिपूनस्खलितवततत्रभविष्यति।१३

बृतश्चभय:संप्राप्यजन्मदेवाद्विवस्वन: ।
सार्वणिकौनाममनुभवान्भुविभविष्यति ।१४
वैश्यवर्यंत्वयास्यास्त्तोवरोयश्चामिवाँछित: ।
तप्रयच्छामिससिद्धयैतदज्ञानभविष्यति ।१५
इतिदत्वातयार्देवीयथाभिलषितवरम् ।
वभवाहितासद्योभक्त्याताभ्यामभिष्टुता ।१६
एवदेंव्य:वरलब्ध्वासुरण:क्षत्रियर्यभ: ।
सूर्यज्जन्मसमासाद्यसार्वणिभवितामनु: ।१७

वे दोनों आहार विना अथवा सूक्ष्म आहार लेकर आराधना में लीन हुए और उन्होंने अपने शरीर से रक्त की बलि दी ।८। इस तरह तीन वर्ष पर्यन्त एकाग्र चित्त से तपस्या करने पर जगत् उद्धारक चण्डिका ने प्रसन्न हो उनके सम्मुख आकर कहा ।९। देवी ने कहा—हे राजा ! और हे श्रेष्ठ कुल वैश्य ! तुम तो मेरी आराधना करते हो, तुम मेरे समीप होकर सभी-इच्छित फल प्राप्त करोगे, मैं प्रसन्न होकर तुम्हें प्रदान करती हूँ ।१०। मार्कण्डेयजी ने कहा-इनके पश्चात् नृप ने वर माँगा कि द्वितीय जन्म में अखंड-राज्य और इस जन्म में वल द्वारा अपने शत्रुओं को नष्ट कर अपना राज्य पुन: पा सकूँ ।११। पीड़ित मन वाले विवेकी वैश्य ने 'यह मेरा' और 'मैं' के मोह नाश करने वाला ज्ञान माँगा ।१२। देवी ने कहा—हे राजा ! कुछ ही समय में तुम शत्रुओं का शमन करके अपने राज्यको पुन: प्राप्त करोगे एवं भविष्य में तुम्हें अपने राज्य का त्याग नहीं करना होगा ।१३। फिर मरने के बाद तुम उत्पत्ति लाभ प्राप्त करके पृथिवी पर सावर्णि नामक प्रसिद्ध मनु होओगे ।१४। हे वैश्य ! तुमने जो वर मुझसे माँगा है, उसकी सिद्धि के लिए तुमको वर प्रदान करती हूँ ।१५। मार्कण्डेय ने कहा—इस प्रकार उन दोनों को इच्छित वरदान कर तुरन्त ही वह अन्तर्धान हो गई । राजा सुरथ देवी से वर प्राप्त करके सूर्य देव से उत्पत्ति लाभ प्राप्त कर पृथिवी पर सावर्णि नामक मनु होंगे ।१६-१७

८६—रुचि मन्वन्तर कथन

सार्वणिकमिदंमस्यक्प्रोक्तंमन्वन्तरंतव ।
तथैवदेवीमाहात्म्यमहिषासुरघातम् ।१
उत्पत्यश्चादेव्यांताद्वणाञ्चमहाहवे ।
तथैवसंभवोदेव्यांश्चामुण्डायांयथाभव ।२
शिवदूत्याश्चमाहाहात्म्यंवधःशुम्भनिशुम्भयोः ।
रक्तबीजवधश्चैवसर्वमेतत्तवोदित ।३
श्रूयतांमुनिशार्दूलसावर्णिकमथापरम् ।
दत्तपुश्चसावार्णिर्भावीयोनवमामनुः ।४
कथयामिमनोस्तस्ययेवामुनयौनृपाः ।
परामरीचिभर्गाश्चसुर्माणस्यथासुराः ।५
एतेत्रिधाभविष्यन्तिसर्वेद्वादशकागणाः ।
तेषामिन्द्रोभविष्यस्तुसहस्राक्षामहास्ल. ।६
साम्प्रतकार्तिकेय योवन्हिपुत्रःषडाननः ।
अद्भुतोनातकोऽपोभावीतस्यारेमनोः ।७

मार्कण्डेय जी ने कहा—हे ऋषि श्रेष्ठ ! यह सार्वणिक का मन्वन्तर आपसे वर्णन किया एवं इसी सन्दर्भ में देवी माहात्म्य महिषासुर शमन ।१। घोर रण में मातृगणों एवं देवी की उत्पत्ति, चामुण्डा देवी की उत्पत्ति ।२। शिवदूती माहात्म्य, शुम्भ-निशुम्भ और रक्त बीज वध इन सभी को उचित से आपसे कहा ।३। हे ऋषिवर ! अब नवें दक्षपुत्र सार्वणिक के मन्वन्तर का वर्णन सुनो ।४। उसमें मनु के मानवकाल में जो देवता मुनि और राजा होंगे, वह सुनो । पाराशर मरीचि, भर्ग और सुधर्मा देवताओं के ।५। यह तीन गण एवं प्रत्येक गण में बारह संख्यक देवगण है । वर्तमान बलि पुत्र षडानन कार्तिकेय, इस भविष्य के मन्वन्तर में महा पराक्रमी सहस्राक्ष इन्द्र होंगे ।६-७।

मेधातिथिर्वसु:सत्योज्योतिष्मान्द्यु तिमांस्यथा ।
सप्तर्षयोऽन्व:सवलस्तथान्योहव्यवाहनः ।८
अष्टकेतुर्हर्वैकेतु खड्गहस्तोनिरामयद् ।
पृथश्रवास्तथार्चिष्मान्मूरिद्यु म्नीवृहदभयः ।६
एतेनृपसुतास्तस्यदत्तपुत्रस्यवैनृपाः ।
मनोस्तुदशमस्यान्थच्छ्रणुमन्वन्तरद्विज ।१०
मन्वन्तरेचदशमेब्रह्मपुत्रस्यधींमतः ।
सुखासोनानिरुद्धाश्चद्विप्रकारा:सुरास्मृताः ।११
शतसँख्याहितेदेवाभविष्याभाविनामनोः ।
यत्पुत्राणांशतभावितद्देवानांतदाशतम् ।१२
शान्तिरिन्द्रस्तथाभाव सर्वेरिन्द्रगुणैर्यु तः ।
सप्तर्षीस्तान्निबोधत्वयेभविष्यान्तवैतदा ।१३
आपोमूर्तिहबिष्मांश्चसुकृतीसत्यएवच ।
नाभागोऽप्रतिमश्चैववासिष्ठश्चैवसप्तमः ।१४

उस समय मेघातिथि, वसु, सत्य, ज्योतिष्मान् द्यु तिमान्सवल एवं हव्य वाहन ऋषि होंगे ।८। धृष्टकेतु, वर्हकेतु, खड्गहस्त, निरामय पृथु-श्रवा, अर्चिष्मान् भूरिद्यु म्न एवं बृहदभय ।६। दक्ष-पुत्र सावर्णिक मनु पुत्र नृप होंगे । हे ब्राह्मण ! तत्पश्चात् दशम मनु के दूसरे मन्वन्तर को श्रवण करो ।१०। इस मन्वन्तर में महा बुद्धिमान् ब्रह्माजी के पुत्र दशम मनु होंगे और उनके मानव-काल में सुखासीन एवं निरुद्धादि नाम के तीन तरह के सुरगण होंगे ।११। भविष्यत मनु के मन्तवन्तर में भावी सुबरण सौ होंगे, इस मानव-काल में प्राणियों की संख्या भी सौ और सुरगण की संख्या भी सौ होंगी ।१२। इन्द्र के समस्त गुणों से पूर्ण उस समय इन्द्र होंगे सप्त मुनियों के नाम आपोमूर्ति, हविष्मान् सुकृत, सत्य नाभाग, अप्रतिम एवं सप्तम वशिष्ठ हैं ।४०।

सुक्षेत्रश्चोत्तमौजाश्चभूरिषेणचवीर्य्यवान् ।
शतानीकोऽथवृषभोह्यनमित्रोजयद्रथः ।१५

भूरिद्युम्नःसुपर्वाचतस्यैतेतनयामनौः ।
भविष्याधर्मपत्रस्यसावर्णस्यन्तरश्रृणु ।१६
बिसगमाःकामाश्चनिर्माणरमयस्तथा ।
त्रिःप्रकारभविष्यतिएकैकस्त्रि शकोगणः ।१७
मासर्तु दिवसायेतुनिर्माणपतयस्तुते ।
विहङ्गमारात्रयोऽथमौहूर्त्ता कामगागणाः ।१८
इन्द्रोवषांख्योभावितातेषां ख्यातविक्रमः ।
सविष्मांश्चवरिष्ठश्चऋष्टिरन्यस्यथारुणिः ।१६
निश्वरश्चानगश्चवविष्टिश्चन्योमहामुनिः ।
सप्तर्षयोऽन्तरेतस्मिन्नगितेजाश्चसप्तमः ।२०
सर्वत्रग सुर्मांचदेवांनीकःपुरुद्वहः ।
हेमधन्वाहृढायश्चभाविनस्तत्सुतानृपा ।२१

सुक्षेत्र, उत्तभोजा, भूमिषैण, वीर्यवान् शतानीक, वृषभ, अनमित्र, जयद्रथ ।१५। भूरिद्युम्न और सुपर्वा दश पुत्र दशम मनुके हैं, अन्य मनु धर्म पुत्र सावर्ण का मन्वन्तर इस प्रकार है ।१६। विहंगभ कामागा एवं निर्माण पति तीन देवताओं के हैं और प्रत्येक गण में तीस सुर होंगे ।१७। मास, ऋतु एवं दिवस निर्माण-पति हैं, रात्रि विहङ्गमदेव और सम्पूर्ण मुहुर्त जन्म बिषयकामग सुरों के गण हैं ।१८। महा पराक्रमी वृषाख्य इन्द्र होंगे । मन्वन्तर की अवधि में हविष्मान, वसिष्ठ, अरुण-तनय ।१६। निश्वर, अवद्य, विष्टि एवं अग्नि देव सप्तर्षि होंगे ।२०। सर्वत्रब, सुशर्मा, देविनाक, पुरुद्रह हेमधन्वा व दृढ़ायु मनुके पुत्र होंगे।२१

द्वादशेरुद्रपुत्रस्थप्राप्ते मन्वन्तरेमनोः ।
स वर्णाख्याश्चयेदेवामुनयश्चश्रृणुष्वतान् ।२२
सुधर्माण सुमनसोहरितोरोहतिस्तथा ।
सुवर्णाश्चसुरास्तत्रपञ्तेचैदशाकागणाः ।२३
तेषामिन्द्रस्तुविज्ञेयऋतधामामहाबलः ।
सर्वैरिन्द्रगुणर्युक्ताःसप्तर्षीनपिमेत्तणु ।२४

द्यु तिस्तपस्वीसुतपास्तपोमूर्तिस्तपोनिधिः ।
तपोरतिस्तथैवान्यःसप्तमस्तुतपोधृतिः ।२५
देववानुपदेवश्चदेवश्रेष्ठोविदूरथः ।
मित्रवान्मित्रविन्दश्चभाविनस्यत्सुतानपाः ।२६

सावर्ण मनु के द्वादश मन्वन्तर के बीज जो देव और ऋषि होंगे, अब उनका वर्णन सुनो ।२२। उसके मन्वन्तर में सुधर्मा सुमहा, हरित, रोहित एवं सुवर्ण इस प्रकार के देवता होंगे और प्रत्येक गण में दश देवता होंगे ।२३। इन्द्र के समस्त गुणों से युक्त पराक्रमी ऋतुधामा इन्द्र होंगे । सप्तर्षियों का वर्णन सुनो ।२४। सप्तर्षियों के नाम हैं द्युति, तपस्वी, सुतपा तपोमूर्ति, तपोनिधि तपोरति एवं सप्तमत तपोधुति । ।२५। देववान्, उपदेव, देवश्रेष्ठ, विदूरथ मित्रबान् एवं मित्रविन्द उस मनु के पुत्र एवं भावी नृप होंगे ।२६।

त्रयोदशस्यपर्य्याये रौच्यख्यस्यमनोःसुरान् ।
सप्तर्षींश्चनृपांश्चैवगदतोमेनिशामय ।२७
सुधर्माणःसुरास्तत्रषुमर्माणस्तथापरे ।
नुशमणि सुराह्येतेसमस्तामुनिसत्तम ।२८
महाबलोमहावीर्य्यस्तेशामिन्द्रादिवस्पति. ।
भविष्यानथसप्तर्षीन्गदेतीनेनिशामय ।२९
धृतितानव्ययश्चैवतत्त्वशीनिरुत्सुक ।
निर्मोह सुतपाश्चाश्योतिवप्रकम्पश्चसप्तमः ।३०
चित्रसेनाविचित्रश्चनियतिर्निभैयोहढः ।
सुनेत्रःक्षत्रबुद्धिश्चसुव्रयश्चैवतत्सुता ।३१

अब रोच्य नाम के तृयोदश मनु के मन्वन्तर में जो सप्तर्षि और उनके पुत्र राजा होंगे; उनका वर्णन सुनो ।२७। हे ऋषि श्रेष्ठ ! उनके मन्वन्तर में सुधर्मा और सुकर्मा देवता होंगे ।२८। महापराक्रमी दिवस्पति इन्द्र होंगे । साथही सप्तर्षियोंके विषयमें भी सुनो।२९। धृतिमान् अव्यय, तत्वदर्शी निरुत्सुक, निर्मोह, सुतपा एवं सप्तम निष्प्रकम्प

सप्तर्षि होंगे ।३०। एवं रौच्य मनु के पुत्र चित्रसेन, विचित्र नियति, निर्भय, दृढ़, सुनेत्र, क्षत्रबुद्धि और सुव्रत नामक पुत्र होंगे ।३१।

८७–रुचि को पितरों का गार्हस्थ्य उपदेश

रुचिः प्रजापतिःपूर्वंनिर्ममीर्निरहंकृतः ।
यत्रास्तमितशायीचचचारपृथिवीमिमांम् ।१
अनग्निमनिकेतंन्समेकाहारमनाश्रमम् ।
विमुक्तसङ्गवंदृष्ट वाप्रोचुस्तंसत्पितरोमुनिम् ।२
वत्सकस्मात्वयापुण्योनकृतोदारसंग्रहः ।
स्वर्गापवगहेतुत्वापवन्धस्तेनातिशविना ।३
गृहोसमस्तदेवानांपितृणाञ्चतथार्हणाम् ।
ऋषीणामातथीनाञ्चकर्व्वल्लोकानुपाश्नुते ।४
स्वहोच्चारणोदेवश्न्स्वधौच्चारणतःपितृन् ।
विभत्यन्नदानेकमूताद्यनतिथोनपि ।५
सत्वंदैवाद्दिदनाद्बन्धबन्धमस्मदृणादपि ।
अवाप्नोषिपनुर्ष्यांषभूतेभ्यश्चदिनेदिने ।६
जतुत्पाद्यसुतान्देवानसन्तर्प्यपितृ स्तथा ।
भूतादीश्चचंभौढयात्सुगतिगन्तुमिच्छसि ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—प्राचीन काल की बात है कि प्रजापति रुचि ने समस्त ममता का त्याग कर दिया और अहङ्कार रहित होकर जहाँ भी सूर्यास्त हो जाए, वहीं सो जाते थे इस प्रकार से पृथिवी में भ्रमण करने लगे ।१। उनके पितरों ने जब उन्हें अग्नि रहित, गृह-रहित, एका रही, निराश्रय और संग त्यागी के रूप में देखा तो इस प्रकार बोले ।२। पितरों ने कहा—हे वत्स ! तुमने स्त्री का परिग्रहण क्यों नहीं किया, क्योंकि वह और मोक्ष का करण, विवाह के न होने से तो सभी बन्धन हैं ।३। सभी देवता, पितर, ऋषि, अतिथि आदि का सत्कार करके ही गृहस्थ स्वर्गादि लोक के सुख भोगते हैं ।४। स्वाहा

कहकर देवताओं की, स्वधा कहकर पितरों की और अन्न देकर अतिथि की सेवा रूपी यह तीन ऋणों को चुकाकर ही पुरुष गृहस्थ होता है। तुम इस प्रकार दिनों दिन देवता, पितर, मनुष्य और जीवों के ऋण में बन्धन को प्राप्त हो रहे हो।५-६। पुत्र को उत्पन्न किये बिना, देवताओं और पितरों का तर्पण किये बिना तथा कर्मों का अनुष्ठान किए बिना श्रेष्ठ गति पाने की किस प्रकार आशा करते हो ? ।७।

क्लेषमेवैहिकपुत्रमन्योऽयभवेत्तरवः।
मृतस्यनरकतद्वत्क्लेशमेवान्वजन्मति ।८
परिग्रहोऽतिदुःखायपायाधोगतेस्तथा।
भत्रत्यतोमयापूर्वंनंकृतोदारसंग्रह ।९
आत्मनःसँयमोयोऽयक्रियतेक्षनितन्त्रणात्।
सभुक्तिहेतुर्नभवत्यसावपिपरिग्रहात् ।१०
प्रक्षाल्यतेऽर्वानिवसवदोत्मानिष्परिग्रहं।
समत्वपङ्कदिग्धोऽपिचित्ताम्भोभिर्वरहिहत् ।११
अनेकभ सम्भूतकर्मपङ्काञ्चिताबुधै।
आत्मासंद्वासनातोयै प्रक्षाल्यौनियतेन्द्रियैः ।१२
युक्त प्रक्षालनंकर्तु मात्मनोनियतेन्द्रियैः।
किन्तुलेपायमार्गोव्यंयत्रत्वपुत्रवर्तसे ।१३
नंचणदीनैरशुभतुद्यतेऽनभिसन्धितैः।
तथैस्तथोपभोगश्चपर्वंकमंशुभाशुभै ।४

हे पुत्र ! तुमको जिस-जिस क्लेशकी प्राप्ति होगी उस-उस को हम भले प्रकार जानते हैं, जैसे मरने के पश्चात् नरक भोगने वाला दुःख पाता है, वैसे ही तुम्हें जन्मजन्मान्तर में दुःख भोगने होंगे।८। रुचि ने कहा-स्त्री का ग्रहण अत्यन्त दुःख का देने वाला और पाप का कारण ही है, उसी से अधोगति होती है, इसी कारण मैंने स्त्री परिग्रह नहीं किया।९। इन्द्रियों का दमन करने के लिए आत्म संयम करना ही मोक्षका कारण है, दारा परिग्रह कभी भी मोक्ष का कारण नहीं हो

सकता ।१०। ममता रूपी कीचड़ में लिप्त होने वाले आत्मा को जो परिग्रह हीन पुरुष नित्यप्रति चित्त-रूपी जल से धोते हैं, वही पुरुष श्रेष्ठ हैं ।११। अनेक जन्मों में उत्पन्न कर्मरूपी कीचड़ में सने हुए आत्मा को सद्वासना रूपी जल से स्वच्छ करना ही बुद्धिमानों को उचित है।१२। पितर बोले-यह ठीक है कि संयतेन्द्रिय पुरुषों की आत्मा को स्वच्छ करना चाहिए, परन्तु हे वत्स ! तुम जिस मार्ग पर चल रहे हो, क्या वह मार्ग मोक्ष प्राप्ति कराने वाला है ? ।१३। जैसे निष्काम दान से अमङ्गल का नाश होता है, जैसे ही शुभ-अशुभ फल के भोग से पूर्व जन्म के संचित कर्म का नाश होता है ।१४।

एवनवन्धोभववतिकुर्वत:कारणात्मक: ।
नचबन्धायातत्कर्मभवत्यनभिसन्धितम् ।१५
पूर्वकर्मकृतंभोगै:क्षोयतेऽहर्निशतथा ।
सुखदु:खात्माकैर्वंतसपुण्यापुन्यात्माकर्नृणाम् ।१६
एवप्रक्षाल्यतेप्राज्ञैरात्माबन्धाच्चरक्ष्यते ।
नत्वेबमविदेकनापाकेनलिप्यते ।१७
अविणोपटयतेवेदै कर्ममार्ग:पितामहा ।
तत्कथकर्भणोमार्गेभवन्तोयोजयन्तिमाम् ।१८
अविद्यासत्यमेवैतत्कर्मनैतन्मृषावच: ।
किन्तुविद्यापरिप्राप्तौहेतु:कर्मनसंशय: ।१९
विहिताकरणत्पुंभिरदूभि:क्रियतेतुय: ।
संयनोक्तयेतासोप्रत्युताऽधोमतिप्रद: ।२०
प्रक्षालयामीतिभवान्वत्सात्मान्तुमन्यते ।
विहिताक णोद्भुतै: पापैस्त्वन्तुविलिप्यसे ।२१
अविद्याप्युपकारायविषवज्जायतेनृणाम् ।
अनुष्ठिताध्युपायेनवन्धायायतोहिसा ।२२
तस्माद्वत्सुकुरुष्वविधिवश्दारसंग्रहम् ।
माजन्मविफलतेऽतुअसम्प्राप्यतुलौकिकम् ।२३

अनभिसन्धि के कर्म बन्धन का कारण न होने से कर्म करने वाली को ही संसार के बन्धन में नहीं पड़ता ।१५। हे पुत्र ! सुख दुःख के रूप में भोगे जाने वाले भोग से ही पूर्व जन्म के संचित पुष्प पाप युक्त कर्म दिन रात क्षीण होते रहते हैं ।१६। बुद्धिमान मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अधिक्षेश रूप पाप के कीचड में निमग्न न हों और आत्मा को इस प्रकार स्वच्छ करे तथा बन्धन से अपने को बचावें ।१७। रुचि ने कहा—हे पितरगण ! वेद में कर्म मार्ग को ही अविद्या कहा गया है फिर आप मुझे कर्म मार्ग में क्यों प्रवृत्त करना चाहते हैं ।१८। पितरों ने कहा—कर्ममार्ग को अविद्या कहा है वह यथार्थ है, परन्तु कर्म के द्वारा ही यह वचन असत्य हो जाता है, क्योंकि कर्म से ही तो विद्या की प्राप्ति होती है ।१९। सभी योग्य कार्यों के न करने से असत् पुरुष मोक्ष के लिये जो संयमादि करते हैं, अन्त में वह अधोगति को प्राप्त होते हैं ।२०। हे पुत्र ! तुम समझते हो कि मैं आत्मा को धो रहा हूँ, परन्तु यह निश्चय समझो कि विहित कर्म के न करने से उसके पाप में जलते हैं ।२१। जैसे अपकार करने वाला विष औषधि रूप में मनुष्य का उपकार करने वाला होता है, वैसे ही यह अविद्या भी मनुष्य के लिए उपकारिणी होती है, अन्य गुण वाला होने पर भी अनुष्ठित कार्य उचित उपाय के द्वारा हमारे लिये कल्याणप्रद होता है ।२२। हे पुत्र ! इसलिए तुम अब विवाह करलो, जिससे सांसारिक कर्म की प्राप्ति न होने से तुम्हारा जन्म असफल न हो ।२३।

८८—रुचिकृत पुत्रस्तव

सते पितृवाक्येनभृशयद्विग्नमानसः ।
कन्याभिलाषीविप्रार्षि परिवभ्राममेदिनीम ।१
कन्याभयभुमानोऽसौपितुवाक्याग्निदीपितः ।
चिन्तामवापमहतोमतीवोष्टिग्नमानसः ।२
किंकरोमिक्वगच्छामिकथमेदारसंग्रहः ।
क्षिप्रंभभवेत्पितृणाँयौममम्युक्ककारकः ।३

इतिचिन्तयतस्यमतिर्जातामहामहात्मनः ।
तपसारायाम्येनब्रह्माणंकमलोद्भवम् ।४
ततोवर्षैशतंदिव्यपस्तेपेसवेधसम् ।
दिदृक्षुःसुचिरंकालंरनियमास्थितः ।५
ततास्वदर्शयामासब्रह्मालोकपितामहः ।
उवावतप्रसन्नोस्मीत्युच्चतामभिवाञ्छितम् ।६
ततोऽसौप्रणिपत्याहब्रह्माणजगततिम् ।
पितृणांवचनात्तं नयत्कर्तुमभिवाञ्छितम् ।
ब्रह्माचाहरुचिविप्रश्रुत्वातस्ताभिबाञ्छितम् ।७

मार्कण्डेय जी ने कहा ब्रह्मर्षि रुचि ने पितरों का ऐसा मन्तव्य सुनकर उद्विग्न चित्त से कन्या की इच्छा की और इसके लिये पृथिवी में विचरण करने लगे ।१। पितरों की वाणी रूप अग्नि में तपने के पश्चात् कन्या प्राप्त होने से उन्हें बड़ी चिन्ता हुई ।२। पितरों का अभ्युदय करने वाला मेरा विवाह कार्य किस प्रकार से शीघ्रता पूर्वक सम्पन्न हो ? इसके लिए मुझे क्या करना और कहाँ जाना चाहिए ? ।३। इस प्रकार चिन्तन करते-करते उन्होंने निश्चय किया कि मुझे तपस्या के द्वारा भगवान् ब्रह्माजी की आराधना करनी चाहिए' ।४। ऐसा निश्चय कर ब्रह्माजी को प्रसन्न करने के लिए विधिवत दिव्य सौ वर्ष तक तप किया ।५। तब ब्रह्माजी उनके समक्ष साक्षात रूप से प्रकट हुए और रुचि से उन्होंने कहा—मैं प्रसन्न हुआ हूँ, तुम अपना इच्छित वर माँगो ।६। यह सुनकर रुचि ने ब्रह्माजी को प्रणाम किया और पितरों के आदेशानुसार जो कामना की है वह उनसे निवेदन की, तब रुचि की इच्छा जानकर ब्रह्माजी बोले ।७।

प्रजापतिस्त्वभवितास्रष्टव्याभवयाप्रजाः ।
सृष्टवाप्रजाःसुतान्विप्रससुत्पाद्याक्रितास्तथा ।८
कृत्वाकृताधिकारस्त्वतत सिद्धमवाप्स्यसि ।
मत्वयथोक्त पित्रभिःकुरुदारपरिग्रहम् ।९

कामचेममभिध्यायक्रियतांडितृपूजनम् ।
तएवतुष्टा पितरःप्रदास्यन्तितवेप्सितान् ।
पत्नीसुतांश्चसन्तष्टाः किनदद्यु:पितामहः ।१०
इत्युपेर्वंवनश्रुत्वाब्रह्माणोऽव्यक्तजन्मनः ।
नद्याविविक्त पुलिनेचकारपितृतर्पणम् ।११
तुष्टावचपितृन्विप्र:स्तवैरेभिस्तथाहृतः ।
एकाग्रप्रयताभूत्वाभक्तिनम्रात्मन्धरः ।१२
नमस्येऽहपितृञ्छ्रद्धेयेवसन्त्यधिदेवताः ।
देवैरपिहितप्यन्त्येयेश्राद्धेस्वधोत्तरैः ।१३
नमस्तेऽहपितृन्स्वर्गपेतर्प्यन्तेमहर्षिभिः ।
श्राद्धैर्मनोदयेभक्त्याभुक्तिमुक्तिमभीप्सुभि ।१४

उन्होंने कहा हे ब्रह्मन् ! तुम प्रजा को उत्पन्न करने वाले प्रजापति होंगे जब तुम प्रजाकी सृष्टि और संतानोत्पत्ति करके समस्त किया ।८। क के अधिकार से च्युत हो जाओगे, तब तुम्हें सिद्धि की प्राप्ति होगी । इसलिए पितर गण तुम्हें विवाह करने का आदेश देते हैं ।९। इसे अपना कर्तव्य मानकर पितरों का पूजन करो, वह सन्तुष्ट होकर तुम्हें इच्छित पत्नी और पुत्र देंगे ? सन्तुष्ट हुए पितृगण क्या नहीं दे सकते ? ।१०। मार्कण्डेयजी ने कहा-अव्यक्त जन्मा ब्रह्माजी का ऐसा आदेश पाकर रुचि ने नदी के तट पर पितरों का तर्पण किया ।११। उन्होंने अत्यन्त आदर पूर्वक, एकाग्रचित से, भक्तिभाव के द्वारा मस्तक झुकाकर स्तोत्र के द्वारा पितरों को प्रसन्न किया ।१२। रुचि ने कहा—श्राद्ध काल में जो अधिदेवता रूप से निवास करते हैं और श्राद्ध में देवगण भी स्वाहा कर जिनका तृप्ति विधान करते हैं, उन पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।१३। जिन्हें महर्षिगण श्राद्ध में तृप्त करते हैं, उन पितरों को नमस्कार है।१४

नमस्तेऽहंपितृन्वर्गेसिद्धाःसन्तर्पयन्त्यान् ।
श्राद्धेषुदिव्येः सकलैरुपहारैरनुत्तमः ।१५

नमस्येऽहं पितॄन्मर्त्यैरर्च्यन्ते भुवियेसदा ।
श्राद्धेषुश्रद्धयामोष्टलोकप्राप्तिप्रदायिनः ।१७
नमस्येऽहपितॄन्विप्रैरर्च्यन्तेभुवियेसदा ।
वाञ्छिताभोष्टलाभायप्रजापत्य प्रदायिनः ।१८
नमस्येऽहपितॄन्येवैर्प्यन्तेऽरण्यवासिभिः ।
वन्यैश्राद्धेयताहारैस्तपोनिर्धूतकिल्विषैः ।१९
नमस्येऽपितुन्विप्रैर्नैष्टिकव्रतवारिभिः ।
येसयतात्मभिर्नित्यसतर्प्यन्तेसमाधिभिः ।२०
नमस्येऽहपितॄन्श्राद्धै राजन्यास्तर्पयन्तियान् ।
काव्यैरशेषैविधिवल्लोकत्रफलप्रदान् ।२१

जिन पितरोंको सिद्धिगण स्वर्गमें श्राद्धके समय सभी दिव्य उपहारों से तृप्त करते हैं, उनको नमस्कार करता हूँ ।१५। जिन पितरों की अत्युत्कृष्ट समृद्धि की कामना वाले गुह्यकगण भक्ति में तन्मय होकर पूजन करते हैं, उन पितरों को मेरा नमस्कार है ।१६। मर्त्यलोक के निवासी मनुष्यगण इच्छित लोकों के दाता जिन पितरों को श्राद्ध में श्रद्धा सहित पूजा करते हैं, उन पितरों को नमस्कार है ।१७। जो पितरगण प्रजापत्य पद प्रदान करने वाले हैं, वे ब्राह्मणोंके द्वारा इच्छित विषय की प्राप्ति के निमित्त पूजे जाते हैं जिन वन वासियों के पाप मिताहार और तपस्या के कारण क्षीण हो गए हैं, वे अन्य श्राद्ध द्वारा करते हैं, संयतात्मा नैष्ठिक ब्रह्मचारी विप्र जिन पितरों को समाधि द्वारा तृप्त करते हैं, तीनों लोकों में फल देने वाले जिन पितरों को क्षत्रियगण श्रद्धा पूर्वक कव्य देकर तृप्त करते हैं, उन पितरों को नमस्कार है ।१७-२२।

नमस्तेऽहपितॄन्वश्यैरर्च्यंतेभुवियेरदा ।
स्वकर्माभिरतैर्नित्यपुष्पधपान्नवारिभिः ।२२
नमस्येऽहपितॄञ्छाद्धैयशूद्र पापिभरक्तसः ।
सन्तप्यसेजगत्यत्रभाँम्नाख्यातासुकालिनः ।२३

नमस्येऽहंपितृञ्छ्राद्धैः पातालेयेमहासुरैः ।
सन्तर्प्यन्तेस्वधाहारास्त्यक्तदम्भमदैः सदा ।२४
नमस्येऽयेहं पितृञ्छ्रद्धै रच्र्यन्तेयेरसातले ।
भोगैरशेषैर्विधिवन्नागैः कामानभीप्सुभिः ।२५
नमस्येऽहं पितृन्छ्रद्धैः सर्पे सन्तर्पितान्सदा ।
तत्रैवविधिवन्मन्त्रभोगसक्षपत्समन्वितैः ।२६
पितन्नमस्येनिवसन्तिसाक्षाद्येदेवलोकेचतथान्तरिक्षैः ।
महीतलेयेचसुरादिपज्यास्तेभेवतीप्छन्तुमयोपनीनम् ।२७
पितृन्नमस्येपरमातमभतायेवैविमानेनिवसन्तिभूर्ताः ।
यजन्तियानस्तमलैर्मनोभियोंगीश्वराःक्लेशविमुक्तिहेतून् ।२८

अपने कर्म में लगे हुए वैश्य जिन पितरों को पुष्प, धूप, अन्न और जल के द्वारा तृप्त करते हैं, उन पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।२२। इस संसार में जिन सुकालीन नामक प्रसिद्ध पितरों को शूद्रगण श्रद्धा भक्ति पूर्वक तृप्त करते हैं, उन पितरों को नमस्कार है ।२३। स्वधाहार पितरों को पातालवासी महा असुर दम्भ और मद का त्याग करके श्राद्ध के द्वारा तृप्त करते हैं, उन पितरों को नमस्कार है ।२४। काम की अभिलाषा वाले नागवंशीय रसातल में जिन पितरों को अशेष को अशेष भोग और श्राद्ध से सदा तृप्त करते हैं, उन पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।२५। जिन पितरों को वे सर्पगण मन्त्र, भोग और सम्पत्ति से युक्त होकर श्राद्ध द्वारा तृप्त करते हैं, उन पितरों को नमस्कार करता हूँ ।२६। जो पितरगण देवलोक और अन्तरिक्ष में प्रत्यक्ष रूप से रहते हैं और भूतल के देवताओं द्वारा जिनका अर्चन किया जाता है, उनको नमस्कार है, वह मेरी प्रार्थना स्वीकार करें ।२७। जो परम आत्मभूत पितर विमान में साक्षात् निवास करते हैं, तथा जिनकी क्लेश नाशिनी वाणी द्वारा यज्ञ में आराधना करते हैं, उन्हें प्रणाम करता हूँ ।२८।

पितृन्नमस्येदिवियेचमूर्त्ता स्वधाभुजः काम्यभलाभिसन्धौ ।
मानशक्ताः सकलेप्सितानांमुक्तिवायेऽनभिसहितेषु ।२९

तृप्यन्तुतेऽस्मिन्पितरसमास्ताँइच्छावतायेप्रदिशन्तिकातात् ।
सुरस्वमिन्द्रत्वमतोऽधिकवासुतान्पशून्स्वानिवलगृहाणि ।३०
सोमस्ययेरशिमषुयेऽकबिम्बेशुक्लेविमानेचसदावसन्ति ।
नृप्यन्तुतऽस्मिन्पिरऽन्नतोयैंगेन्धादिनापुष्टिमितोंप्रजन्तु ।३१
येषादुतौग्नौहविषाचतृप्तयैंभुञ्जतेविप्रशरीसंस्थाः ।
तेषिण्डादानेनमुदप्रयान्तितप्यन्तुतेऽन्मिन्पितर ऽन्नतोयै ।३२
कब्यान्यशषश्रथिचयान्यभीष्टान्यतीवतेषाममत्र्चितम् ।३३
तेषांतुसान्निध्यमिहाप्तुपृष्पनन्धान्नभाज्येषुभयाक्तृतेषु ।३४
दिवेदिनेयेप्रतिह्लातेऽच्चर्मासाँतपूज्याभुवियेऽऐकाच ।
येवष्सर्रातिऽपूदयेचरुज्याप्रयान्तुतेनेपितरोऽशूतृप्तिम् ।३५

जो स्वर्ग में मूर्तिवान् रहकर काश्यफल के निमित्त स्वधा का आहार करते हैं और प्राणियों को इच्छित प्रदान करने में समर्थ हैं तथा निष्क म कर्म में मोक्ष प्रदान करते हैं, उन पितरों को प्रणाम है ।२६। जो प्राथियों को प्रादित वस्तु प्रदान करते हैं और देवत्व, इन्द्र तत्व अथवा इससे भी बढ़कर हैं तथा जो पुत्र, पशु बल, घर आदि कामना के अनुसार देते हैं वह पितरगण मेरे इस पूजन से तृप्ति को प्राप्त हों ।३०। जो पितरगण सोम किरणों, सूर्य बिम्ब और श्वेत विमान में निवास करते हैं वह मेरे द्वारा तृप्त होते हुए अन्न, जल, गदाधि से पुष्टि को प्राप्त हों ।३१। जो अग्नि में घृत की आहुति देने से तृप्ति को प्राप्त होते हैं । जो ब्राह्मण के देह में प्रविष्ट होकर भोजन-ग्रहण करते हैं तथा जो पिण्डदान से सन्तुष्ट होते है, वह पितरगण इस अन्न और अज के द्वारा सन्तुष्ट हों ।३२-३६। देवताओं द्वारा पूजित उन पितरों के लिए जो कव्य अभीष्ट हैं उन्हीं पुष्प, गन्ध अनादि पदार्थों को मैंने संग्रह किया है: वह इनके निकट आवें ।३४। जो नित्य प्रति पूजा ग्रहण करते और प्रतिमास अष्टका में पूजे जाते हैं, तथा वर्ष के अन्त जिनका पूजन होता है वह पितरगण मेरे इस पूजन द्वारा तृप्त हों ।३५।

पूज्य द्विजानाँकुमुदेन्दुभासोयेक्षत्रियाणांचनवार्कवर्णाः ।
तथाविशाँयेकनकावदाततोलीनिभाः शूद्रजनस्ययेच ।३६
त्रेऽस्मिन्समस्तामपुतुष्पगंधधूपाप्नतोयादिनिवेदनेन ।
तथाग्निहोमेनचयांतुतृप्तिसदापितृभ्याप्रणतोऽस्मितेभ्यः ।३७
येदेवपूर्ब्वाण्यतितृप्तिवेतोरश्नन्तिककव्यानिभुभाहुतानि ।
तृप्ताश्चयेभूतिसृजोभवतितृप्यन्तुतेस्मिन्प्रणतोऽस्तितेभ्य ।३८
रक्षांसिमूताग्यसुरांस्तथौग्राग्निनर्शियन्तस्त्वनिइद्रजानाम् ।
आद्या सुराणाममरेशपूज्या तृप्यनुतेऽस्मिप्रणताऽमितेध्यः ।३९

अग्निष्वात्तार्वहिषदआज्यपाः सोमपास्तथा ।
प्रजतुतृप्तिश्राद्धे स्मिन्पतरस्तर्पितामया ।४०
अग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राचींरक्षान्तुमेदिशम् ।
तथार्वहिषदः पान्तुयाभ्याँयेपितरस्मृताः ।४१
प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपिसीमपाः ।
पक्षाभूतपिशाकेध्यस्थथैवातुरदोषतः ।४२

जो पितरगण श्वेत वर्ण वाले और प्रभा से सम्पन्न होकर देवताओं के द्वारा पूजनीय होते हैं तथा नवोदित सूर्य के समान रक्त वर्ण वाले होकर क्षत्रियों के द्वारा पूजित होते हैं, जो स्वर्ग जैसी कान्ति वाले होकर वैश्यों द्वारा पूजे जाते हैं और नीलिमा रूप होकर शूद्रों द्वारा पूजनीय होते हैं ।३६। वह सभी पितरगण मेरे द्वारा किये गये पुष्प, धूप, अन्न तथा जलादि की भेंट और अग्निहोत्र से तृप्त हों, उन पितरों को मेरा प्रणाम है ।३७। जो अत्यन्त तृप्ति के लिये देवताओं के समक्ष होमे गये सर्व श्रेष्ठ अन्न रूप कव्य का आहार करके तृप्त होते अणिमादि आठों सिद्धियाँ प्रकट करते हैं, वह मेरे द्वारा तृप्ति को प्राप्त हों, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ ।३८। जो पितरगण राक्षस, भूत और विकराल असुरों को नष्ट करने वाले और अमङ्गल को मिटाने वाले हैं तथा जो देवताओं के आदि पुरुष और इन्द्र के पूजनीय हैं, वह पितरगण मेरे द्वारा तृप्त हों, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ ।३९। अग्निष्वात्ता, वहिर्षद, आज्यपा

और सोमपान पितरगण मेरे द्वारा तर्पण को प्राप्त होकर इस श्राद्ध में तृप्त हों ।४। अग्निष्वात्ता पितर पूर्व दिशा में मेरी रक्षा करें और वर्हिषद पितर दक्षिण दिशा में रक्षा करें ।४१। आज्यपा पितर पश्चिम दिशा में तथा सोतवा पितर दिशा में राक्षस, भूत, पिशाच और असुरों द्वारा उत्पन्न किये उपद्रव से रक्षा करें ।४२।

सर्वंतश्चाधिषस्तेषांयमोरक्षांकरोतुमे ।
विश्वोविश्वभुगाराध्योधर्म्मोधन्ये: शुभानन: ।४३
भुतिदोभुतिकृद्भुति: पितृणांयेगणानव: ।
कल्याण: कल्यताकर्त्ताकिव्यकल्पतराश्रय: ।४४
कल्पताहेतुरनघ: षडिमेतेगणा: स्मृता: ।
वरोवरेण्योवरद: पुष्टिदस्तुष्टिदस्तथा ।४५
विश्वपातातथाधातासप्तैवेतेतथागणा: ।
महान्महात्मामहितोमहिमाबान्महाबल: ।४६
गणा: पञ्चतथैतेपितृणांपापनाशना: ।
सुखदोधनदश्चान्घोधर्मदोअन्यश्चभूतिद: ।४७
पितुणांकथ्यतेचैतत्तथागणचतुष्टयम् ।
एकत्रिशत्पितृगथायैर्व्याप्तमखिलंजगत् ।
तेमेऽनुतृप्तास्तुष्यंतेयच्छन्तुचसदाहितम् ।४८

जिन पितरों के विश्व, विश्वभुक् आराध्य, धर्म, धन्य, शुभानन, भूतिद, भूतिकृत् और भूति यह नौ संख्यक गण हैं उनके अधिपतिमय मेरी सब ओर से रक्षा करें, कल्याण, कर्ताकल्य, कल्यतराश्रय ।४३-४४। कल्याण हेतु और अनघ यह छः प्रकार के गण जिन पितरों के हैं तथा जिन पितरों के वर, वरेण्य, वरद, पुष्टिद, तुष्टिद ।४५। विश्वपाता और धाता यह सात प्रकार के गण हैं तथा महान् माहात्म्य सहित, महिवान्, महाबल ।४६। यह पांचकार के गण जिन पितरों के हैं एवं सुखद, धनद, धमद और भूतिद ता यह चार प्रकार के पितरों के गण हैं, यह सब मिलाकर इकत्तीस पितरगण सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त किये हुए हैं,

वह सभी मेरे द्वारा तृप्ति को प्राप्त होकर मेरी कामना पूर्ण करें और मेरे लिये सदैव हितकारी हो ।४८।

८९–रुचि को पितरों का वरदान

एवतुस्तुवस्वतस्यतेजसोरापिरुच्छितः ।
प्रादुर्बभवससमागगनण्याप्तिकारकः ।१
तद्दृष्ट्वासुभहत्तेजःसमासाद्यस्थितजत् ।
जानुभ्यामवनिंगगत्वारुचिः स्तोत्रमिदजगौ ।२
अमूर्त्तानांचसूर्त्तानांपितृणांदीप्ततेजसाम् ।
नमस्याभिसतादेषांच्छानिनांदिव्यचक्षुषाम् ।३
इन्द्रादौ नांचनेतारोमक्षमारोचयोस्तथा ।
सप्तर्षीणांतथान्येषांतान्नमस्याभिकामदन् ।४
मत्वादीनाँमुनीन्द्राणांसूर्याचन्द्रमसोस्तथा ।
तान्नमस्यागहंसर्व्वान्पितरश्चार्णवेषुये ।५
नक्षत्राँग्रहाणाँचवाथ्वग्योनंभसस्तथा ।
द्यावापृथिव्योश्चतथानमस्याभिकृतांजलिः ।६
देवार्षीणांग्रसाणांचसर्ववीकनमस्कृतान् ।
अक्षय्यस्यसदादातृन्नस्येऽहंकृताँजलिः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—रुचि के इस प्रकार स्तवन किये जाने पर उनके समीप उच्च शिखायुक्त और आकाश व्यापी तेज सहसा प्रकट हुआ ।१। उस तेज को सम्पूर्ण विश्व को प्राच्छादित करके अवस्थित देखा तो रुचि ने जान से पृथिवी को स्पर्श करके इस स्तोत्र का कीर्त्तन किया ।२। रुचि बोले-उन ध्यान सम्पन्न दिव्य नेत्र, दीप्त तेज निराकार एवं पूजित पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।३। दक्ष, मरीचि सप्तर्षि तथा इन्द्रादि के नेता स्वरूप काम के देने वाले पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।४। मनु इत्यादि मुनीश्वरों तथा सूर्य-चन्द्रमा के नेता और काम के प्रदान करने वाले, समुद्र में और जल में अवस्थित उन

सभी पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ ।५। नक्षत्र, ग्रह, वायु, अग्नि, आकाश, स्वर्ग और पृथिवी के नेता तथा काम प्रदायक पितरों को हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ ।६। देवर्षियों के उत्पत्ति कर्त्ता, अक्षय फल के दाता और जीवों द्वारा नमस्कार किये जाने वाले पितरों का कार-बद्ध प्रणाम करता हूँ ।७।

प्रजापते कश्यपायसोयवरुणायच ।
योगेश्वरेभ्यश्वसदानमस्यामिकृतांजलिः ।८
ममागणेभ्यः सप्तभ्यस्तथालोकेषुसप्तसु ।
स्वयं भुवनमम्यामिब्रह्मणेयोगचक्षुषे ।९
सोमाधारान्पितृगणान्योगभूर्धिरांस्तथा ।
नमस्यामितणासोमवितरंजवतामह ।१०
अग्निरूपांस्तथैवान्यान्नमस्यामिपितनहम् ।
अग्नीयोममयविश्वयतएदशेषतः ।११
पेतुतेजतियेचैतेसोमसर्याग्निमूर्त्तयः ।
जगत्रूपिणश्चैवतथाब्रह्मस्वरूपिणः ।१२
तेभ्योऽलिलेभ्योयोगिभ्य पितृभ्योयतमानसः ।
नमोनमोनयस्तेमेप्रसीदतुस्वधाधुजः ।१३

प्रजापतियों में कश्यप और सोम वरुण, योगेश्वर स्वरूप हैं उन पितरों को मैं हाथ जोड़कर नमस्कार करता हूँ ।८। सात लोकों में सात गणों के मध्य स्थित हैं, उन्हें तथा जो योग चक्षु स्वयम् ब्रह्मा स्व-रूप है उन पितरों को नमस्कार करता हूँ ।९। जो पितर सोम के आश्रय योगमूर्ति, सोमरूप एवं जगत्पिता हैं, उनको मै प्रणाम करता हूँ ।१०। जिनके द्वारा अग्नि सोम और जगत् उत्पन्न हुआ है, उन अग्नि रूपी सभी पितरगण को मैं प्रणाम करता हूँ ।११। जो चन्द्र, सूर्य, अग्नि रूपी तेज में स्थित होकर विश्व स्वरूप और ब्रह्म स्वरूप है उन समस्त योगी पितरों को मैं अपने संयत मन के द्वारा बारम्बार नम-स्कार करता हूँ, वे स्वधा का आस्वादन करने वाले पितर मुझ पर प्रसन्न हों ।१२-१३।

एवं स्तुतास्ततेनतेजमुनिसत्तम ।
निश्चक्रमुस्तेपितरोभासयन्तोदिशोदश ।१४
निवेदितच्यत्तोनपुष्पगन्धान्लेपनम् ।
तत्भू षतानथसतात्ददृशे पुरत स्थितान् ।१५
प्रजिपत्यपुनर्भक्यापुनरेवकृतजिलिः ।
नमस्तुभ्यनमस्तुभ्यमित्याहपथगाहृतः ।१६
ततः प्रसन्नाः पितरस्तमचूमुं निसत्तमम् ।
वरवृणोष्वेतिसत्तानुवाचनतकन्धरः ।१७
सथप्रसर्गकतुत्वमादिष्टब्रह्मणामम् ।
सोऽहपुत्रौंसभीप्सामिधन्यांदिव्यांप्रजावतीम् ।१८
अद्यै वसद्य पत्नीतेभवत्वतिमनोरमा ।
तस्यांचपुत्रोभविताभवतोमनुरुत्तमः ।१९
मन्वन्तराधिहोधीमाँस्त्वन्नाम्नैवोपलक्षितैः ।
रुचेसैच्चवइतिख्यातियोयास्यतिजगऽत्रये ।२०
तस्यापिवहवः पुत्रामहाबलपराक्रमः ।
भविष्यन्तिमहात्मानः पृथिवीपरिपालकाः ।२१

मार्कण्डेय जी ने कहा—हे मुनीश्वर ! रुचि के द्वारा इस प्रकार स्तवन किये जाने पर दशों दिशाओं को प्रकाशित करते हुए पितरगण प्रकट हुए ।४। फिर उन्हें जो पुष्प, गन्ध कव्यादि अर्पण किया गया था, उससे विभूषित हुए पितरों को रुचि ने अपने सामने आते हुए देखा ।१५। तब तक वह भक्ति सहित हाथ जोड़कर प्रणाम पूर्वक सबको नमस्कार करने लगे ।१६। फिर पितरों ने प्रसन्न होकर मुनिवर रुचि से कहा—वर माँगो, इस पर रुचि ने ग्रीवा नीची करके निवेदन किया ।१७। रुचि बोले—मुझे ब्रह्माजी ने सृष्टि उत्पन्न करने का आदेश दिया है इसलिये मैं अब सन्तानोत्पत्ति के निमित्त भार्या प्राप्त करना चाहता हूँ ।१८। पितरों ने कहा—हे वत्स ! तुम्हें अभी इस स्थान में

मनोहारिणी भार्या की प्राप्ति होगी, उसके गर्भ में तुम्हारे श्रेष्ठ मनु पुत्र की उत्पत्ति होगी।१६। हे रुचे ! तुम्हारा वह पुत्र बुद्धिमान् मन्वन्तराधिपति होगा और तुम्हारे नाम के अनुसार ही उसकी ख्याति होगी अर्थात् वह 'रौच्य' नाम से विश्व में विख्यात होगा।२०। फिर उस रोच्य के भी महाबली, पराक्रमी, पृथिवी का पालन करने वाले बहुत से महात्मा पुत्र उत्पन्न होंगे।२१।

त्वचप्रजापतिभूर्त्वाप्रजाः सृष्ट्वाचतुर्विधाः ।
क्षीणाधिकरोधर्मज्ञततः सिद्धिमबाप्यसि ।२२
स्तोत्रणानेनचरोयोऽस्मांस्तोष्यतिभक्तितः ।
तस्यतुष्टावयंभीगानात्मज्ञानतथोत्तमम् ।२३
शरीरारोग्यमर्थंचपुत्रपौत्रादिकान्तथा ।
प्रदारुयामीनसंदेहोथचान्यदभिवांछितादम् २४
तस्मातपुण्यफललोकेवांछद्भिः सततनरैः ।
पितृणांचाक्षायाँतृप्तिस्तव्याः स्तोत्रेणमानवैः २५
वांछिद्भिः सततस्तव्याः स्तोशेथनेनवैयतः ।
श्राद्धेचयमभक्त्याअस्मत्प्रीतिकरस्तयम् ।२६
पठिष्यंति द्वजाग्याणाँभूंजतामपूरितः स्थितः ।
स्तोत्रश्रवणसप्रोत्यासन्निधानेपरेकृते ।२७
अस्माकमक्षयश्राद्धं तद्भविष्यत्‌तसशयम् ।
यद्यष्यक्षोत्रियंश्राद्ध यद्यष्पुपहृभवेत् ।२८

तुम भी प्रजापति होकर चार प्रकार की प्रजा उत्पन्न करोगे और जब धर्म ज्ञाता तथा अधिकार से क्षीण होंगे तब तुम्हें सिद्धि की प्राप्ति होगी।२२। जो मनुष्य इस स्तोत्र के सहित भक्तिभाव पूर्वक हमारा स्तवन करेंगे हम उन पर संतुष्ट होंगे और उन्हें भोग तथा श्रेष्ठ आत्मज्ञान प्रदान करेंगे।२३। जो शरीर की आरोग्यता धन पुत्र-पौत्रादि की कामना अथवा अन्याय अभिलाषा करेंगे वह इस स्तोत्र के द्वारा

हमारी स्तुति करने पर, हमसे अभीष्ट पदार्थ प्राप्त करेंगे ।२४। इसलिए संसार में पुण्यफल प्राप्ति की कामना वाले मनुष्य को इस स्तोत्रके द्वारा पितरों की अक्षय तृप्ति करनी उचित है ।२५। जो हमें प्रसन्न करना चाहें वह इस स्तोत्र को निरन्तर पाठ करें, श्राद्ध के समय भोजन करते हुए ब्राह्मणों के समक्ष स्थित होकर जो मनुष्य हमारी प्रीति उत्पन्न करने वाले ।२६। इस स्तोत्र का भक्ति पूर्वक पाठ करेगा और स्तोत्र सुनने से उत्पन्न हुई प्रीति के द्वारा निकट में स्थिति को इष्ट मानेगा, उसके द्वारा हमारा अक्षय श्राद्ध अवश्य ही सम्पन्न होगा, चाहे श्राद्ध क्षोत्रिय रहित अथवा दोष युक्त भी हो ।

अन्यायौपार्त्तवित्तेनयदिवकृतमन्यथा ।
अश्राद्धाहैरुपहतैरुपहारैस्थाकृतम् ।२९
अकालेश्वाऽदेशेविधिहीनमथापिवा ।
अश्रद्धयावापुरुषैर्दस्भमाश्रित्यवाकृतम् ।३०
अस्माकतृप्तयेश्राद्धतथाप्येयदुदोरणाद् ।
यत्रैतत्पटयेश्राद्धे स्तोत्रमस्मत्सुखावहम् ।३१
अस्माकं जायतेतप्तिस्तत्रद्वादशवार्षिकी ।
हेमतेद्वादशाब्दानितृप्ततेतत्प्रयच्छति ।३२
शिशरेद्विगुणाब्दांश्चतृप्तिस्तोत्रमिदशुभम् ।
वसन्तेषौडशसमास्तृप्तयेश्राद्धकर्मणि ।३३
ग्रीष्मेचषोडशैवैतत्पठितंतृप्तिकारकम् ।
विकलेऽपिकृतेश्राद्धे स्तोत्रेणानेनसाधिते ।३४
वर्षासुतृप्तिरस्माकमक्षयाजातेरुचे ।
शरत्कालेऽपिपठितंश्रद्धालेपयच्छति ।३५
अस्माकसेतत्पुरुषस्तृप्तिपचदशाब्दिकीम् ।
यस्मिन्गृहेचलिखितमेत्तष्ठतिनित्यदा ।३६

सन्निधानकृतेश्राद्धे तत्रास्माकं भविष्यति ।
तस्मादेतत्वयाश्राद्धे विप्राथाँभूञ्जतापुरः ।३७

या अन्याय द्वारा उत्पादित धन के द्वारा किया गया या असमय या विपरीत स्थान में या अविधि से अश्रद्धा पूर्वक अथवा दूषित उपहार से सभी मनुष्यों के द्वारा सम्पन्न किया जाय ।२८-३०। तो भी इस स्तोत्र का पाठ होने से वह श्राद्ध तृप्ति देने वाला होगा, जिस श्राद्ध में हमें खुशी करने वाले इस स्तोत्र का पाठ होता है ।३१। उस श्राद्ध से हमें बारह वर्ष तक तृप्ति रहती है, या हेमन्त काल में यह स्तोत्र हमें बारह वर्ष तक तृप्ति देने वाला होता है ।३२। शिशिर ऋतु में यह स्तोत्र चौबीस वर्ष और बसत ऋतु में करने पर सोलह वर्ष तक तृप्ति दायक होता है ।३३। ग्रीष्मकाल में इस स्तोत्र के पाठ पूर्वक श्राद्ध करने से सोलह वर्ष तक तृप्ति रहती है किसी कारण वश श्राद्ध दूषित हो तो इस स्तोत्र के पाठ से श्रेष्ठ हो जाता है ।३४। हे रुचे ! वर्षा ऋतु में श्राद्ध के समम इस स्तोत्र के पढ़ने से हमारी अक्षय तृप्ति होती है, शरद ऋतु में इस स्तोत्र के पाठ सहित श्राद्ध का द्रव्य अर्पण करे तो पन्द्रह वर्ष तक तृप्ति होती है जिस घर में यह स्तोत्र लिखा श्रेष्ठ स्थान पर रखा रहता है उस घर में श्राद्ध करने से हमारी सन्निधि प्राप्त होती है, अर्थात् हम उस में उस समय उपस्थित रहते हैं। इसलिए तुम श्राद्ध में भोजन करते हुए ब्राह्मणों के सम्मुख हमारे इस स्तोत्र को पढ़कर सुनाओ। इससे हमारी पुष्टि होगी। इस प्रकार रुचि को समझाकर पितृगण स्वर्ग को चले गये ।३५-३८।

९०—रौच्य मनु का जन्म

ततस्तस्मान्नदीमध्यात्सत्तस्थौमनोरमा ।
प्रम्लौचानामतन्वङ्गयत्समीपेवराप्सराः ।१
साचोवाचमहत्मानरुचिसुमनुराक्षसम् ।
प्रश्रयावनतासुभ्रूःप्रम्लोचाबेवरासरा ।२

अतोयरूपिणे कन्यामत्सुतातपतावर ।
जातावरुपुत्रेणपुष्कदेशमहात्मना ।३
तांगृहाणमयादत्ताँभार्य्याथवरवर्णिनीम् ।
मगुर्महामतिस्यासमुत्पत्स्ययितेसुतः ।४
तथेतितेनसाप्युक्तातत्मात्तोयाद्वपुष्मतीम् ।
उज्जहारतत कन्यामालिनौमनातः ।५
नद्याश्चपुलिनेतस्मिन्सरुचिमुनिसत्ततः ।
जग्राहपार्थिविधिवत्समानाप्यमहांमुनीन् ।६
तस्यांतसुतोजज्ञे महावीर्योमसामतिः ।
रौच्योऽभवत्पितुर्नाम्नाख्यातोऽत्रवसुधातले ।७
तस्यवन्वन्तरेदेवास्तथासप्तर्षयश्चये ।

मार्कण्डेयजी ने कहा—फिर उस नदी में से प्रमलोचन नाम की एक अप्सरा बाहर आई और उन रुचि नामक मुनि से कहने लगी—हे महात्मन् ! मेरी मालिनी नामक एक कन्या है जो वरुण देव के पुत्र श्रीमान् रत्न आपको मैं अर्पित करती हैं। उसे भार्या रूप में कन्या रत्न को मैं आपको अर्पित करती हूँ। आप उसे भार्या रूप में ग्रहण करके गृहस्थी बनिये। उसके गर्भ से आपका जो पुत्र सम्पन्न होगा वही आगामी मन्वन्तर में मनु बनेगा ।१-४। मार्कण्डेय जी कहने लगे कि उस अप्सरा के ऐसे वचन सुनकर रुचि ने उसे स्वीकार कर लिया और उसी नदी के तट पर महामुनियों को एकत्र करके उस मालिनी कन्या से विधिवत् विवाह कर लिया। कुछ काल में उससे महापराक्रमी और वीर्यवान पुत्र उत्पन्न हुआ वह अपने पिता के नाम के अनुसार रौच्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।७।

तनयाश्चनृपाश्चवतेसम्वक्कथितास्तव: ।८
धर्मवृद्धिस्तथारोग्यश्च्नधान्यसुतोद्भवाः ।
नृणाँभवत्यसन्दिग्वमस्मिन्मन्वन्तरेश्रयते ।९
पितृस्वंतथाश्रत्वाहित मंचितथागथान् ।

सर्वान्कामामावाप्नोतितत्प्रसादान्महामुने ।१०

इस रौच्य नामक मन्वन्तर के देवता, सप्तर्षि और समस्त राजाओं यथा उनके पुत्रों के विषय में पहले बतलाया जा चुका है ।८। इस मन्वन्तर की कथा सुनने से धर्म की वृद्धि होती है, आरोग्य, धन धान्य और पुत्र की प्राप्ति होती हैं। जो पितरों की स्तुति और उनके गणों को श्रद्धा पूर्वक श्रवण करता है उसकी सभी अभिलायें पूरी होती हैं ।९-१०।

६१-भौत्य मन्वन्तर आरम्भ

ततः पर तु भौत्वस्यसमुत्पत्तिनिशामय ।
देवानृषोस्तथापुत्रांस्तथैववसधाधिपान् ।१
वभवाङ्गिरसः शिष्योभर्तिर्नाम्नातिकोपनः ।
चण्डशापप्रदोऽल्तेऽर्थेमुनिरागस्यसौम्यवाक् ।२
तस्याश्रमेमातरिश्वानवतिनिष्ठरम् ।
नातितापरविश्चक्रे पर्ज्जन्यातातिकर्दमम् ।३
नातिशोत्तंचशींताँशः परिपर्णोऽपिरश्मिभिः ।
चकारभीत्यावंतस्वकोनस्याततेजसः ।४
क्षतवश्चक्म यवत्वाबृक्षेत्वाश्रमजन्मसु ।
तस्यपुण्यभलचक्रु राज्ञयासार्वकालिकम् ।५
ऊहुरापण्चछन्देनतस्याश्रमसमीपगः ।
कमन्डखुगताश्चैवतस्यभीतमहात्मनः ।६
नातिक्लेशसहोविप्रः सोऽभवत्कोपनोंभृशम् ।
अपुत्रश्चमहाभाग सतपस्यकरोन्मनः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—"तत्पश्चात्" भौत्य नामक मनु उत्पन्न होने और उनके मन्वन्तर के सुरगण, ऋषि और उनके नृप पुत्रों का वर्णन सुनो ।१। महर्षि अङ्गिरा के भूति मुनि शिष्य थे जो कि क्रोधी और क्षणिक अपराध पर ही घोर शाप देते थे एवं अनजाने ही निरपराधी को उनके कटु वचनों का सामना करना पड़ता था ।२। उस

क्रोधी और तेजस्वी का ऐसा भय छाया हुआ था कि उसके आश्रम में वायु सरल स्वभाव बहती थी, सूर्य असहनीय उष्णता नहीं देते थे इन्द्र अनपेक्षित वर्षा नहीं करते थे ।३। पूर्ण चन्द्रमा अपनी चाँदनी से शीत प्रदान नहीं करता था एवं उनके भय से असहनीय शीत नहीं होता था ।४। ऋतुयें भी उनकी आज्ञा का पालन करते हुए सभी ऋतुओं में सभी प्रकार के फल पुष्प उनके आश्रम की वृक्षावलियों में उत्पन्न करती थीं ।५। ऋषि भूमि के भय से आश्रम के समीप बहता हुआ जल भी उनकी इच्छानुसार क्षणमात्र में उनके कमण्डलु में आ जाता था ।६। हे ब्रह्मण वह महाक्रोधी ऋषि किसी बाधा को सहन नहीं करते थे, चूँकि उनके पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ इस कारण वह तपस्या में हीन हुए ।

पुत्रकामोयताहरः शीतवातानलाहतः ।
तपस्यामिविचिन्त्येतितपस्येवदनोदधेः ।८
तस्ये दुर्नातिशीतायनातितपायभास्करः ।
अभवन्मातारिश्वाचवौनातिमहामने ।९
आपीडयमावोद्वन्द्वैश्चसभूतिर्मुनिसत्तमः ।
अनवाप्य भिलाषततपसा संन्यवर्त्तनः ।१०
मस्यभ्रातासुच्चाऽभूद्यज्ञेतेनाभिमन्त्रितः ।
सियासुशान्तिनानशिष्यमाहमहामतिम् ।११
प्रशान्तमक्षप्रतिमविनीमङ्गरुकर्मणि ।
सदोद्युक्तंशुमाचारमुदार मुनिसत्तमम् ।१२
अहंयज्ञगमिष्यामिभ्रातु शान्तेसुवच्चस ।
तेनाहूतस्त्वयाचेहयत्कर्तव्यश्रृणुष्वतत् ।१३
अतिजागरणवसपेस्त्वयाकार्य्यंभमाश्रमे ।
तथातथाप्रयत्नेनयथाग्निर्मव्रजेत ।१४

पुत्र की इच्छा से तपस्या करने वाले उन महात्मा ने संयत आहार एवं शांत, वायु व अग्नि की वेदना सहकर भी तपस्या करने का व्रत

लिया और अन्नतः तपस्या में ही चित्त लगाया ।८। हे महर्षि ! उनके तपस्या काल में भी भयशीत चन्द्रमा शीत एवं सूर्य असहनीय उष्णता नहीं देते थे तथा वायु भी समक्ष में मन्द-मन्द में स्वाभाविक वहती थी ।९। वह ऋषि श्रेष्ठ मति एवं ताप दोनों ही से पीड़ित रहकर अपनी मनोकामना प्राप्त न कर सके, तो उन्होंने तपस्या त्याग दी ।१०। उसके एक भाई सुवर्चा ने उनको यज्ञ में आमन्त्रित किया उस समय भाई के यहाँ जाने की इच्छा कर उन्होंने शिष्य शान्ति नाम वाले को बुलाया अपने नाम के अनुकूल वह गुरु के कार्य में सदैव तत्पर और उदारचित्त एवं सदाचारी थे ।१२। भूति बोले–हे शान्त ! अपने भाई सुवर्चा के आमन्त्रण कर मैं यज्ञ में जाता हूँ, अब तुम्हें आश्रम में रहकर जो कार्य करने हैं वह ध्यान से सुनो ।१३। मेरे आश्रम में प्रतिदिन अग्नि प्रज्ज्वलित रखना, वह बुझे नहीं ऐसे यत्नशील रहना ।१४।

इत्याज्ञाप्यतथेत्युक्तोगुरुः शिष्येणशान्तिना ।
जगामयज्ञं तभ्रातुराहूतः सतवीयसः ।१५
सचशान्तिर्वनाद्यावत्सतित्पुष्फलादिकम् ।
उपानयतिभूत्यर्थरौस्तस्यमहात्मनः ।१६
अन्यच्चकुरुतेकर्मगुरुभक्तिवशानुगः ।
प्रशान्तस्तावदनलोयोऽसौभूतिहरिग्रहः ।१७
तद्दृष्टबासौऽनलेशान्शान्तिरत्यन्तदुःखिनः ।
भीतश्चभूतेर्बहुधाचिन्तयामासमहामतिः ।१८
किंकरोमिकथवात्रभितागमनं गुरोः ।
मयाद्यप्रतिकर्त्तव्याँकिंकृतेसुकृत भवेत् ।१९
प्रशान्ताग्निमिमधिष्ययदिपश्यतिमेगुरुः ।
ततोंमाँविषमेह्यद्यव्यसव्यसनेन्नियोक्ष्यति ।२०
यद्यन्यअग्निमत्राहमग्निथातेकरोमितत् ।
सर्वप्रन्क्षैहरभस्मसोऽवश्यमाँकरिष्यति ।२१

मार्कण्डेय जी ने कहा–शिष्य शांति ने गुरु की आज्ञा को 'इसी

प्रकार होगा, कहकर शिरोधार्य किया। तब भूति अपने भाई के यहाँ यज्ञ में गये ।१५। तदन्तर अपने गुरु की अग्नि प्रज्वलित रखने के लिये जङ्गल से समिधा पुष्प, फल आदि एकत्रित कर लाते ।१६। साथ ही गुरु-भक्ति में वशीभूत शांति अन्य दूसरे कार्य भी करने लगे उसी समय भूति द्वारा प्रज्वलित रखी गई, अग्नि किसी प्रकार बुझ गई ।१७। बुद्धिमान् मुनि शान्ति उस अग्नि को बुझी हुई देखकर दुःखी हुए और अपने गुरु भूति के भय से चिन्ताग्रस्त हो गये ।१८। वह विचारने लगे कि क्या किया जाए ? इस समय क्या उचित कर्म हो, जिससे भला हो सके, अब गुरु किस प्रकार आयेंगे ? मेरे गुरु यदि आश्रम में अग्नि को बुझी हुई देखेंगे तो तत्काल मुझे दण्ड देकर दुःख देंगे और यदि मैं पुनः अग्नि प्रज्वलित करता हूँ, तो वह सर्वज्ञानी गुरु मुझे निश्चय ही भस्म कर देंगे ।१९-२१।

नोऽहं पापोगुरोस्तस्तनिमित्तं कोपशापयोः ।
तथात्मानमशोचच्चियथापापकृतंगुरोः ।२२
दृष्टवाप्रशान्मनलनूशप्यतिमाँगुरुः ।
यथावापकः क्रुद्धस्तथावीर्य्योंहिसाद्विजः ।२३
यस्प्रभावाद्विभ्यन्तोदेवाम्तिष्ठन्तिशासते ।
कृतागसमायुक्त्याकयानोधर्षयिष्यति ।२४
वहबैवचिन्त्यासौभीतस्तस्यसदागुरोः ।
लयौमतिमवांश्रेष्ठः शरणजातवेदसम् ।२५
सचकारतदास्तोंत्रं सम्नटेर्च्येतमानसः ।
सचैकचित्तोमेर्दिन्यस्ततानुः कृताँजलिः ।२६

मैं पापात्मा उन गुरु के क्रोध और शाप का वैसा शोक नहीं कर सकता जिस तरह गुरु के समीप हुए पाप का शोक होता है ।२२। गुरु जब आयेंगे तो अग्नि को बुझी देखकर अवश्य घोर रूप में कोधित होकर मुझे शाप देंगे अथवा उनसे भयभीत अग्नि भी मुझे शाप दे सकती है क्योंकि मेरे गुरु का वीर्य ही ऐसा है ।२३। जिनसे भयभीत होकर सुर-

गण भी उनके पराधीन हो गये हैं वह मुझ अपराधी को देखकर किस प्रकार दण्डित करेंगे ? ।२४। मार्कण्डेय जी ने कहा—अपने गुरु से भयभीत विरेक शिष्य शान्ति इस प्रकार चिन्तित हुए जातवेद अग्नि की शरण में पहुँचे ।२५। इसके पश्चात् वह शान्ति संयत चित्त होकर हाथ जोड़ सप्तशिखा युक्त अग्नि-स्तोत्र का पाठ करने लगे ।२६।

ओंनम सर्वभूतानाँसाधनामहात्मने ।
एकद्विपचधिण्यायराजसूयेषडात्मने ।२७
नमःसमस्तदेवानांवृत्तिदायसुवर्च्चसे ।
शुक्ररूपायजगतामशेषाणांम्थितिप्रदः ।२८
त्वंमुखमवदेवानांत्वयात्तां ह्ययवन्हविः ।
प्रीणस्यखिलान्देवाँस्त्वत्प्राणः सर्वदेवताः ।२९
हुतहविस्त्वय्यनलमेधत्वमुरगच्छति ।
ततश्चजलरूपेणरिथाममुपतियत् ।३०
तेनाखिलौषधीजन्मभवत्यामलसारथे ।
औषधीभिरशेषाभिःमुखजीतजन्तवः ।३१
वितन्वतेनरायज्ञास्त्वसृष्टास्वीत्रधीषुचः ।
यज्ञोर्देवास्तथादत्यास्तद्वद्रक्षांसिपावक ।३२
आण्याय्यन्तकेतयज्ञास्त्वदाधाराहुताशन ।
अतः सर्वस्योनिनिस्त्ववह्मेसर्वमयस्तथा ।३३
देवतादानवायक्षादैत्यागन्धर्वम्राक्षसाः ।
मानुषा, पशवीबृक्षामृगपक्षिसरीसृपाः ।३४
आप्याय्यन्तेन्वयासर्वेसवर्ध्यन्तेचपाव ।
त्वत्तएवोद्भवंयान्तित्वय्यन्तेचतथालयम् ।३५

शान्ति बोले,—समस्त प्राणियों के साधन, महात्मा दो पंच रूप एवं राजसूय यज्ञ में षणभूति धारक को नमस्कार ।२७। सम्पूर्ण सुरगण को वृत्ति प्रदान कर्त्ता सुवर्चा और सम्पूर्ण विश्व को स्थिति प्रदान करने

वाले शुक्र रूप तुमको नमस्कार ।२८। हे सम्पूर्ण देवगण के मुख स्वरूप! ईश्वर तुम्हारे द्वारा ही घृत पान कर देवगण को संतुष्ट करते हैं एवं तुम ही समस्त देवगण के प्राण रूप हो ।२९। तुम ही हवि हुत होकर अमल मेघत्व प्राप्त करती है और फिर उसका जल स्वरूप हो जाता है ।३०। हे अनिलसार ! तुमसे ही सभी औषधियों की उत्पत्ति होती है। और उन औषधियों से ही प्राणिगण सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करते हैं ।३१। हे पावक ! तुम्हारे द्वारा उत्पन्न औषधियों से वाणी जो यज्ञ करते हैं, ऐसे यज्ञों मे ही सुर, दैत्य और असुर ।३२। तृप्त होते हैं। हे हुताशन ! उन सभी यज्ञों के तुम आधार रूप हो। इसलिए हे ब्रह्मे ! तुम सभी के उत्पन्न करने वाले और सर्वव्यापी हो ।३३। हे पावक ! सुर, असुर, दैत्य, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, मानव, पशु, वृक्ष, मृग आप ही से तृप्त व पोषित होते हैं ।३५।

अपसृजसिदेवत्वंत्वमत्सिपुनरेवता: ।
पच्यमासास्त्वयाताश्चप्राणिनांपुष्टिकारणम् ।३६
देवेषुतेजोरूपेणकान्त्यासिद्धेष्ववस्थित: ।
विषरूपेण नागेषुवायुरूप: पतत्रिषु ।३७
मनुजेषुभवात्क्रोधोमोह:पक्षिमृगादिषु ।
अवष्टम्भोऽसितरुषकाठिन्यत्वमहीपति ।३८
जलेद्रवस्त्वंभगवाञ्जवरूपीतथाऽनिले ।
व्यापित्वेवथैवाग्नेनभसित्वव्यवस्थित: ।३९
त्वमग्नेसर्वभूतानामन्तश्चरसिपालयन् ।
त्वामेकमाहु:क्रवयस्त्वामाहु:स्त्रिविधपुन ।४०
त्वयासृष्टभिदविवंवदान्तिपरमर्षय: ।४१
त्वामृतेहिजगत्सर्वंसद्योनश्येदधुताशन ।
तुभ्यकृत्वाद्विज:पूजांस्वकर्मविहितांगतिम् ।४२

हे देव ! तुम ही जल के उत्पादक हो और फिर उसको पान करते हो, तथा तुम्हारे द्वारा ही उसका पाचन होता है, जो प्राणियों को पुष्टि

कारण बनाना है ।३६। देवगण में तुम्हीं तेज स्वरूप, सिद्धों में क्रान्ति स्वरूप, नागों में विष स्वरूप एवं पक्षियों में वायु स्वरूप हो ।३७। मनुष्यों में कोप रूप में, पक्षी व मृगादि में मोह रूप में, वृक्षों में जड़ रूप में पृथिवी में कठोर रूप में ।६८। जल में द्रव्य रूप में तुम ही स्थित हो और वायु की गति रूप में और आकाश को व्याप्त रूप में आत्मा द्वारा अवस्थित किया है ।३९। हे अग्ने पोषण करते हुए तुम ही उन प्राणियों के अन्तर में विचरते हो । यद्यपि कवि तुम्हारा निर्देश एक से ही करते हैं, फिर भी तुम त्रिविध कहलाती हो ।४०। कविगण तुम्हारी अष्टधा के रूप में कल्पना करके आप यज्ञ की कल्पना करते हैं तुम से ही विश्व की उत्पत्ति हुई है, ऐसा महान् ऋषियों ने कहा है ।४। हे हुताशन ! समस्त विश्व तुम्हारे नष्ट होने पर विनाश होता है ।४२।

प्रयातिहन्यकव्याद्यै:स्वधास्वाहाभ्युदीरणात् ।
परिणामात्मवीर्याणिप्राणिनाममराचत् ।४३
दहन्तिसर्वधतातिततोनिष्क्रम्यहेतयः ।
जानवेदस्त्वयैवेदविश्वसृष्टंमहाद्युते ।४४
तवैववैदिककर्मसर्वभूतात्मकजगत् ।
नमस्तेऽनलपिंगाक्षनमस्तेऽस्तुहुताशन ।४५
पावकाद्यनमस्तेऽस्तुदमस्तैहव्यबाहन ।
त्वमेवसर्वधूतानांपावनाद्विश्वपावनः ।
त्वमेवभुक्तापीतानाँपाचनाद्विश्वपाचकः ।४६
सस्यांनापाककर्त्तात्वपोष्टात्वजगतस्तथा ।
त्वमेवमेघस्त्ववायुस्वंबीजसस्यहेतुकम् ।४७
पीषातसर्वभूतानांभूतभव्यबीह्यसि ।
त्वंज्योतिःसर्वभूतेषुत्वमादित्याविभावसुः ।४८
त्वमहस्त्वंथारात्रिखभेसंध्येतथाभवान् ।
हिरण्येतास्त्वक्हनेहिरण्योद्भवकारणम् ।४९

विप्रगण हव्य काव्यादि द्वारा तुम्हारी आराधना करके 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करके स्वकर्म विहित गति प्राप्त करते हैं। हे अमरार्चित अर्थात् सुरगण द्वारा पूजित ! प्राणियों के परिणामात्मा वीर्य स्वरूप ।४३। तुम से उत्पन्न सम्पूर्ण अग्निशाखाएँ भूतगणों को भस्म करती हैं, हे महाद्युते जातवेद ! सम्पूर्ण विश्व के तुम सृष्टिकर्त्ता हो ।४४। हे अनल ! सर्वभूतात्मक यह विश्व एवं वैदिक कर्म तुम्हारे आधीन है। हे पिङ्गाक्ष अनल ! तुमको नमस्कार, हे हुताशन ! तुमको प्रणाम ! ।४५। हे आद्य ! हे पावक, तुमको प्रणाम, तुम ही भोज्य एवं पेय को पचाने वाले विश्व-पावन हो, हे विश्वपावन, तुम सर्वभूमि पवित्रकर्त्ता हो ।४६। अन्न को पकाने वाले तुम विश्व को पुष्टिकरण हो एवं तुम ही मेघ, वायु व सस्य उत्पादन के लिए बीजरूप भी हो ।४७। सभी का पोषण करने वाले तुम ही भूत, भविष्य और वर्तमान रूप हो तुम ही सम्पूर्ण प्राणियों में ज्योति का स्वरूप और आदित्य सूर्य हो ।४८। दिन रात्रि और संध्या तुम ही हो। हे वन्दे ! रेता एवं हिरण्यक की उत्पत्ति कारक तुम ही हो ।४६।

हिरण्यगर्भश्चभवान्हिरण्य सदृशप्रभः ।
त्वंमुहूर्त्तक्षणश्चत्वत्रुटित्वतथालयः ।५०
कलाकाष्ठानिमेषादिरूपणासिजगत्प्रभो ।
त्वमेतखिलकालःपरिणामात्मकोभवान् ।५१
याजिह्वाभवत कालीकालनिष्ठाकरीप्रभो ।
तयानःपाहिपापेभ्यऐहिकाच्चमहाभवात् ।५२
करालीनामयाजिह्वामहाप्रलयकारकम् ।
तयानःपापिपेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात् ।५३
मनोजवाचयाजिह्वालघिमागुणलक्षणा ।
तयानःपापिपापेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात् ।५४
करोतिकामभूतेभ्योयातेचिह्वासुलोहिता ।
यानःपाहिपापेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात् ।५५

सधूम्रवर्णायाजिह्वाप्राणिनाँरोगदायिका ।
तयानः पापिपातेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात् ।५६

तुम ही हिरण्य गर्भ एवं हिरण्य के समकक्ष कांतिमान हो। मुहूर्त क्षण-त्रुटि एवं लव तुम ही हो ।१०। हे जगत्प्रभो ! कलाकाष्ठा और निमेषादि के रूप में तुम ही परिणामक अन्तकाल हो ।५१। हे प्रभो ! अपनी कालनिष्ठा पूर्णकाली जीव द्वारा पाप, भय एवं ऐहिक भय से हमारी रक्षा करो ।५२। करालो नामक जो जीव तुम्हारी महाप्रलय के समय से है, उसके द्वारा हमारी ऐहिक भय और पापों से रक्षा करो ।५३। अपनी लघिमागुण युक्त मनोजवा जीभ से हमारी ऐहिक भय और पापों से रक्षा करो ।५४। प्राणियों की कामना पूर्ति करने वाली अपनी सुलोहिता नामक जीभ से हमारी ऐहिक भय और पापों से रक्षा करो ।५५। प्राणियों के रोगों का शमन करने वाली, सधूमवर्ण जीभ से ऐहिक भय और पापों से हमारी रक्षा करो ।५६।

स्फलिंगिनीचयाजियाजिह्वायतःसकलपुद्गलाः ।
तयानपाह्पिपापेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात ।५७
यातेविश्वसृजाजिजिह्वाप्राणिनांशर्मदायिनी ।
तयानःपाहिपाषेभ्यऐहिकाच्चमहाभयात् ।५८
पिंगक्षलोहितग्रीवकृष्णवर्त्मंहुताशन ।
त्राहिमांसवदोषेभ्यःसंसारादुद्धरेहताम् ।५९
प्रसीतवन्हेसप्तार्चिःकृशानोहव्ववाहन ।
अग्निपात्रकशुक्रादिनामाष्टभिरुदीरितः ।६०
अग्नेऽग्रेसर्वभूतानांसमुत्पत्तिर्विभावसो ।
प्रसीदहव्यवहाख्यअभिष्टुतमयाव्यय ।६१
त्वमक्षयोवन्हिरचिन्त्यरूपःसमृद्धिमन्दुष्प्रसहोऽतितीव्रः ।
तवाव्ययंभीमशेषलोकशवर्धकहन्त्यधवातिवीर्यम् ।६२
त्वमुत्तमंततत्त्वशेत्वहृत्पुण्डरीकस्थमनन्तमीडयम् ।
त्वयाततत्तमिदचराचरहुतशनैकोबहुधात्वमत्र ।६३

आत्मा एवं देह को उत्पन्न करने वाले स्फुलिङ्गिनी जीभ से ऐहिक महाभय और पापों से हमारी रक्षा करो ।५७। प्राणियों को मङ्गल दाता विश्वा नामक अपनी जीभ में ऐहिक भय और पापों से हमारी रक्षा करो ।५८। हे हुतासन ! तुम्हारे नेत्र पिङ्गल वर्ण, ग्रीवा लोहित वर्ण और तुम्हारी देह कृष्णवर्ण है । तुम सर्व प्रकार के दोषों से मेरी रक्षा करो और इस विश्व से उद्धार कीजिये ।५९। हे वन्दे ! आठ नामों वाले हो सप्तार्चि,हव्यवाहन,कृशानु,अग्नि, पावक,शुक नाम से विख्यात तुम प्रसन्न होओ ।६०। हे अग्ने ! समस्त भूतों में तुम उत्पन्न हो । हे विभावसो ! हे अव्यय हव्यवाह ! मैं तुम्हारी आराधना करता हूँ उससे तुम मुझ पर प्रसन्न होओ ।६१। हे वन्दे तुम अक्षय हो, तुम्हारा अचिन्त्य रूप है, तुम समृद्धिमान, आश्रयदाता एव अत्यन्त तीव्रतापूर्ण हो और अव्यय व भीम तुम्हारे मूर्तिमान् रूप अत्यन्त बलशाली एवं समस्त विनाश का श्री विनाश करने वाले हैं ।६२। हे हुताशन ! तुम श्रेष्ठ सत्व और समस्त जीवों के हृदय कमल सदृश हो और तुम उन सबके पूज्य अनन्त ब्रह्म रूप हो । उस ब्रह्म स्वरूप से तुमने इस प्राणी जगत् को परिपूर्ण कर रखा है । इसलिए तुम एक होकर भी अनेक रूप में इस विश्व में स्थिति करते हो ।६३।

त्वमक्षयः सगिरिवसुन्धरानभःसमोमार्कमहदिवाखिलम् ।
महोद्रधेर्जठरगश्चवाडवोभवान्विभुः पिवतियांसिपावक ।
हुताशनस्त्वमितिसदाभिपूज्यसेमहाक्रतौनियमपरैर्महर्षिभिः ।
अभिष्टुत पिवसिचसोमध्वरेवषटतान्यपिचहवींभिभूतेये ।३५
त्वविप्रैसततमिहेज्यसेफलार्थवेदाङ्गेष्वथसकलेषृगीयसत्वम् ।
त्वद्धेतोर्यजनपराणाद्विजेन्द्रावेदांगान्यधिगमयन्तिसर्वकाले ।३६
त्वब्रह्मायजनपरस्तथैवविष्णुर्मूतेषन्सुरपतिरर्थ्यमाजलेशः ।
भूर्य्येन्दसकलसुरासुराश्चहव्यैःसन्तीष्याभिमतभलान्यथाप्नुवन्ति ।३७
अर्चिभि परममहोपघातदुष्टंस्पष्टंतवशुचिजायतेतमस्तम् ।
स्नानापरमतीवभस्मनास सन्ध्यायांमुनिभिरतीवमेब्यसेतत् ।३८

तत्कृत्वात्रिदिवमवाप्नुवन्तिलोका: ।
सद्भक्त्यासुखनियतासमूहगीतम् ।६९
प्रसीदवन्देशुचिनामधेयप्रसीदयवायोविमलातिदीप्ते ।
प्रसोदमपाभकवैद्यु ताभप्रसीदहव्याशनपाहिमांत्वम् ।७०
यत्तोवन्हेशिवंरूपयेचतेसप्तहेतय: ।
तै:पाहिन:स्तुतौदेवापितापुत्रामिवात्मजम् ।७१

हे अनल ! तुम अक्षय हो, एवं सूर्य सहित पृथ्वी तुम्हारे ही स्वरूप हैं और चन्द्रमा एवं सूर्य सहित आकाश स्वरूप तुम ही हो, दिन और रात के रूप में निखिल काल स्वरूप हो, तुम ही महासमुद्र के अन्तर्गत बड़वाग्नि और परम विभूति से समस्त किरणों में विद्यमान हो ।६४। हे हुताशन ! तुम्हारा भोजन हुतहवि है, इसलिए नियम परायण परम मुनिगण यज्ञों में तुम्हारी सदैव पूजा करते हैं और उनकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर विश्व के कल्याणार्थ सोम रस और वषट्कार सहित हवि, सेवन करते हो ।६५। सम्पूर्ण वेदाङ्ग में तुम्हारा गायन है और यज्ञ परायण हेतु श्रेष्ठ ब्राह्मण सदैव वेदाङ्ग अध्ययन करते हैं ।६६। यजन परायण ब्रह्मा, विष्णु, भूतनाथ महादेव तुम ही हो। देवराज इन्द्र, अर्यमा जलेश्व वरुण, सूर्य एवं चन्द्रमा तुम ही हो, सुर एवं असुर अव्य द्वारा तुम्हें सन्तुष्ट कर इच्छित फल प्राप्त करते हैं ।६७। महा उपघात से दूषित समस्त वस्तुयें तुम्हारी लौ के स्पर्श मात्र से पवित्र होती हैं, अनेक स्थानों में भस्म द्वारा ही स्नान उत्तम माना जाता है, अतएव ऋषिगण संध्या समय यही स्नान करते हैं ।६८। इस प्रकार करने वाले मनुष्य स्वर्ग प्राप्त करते हैं और सच्ची भक्ति से सर्व सुख प्राप्त करते हैं ।६९। हे वन्दे इसीलिए ही तुम्हारा नाम शुचि है, आप उसी रूप में मुझ पर प्रसन्न होंवे। हे पावक तुम वैद्युताग्नि आदि नामों से कीर्तिमान हो, उसी रूप में मुझ पर प्रसन्न होओ। हे हव्यासन ! तुम प्रसन्न होकर मेरी रक्षा करो ।७०। हे वह्ने, तुम मंगलमय रूप हो। जो सप्तहेति

सर्ग मन्वन्तर हैं, उनसे हे देव, मेरी स्तुति से प्रसन्न होकर जिस प्रकार एक पिता पुत्र की रक्षा करता है, उसी प्रकार मेरी रक्षा करो ।१७।

—×—

९२—सर्व मन्वन्तर श्रवण फल कथन

एवंस्तुतस्ततस्तेनभगवान्हव्यवाहनः ।
ज्वालामालावृततनुस्तस्यसीदग्रतोमुने ।१
देवोविभावसुत्रेणानेनवैद्विज ।
तंशान्तिमाहप्रणतंमेचगम्भीरवागथ ।२
परितुष्टोऽस्मितेविप्रभक्त्यायातेस्तुतिः कृत्वः ।
वरददामिभवतेप्रार्थ्यतांयत्तवेप्सितम् ।३
भगवन्कृतकृत्योऽस्मियवांषश्यामिरूपिणम् ।
तथापिभक्तिनम्रस्यभवताश्रूयताँमम ।४
भ्रातृयज्ञंगमोदेवममाचार्य्योनिजश्रमात् ।
आगतश्चात्रमधिष्ण्यंत्वत्सनाथसपश्यतु ।५
ममापराधात्सन्त्यक्तंधिष्ण्यत्तोविभावसो ।
तत्वयाधिष्टितंसोऽद्यपूर्ववत्पश्यतुद्विजः ।६
तथान्यदपिमेदेवप्रसादकुरुषेग्रदि ।
पुत्रोविशिष्टोभवततदपुत्रस्यमेगुरोः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे ऋषि ! शांति की ऐसी स्तुति पर भगवान् हव्यवाहन ज्वालामाल सहित उनके समक्ष प्रकट हुए ।१। हे ब्राह्मण ! विभावसु देव ने स्तोत्रों से सन्तुष्ट होकर उन प्रणत तपस्वी शांति से मेघ सम गम्भीर शब्द में कहा ।२। अग्नि ने कहा—ब्राह्मण में तुम्हारी भक्ति-पूर्ण स्तुति से प्रसन्न हुआ हूँ । तुम अपने इच्छित वर की प्रार्थना करो, मैं वर देता हूँ ।३। शांति बोले-हे भगवन् ! आपके स्वरूप को देखकर मैं कृतकृत्य हुआ हूँ । फिर भी नम्रता एवं भक्ति पूर्वक मेरा

कथन सुनिये ।४। हे देव ! मेरे गुरु अपने इस आश्रम से भाई के यहाँ यज्ञ में गये हैं। आश्रम में आकर वह अग्निकुण्ड में अग्नि प्रज्वलित देखें ।५। हे विभावसो जिस अग्निकुण्ड को तुमने मेरे अपराध के कारण वंचित किया है वह द्विज श्रेष्ठ गुरु आने पर पहिले की भाँति ही प्रज्वलित देखें हे देव, यदि तुम मुझ पर प्रसन्न हो, तो दूसरा निवेदन है कि मेरे पुत्रहीन गुरु के गुणवान् पुत्र उत्पन्न हो ।६-७।

तथाचमैत्रींतनयेसकरिष्यतिमेगुरुः ।
तथासमस्तत्वेषुभवत्सस्यनो मृदु ।८
यश्चत्वांस्तोष्ठतेऽनेनप्रीतिंवांतोऽसिमेऽव्यय ।
स्तोत्रेणतस्यवरदोभवेथामत्प्रसादितः ।९
एवच्छरुत्वावचस्तस्यतमाद्विजसत्तमम् ।
स्तोत्रेणराधितस्तेनगृभक्त्याचपावकः ।१०
गुरोरथैयतोब्रह्मन्याचितमेवरद्वयम् ।
नान्सार्थतेनमेप्रौतिस्त्वप्यतीवमहामुने ।११
भविष्यत्येतदखिलगुरोर्यत्प्राथितत्वया ।
मैत्रीसमस्तभूपेषुतुत्रश्चास्यभविष्यति ।१२
मन्वन्तराधिप पुत्रःश्चभौत्यौतामभविष्यति ।
महावलौममहावीर्म्योमहाप्राज्ञ गुरुस्तवः ।१३
अनेनयश्चेस्तोत्रेणस्तोष्यतेमांससमाहितः ।
तस्याभिलषतंसर्वपुण्यचास्यभविष्यति ।१४

अपने उस पुत्र से मेरे आचार्य जिस प्रकार प्रीति करें, उसी प्रकार समस्त प्राणियों से प्रीति और कोमल व्यवहार करने वाले हों ।८। हे अव्यय ! मुझ पर इस प्रकार तुम्हें प्रसन्न हुआ देखकर जो प्राणी भविष्य में तुम्हारी आराधना करें, उनके लिए भी, तुम मेरे लिए प्रसन्न होकर वह प्रदान करने वाले हो ।९। मार्कण्डेय जी ने कहा—गुरु भक्ति एवं इस स्तोत्र द्वारा प्रसन्न अग्नि देव द्विज शांति की प्रार्थना सुनकर बोले—

।१०। अग्नि ने कहा—हे ब्राह्मण ! तुमने अपने निज के लिए वर न माँगकर केवल अपने गुरु के लिए वर की प्रार्थना की हैं, हे महर्षि ! इस कारण मैं तुमसे अत्यधिक प्रसन्न हूँ ।११। गुरु के हेतु तुम्हारी प्रार्थना पूर्ण होगी सम्पूर्ण जीवों के प्रति उनकी प्रीति और उनको पुत्र प्राप्ति हो ।१२। तुम्हारे गुरु अत्यन्त मेधावी हैं उनके महापराक्रमी वीर्यवान भौत्य नाम का पुत्र होगा, जो मन्वन्तराधिपति होगा ।१४। साथ ही जो मनुष्य एकत्रित होकर मेरे इस स्तोत्र से मेरी आराधना करेगा उसकी सम्पूर्ण मन की इच्छाएँ पूरी होंगी और पुण्य का भागी भी होगा ।१४।

यज्ञेषुपर्वकालेषुतीर्थेज्याहौमकर्मसु ।
धर्मायपठतामेतन्मपुष्टिकरपरम् ।१५
अहोरात्रकृतंशापश्रुतमेतत्हृकृद्द्विज ।
नाशयिण्यत्यसन्दिग्धंममतुष्टिकरपरम् ।१६
अहोमकालदौषदीनयोग्येरपितत्कृतैः ।
येदौषास्तानिदसद्य शमयिष्यतिसश्रुतम् ।१७
पौर्णमास्याममावस्यांपवस्वन्पेषुचस्तवः ।
ममैषसतमर्त्यैंभविनापापनाशनः ।१८

इत्यक्त्वाभगवानग्नि पश्यतस्यवैमुनेः ।
वभूवादर्शनःसद्योदीपस्थोनिर्वृतौयथा ।१९
सचशान्तिगतेवह्नौपरितुष्टेन नेतसा ।
हर्षरोमाञ्चिततनुःप्रविवेशाश्रमगुरोः ।२०
जाज्वल्यमानंतत्रासौगुरुधिष्ण्येहुताशनम् ।
ददर्शापर्ववत्प्रापत सपरमांमुदम् ।२१

यज्ञ, पर्वकाल, तीर्थ, धर्मार्थ व यज्ञ-कर्म में यह बलदाता स्तोत्र-जप करने अथवा केवल एक बार सुनने से ही दिन रात के सम्पूर्ण पापों का बिना सन्देह विनाश होगा। हे ब्राह्मण मेरा यह स्तोत्र अत्यन्त सतुष्टि

दायक है।१६। यज्ञकाल के व्यतीत होने पर यज्ञ करने एवं अनधिकारी पुरुष द्वारा यज्ञादि करने पर जो दोष होता है, वह सभी इस स्तोत्र के श्रवण से ही तुरन्त नष्ट होगा।१७। यह उत्तम स्तोत्र पूर्णिमा, अमावस्या या अन्य किसी पर्व के अवसर पर श्रवण करने से प्राणियों के पापों का शमन होगा।१८। मार्कण्डेयजी ने कहा—ऋषिवर किसी दीपक की लौ जिस प्रकार अचानक बुझ जाती है, उसी प्रकार वे अग्नि भगवान् यह वर देकर उन शांति मुनि के सामने अन्तर्धान हो गये।१६। पावक के अन्तर्धान होने पर शांति मुनि सन्तुष्ट हृदय एवं आनन्द से पूर्ण होकर अपने गुरु क आश्रम में पहुँचे।२०। तदनन्तर शांति मुनि अग्निकुण्ड में उसी प्रकार अग्नि को प्रज्वलित देखकर अत्यन्त आनन्दित हुए।२१।

एतस्मिन्नन्तरेसोऽपिगुरुस्तस्यमहात्मनः।
भ्रातुर्यवीयसोयज्ञादाजगामस्वमाश्रमम्।२२
तस्याग्रतश्चशिष्योऽसौचक्रेंपादभिवन्दनम्।
गृहीतासनमूभश्चतमाहसतदागुरुः।२३
वत्सातिहार्दत्वयिमेतथान्येषुचजन्तुषु।
नवेद्मिकिमिदंत्वञ्चेद्वेत्स्कथाशुभे।२४
ततःसशान्तिस्तत्सर्वमाचार्य्यायमहामुने।
अग्निनाशादिकविप्रःसमाचष्टेयथातथम्।२५
तच्छ्रुत्वासपरिष्वज्यस्नेहार्द्रनयनोगुरुः।
शिष्यायप्रदादोवेदान्सांगोङ्गान्महामुने।२६
भौत्योनामतनुस्तस्यपुत्रोभूतेरजायत।
तस्यमन्वन्तरेदेवानृषीन्भूपांश्मेश्रृणु।२७
भविष्यस्यभविष्यांस्तुगदतोममविस्तरात्।
देवेन्द्रोयश्चभवितातस्यविख्यातंकर्मण।२८

उसी समय शांति के गुरु वह ऋषि श्रेष्ठ छोटे भाई के यहाँ से यज्ञ में से अपने आश्रम में वापिस आये।२२। तब सम्मुख आकर शिष्य

शान्ति ने उनकी चरण वन्दना की। उसके पश्चात् गुरु पूजा-वन्दन पूर्ण कर आसन ग्रहण कर शांति से बोले ।२३। हे वत्स ! तुम्हारे व अन्य दूसरे जीव प्राणियों के प्रति मेरे हृदय में प्रीति उत्पन्न हुई है, ऐसा कैसे हुआ, मैं अनभिज्ञ हूँ। हे वत्स ! कदाचित्, यदि तुम्हारे ज्ञान से हो तो मुझसे वर्णन करो ।२४। हे महर्षि ! तब विप्र शांति ने अग्नि बुझने आदि की सम्पूर्ण विगत कथा गुरु से कही ।२५। हे महर्षि ! गुरु ने समस्त घटना सुनकर प्रेम से आर्द्रा नेत्रों से शिष्य शांति को आलिंगन बद्ध कर लिया और उसे सांगोपांग सम्पूर्ण वेद भी प्रदान किये ।२६। इस प्रकार उन भूति ऋषि के पुत्र भौत्य मनु ने जन्म लिया उन मनु के मन्वन्तर के बीच जो देवगण, ऋषि, राजा और इन्द्रादि होंगे उनका विस्तार पूर्वक वर्णन सुनो ।२७-२८।

चाक्षषाश्चकनिष्ठाश्चपबित्राभ्राजिरास्तथा ।
धारावृकाश्चेत्येतेवैपञ्देवगणाःस्मृताः ।२९
शुचितिन्द्रस्तदातेपाँत्रिदशानाँभविष्यतिः ।
महावलोमहार्य्यः सर्वेरिन्द्रगृणैर्युतः ।३०
आग्नीध्रश्चाग्चिबाहुश्चचिर्मुक्तौऽथमाधवः ।
शुक्रोऽजितश्चसप्तैतेतादासप्तर्षयःस्मृताः ।३१
गुरुर्गंभीरोव्रध्नश्चभरतोऽनुग्रहस्तथा ।
श्रीपानीचप्रतीरञ्चविष्णुःसक्रन्दनस्तथा ।३२
तेजस्वीसुवलश्चैवभौत्यस्यंतेमनोःसुतः ।
चतुर्दशंमयैतत्तोतन्वन्तरमुदाहृतम् ।३३
श्रुत्वामन्वन्तरराणीत्थंक्रमेणमुनिसत्तम् ।
पुण्यमाप्नोतिमनुजस्तयाऽक्षीणांचसन्तेतिम् ।३४
श्रुत्वामन्वन्तरपूर्वधर्ममाप्नोतिमानवः ।
स्वारोचिशस्यश्रवणात्सर्वकामानवाप्नुते ।३५

चाक्षुष, कनिष्ठ, पविन्न, भ्राजिन और धारावृक प्रभार ये देवगण होंगे ।२९। उस काल में इन्द्र के समस्त गुणों से पूर्ण महापराक्रमी

वीर्यवान् 'शुचि' उनके इन्द्र होंगे ।३०। उस मन्वन्तर में आग्नीध्र, अग्निबाहु, शुचि, मुनि, माधव, शुक्र और अजित नामक सप्त महर्षि होंगे, ।३१। गुह, गंभीर, व्रध्न, भरत, अनुग्रह, श्रीमानि प्रतीर, विष्णु, संक्रमण तथा ।३२। तेजस्वी सुबल नामक पुत्र भौत्य मनु के होंगे । इस प्रकार मैंने आपसे चौदह मन्वन्तरों के विषय में कहा ।३३। हे मुनिश्रेष्ठ ! यह समस्त मन्वन्तरों का क्रम-बद्ध वर्णन सुनने से मनुष्य पुण्य लाभ प्राप्त करते हैं एवम् उसका परिवार सदैव अक्षुण्ण रहता है ।३४। प्रथम मन्वन्तर का वर्णन सुनकर धर्म में आस्था बढ़ती है और दूसरे मन्वन्तर के श्रवण से उनकी समस्त मन की इच्छायें पूर्ण होती हैं ।३५।

ओत्तमेधनमाप्नोनितिज्ञानमाप्नोतितामसे ।
रैवतेचक्षुतेबुद्धिसुरूपांविन्दतेस्त्रियम् ।३६
आरोग्यचाक्षुषेपुंसाश्रुतेदैवस्वतेबलम् ।
गुणवत्पुत्रांस्तुरूर्य्यसावर्णिकेश्रुते ।३७
माहात्म्यब्रह्मासावर्णिकेशुभाम् ।
मतिमाप्नोतिमनुजोरुद्रसावर्णिकजयम् ।३८
जातश्रेष्ठोगुणयुक्तौदक्षसावर्णिकेश्रुते ।
निशातयत्यरिबलरौच्यश्रुतदानरोत्तम् ।३९
देवप्रसादमाप्नोतिमोत्येमन्वन्तरेश्रुते ।
तथाग्निहोत्रंपुत्रांश्चगुण्युत्तातवाप्नुते ।४०
सर्वाण्यनुक्रमाद्यश्चश्रूणोतिमुनिसत्तमः ।
मन्वन्तराणितस्यापिश्रूयतांफलमुत्तमम् ।४१

तृतीय मन्वन्तर औत्तम के श्रवण से धन व चतुर्थ तामस मन्वन्तर के श्रवण से ज्ञान प्राप्ति होती है । पंचम रैवत मन्वन्तर के श्रवण से बुद्धिमान एवं रूपवती भार्या मिलती है ।३६। षष्ठ मन्वन्तर चाक्षुष से नीरोग रहते हैं, सप्तम मन्वन्तर वैवस्वत के श्रवण से पराक्रम एवं अष्टम सूर्य से वणिक मन्वन्तर के प्रवण से गुणी पुत्र एवं पौत्र प्राप्त

होते हैं ।७। नवम ब्रह्म मन्वन्तर के श्रवण से माहात्म्य, दशम धर्मसावर्णिक मन्वन्तर के श्रवण से कल्याण, ग्यारहवें रुद्रसावर्णिक मन्वन्तर के श्रवण से सुबुद्धि और विजय प्राप्त होती है ।३८। हे नर श्रेष्ठ ! बारहवें मन्वन्तर दक्ष सावर्णिक के श्रवण से पुरुष जाति में सर्वोत्तम और गुणवान होता है, तेरहवें मन्वन्तर रौच्य के श्रवण से शत्रुओं का बल शमन करने को समर्थता प्राप्त होती है ।३६। चौदहवें मन्वन्तर भौत्य के श्रवण से भगवान् का प्रसाद, अग्निहोत्र फल एवं गुणवान् पुत्र की प्राप्ति होती है ।४०। हे ऋषिश्रेष्ठ ! प्रथम मन्वन्तर से क्रतबद्ध सभी मन्वन्तरों का श्रवण करने वाले मनुष्यों को किस प्रकार श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है, इसका वर्णन सुनो ।४१।

तत्रदेवानृषीनिन्द्रान्सनुं स्तत्तनयानृपान् ।
श्रुत्वावंशाँश्चसर्वेभ्यः पापेभ्योप्रमुच्यते ।४२
देवर्षीन्द्रनृपाश्चान्येयेतन्मन्वन्तराधिपाः ।
तेप्रीयन्तेतथाप्रीतःप्रयच्छन्तिशुभांमतिम् ।४३
तत शुभांमतिप्राप्तक्रत्वाकर्मतथाशुभम् ।
शुभाँगतिमाप्नोतियावदिन्द्राश्चतुर्दशः ।४४
सर्वेस्युर्ऋतवःक्षैम्याःसर्वेसौम्यास्तथाग्रहाः ।
भवन्त्यसंशयंश्रुत्वाक्रमामन्वन्तरस्थितम् ।४५

हे ब्राह्मण ! उन मन्वन्तरों के देवगण, सम्पूर्ण ऋषिगण, मनु के नृप पुत्रगण एवं उनकी वंशावली का वर्णन का श्रवण करने पर मनुष्य समस्त पापों से विमुक्त हो जाते हैं ।४२। देवगण, मुनिगण, इन्द्र, नृपतिगण एवं उस मन्वन्तर के अधिपति अपर, वे सब संतुष्ट होते हैं एवं संतुष्ट होने पर सद्बुद्धि प्रदान करते हैं ।४३। उस प्रकार सद्बुद्धि प्राप्त कर शुभ कार्य करने से जब तक चौदह इन्द्र रहेंगे, तबतक सद्बुद्धि मनुष्य प्राप्तकरते रहेंगे ।४०। क्रमबद्ध मन्वन्तरों का वर्णन श्रवण करने से सम्पूर्ण ऋतुऐं सहनीय होती हैं और निस्सन्देह संपूर्ण ग्रह भी शांत हो जाते हैं ।४५।

९३—राजवंशानुवर्तन

भगवन्कथितासम्ययक्त्वयामन्वन्तरस्थित: ।
क्रमाद्विस्तरतस्त्वत्तोमयाचैवावधारिता ।१
ब्रह्माद्यपखिलवशंभूभू जांद्रिजसत्तमम् ।
श्रोतु ममेच्छत: साम्यग्भगवन्प्रब्रवीहिमे ।२
शृणुवत्सनृपाणांत्वमशेषाणांसमुद्भवम् ।
चरितंवचजगन्मलमादौकृत्वाप्रजापतिम् ।३
अयंहिवंशोभूपालेरनेकक्रतुकर्तृ भि: ।
संग्रामजिदिभर्धर्मज्ञै :शतसख्यैरलक्रत: ।४
श्रृत्वाचैपषाँनरेन्द्राणांचरितानिमहाष्मनाम् ।
उत्पत्तयश्चपुरुष:सर्वपापै:प्रमुच्यते ।५
मनुयंत्रतथेक्ष्वाकुरनण्योभागीरथ: ।
अन्येचशतशोभूपा:ह्म्यक्पालितभूपय: ।६
धर्मज्ञायज्विनश्शूरा:परमार्थिवेदिन: ।
श्रतेतस्मिन्पुमाग्वशेपापौधादिड्च्यते ।७

क्रौष्टकि बोले—हे महाराज; मन्वन्तरों के विषय में आपने भली प्रकार वर्णन किया है और मैंने उसे विस्तारपूर्वक श्रवण किया है ।१। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! मैं अधिपतियों की सम्पूर्ण वंशावलि ब्रह्माजी से प्रारम्भ करके सुनने का इच्छुक हूँ । हे महाराज ! वह मुझसे सम्यक् प्रकार से कहिये ।२। मार्कण्डेयजी ने कहा— हे वत्स ! विश्वाधार ब्रह्माजी से प्रारम्भ हुई सम्पूर्ण अधिपतियों की जन्म-गाथा एवं चरित्र का वर्णन सुनो ।३। यह वंश यज्ञ करने वाले, रण विजेता, धर्मज्ञ सैकड़ों विविध नृपों से अलंकृत है ।४। इन महान् नृपतियों के जन्म और चरित्र के विषय में सुनकर मनुष्य सम्पूर्ण पापों से विमुक्त होता है ।५। मनु, इक्ष्वाकु, अनरण्य भागीरथ एवं अन्य दूसरे शतश: ।६। धर्मात्मा, यज्ञकर्त्ता और ब्रह्मज्ञानी नृपों ने जिन वंशों में जन्म लेकर

पृथ्वी का पोषण किया, उस वंश का श्रवण करने से मनुष्य समस्त पापों से विमुक्त हो जाता है ।७।

तदश्रूयतावशोययतोवंशा:सहस्रशः ।
भिद्यन्मनुजेन्द्राणामकरोद्दायथावटात् ।८
ब्रह्माप्रजापति:पूर्वसिमृक्षुर्विविधा:प्रजाः ।
अंगुष्ठादक्षिणाद्दक्षमसृजद्विसत्तमः ।९
वामगुष्ठाच्चतत्पत्नीजगत्मतिक्रोविभुः ।
ससजभगवान्ब्रह्माजगतांकारणपरम् ।१०
अदितिस्तयदक्षस्यकन्याजायतशोभना ।
तस्यांचनश्यपोदेवमार्तण्डसमजीजनत् ।११
ब्रह्मास्वरूपंजगतामशेषाणांवरप्रदम् ।
आदिमध्यान्तभतंचसगस्थित्गतकमसु ।१२
यतोऽखिलमिदयस्मिन्नशेषचथितंद्विज ।
यस्त्वरूपंजगच्चेदसदेवासुरमानुषम् ।१३
य:सर्वभूत:सर्वात्मामापरमात्मासनातनः ।
आदित्यामभवद्भास्वान्पूर्वमाराधितस्तथा ।१४

एक वटवृक्ष अंकुर से ही एक अलग पूर्ण वृक्ष खड़ा हो जाता है, उसी तरह मनुज दो के सहस्रों के वंश उत्पन्न हो गये, वह सुनिये ।८। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ, पूर्व समय में विभिन्न प्रजा उत्पन्न करने की आकांक्षा से प्रजापति ब्रह्माजी ने अपने दाहिने हाथ के अँगूठे से दक्ष प्रजापति को जन्म दिया ।९। विश्व के जन्मदाता भगवान् ब्रह्माजी ने विश्व सृष्टि के लिए अपने वांए हाथ के अँगूठे से दक्ष की पत्नी को जन्म दिया ।१०। अदिति नाम की एक सुन्दर कन्या ने दक्ष के यहाँ जन्म लिया । उस कन्या और कश्यप से मार्तण्डदेव उत्पन्न हुए ।११। हे ब्राह्मण, ब्रह्म स्वरूप जो अशेष इस विश्व का वरदाता, सृष्टि स्थिति एवं प्रलय के कार्य में प्रारम्भ व अन्त स्वरूप हैं ।१२। समस्त विश्व के जन्मदाता जिनमें समस्त विश्व विद्यमान है, सुर,. असुर और मनुष्यों सहित यह

विश्व उनका स्वरूप है ।१३। जो सर्व प्राणी स्वरूप और सर्वात्मा सनातन परमात्म हैं, अदिति द्वारा स्तुति करने पर उन्हीं भास्कर सूर्य ने उसके गर्भ से ग्रहण किया ।१४।

भववंछ्रोतुमिमिच्छामियत्स्वपविवस्तव: ।
यत्कारणचादिदेव सोऽभवत्कश्यपात्मज ।१५
यथाचाराधितोदेव्यासोऽदित्याकश्यपेनच ।
आराधितेनावोक्तं यत्तोनदेवेनभास्वता ।१६
प्रभावंचाद्गतोणस्यथयथावन्मुनिसत्तम: ।१७
भवताकथितसत्यवछ्रोतुमिच्छाम्ययेषत: ।
विस्पष्टापपभाविद्येज्यतिर्भाशाश्वनीस्फुटा ।
कैवल्यज्ञानसाविर्भू: प्राकाम्यसविदेवच ।१८
बोधश्चावगतिश्चैवस्मृतिर्विज्ञानमेवच ।
इत्येनानीहरूपाणितस्यारूपस्यभास्वत ।१९
श्रूयतांचमहाभगाविस्तराद्वदतामम: ।
यत्पुष्टवानसिरवेरविर्भावोयथाभवत् ।२०

क्रौष्टुकी बोले—हे महाराज ! भास्वान् सूर्य के स्वरूप जिसके कारण वह आदि देव कश्यप के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए उसका वर्णन सुनना चाहता हूँ ।१५। एवं अदिति व कश्यप ने जिस प्रकार आराधना की और आराधना से प्रसन्न सूर्यदेव से जो कहा ।१६। एवं गृहीत जन्म सूर्य का प्रकार जैसे पहले आपने वर्णन किया, हे श्रेष्ठ ! वह सभी सम्यक् प्रकार से श्रवण करने की इच्छा है ।१७। मार्कण्डेयजी ने कहा-विस्पष्टा, परमा, विद्या, ज्योति, शाश्वती, दीप्ति, कैवल्य, ज्ञान, आविर्भाव, प्रकाम्य, सवित ।१८। बोध, अवगति, स्मृति एवं विज्ञान आदि सभी सूर्यदेव के स्वरूप हैं । हे महाभाग ! रवि के आविर्भाव के विषय में विस्तार पूर्वक श्रवण करो ।

निष्प्रभेऽस्मिन्निरालोकेतर्वमस्तसावृते ।
ब्रहद्दण्डमभुदेकभक्षलकारणंपरम् ।

तद्विभेदतेदन्तःस्थाभगवान्प्रपितामहः ।
पद्मयोनि स्वतब्रह्माय:स्रष्टाजवताँद्रभु: ।२२
तन्मुखादोमितिमहानुभच्छवदोमहामुने ।
तृतोभूस्तुभुवस्तस्मात्तश्चस्वरनन्तरम् ।३३
एताश्याहृतयस्तिभ्र स्वरूपं द्विवस्वत: ।
ओमित्यस्मात्स्वरपाद्य सूक्ष्मरूपरवे:यरम् ।२४
ततो मह्‌रितिस्थूलंजनंथूलतर-ततः ।
ततस्पस्ततत:सत्यमितिमूर्तीनिसप्तधा ।२५
स्थितानितस्यरूपाणिभवन्तिनभन्तिच ।
स्वभावभाबयोर्भावयतोगच्छन्तसक्षयम् ।२६
आद्यर्न्तयत्सरं सूश्ममरूपपरमंस्थितम् ।
ओमित्युक्त मयविप्रतत्परं प्रह्मतद्वपु: ।२७

सृष्टि के पूर्व, जब यह विश्व आभाहीन, अन्धकारमय था जब क्षय रहित एक विशाल अण्ड उत्पन्न हुआ ।२१। उसी समय जगत् के जन्म-दाता प्रतिपादन ब्रह्म पद्म-योनि में विद्यमान थे, उसी ने स्वयं इस अन्डे को भेद दिया ।२२। हे महर्षि ! ब्रह्माजी के मुखार विन्द से उस समय ॐ शब्द हुआ । ॐकार शब्द से पहले भू. भुव; एवं तत्पश्चात् स्व: उत्पन्न हुआ ।२३। यह व्याहृति भगवान् भास्करका स्वरूप हैं ।ॐ। शब्द के स्वरूप से सूर्य का अत्यन्त सूक्ष्म रूप हुआ हैं ।२४। उससे स्थूल रूप 'मह' तत्पश्चात् स्थूल रूप 'जन-जन' फिर स्थूल रूप तप: अनन्तर स्थूल रूप 'सत्व' उत्पन्न हो गया । स्थूल का सम्पूर्ण रूप स्थूल है । विवस्वान्, सूर्य के स्थूलों के सूक्ष्म भेद से ॐकार के स्वरूप उत्पन्न हुए ।२५। सूर्य भगवान के सप्त रूपभी कभी कभी सम्मुख होते हैं और कभी पीछे रहते हैं, क्योंकि उनके स्वभाव एवं प्रकृतिक अस्तित्व संशयात्मक होता है ।२६। हे ब्राह्मण ! इस जगत प्रारम्भ व अन्त निराकार परम सूक्ष्त परमात्मा विद्यमान है, ॐकार से मेरा अभिप्राय नहीं से हैं ब्राह्मण ब्रह्मरूप हो मार्तण्डदेव की देह है ।२७।

९४-वेदमय मार्तण्ड की उत्पत्ति

तस्मादण्डादभिन्नाब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
ऋचोबभूवु प्रथमप्रथमाद्वदनान्मुने ।१
जपापुष्पनिभा सद्यस्तेजोरूपाह्यसंहताः ।
पृथक्पृथग्विभिन्नाश्चरजोरूपवहास्ततः ।२
यजंविदक्षिणाद्वक्त्रादनिरुद्धानिकांनिचित् ।
याद्दग्वर्णतथावर्णन्यसहतिधराणिच ।३
पश्चिमयद्विभोवक्त्रप्रहाण परमेष्ठिनः ।
आनिभूतानिसामानितत्तच्छन्दांसितान्यथ ।४
अथर्वणामशेषचभ्रङ्गांजनचयप्रभम् ।
यावद्घोरस्वरूपंतदाभिचारिकशांतिकम् ।५
उत्तराप्रकटीभूतवदनात्तस्यवेधसः ।
सुखसत्वतमः प्रायंसौम्यस्वरूपवत् ।६
ऋचोरजोगुणाः सत्वंयजुषांचगुणामुने ।
तमोगणानिसामानितमःसत्वमथर्वसु ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे ऋषि ! उस अण्डे के भेदन पर अव्यक्त जन्म ब्रह्माजी साकार हुए और उनके मुख से निकले वचनों में ऋग्वेद की रचना हुई ।१। वह तेजरूप और पृथक् विभिन्न जोरूप धारण करने वाला था । ब्रह्माजीके दक्षिण मुखसे स्वर्ण तुल्य वर्णयुक्त असंहति ग्रहण करने वाले समस्त यजुः की अनिरुद्ध भाव से रचना हुई तदन्तर ब्रह्मा जी के पश्चिम मुख से नाम की रचना हुई, सम्पूर्ण साम छन्द पूर्ण था ।४। ब्रह्माजी के उत्तर मुख से भङ्ग व अजन के समूह के समान आभा पूर्ण कृष्ण वर्ण आभिचारिक, शांतिकर्त्ता सुख, सत्व, तमसे युक्त सौम्य और असौम्य अशेष अथर्व की रचना हुई । हे ऋषि सम्पूर्ण ऋक्में रजोगुण, सम्पूर्ण यजु में सत्व गुण, सम्पूर्ण साम में तमोगुण एवं सम्पूर्ण अथर्व में सत्य एवं तमोगुण है ।५-७।

एतानिज्वलमानानितेजसाऽप्रतिमेनवै ।
पृथक्पृथगवस्थानंभांजिपूर्वमिवाभवन् ।८
ततस्तदाद्यं यतेज्प्रोमिन्युक्त्वाभिक्षद्वयते ।
तस्प्रस्वभावाद्यतेजस्तत्सभावत्यसंस्थितम् ।६
यथायंगुर्मयतेजस्तद्वत्साम्नामहामुने ।
एकत्वमुपयातानिपरेतेजतिसंश्रये ।१०
शाँतिकपौंद्धिकचैवतथावैवाभिचारिकम् ।
ऋगाटिवुलयब्रह्मास्त्रितयष्विधागतम् ।११
ततोविश्वदसद्यस्तमोनाशात्सुनिमलम् ।
विभावनीषविप्रर्षैतिर्येगूर्ध्वमधस्तया ।१२
ततस्तन्मण्डलोभूतछान्दसतेजउत्तमम् ।
परेणतेजसाब्रह्मन्नेकत्वमुषगम्यतत् ।१३
आदित्यसज्ञामगदादावेत्रयऽभवत् ।
विश्वस्यास्यमहाभागकारणंचां व्यवात्मकम् ।१४

इन सभी ने अद्वितीय तेज से प्रकाशवान् होकर पृथक्-पृथक् भाव से स्थिति की ।८। प्रथम का वह तेज, जिसके लिये ॐ शब्द प्रयुक्त हुआ है, उसे, वह अपने में समेटकर स्थित हुआ ।९। हे महर्षि ! इस प्रकार नाम युक्त तेज एवं यजुयुक्त तेज को भी अपने में समेट लिया, इस प्रकार सम्पूर्ण तेज उस ॐ स्वरूप परम तेजमें आवृत्त होकर एकहो गये । विप्र, इसके बाद ऋक्, साम, यजु, तीनों वेदों में, शांति युक्त, पौष्टिक अभिचारिक इन तीनों में अथर्ववेद भी मिल गया । हे ब्रह्मर्षे ! अन्धकार नष्ट होने पर समस्त जगत् तुरन्त स्वच्छ हो गया, जिससे उसका ऊर्ध्व, अधः और तिर्यक् अथवा पार्श्व देश प्रकाशमें आये । हे विप्र, तत्पश्चात् वह परमछन्दन तेज मण्डलीभूत हो फिर श्रेष्ठ ॐकार तेजमें लीन होकर एक हो गया । इस प्रकार इस तेज को आदि में उत्पन्न होने के कारण 'आदित्य' की संज्ञा दी गई । हे महाभाग ! यही इस जगत् का अव्ययात्म कारण ।१०-१४।

प्रातर्म्मध्यन्दिदेचैवतथार्चववापरह्णके ।
त्रयीतपतिसाकालेऋग्यजु:सामसंज्ञिता ।१५
ऋचस्तपपिपुर्वान्हेपध्यान्हेचयजूंषिवै ।
सामानिचारीह्णेवैतपन्तिमुनिसत्तम: ।१६
शान्तिकर्मृक्षपूर्वासनेयजु:ष्वेवचपौष्टकम् ।
विन्यस्तंसाम्निमायाहनेहमा ।चारिकमन्तत: ।१७
मध्यन्दिनेऽपरांह्णे चसमेवाभिचारिकम् ।
अपराह्णे पितृणान्तुराम्नाकार्य्याणितानिवै ।१८
विसूष्टोऋ गवोब्रह्मास्थितौविष्णुर्यंजुर्मय: ।
रुद्र:सामयोन्तेचतस्मात्तस्याशचिध्वनि: ।१६
तदेवभगवान्भास्वान्वेदात्मावेदसस्थित: ।
वेदविद्यात्मकश्चैवपर:पुरुषउच्यते ।२०
सर्गस्थित्यन्तहेतुश्चरज.सत्वादिकान्गुणान् ।
आक्षित्यब्रह्मविष्णवादिसंज्ञामभ्येविशाश्वंत ।२१
देवै:सदेडय: सतुदेदंमूर्तिराद्योऽखिलमर्त्यमूर्ति: ।
विश्वाश्रयज्योतिरवेद्यधर्मावेदान्गम्य:परम:परेश ।२२

ऋक्, यजु, और साम तीनों सज्ञाऐं प्रात: मध्याह्न एवं अपराह्न काल में तपती हैं ।५। हे मुनिश्रेष्ठ ! उनमें ऋक् प्रात:काल, यजु:, मध्याह्न में और साम अपराह्न में तपता है ।१६। पूर्वाह्न काल ऋक् में शान्ति कार्य, मध्याह्न में यजु:, पौष्टिक एवं अपराह्न काल में साममें सम्पूर्ण आभिचारिक कर्म निहित है मध्याह्न और अपराह्न समय यहीं आभिचारिक-कर्म करे ।१७-१८। सृष्टि समय में ब्रह्माऋक्मय, स्थिति, काल में विष्णु यजुर्मय एवं शमन काल में रुद्र साममय होते हैं, इसलिए अपराह्न काल को अशुचि कहते हैं ।६। इस कारण उपर्युक्त प्रकार से वेदात्मा, वेद संस्थित एवं वेद विद्यायुक्त भगवान् परम पुरुष नाम किया गया है ।२०। सृष्टि के आदि, स्थिति व प्रलयकर्त्ता यह शाश्वत आदित्य सत्य रज एवं तमोगुण को आश्रय कर ब्रह्मा, विष्णु और महेश

नामके होते हैं ।२१। देवताओं द्वारा सदैव आराध्य वेदमूर्ति, निराकार, सम्पूर्ण प्राणि स्वरूप एवं ज्योति स्वरूप आदि पुरुष भगवान् आदित्य विश्व के आश्रतदाता अवेद्य धर्मा, वेदात्मगम्य एवं उत्तर से भी परमोत्तम हैं ।२२।

९५-ब्रह्माकृत रविस्तव

तेस्यसन्ताप्यमानेतुतेजयोर्द्धमधस्तथा ।
ममक्षुश्चिन्तयामासपद्मयोयिःपितामह ।१
सृष्टिःकृतापिमेनाशंप्रयास्यत्यभितेजसाः ।
भास्वत सृष्टिसंहारस्थितिहेतोमहात्मनः ।२
अप्राणाःप्राणिनःसर्वआप शुष्यन्तितेजसा ।
नचाम्भवसाविनासृष्टिबिश्वस्यास्तभाविष्यति ।३
इतिसञ्चिन्त्य भगवान्स्तोत्रंभगवतोरवेः ।
चकारतन्मयोभूत्वाब्रह्मलोकपितामहः ।४
नमस्तेयन्मयसर्वमेयत्सर्वामिश्चयः ।
विश्वमूर्तिः परं ज्योतियत्तद्ध्यायन्तियोगिनः ।५
रमयोयोयजुषांनिधानंसाम्नांचयोयोनिरचिन्त्यशक्तिः ।
त्रोयीमयःस्थूलतयाधर्ममात्रापरस्वरूपोगुणपारयोग्यः ।६
त्वांसर्वहेतपरमवद्यमाद्यपरंज्योतिवेद्यरूपम् ।
स्थूलञ्चंदेवात्मतयानमस्येभास्बन्तमाद्यं परमंपापेभ्यः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा-उसके पश्चात् आदित्य के तेज से ऊर्ध्व एवं अधः संतापित होने पर सृष्टि की रचना के इच्छुक ब्रम्हा चिन्तित होने लगे ।१। कि सृष्टि की रचना करने परभी उसकानाश भगवान् भास्कर की तीव्र किरणों के तेज से होगा ।२। उन भास्कर के तेज से सम्पूर्ण जीवधारी प्राणविहीन हो जातें हैं एवं जलसूख जाता है, फिर जलहीन इस जगत् की सृष्टि भी नहीं होगीं ।३। जगत् पितामह ब्रम्हाजी इस प्रकार चिन्तित तल्लीन होकर भगवान् भास्कर की स्तुति करने लगे ।३।

ब्रह्माजी ने कहा--जो समस्त जगत् के आत्मा रूप और जगत् में विद्यमान है विश्व जिनका मूर्तरूप है एवं योगीभी जिस अनिन्दियगाह्य श्रेष्ठ ज्योति की आराधना करते हैं, उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ ।५। ऋग्वेद युक्त अचिन्त्य शक्ति, यजुर्वेद के आधार, साम की रचना के कारण, स्थूलता प्रभुत तीनों मेंनिहित, अर्द्धमात्र स्वरूप परब्रह्म रूप और महान् गुणी हैं ।६। सर्वप्रथम इन्हीं सर्वाधार रूपी परम पूज्य, परमेश्वर, आदिरूप, परमज्योति, देवात्मा के लिये स्थूल रूप एवं श्रेष्ठों से श्रेष्ठतम आदि पुरुष भगवान् भास्कर को नमस्कार करता हूँ ।७।

सृष्टिकरोमिगदहंतवशक्तिराद्यातत्प्रेरितोजलमहीपवनाग्निरूपाम्
तद्देवतादिविषयांप्रणवाद्यशेषांनात्मेच्चयास्थितिलयावपितदेव ।
वह्निस्त्वमेवजशोषणतःपृथिव्या सृष्टिकरोषिजगताँचतथाद्यपाकं
व्यापीत्वमेवभयवन्गगननस्वरूपत्पवचधांजगावदपरिपासिविश्वम्।
यज्ञैयजव्तिपरमात्मविदोभवतविष्णुस्वरूपमखिलेष्टिमयिवस्वन् ।
ध्यायन्तिचापियतयानियतात्मचित्तासर्वेश्वरपरममात्मविमुक्तिकाम

नमस्तेदेवरूपयायज्ञरूप यतेनमः ।
परब्रह्मस्वरूपायचिन्त्यमानायोनिभिः ।११
उपसहरते जीयतेजसः संहृतिस्तव ।
सृष्टेर्विघ तायविभोसृष्टोचांहंसमुद्यतः ।१२
इत्येवंसुस्तुमोस्वान्ब्रह्मणासर्गकर्तृणा ।
उपसहृतवांस्तेयः परंस्वल्पधारयत् ।१३
चकारधनत सृष्टिजयतःपद्मसम्भवः ।
तथातेषमहाभयुःपूर्वकल्पान्तरेषुवै ।१४
देवासुरादीन्मर्त्याश्चपश्वादान्वृक्षवीरुध ।
ससर्जपूर्ववद्ब्रह्मानरकांश्चमहामुने ।१५

हे देव ! आपकी ही शक्ति नित्या है क्योंकि मैं उससे प्रेरणा पाकर ही, जल, पृथ्वी वायु और अग्नि देवतादि एवं प्रणवादि अशेष की

सृष्टि करता हूँ। इस प्रकार स्थित और प्रताप भी स्वेच्छासे नहीं करता वह सब भी आपकी प्रेरणा से ही करता है।८। हे भगवान्! तुम वह्निरूप भी हो जिस समय धरती से तुम जल शुष्क करते हो तब मैं विश्व-सृष्टि एवं प्रथम पाक सम्पन्न करता हूँ। सर्वव्यापी आकाश स्वरूप आप ही हो, पञ्चरूप उस जगत् के रक्षक भी आप ही हो।९। हे भास्कर! परमात्मविद सकल यज्ञमय विष्णु स्वरूप में यज्ञ द्वारा आपकी आराधना करते हैं, आत्मा रक्षाके आकांक्षी जितेन्द्रिय यति भी आपका परम सर्वेश्वर मानकर आपका मनन करते हैं।१०। आप देवरूप हैं, आपको प्रणाम करता हूँ,आपकोही यज्ञरूप और परब्रह्म स्वरूप मानकर योगी आपका चिन्तन करते हैं आपको प्रणाम करता हूँ।११। हे प्रभो! आप तेज को त्यागें,मैं सृष्टि की रचना के लिये उद्यत हूँ, आपका तीव्र तेज सृष्टि की रचना में वाधा है।१२। मार्कण्डेयजी ने कहा—भगवान भास्कार ने सृष्टि के रचयिता ब्रम्हाजी की आराधनासे प्रसन्न होकर अपना तीव्र तेज त्याग दिया और केवल सामान्य तेज धारण किया।१३ फिर महाभाग ब्रम्हाजी ने पूर्व कल्पान्त कल्प में बिश्व की सृष्टि रचना की।१४। हे महर्षि! ब्रम्हाजी ने पूर्व की भाँति सुर, असुर, मनुष्य, पशु, वृक्ष आदि एवं समस्त नरकों की रचना की।१५।

९६-कश्यप प्रजापति की सृष्टि

मृष्टवाजगदिदं ब्रह्माप्रविभागमथाकरोत्।
वर्णाश्रमसमुद्रादिद्वीपानांपूर्ववद्यथा।१
देवदैत्योरगादीनांरूपस्थानातिपूर्ववत्।
वेदेभ्यएवभगवानकरोत्कमलोद्भवः।२
दक्षस्यतनयाब्रह्मस्तस्यभार्य्यास्त्रयोदश।
वहवस्तत्मुताश्चासन्देवदैत्योरगादयः।३

अदितिर्जनयामासदेवांस्त्रिभुवनेश्वरान् ।
दैत्यान्दितिर्दनुश्चोग्रान्दानवानुरविक्रतान् ।५
गसुडारुणौचविनतायक्षांसिवैखसा ।
कद्रू सुषावनागांश्चगन्धर्वान्सुषुवेमुनि: ।६
क्रोधापाजाज्ञिरेकुल्यापिष्टायाश्चापसरोगणा: ।
पेपावतादीन्मातङ्गानिसचासुषुवेद्विज: ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा ब्रह्माजी ने विश्व की रचना करके पूर्व की भांति वर्ण, आश्रम, समुद्र, गिरि और सम्पूर्ण द्वीपों का बिभाजन किया ।१। भगवान् ब्रम्हाजी ने देवगण दैत्य एवं उपकरणों का रूप तथा स्थिति देवगणों ने प्रारम्भ कर पूर्व की भाँति ही निर्दिष्ट किये ।२। ब्रम्हाजी के मरीचि नामक पुत्र से कश्यप नामक एक विख्यात पुत्र उत्पन्न हुए थे जो कि कश्यप नाम से ही उत्पन्न हुए ।३। हेविप्र! दक्षकी तेरह कन्याएं उनकी पत्नियां हुईं, जिनके गर्भ से देव, दैत्य और उरग आदि अनेक पुत्र उत्पन्न हुये ।४। अदिति ने त्रिभुवनेश्वर देवताओं को जन्म दिया, दिति ने दैत्यों और दनु ने महापराक्रमी क्रोधी दानवों को जन्म दिया ।५। विनता ने गरुण व अरुण, खसा ने यक्ष व राक्षसों, कद्रू ने नागों एवं मुनि के गन्धर्वों को जन्म दिया ।६। हे ब्राम्हण ! क्रोध से कुल्यागण, रिष्टा से अप्सराऐं और ईरा से ऐरावत इत्यादि हाथियों ने जन्म लिया ।७।

माम्नाचसुषुवेश्नीप्रमुखा कन्यकाद्विल ।
यायांसप्रसूताखगमा:श्येनभासशुकादय: ।८
इलाया पादपाजाता प्रधायायादसांगणा: ।
आदित्यांयासमुत्पन्नाकश्यपश्येतिसन्तति: ।९
तस्यांश्चपुत्रदौहित्रैदोहित्रिकादिभि: ।
व्याप्यमेतज्जगत्सत्यातेषांयासाञ्चवैमुने ।१०
तेषांकश्यपपुत्राणांप्रधानादेवतागणा: ।
सात्विकाराजसास्त्वत्तेतामसाश्चमुनेगणार: ।११

देवान्यज्ञभुजश्चक्रेतथात्रिभुवनेश्वरान् ।
ब्रह्म ब्रह्मविदांश्रेष्ठःपरमेष्ठोप्रजापतिः ।१२
तानवधन्तसहिता सपत्नादैत्यदानवाः ।
राक्षसाश्चतथायुद्ध तेषामासीत्सुदारुणम् ।१३
दिव्यंवर्षसहस्रन्तुपराजीयन्तदेवता ।
जयिराचाभवन्यिप्रवलिनोर्दत्यदानवः ।१४

ताम्र से श्येनी आदि कन्यायें उत्पन्न हुई । इन कन्याओं से ही श्येन, भास एवं शुकादि खेचरगण उत्पन्न हुए ।८। इला ने पादपगणों एवं प्रधा तरङ्ग गणों ने जन्म लिया । हे ऋषिवर ! आदिति के गर्भ से उत्पन्न कश्यप की जो सन्ताने थी उनके पुत्र धेवते और नाती, धेवते आदि एवं उनकी सन्तानें समस्त विश्व में व्याप्त हो गईं ।९। हे ऋषि ! कश्यप के पुत्रों में देवता ही प्रमुख हैं, उनके त्रिविधगण, सात्विक, राजस एवं दामक है ।१०। परमेष्ठी एवं ब्रम्हज्ञ प्रजापति ब्रम्हाजी ने देवतागणों को त्रिभुवनेश्वर एवं यज्ञमुक किया था ।१२। किन्तु विमाताओं को उत्पन्न दैत्य, दानव और राक्षस मिलकर देवतागणों के प्रति शत्रुता का आचरण करते हुये बाधा पैदा करते थे, इसलिये उन का देवगणों के साथ हजारों वर्षों तक विकाराल युद्ध हुआ । हे ब्राम्हण, इस महायुद्ध में देवगणों की पराजय हुई और बलवान दैत्य व दानव जीत गये ।१३-१४।

ततोनिराकृतान्दैतेयैर्दानवैस्तधा ।
हृतीबभुवन स्तृष्टवाह्यदिबिमुं निसतम ।१५
आच्छिन्नतज्ञभागाँश्चशुचातपी डित्ताभशम् ।
आभराधनायसवितुःपरंयत्नं प्रचक्रमे ।१६
एकाग्रतियताहारापर नियमास्थिता ।
तुष्टावतेजसाराशिगब्रमस्थदिवाकरम् ।१७
नमस्तुभ्यंपरांससूक्ष्मासौवर्णों विभ्र तेतनुम् ।
धामधामवतामीशधाम्नामाधारशाश्वत ।१८

जगतामुपकारायतथापस्तेवगोपते ।
आददानस्ययद्रूपतीव्रं तस्मैनमाम्यहम् ।१६
ग्रहीतुमष्टमासेनकालेनन्दुमयंरसम् ।
विभ्रतस्तववद्रूपमतितीव्रंततास्मतत् ।२०
तमेवमुचतःसवरसर्वंवर्षणाययत् ।
रूपमाप्यायकंभास्तस्मैनेघायतेनमः ।२१

हेऋषि श्रेष्ठ! तदुनरान्त दैत्य दानवों द्वारा अपने पुत्रों को पराजित हुआ एवं यज्ञ भागों से बंचित देखकर, अदिति शोक एवं पीड़ा सहित भगवान् भास्कर की स्तुति करने लगी ।१५-१६। एकचित्त, नियताहार एवं उत्तम नियम परायणताका पालन करती हुई आकाश मन्डल में विद्यमान तेज राशि भगवान् सूर्यदेव की आराधना करने लगी ।२७। अदिति बोली हे शाश्वत ! आप सुन्दर सूक्ष्म सुवर्ण मन धारक हो,आप ज्योति स्वरूप ज्योतिष्कगणों में मुख्य एवं ज्योति के आधार हो, आपको नमस्कार ।१७। हे गोपते ! बिश्व का कल्याण करने के लिये जल ग्रहण करने वाली आपकी तीव्र मूर्ति को नमस्कार ।२६। आठ महीने की अवधि पर्यन्त इन्दुमय रस ग्रहण करने वाली आपकी अत्यन्त तीव्र मूर्ति को प्रणाम करती हूँ ।२०। हे भगवान उस एकत्रित सम्पूर्ण रस को परित्यागकर वर्षा करने के लिये आप जो तृप्तिकारक मेघ धारण रुप करते हो, उस मेघ रूप आपकी मूर्ति को प्रणाम ।२१।

वार्यंतसर्मत्विनिष्पन्नदशेषंचौषधीगणम् ।
पकायतवयप्रपंभास्कर तनमाम्यहम् ।२२
यच्चरूहतआतींतंहिमोत्सर्गादिशीतलम् ।
तत्कालस्यपीषातरणेतस्यतेकम्ः ।२३
नातितीव्रं चद्रूपनातिशीतंयत्तव ।
वसन्तत्तीरवेसौम्यंतस्मैदेवनयोनमः ।२४
आप्यायनमशेषाणांदेवानाँचतथापहम् ।
पितृणांवनमस्तस्मैसम्यानापाँकहेतवे ।२५

यद्रूपजावनायैकर्वींरुधासमृतात्मकम् ।
पीयतेदेवपितृभिस्तस्मैसोमात्नेनमः ।२६
आप्यायदाहरूपाभ्यांरूपंविश्वमयन्तवं ।
समेंतमग्नोषोमाभंनमस्मैगुणात्मने ।२७
यद्रपमृग्यज साम्नामैक्येरुत्पतेतव ।
विश्वमेतत्रयोसज्ञंनतस्तस्मैविभावसो ।२८

जल वर्षा से उत्पन्न अशेष औषधियों को पकाने के लिये जो भास्कर मूर्ति आप धारण करते हो, उस मूर्ति को प्रणाम ।२। हे तरणें ! शस्य-पोषण हेतु हिम वर्षा इत्यादि के लिये घोर शीतपूर्ण आपका जो रूप है, आपको उस को प्रणाम ।२४। हे रवे ! बसन्त ऋतुकाल में न अत्यन्त तेज और न अत्यन्त शीतपूर्ण आपकी जो सौम्म मूर्ति है, हे देव ! आपकी उस मूर्ति को नमस्कार ।२४। अशेष देवता एवं पितृगण को तृप्ति प्रदान करने वाले अन्न की पकाने वाली आपकी जो मूर्ति है, उसको नमस्कार करती हूँ ।२५। सम्पूर्ण गुल्मलता के जीवन का आधार आपका जो अमृतमय रूप हैं, जिसे देवता और पितर भी पान करते हैं, अग्नि एवं सोम दोनों रूपों के मिलने से आपका जो जगत मय स्वरूप बना है, ऐसे आप गुणात्मा को नमस्कार ।२६-२७।

यत्तुतस्मां पर रूपमोभित्युक्वाभिशब्दियम् ।
अस्थूलाललन्तममलनमस्तस्मेसदात्मने ।२६
एवसानियतादेवीचक्रेस्तोत्रमहर्निशम् ।
निराहाविवस्वन्तमारिराधयिषुर्मुने ।३०
तय:कालेतमहताभगवांस्तपनोऽम्बसे ।
प्रत्यक्षतामगादस्यादाक्षायण्याद्विजोत्तम ।३१
सावदशैमहाकटतेजसोऽम्बरसंश्रितम् ।
जगानमेप्रसीदेतिनत्वांपश्यामिगोपते ।३२
यथाद्दष्टबतीपूर्वमन्वरस्णसुदर्पशम् ।
निराहाराविवस्वन्तंतपन्ततदनन्तरम् ।३३

सघाततेजसांतद्वदिहपश्यामिभू तले ।
प्रसादकुरुपश्येययद्रूपातेदिवाकर ।
भक्तानुकम्पकविभोक्ताहपाहिमेसुतान् ।१४

इसके अतिपिक्त आपका जो उत्तम,सूक्ष्म,अनन्त एवं स्वच्छ ओंकार रूप कहा जाता है उस नित्यस्वरूप का नमस्कार ।२९। मार्कण्डेयजी ने कहा हे ऋषिवर ! अदिति देवीइम प्रकार नियमपरायण एवं निराहार जीवन पालनकर भास्कर भगवान् की आराधना करने की आकांक्षा से दिन रात उनकी स्तुति करने लगीं ।३०। हे द्विजश्रेष्ठ ! इसके पश्चात बहुत समय व्यतीत होने पर भगवान् सूर्य गगन स्थित हुए दक्ष सुता के समक्ष दिखाई देने लगे ।३१। जो एकदम चमकने वाली अंशुमाला द्वारा आकाश मण्डल में भी स्पष्ट दर्शनीय नहीं थे उन्हीं तेजराशि स्वरूप रवि भगवान् की अदिति ने पृथ्वी के तल पर विद्यमान देखा । उन्हें देखकर अदिति बहुत भयभीत हुई और बोली—हे गोपते ! आप मुझ पर प्रसन्न होवें, मैं आपको देख नहीं सकती ।३२। प्रारम्भ में निराहार होकर आकाश में विद्यमान असहनीय सूर्यदेव का जिस प्रकार तप्तता प्रदान करते देखा, अब इस धरातल पर भी मैं उसी प्रकार तीव्रतेजवान् मूर्ति को देख रही हूँ। हे दिनकर, मुझ पर प्रसन्न होवें जिससे मैं आपके स्वाभाविक स्वरूप का दर्शनकर सकूँ । हे प्रभो ! आप भक्तों पर कृपा करते हैं, मैं आपकी भक्त हूँ आप मेरे पुत्रों की रक्षा करें ।३३-३४।

त्वंधाताविसजसिविश्वमेतत्वपासिस्थतिकरणायसंप्रवृत्तः ।
वय्वन्तेलयमखिलप्रयाति वंत्वतोऽन्यानहिंगतिस्तिर्वलोके ।३५
त्वब्रह्माहरिरजसंज्ञितस्त्तमिन्द्रोवित्तेश:पितृपतिरस्पति समीरः
सोमोग्निगगनपतिर्महीधरीऽब्धिः ।
किस्तव्यतवसकलात्मरूपधाम्न: ।३६
यज्ञ शन्वामनुदिनमात्मकर्मसक्ता: ।
स्तुवन्तोविविधपदैर्द्विजायजन्ति ।
ध्यायन्तोविनियतचेतसोभवन्तयोघस्था:परमदंप्रयातिन्मर्त्या ।३७

तपसिपचसिविश्वंपासिभस्मीकरोषि ।
प्रकटयसियूखैर्ह्लादयस्यम्बुगर्भैः ।
सृजसिकमलजन्मापालस्य ।
च्युताख्यःत्रपयसिचयुगांतेरुद्ररूपस्त्वमेकः ।३८

आप ब्रम्हा के रूप में इस जगत् के जन्मदाता हैं, जगत् की सृष्टि के पश्चात् स्थिति काल में इसका पोषण करते हैं एवं प्रलय काल में सम्पूर्ण तत्व आप में ही विलीन होते हैं। इसलिए सभी लोकों में आपके अतिरिक्त अन्य कोई गति नहीं है ।२५। आप ब्रम्हा, हरि अजसंज्ञित शिव, इन्द्र, धनपति कुवेर यम, वरुण एवं समीर है और आपही अग्नि आकाश, पृथ्वी का आधार एवं सागर हैं आप ही समस्त तेज पदार्थों के आत्मरूप है अधिक आपकी क्या स्तुति करूँ ? ।२६। हे यज्ञेश ! आपके कर्मों में लीन ब्राह्मण तो प्रतिदिन विभिन्न छन्दों द्वारा स्तुति करके आपकी पूजा करते हैं। एकाग्रचित योगी पुरुष आपका ध्यान करते हुये परमधाम प्राप्त करते हैं।३७। विश्वों को उष्णता प्रदानकर्ता तुम ही जगतको रक्षित, भस्म किरणों द्वारा प्रकाशित करते हो एवं पुनः उत्पन्न करते हों देवगण व मनुष्य सदैव आपको प्रणाम करते हैं और पापी मनुष्य एकचित्त होने पर भी आपको प्राप्त नहीं कर सकते ।३८।

—*—

६७-अदिति के गर्भ से आदित्य का जन्म

ततस्वत्तेजसस्तस्मादाविर्भतौविभावसुः ।
अदृश्यततदादित्यस्तप्तताभ्रोपमप्रभः ।१
अथर्वाप्रणतांदेवींतस्यसंदर्शनान्मुनें ।
प्राहभन्स्वान्वृणुष्वेटवंमत्तीयाच्छिमि ।२
प्रणताशिरसासाचजानुपीडितमेदिनी ।
प्रत्युवाचविवस्बन्तंवरदंसमुपस्थितम् ।३

देवप्रसीदपुत्राणांहृतत्रिभुवनमम् ।
यज्ञभागाश्चदैत्यैश्चदानवैश्चबलाधिकै ।४
तन्निमित्तं प्रसादत्वंकुरुष्वममगोपते ।
अंशेनतेषांभ्रातृत्वंगत्वानाशयतद्रिपून् ।५
यथामेतनयभूयोयज्ञभागभुज प्रभो ।
भवेयुरधिपाश्चैत्रैलोक्यस्यदिवाकर ।६
तथानुकम्पापुत्राणांमुप्रसन्नोरवमस ।
कुरुप्रसन्नार्तिहृस्थितिकर्त्तात्वमुच्यसे ।७

मार्कंण्डेयजी ने कहा—तत्पश्चात भगवान् अपने तेज मण्डल के बीच तपे हुए ताँबे के समान चमकते हुए प्रकट हुए ।१। हे ऋषिवर ! उनको विलोककर अदिति देवी ने उनको प्रणाम किया तोसूर्य भगवान् ने कहा—आपकी जो आकाँक्षा हो वही अभीष्ट वर मुझसे माँगो ।२। अदिति अपने घुटने पृथिवी पर टेककर नवाकर प्रणाम करते हुए वर प्रदान करने को उद्यत भगवान् सूर्य से बोली—हे देव ! आप मुझ पर प्रसन्न होगें, वीर बलशाली दैत्य और ानवोंने मेरे पुत्रों का त्रिभुवन एवं यज्ञ भाग हर लिया है ।३। हे गोपते ! इस अभिप्रायसे आप मुझ पर प्रसन्न होकर और अंशरूप में मेरे पुत्रों के भाई बनकर शत्रु दैत्य और दानवों को शमन कीजिये ।५ हे दिनकर प्रभो जिससे कि मेरे पुत्रगण: पुन: यज्ञ भाग में अधिकारी एवं त्रिभुवनके अधिपति होवे हे रवे, मुझ पर प्रसन्न होकर मेरे पुत्रों को ऐसा अनुग्रहीत कीजिये पीढ़ितों के त्राता ! आपको लोक पालक कहते हैं ।६-७।

ततस्तामाहभगवान्भास्करोवारितस्कर: ।
प्रणतामदितिविप्रसातसुमुखोविभु ।८
सहस्रांशेनतेगर्भेसम्भूयाहमशेषत: ।
त्वत्ताश्रशत्रुनदितेनाशाम्यांशुनिबृत: ।९
इत्युक्त्वाभगवान्भास्वानन्तर्द्धानमुपागमत् ।
निबृत्तासापितपस:संतृप्ताखिलवांक्षिता ।१०

ततोपशिमसहभ्रात्तुसौम्नाख्योरवे कर: ।
विप्रावतारस चक्रैंदेवमांतुरथोदरे ।११
कृच्छ्रचान्प्रावणादीनिसाचवक्रेसमाहिता ।
शुचि:संधारयामासदिव्यंगर्भमितिद्विज ।१२
त्रयस्तांकश्यप:प्राहकिंचत्कोप्लुताक्षरम् ।
किम्मारयसि भांन्डमितिनित्यापवासिनी ।१३
साचतप्राहगभन्डिमेतत्पश्येनिकोपना ।
नमारितविपक्षाणांमृत्युवेतद्भविष्यति ।१४

मार्कण्डेयजी ने कहा हे ब्राह्मण । उसके पश्चात जल शुष्क करने वाले भगवान् भास्कर प्रसन्नतापूर्वक नतमस्तक अदिति से बोले ।८। हे अदिते ! सहस्रांशु तुम्हारे गर्भ से मैं जन्म लूँगा और तुम्हारे पुत्रगण के शत्रु समस्त दैत्य व दानवों को समूल नष्ट करूँगा । तुम्हारे पीड़ित पुत्र तुरन्त ही सुखी होंगे ।९। इस प्रकार वर देकर भगवान् भास्कर अदिति के सामने से अन्तर्धान हो गये और अदिति ने भी मनोवाँछित वर प्राप्त करके तपस्या त्याग दी ।३ । हे ब्राह्मण । तदुपरान्त सूर्य की सौ किरण सहस्रांशु से अदिति के गर्भ में अवतरित हुई ।११। हे ब्राह्मण ! वह अदिति सावधानीपूर्वक कृच्छचांद्रायण आदि व्रत अनुष्ठान करती हुई पवित्रता पूर्वक दिव्य गर्भधारण करने लगी । तब कश्यपजीने क्रोधित हो कहा तुम प्रतिदिन उपवास करके अपने गर्भ को नष्ट करोगी अदिति बोली 'हे कुपित स्वभाव ! मैं गर्भ को नष्ट नहीं कर रही, यह तो शत्रु दानबों का शमन करने बाला होगा ।१३-१४।

इत्युक्त्वातंतदागर्भमुत्ससर्ज्जसुरारणि: ।
ज्वावल्यमानतेजोभि:प्रत्युर्वचनकोपिता ।१५
तद्दृष्टवाकश्यपोगर्भमुद्यद्भास्करं वर्चसम् ।
तुष्टावप्रणतोभूत्वाऋग्भिराद्याभिरादरात् ।१६
सस्तुयमान:सतदागर्भाण्डात्प्रकटोऽभवत् ।
पद्मपत्रसवर्णाभस्तेजसाव्याप्तदिमुख: ।१८

अथातरिक्षादाभाष्यकश्यपमनिसत्ततम् ।
सतोयमेघगम्भीरवागवाचाशरीरिणी ।१८
मारियतेयतःप्रोक्तमेतदण्डंत्वयामुने ।
तस्मान्मुनेसुतस्तेऽयमार्त्तण्डाख्योभविष्यति ।१९
सूर्याधिकारचबिभुर्जगत्येषजरिष्यति ।
हनिष्यत्यसुरांश्चप्येयज्ञभागहरानरीन् ।२०
देवानिशम्येतिबचोगनात्समुपागमन् ।
प्रहर्षमतुलयामामानवाश्चहृतौजसः ।२१

मार्कण्डेयजी ने कहा—इस प्रकार उस देवमाता अदिति ने पति के बचनों को सुनकर तेज एवं जाज्वल गर्भ को परित्याग किया ।१५। उगते हुए सूर्यके तुल्य देवभान् उस गर्भ को देखकर कश्यप आदर सहित नत-मस्तक होकर मन्त्रोच्चारण द्वारा स्तुति करने लगे ।१६। कश्यप की स्तुति को सुनकर व भास्कर तेजस्वी किरणों की दशाओं में फैलाते हुये पद्मपत्र तुल्य वर्णयुक्त होकर गर्भान्ड से प्रकट हुये ।१७। इसके पश्चात जलपूर्ण मेघ के समान अन्तरिक्ष के मध्य कोई विदेह वाणी ऋषीश्वर कश्यप की सम्बोधित करते हुए कहने लगी । हे ऋषि, आपने इस अन्ड को मरित' कहा, इसलिए आपके इससे उत्पन्न पुत्र का नाम मार्तन्ड होगा । यह महापुरुष, विश्व में सूर्य की भाँति तेजस्वी होंगे व आपके देव पुत्रोंके यज्ञभाग हरने वाले दैत्य दानव और असुरों का विनाश करेंगे । अन्तरिक्ष वाणी के इन वचनों को सुनकर देवगण अत्यन्त हर्षित होकर आकाश से आये एवं दैत्य दानवगण तेजविहीन होगये ।१९-२०।

ततोयुद्धायदैतेयानाजुहावशनक्रतुः ।
सहदेवमुंदायुक्तोदानवाश्चसमयय ।२२
तेषांयुद्धमभूद्धोरदेवानामसुरैःसहः ।
शस्त्रास्त्रदीप्तिसमस्तभुवनान्परम् ।२३
तस्मित्युद्धेभगवतामार्त्तण्डेननिरीक्षिताः ।
तजसादह्यमानास्तेभस्मीभूतामहासुराः ।२४

ततः प्रहर्षमतुलप्राप्ताःसर्वदिवोकसः ।
तुष्टुवस्तेजसांयोनिमार्त्तण्डमदितितथा ।२५
स्वाधिकारांप्तथाप्राप्तायज्ञभागांश्चपूर्ववत् ।
भगवानपिमार्तन्ड स्वाधिकारमथाकरोद् ।२६
कदम्बपु पवद्भास्वानधश्चोर्ध्व रश्मिभिः ।
वृत्ताग्निपिन्ढसदृशीदध्रे नातिस्फुरद्वपुः ।२७

उसके पश्चात् सुरगण सहित इन्द्र ने दैत्यों को युद्ध के लिये आमन्त्रित किया तो वे उत्साहपूर्वक आये।२२। उस समय दानवों से सुरगण का भयङ्कर युद्ध आरम्भ हो गया और त्रिभुवन सुरों व असुरों के शास्त्रास्त्रों की चमक से भी उसी प्रकार तेजपूर्ण हो गया।२३। उस महाभयङ्कर संघर्ष में तमोगुण के युद्ध में असुरगण भगवान् मार्तण्ड के तेज द्वारा नष्ट होगये और देवगण शक्तिमान् होकर हर्ष मनाने लगे उन्होंने सूर्य भगवान् और अदिति की स्तुति की। २४-२५। अब देवता अपने अधिकार को पुनः प्राप्तकरके यज्ञ भाग पाने लगे और सूर्यभगवान् और भी अधिक प्रकाशमान होकर आकाश में कदम्ब पुष्प की तरह स्थित सर्वांग तेजोमय किरणों का प्रसार करने लगे।२६-२७।

९८ भानुतन लेखन

अथतस्मैददौकन्यांसज्ञानामविवस्वते ।
प्रसाद्यप्रणतोभूत्वाविस्वकर्माप्रजापतिः ।१
वैवस्वतस्तुसम्भूतोमनुस्तयांविवस्वतः ।
पूर्वंमेवतथाख्याततत्स्वरूपविशेषतः ।
भूयस्तच्छ्रोतुमिच्छामिमार्तन्डस्यमहात्मनः ।
चरितंहवियत्पापकलौसंशृण्वतांनृणाम् ।२
त्रीण्यपत्यान्यसौतस्यांजनयामासगोपहतः ।
द्वौपुत्रौसुमहाभागौकन्याचयमुहामुने ।३
मनुर्वैवस्वतोज्येष्ठःश्राद्धदेवःप्रजापतिः ।

ततायमीयमीचैवयमलौसवभवतु ।४
तत्तेजोऽभ्यधिकतस्यमार्तन्डस्यविवस्वतः ।
तेनातितापयामासत्रील्लोकन्सचराचराचरात ।५
गोलाकारन्तुतदृष्ट् वासंज्ञारूपबिवस्वतः ।
असहन्तीमहत्तेजःस्वछायाप्रांक्ष्यसाऽब्रवीत् ।६
अहयस्याभिद्रे तेस्वमेवभावनपितुं ।
निर्विकारंत्मयाप्तत्रस्तेयंमच्छासनाच्छभेः ।७
इमौचबालकौमह्यन्याचवरर्वाणनी ।
संभाव्यौनैवचाख्येमिदंमगवतेत्वया ।८

मार्कण्डेयजी ने कहा—तदन्तर प्रजापति विश्वकर्मा ने सूर्य नारायण के सम्मुख प्रणत होकर उन्हें प्रसन्न किया और अपनी संज्ञा' नाप की कन्या का विवाह उनके साथ कर दिया संज्ञा के गर्भ से जिन वैवस्वत मनु' का जन्म हुआ उसका वर्णन विस्तारपूर्वक पहिले ही किया जा चुका है। यह सुनकर क्रौन्टिक ने प्रार्थना की कि उसके पश्चात् मार्तण्ड का जो कुछ और चरित्र हो उसको भी मैं सुनना चाहता हूँ, क्योंकि उनका पुन्य चरित्र कलि-काल के पापों को मिटाने वाला है मार्कण्डेयजी कहने लगे कि संज्ञा से सूर्य भगवान् के तीन संतानें उत्पन्न हुई। वैवस्वत मनु तथा यम नामक दो पुत्र और यमुना नाम की पुत्री, इसमें से वैवस्त मनु ज्येष्ठ हैं उनके पश्चात् यम और यमी जुड़वां भाई-वहिन उत्पन्न हुए। उस समय सूर्य का तेज वहुत अधिक था जिससे वह तीनो लोकों को वहुत अधिक तप्त करते थे। उनकी पत्नी संज्ञा उस महान तेज को सहन करने में असमर्थ हुई और उनसे अपनी छाया से एक बार कहा—हे शुभे ! तुम्हारा कल्याण हो ! मैं अपने पिता के घर जाती हूँ ! तुम मेरी आज्ञानुसार यहीं रहकर मेरी इन तीनों सन्तानों को प्रेम पूर्वक पालन करती रहना और इस वृत्तान्त को सूर्य भगवान् को कभी मालूम न होने देना ।१-८।

आकेशग्रहणाद्देविआपान्नैवकर्हिचत् ।
आख्यास्यामिमततुभ्यगाभ्यंगतांयत्रवांछितम् ।९
इत्युक्ताछाययासंज्ञाजगामपितृमन्दिरम् ।
तत्रावसतिपतुगहेकवित्कालशुभेक्षणा ।१०
भर्तः समीपयाहीतिपित्रौक्तासापुनः पुनः ।
अगच्छद्वडवाभूत्याकुरुन्विप्रोत्तरांस्ततः ।११
तत्रतेपेतपःसाध्वानिराहरामहामुने ।
पिंतुसमीपयातादा सज्ञायावाक्यतत्परा ।१२
तद्रु पधारिणौछायामास्करसमुत्थिता ।
तस्यांचभगवान्सूर्यःसज्ञेयमितिचिन्तयन् ।१३
तथैवजनयामासद्वौसुतयौकन्यकांतथा ।
पूर्वजस्यतनोस्तश्यःसावर्णिस्तेसोऽभवत् ।१४
यस्तयोःप्रधमजात पुत्रयोर्द्विजसत्तम ।
द्वितीयोयोऽभच्चघान्य संग्रहोऽभूच्छनैश्चरः ।१५

छाया ने कहा—जब सूर्य भगवान् दण्ड देने के भव से मेरे केश नहीं पकड़ेंगे तब तक मैं इस रहस्य को कदापि प्रकट न होने दूँगी । यह सुनकर संज्ञा अपने पिता के घर चली गयी इसके पश्चात् जब उसके पिता विश्वकर्मा ने उससे पति के घर जाने को कहा तो वह बडवा का रूप धारण करके उत्तरकुरु प्रदेश में जाकर निराहार तपस्या करने लगी । इस बीच में छाया सज्ञा सूर्य भगवान की सेवा करती रही और उन्होंने उसे अपनी पत्नी संज्ञा ही समझकर उससे भी सन्तानें उत्पन्न कीं । इनमें से एक साविण मनु और दूसरे शनिश्चर थे ।६-१५-।

कन्याभुत्तपयीयातांवब्रे सवर्णणोनृपा ।
संज्ञातुपार्थिवीतेषामात्मजामांयथाऽकरोत् ।१६
स्नेहान्मपूर्वंजातानांतथाक्रृतवतीसती ।
मनुस्तत्क्षान्तवांस्तम्यायमश्चास्यानचक्षमे ।१७

वहुशोयाच्यमानस्तुपितु:पत्न्यासदु:खित: ।
सचकोपाच्चचाल्याच्चभाविनाऽर्थस्यवैवलात् ।१८
पदासन्तर्जयामासछायासंज्ञायमोमुने ।
तत:शशापच्चयमंसज्ञासामर्षिणीभृशम् ।१९
पदातर्जयस्मात्पितृभार्य्यांगरीयसीम् ।
तस्मात्तवैवचरण:पतिष्यतिनसशय: ।२०

छाया के गर्भ में एक 'तपती' नाम की कन्या भी हुईजिसकाविवाह यथा समय सवरण नामक नृप से किया। छाया-संज्ञा अपनी सन्तानों से जितना अधिक स्नेह करती थी उतनी प्रथम पत्नी की तीनों सन्तानों से नहीं करती थी। उनके इस पक्षपात् पूर्ण व्यवहार को देखकर वैवस्वत मनु ने तो कुछ न कहा, पर यम उसे सहन न कर सकें और होने हार के वशी-भूत होकर छाया-संज्ञा को डाटकर मारने के लिए पैर उठाया था इस पर छाया ने उनसे कहा—कि मैं तुम्हारे पूजनीय पिता की पत्नी हूँ, फिर भी तुमने मुझे मारने को लात उठायी इसके फलस्वरूप तुम्हारा यह पैर कटकर गिर जायेगा।१६-२०

यमस्तुतेनशातेनभ्रशंपीडितमानस: ।
मनुनाहसधर्मातमांसर्वपित्रे न्यवेदयत् ।२१
स्नेहेनतुल्यमस्मासुमातादेवनवर्तते ।
विसृज्यज्यायसोऽप्यस्मान्कनीयासौबुभर्षति: ।२२
तस्यांमयोद्यत: पादोनतुदेहेनिपातित: ।
बाल्याद्वायदिवामोहात्तद्भवान्क्षन्तुमर्हति: ।२३
शप्तोऽहंतातकोपेनकनन्यातनयोयत: ।
ततोनमन्येजननीमिमांवैतपतांवर ।२४
विगुणेष्वपिपुत्रेषुनमाताविगुणापित: ।
पाद तेपततांपुत्रकथमेतत्वक्ष्यति ।२५
यवप्रमामाच्चरणोनपतेद् भगवन्यथा ।
मातृशापादयमेऽत्तद्थाचिन्तयगोपते ।२६

इस शाप को सुनकर यम बड़े दुःखी हुए और पिता के पास जाकर सब वृत्तान्त उनको सुनाया और कहा कि हे देव ! माता हमारी अपेक्षा छोटे भाई-बहिनों का अधिक स्नेहसे पालन-पोषण करती है इससें असन्तुष्ट होकर बाल स्वभाव वश अथवा भूल से मैंने उसकी ओर लात उठाई पर मारी नहीं। फिर भी उस अपराध को आपसे क्षमा चाहता हूँ। यम ने फिर कहा-पिताजी ! यदि कोई पुत्र दुष्ट, दुराचारी होता है तो भी माता उसका कभी अहित नहीं करती। पर उसने क्रोध करके तुम्हारा पैर गिर जाय ऐसा जो शापदे डाला इससे मुझे वह अपनी माता नहीं जान पड़ती। अब आप ऐसी कृपा, करें कि माता के क्रोधपूर्वक शाप के कारण यह पैर न गिरे।२१-२६।

असंशयमिदपुत्रभविष्यत्यज्ञकारधम्।
येनत्वामाविशत्क्रोर्मज्ञन्यवादिनम्।२७
सर्वेषामेवशापानाँप्रतिगातोह्विद्यते।
नतुमात्राभिशप्तानाँक्वचिच्छापमिवतयम्।२८
नशक्यमेतन्मिथ्यातुकर्तुं मातुर्वचस्तव।
किचत्तवविधास्यामिपुत्रस्नेहावनुग्रहम्।२९
कृमयोमांसमादायप्रवास्यन्तिमहीतलम्।
कृताँतस्थावच:सत्यएवचत्रातोभविष्यसि।३०
आदित्यस्यत्त्वब्रवीच्छायांकितर्थतनयेषुवै।
तुल्येय्वत्यधिक: नेहएकत्रक्रियतेत्वया।३१
ननंनषा!त्वजननीज्ञाकापित्वभागता।
विगुणेष्वप्यपत्येषुकथंमाताशपेत्सुतम्।३२

सूर्य भगवान् ने कहा पुत्र ! धर्मज्ञाता और सत्य परायण होकर भी जब क्रोध के वशीभूत हो गये तो उसका यह कुपरिणाम होना संभव है। और सब पापों से छुटकारा मिल सकता है पर माता के शाप से बच सकने का कोई मार्ग नहीं है। इसीलिए तुम्हारी माता के शाप को मिथ्या करने में तो असमर्थ हूँ पर तुम्हारी विनय के कारण कोई

अन्य उपाय बतलाऊँगा जिससे तुम्हारी माता की बात पूरी हो जाय और तुम्हारा पैर भी बच जाय। इसलिये ऐसा होगा कि कृमि तुम्हारे पैर का माँस लेकर पृथ्वी पर डाल देंगे—ऐसा होने पर तुम्हारी माताके पैर का शाप पूरा हो जायेगा और फिर तुम्हारा पैर भी ठीक हो जायेगा। इसके पश्चात् सूर्य भगवान ने छाया से कहा कि तुम्हारे लिए सभी सन्तान समान रूप से प्रिय होनी चाहिए। पर ऐसा न करके तुम किसी के प्रति कम और किसी से अधिक स्नेह करती हो। इससे मालूम पड़ता है कि तुम इनकी माता नहीं हो, यदि माता होती ता पुत्र को ऐसा शाप नहीं दे सकती थी।२३-३२।

सातपरिहरन्तीचनाचचक्षेविवस्वतः।
सचात्मानसमाधाययुक्तस्तत्वमपश्यत।३३
तंशप्तुद्यतंदृष्ट्वाछायासंज्ञाद्विवस्पतिम्।
भयेनकपिताब्राह्मन्यथावृत्तंत्यवेदयेद्।३४
विवस्वांस्तुततोक्रुद्धश्र्वत्वश्वसुरमभ्यगात्।
सचापितयथान्यायमचयित्वादिवाकरम्।
निदंग्धुकामरोषेणसान्त्वयामासासुव्रतः।३५
तवातितेजसाव्याप्तमिदंरूपंसृदुःसहम्।
असहन्तीतःसंज्ञातनेचरतिवैतपः।३६
प्रक्ष्यतेतांभवावद्यस्वभार्यांशुभचारिणीम्।
रूपार्थंभक्तोऽरण्येचरन्तींसुमहत्तपः।३७
स्मृतब्रह्मणोवातययदितेदेवरोचते।
रूपंनिवर्तताम्येतत्तवकान्तंदिवस्वने।३८
यतोहिभास्वतोरूपं प्रगासोत्परिमंडलम्।
ततस्तद्यतितंप्राहत्वष्टारंभगवानरविः।३९
विश्वकर्मात्वनुज्ञातःशाकद्वीतेविवस्वतः।
भ्रामिमारोप्यतत्तोजःशातनायोपचक्रमे।४०

तब छाया ने सत्य बात छिपा कर कुछ बहाना बना दिया।

इस पर सूर्य भगवान ने अत्यधिक दृष्टि से समस्त घटना की वास्तविकता जान ली और वे छाया-संज्ञा को शाप देने के लिए उद्यत हुए। इस पर छाया-संज्ञा भयभीत होकर कांप उठी। सारा हाल जानकर सूर्य को क्रोध पैदा हुआ। तब विश्वकर्मा ने उनकी यथाविधि पूजा करके उनको शान्त किया और कहा तुम्हारे अत्यन्त दु:सह तेज को सहन न कर सकने से संज्ञा तप करने चली गई हैं उसे अब भी एकान्त वन में तपस्या और संयम का पालन करते देख सकते हो। अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं आपके वर्तमान रूप और आकार को सौम्य और दर्शनीय रूप में परिवर्तन करूँ। सूर्य भगवान ने विश्वकर्मा की बातों से सन्तुष्ट होकर कहा ऐसा ही करो। तब भगवान् भास्कार शाकद्वीप में चले गये और विश्वकर्मा उन्हें खराद के समान घुमाकर नवीन सौम्य रूप देने लगे।३३-४०।

भ्रमताऽशेषगतानांभिभूतेनभास्वता।
समुद्रादिवनोपेतासारूह्योमहीनभ ।४१:
गगनंचाखिलब्रह्मन्सचान्द्रग्रहतारकम्।
अधोगतमहाभागवभवाक्षिप्तमाकुलम्।४२
विक्षिप्तसलिला:सर्वेंवूभश्चतथान्धयः।
व्यभिद्यनमहाशैला:शीर्णसानुनिबन्धरा: ।४३
ध्रुवाधाराण्यशेषाणिधिण्यानिमनिसत्तमः।
त्रुटयद्रश्मिनिबन्धानिह्यधोजन्मु:सहस्रश ।४४
वेगभ्रमणसंजातवायुक्षिप्ता:समन्ततः।
वेगभ्रमणसंजातवायुक्षिप्ता:समन्ततः।
व्यशीर्यतमहामेघाघोररवविराविण:।४५
भास्वद्भ्रमणाविभ्रान्तभूम्याकाशरसातलम्।
जगादाकुलमत्यर्वंतवासीन्मुनिसत्तम ।४६
त्रैलोक्येसकलेदिप्रभ्रममाणेसुरर्षयः।
देवाश्च ब्रह्मणाद्धंभास्वन्तमभितुष्ठुवु: ।४७
तादिदेवोऽसिदेवानांज्ञातमेतत्स्वरूपत।
स्वर्गस्थत्यन्त कालेषुतिधाभेदेनतिष्ठसि ।४८

स्वतितेऽस्तजगन्नाथघ्रमवर्षाहिमाकरः।
जुषस्वशान्तिलोकानांदेवदेवदिवाकरः ।४९
इन्द्रश्चागत्यतंदेवलिख्यमानयथाऽवस्तुवत् ।
जयदेवजगद्व्यापिजयाशेषजगत्पते ।५०

मार्कण्डेय जी कहने लगे—समस्त विश्व के नाभि समस्त भगवान भास्कर के घूमने से समुद्र, पर्वत वन, जलस्रोत, पृथ्वी, आकाश आदि अस्थिर होने लगे। उस समय चन्द्रमा, ग्रह तारागण आदि के सहित सम्पूर्ण गगन-मण्डल ही नीचे गिरता हुआ-सा जान पड़ने लगा। समस्त सागर, नदी, जलाशयों की जलराशि में हलचल पैदा हो गई और महा-पर्वत के शिखरने लगे। ध्रुव अपने स्थान से च्युत होने लगा और इससे समस्त आकाशस्थ पिंडों की स्थिति उलटी पुलटी होने लगी। सब नीचे गिरने लगे। वायु भी महाभयङ्कर वेग से चक्कर काटने लगा और महामेघ घोर शब्द करने लगे। इस प्रकार त्रिलोक घूम जाने से सर्वत्र संकट आया देखकर देवऋषि, देवगण, ब्रह्मा आदि भगवान आदित्यका स्तुति, प्रार्थना करने लगे—आप समस्त देवों में आदिदेव हैं, आपकी महिमा सर्वत्र विदित है, आप ही स्वर्ग आदि समस्त लोकों और अखिल भवनों की स्थिति का कारण हैं, आप ही सबकी रक्षा और कल्याण करने वाले है। हे जगन्नाथ ! आप ही ग्रीष्म, वर्षा और शीत स्वरूप हैं। हे देवों में महान दिवाकर देव! प्रसन्न होकर त्रिलोक की व्याकुलता को दूर करो। स्वर्गाधिपति इन्द्र ने आकर सूर्य भगवान की स्तुति की है ! आप सर्वत्र व्याप्त हैं, आपकी जय हो, हे अखिल जगतपति आपकी जय हो ।४१-५०।

ऋषयश्चततप्सप्तवसिष्ठात्रिपुरोगमा ।
तुष्टुवूर्विविधैः स्तोत्रःस्वस्तिस्स्वतीतिवादिनः ।५१
वेदोक्त भिरथाग्रयाभिर्वालखिल्याश्चतष्टुवुः ।
म स्वन्तभूग्भिराद्याखिलिख्यनानानां मुदायुता ५२

स्वनाथमोक्षिणांमोक्षोध्येयस्त्वंध्यानिनांपरः।
त्वगति सर्वभूतानांकर्मकान्डेऽविवर्तताम् ।५३
शप्रजाभ्यौऽस्तुदेवेशशन्नोऽस्तजगताम्यते ।
शन्नोऽस्तुद्विपदेनित्यंशन्नश्चास्तुचतुष्पदे ।५४
ततोविद्याधरणायक्षराक्षसपन्नगाः ।
कताञ्जलिपुटाःसर्वेशिरोभि. प्रणतारविम् ।५४
ऊचुरव विधावाचो मनः श्रोतुसुखावहाः ।
सह्मंभवतृतेजोभपानांभूतभावन ।५६

इसके पश्चात् वसिष्ठ, अत्रि आदि सातों ऋषियों ने स्वस्ति वाचन उच्चारण करके सूर्य भगवान् की अनेक प्रकार से स्तुति की। बाल खिल्य ऋषि भी ऋग्वेद के आद्य वचनों द्वारा इस प्रकार स्तुति करने लगे—हे भगवान् ! आप ही मुमुक्षजनों को मोक्ष प्रदान करने वाले ध्यानी पुरुषों के ध्येय और कर्मकाण्ड वालों को शुभ फल देने वाले हो। हे देव ! हे जगन्नाथ ! आप समस्त प्रजा का, हमारा और हमारे द्विपद तथा चतुर जीवों का कल्याण करो। फिर विद्यावर, यक्ष, राक्षस, पन्नग आदि सब हाथ जोडकर सूर्य भगवान् को प्रणाम करने लगे। हे भगवन् ! आपका तेज समस्त छोटे-बड़े जीवों के सहन करने योग्य हो। सब कोई उससे सुखी हो सकें ।५१-५६।

ततोहाहाहूहूश्चैवनारदस्तुवुस्तथा ।
उपागायितुमारब्धांगान्धर्वकुशलारविम् ।५७
षड्जयध्मगान्धारग्रामत्रयविशारदाः ।
मूर्च्छतामिश्चतानैश्चसप्रोगै सुखप्रदम् ।५८
विश्वाचचीघ्रतचीउर्वश्यथतिलोत्तमा ।
मेनकासहजन्याचरम्भाचास साँवरा ।५९
ननुतुर्जगतामीरोलिख्यमानेविभावसौ ।
ज्ञानभावि लासाढयान्कुर्वन्तोऽमिनबयहान् ।६०

प्रावाचन्पततस्त्रवेणुवीणादिझझंराः ।
प्रणदा पुष्कसश्चैवमृदंगाःपटहानका ।६१
देवदुन्दुभयःशङ्ख शतशोऽथसहस्रशः ।
गायादिभश्चैबगांधवैनृत्यादिभ चाप्सरोगणैः ।६२
सूर्यवादित्रघोषेश्चसर्वकोलाहलीकृवम् ।
ततः कृत्राञ्जलिपुटाभक्तिगश्रात्ममूर्तयः ।६३
लिख्यमानंसहस्रांशुं प्रणेझःसर्वदेवताः ।
ततःकोलाहलेतस्मिन्सर्वदेवसमागमे ।
तेजसःशायनञ्जक्रेविश्वकर्माशनैःशनैः ।६४
इति हिमजलधर्मकालेहेवोहरकमलासनविष्णुसंस्तुतस्य ।
तनूपरिलिखननिशम्यभानोर्ब्रजतिदिवाकरलोकमायषोऽन्ते ।

इसके अनन्तर संगीत शास्त्र में निपुण हाहा-हूहूतुम्बरु, नारद आदि शडज मध्यम और गाधार तीनों ग्रामी तथां मूच्छना, ताल आदि के नियमानुसार सूर्य भगवान के सम्मुख श्रेय गायन करने लगे ।५७-५८। उसी अवसर पर विश्वाची, घृताची, उर्वशी तिलोत्तमा, मेनका, सहजन्मा, रम्भा आदि स्वर्ग की अप्सराये भी सूर्य भगवान के नवीन रूप से प्रसन्न होकर हाव-भाव पूवंक तरह-तरह के नृत्यों का प्रदर्शन करने लगीं ।५९-६०। देवानन्दद्वारा वेणु, वीणा, दुदर, प्रणव, पुष्कर,मृदंग पटव, आनक, दुन्दुभि, शंख आदि हजारों वाद्यों की ध्वनि होने लगी। इस प्रकार गन्धर्वों के सगीत, अप्सराओं के नृत्यों और देवगणों के वाद्यों के शब्द से उस समय समस्त जगत् महान् ध्वनि से भर गया। फिर सब किसी ने अत्यन्त भक्ति और विनय सहित भगवान् भास्कर को नमस्कार किया। उस कोलाहल के बीच विश्वकर्मा धीरे-धीरे सूर्य तेज को कम करते गये ।६१-६४। जो सूर्य भगवान, जाड़ा वर्षा और ग्रीष्म आदि ऋतुओं के उत्पादन हैं और ब्रह्मा, विष्णु महेश भी जिनकी स्तुति करते हैं, उसकी यह तनुलिखन की कथा भक्तिपूर्वक सुनने से भानुलोक में सद्गति प्राप्त होती है ।६५।

९९—विश्वकर्मा द्वारा सूर्यस्तवन

लिख्यमानेततोभातौविश्वकर्माप्रजापतिः ।
उत्भूतपुलकःस्तोत्रमिदचक्रेविवस्वतः १
विवस्वतेप्रणतहितानुकम्पिनेमहात्मनेसमजवसप्तसप्तये ।
सुतेजसेकमलकुलावबोधिनेनमस्मत पटलपटावपाटिने ।२
पावनातिशयपुण्यकमणेनैककामविषयप्रदायिने ।
भास्वरानलमयुखशायिनेसर्वलोकहितकारिणे नमः ।३
अजायलोकत्रकारणायभुतात्मनेगोपतयेवृषाय ।
नमोमहाकारणिकोत्तमायसूर्य्याश्चक्षुः प्रभवालयाय ।४
विवस्वतेज्ञानभूतेन्तरात्मनेजगत्प्रतिष्ठायजगद्धितैषिणे ।
स्वयम्भूवेलोकसमस्तचक्षषसुरोत्तमायामिततेजसेनमः ।५
क्षणमुदयाचलमौलिमणिःसुप्गणमहितहितोजगतः ।
त्वंमयूखसहस्रवपुर्जगतिविभास्तिमांसिनुदन् ।६
भवतिमिरारवपानमदादभवतितिलोहितविग्राहिता ।
मिहिरविभासियतःसुतरात्रिपुवनभावनभानिकरैः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—जिस समय विश्वकर्माजी सूर्य भगवान के तेज को क्षीण करके सहन योग्य बना रहे थे, उस समय उनके नवीन रूप के दर्शन से पुलकित होकर उन्होंने उस मूर्ति का स्तवन किया। विश्वकर्माजी बोले—जो जीव आपके सम्मुख प्रणत होरहे हैं। उन सबका आप कल्याण और कृपा करने वाले हैं। आप ही समवेग वाले सप्त सप्त्व वाले कमलों को खिलाने वाले और अन्धकार को दूर करने वाले हैं आपको नमस्कार हो। अत्यन्त पवित्र पुण्यशाली कामनाओं की पूर्ति करने वाले, अत्यन्त तीव्र किरणों से युक्त और समस्त लोकों के हितकारी भगवान् भास्करको नमस्कार हो। तीनों लोकों को उत्पन्न करने वाले, पंचभूतों के मूल, रश्मिपति, धर्मस्वरूप, कृपालु नेत्रों को प्रकाश देने वाले सूर्य भगवान को नमस्कार हो। जगतके आधार अन्त-

रात्मा के प्रकाश, महान् तेजस्वी सूर्य भगवान को नमस्कार हो। हे भगवान् ! तुम ही जगत् के हितकारी और उदयाचल के शिखर के माला स्वरूप हो, तुम ही सहस्रों रूप ग्रहण करके जगत् को प्रकाशित करते हो। तुम्हीं तिमिर रूपी आसव को पान करने के निमित्त लोहित मूर्ति धारण करके किरणों द्वारा दीप्तिमान होते हो।१–७।

रथमधिरुह्य माश्रयवंचारुविकपितपुरुरुचरम् ।
सततनखिन्नह्यं भवचेसिजगद्धितायविततम् ।८
अमृतमयेनरमेनसमविवधपितॄनपतिपंयसे ।
अरिगणसवनतेनतवप्रणतिमुतेत्यलिखामिवयुः ।९
शुकसमर्णंहयप्रथितंतवपदयांसुपवित्रतमम् ।
नतजनवत्सलमांप्रणतंत्रिभुवनपावनपाहिरवे ।१०
इतिसकलप्रसूतिभूतंत्रिभुवनधावधामहेतुमेकम् ।
रविमखिलजगमत्प्रदीपभूतंत्रिदशवरप्रणतोऽस्मित्र
सर्वदात्वाम् ।११

हे सूर्य नारायण ! जिस रथ पर चढ़कर सात घोड़ों के द्वारा जगत् के हितार्थ तुम विचरण करते हो, वह समान अवयव वाला आकर्षक विस्तार युक्त, और किंचित कामनाने वाला है। हे शत्रु हन्ता ! तुम देवता और पितरों को एक ही साथ जीवन प्रदायक सुधा प्रदान करते हो। इसी निमित्त जगत की हितकामना से मैंने प्रथम ही आपको प्रणाम करके आपके देह को लिखा (तराशा) है। हे भक्तवत्सल ! हे त्रिभुवन को पवित्र करने वाले ! मैं आपकी ही इस हरी-भरी सृष्टि के कारण विख्यात हुआ हूं और तुम्हारी चरण-रज के प्रताप से अत्यन्त पवित्र माना जाता हूँ आप मेरी रक्षाकरें। इस तरह मैं सर्वदा संसारके कारण रूप, त्रिभुवन को पवित्र मानने वाले तेज के भँडार, जगत् का प्रकाशक और निर्माणकर्ता भगवान सूर्य को नमस्कार करता हूँ।१-११।

१००—रवि माहात्म्य वर्णन

एवसूर्य्यस्त्वकुर्वन्विकर्मांदिवस्पतेः ।
तेजस षोडशभागंमण्डलस्थमाधारयत् ।१
शातितैंस्तेजसोभागैर्दशभि.पञ्चभिस्तथा ।
अतोवर्कातिमच्चारुभानोरासीत्तदावतुः ।२
शातितंचास्ययत्तैजस्तेनचक्रोविनिर्मितम् ।
विष्णोःशूलंचशितेस्यशिविकाधनदस्तच ।३
दंडःप्रेयपतेःशक्तिर्हेमसेनापतेस्तथा ।
अन्येषाचैवदेवानामायुधानिसश्विकृत् ।४
चकारतेजसाभःनोर्भासिराण्यरिशातये ।
इतिशातिततेजा सशुशुभेनातितेजसा ।५
वपूर्दंधारमार्त्तन्ड सर्वावयवशोभनम् ।
सदर्दंगसमाधिस्थ स्त्रांभार्यावढवाकृतिम् ।६
अधृयासर्वभूतानाँतपसानियमेनच ।
उत्तरांचकुरून्गत्वाश्वोभानुरामत् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—विश्वकर्माजी ने इस प्रकार सूर्य नारायण की स्तुति करके उनके तेजका पन्द्रह अंश निकालकर सोलहवां भाग शेष रहने दिया। इससे सूर्य का कलेवर अत्यन्त सुन्दर सौम्य और क्रांति वाला बन गया जो पन्द्रह अंश तेज निकल गया था उसके द्वारा बिश्व कर्मा ने विष्णु का चक्र, शिव का त्रिशूल कुवेर की पालकी, यम का दण्ड, कार्तिकेय की शक्ति और अन्य कितने ही अमोघ अस्त्र निर्माण किए जिनसे देवगण शत्रुओंको जीत सके। इस प्रकार मार्तण्ड का तेज नियान्त्रित हो जाने पर उनकी शोभा बहुत बढ़गई और जगत के हितार्थ उनका कलेवर अत्यन्त उत्तम बनगया। इसप्रकार परमोपयोगी आकार पाकर वे अपने स्थान पर स्थित हुए और फिर ध्यान लगाकर अपनी पत्नी को घोड़ी के रूप में देखा जो कुरु प्रदेश में उनके हितार्थ अत्यन्त नियम सहित तपस्या कर रही थी।१-७।

साचदृष्ट्वातमायान्तंपरपुंसोविङ्कया ।
जगामर्लमुखेतस्यपृष्ठरक्षणतत्परा ।८
ततश्चनासिकायोगतयोस्तत्रसमेतयोः ।
वडयावाघतेत्तोजोनासिकाभ्यांविवस्वतः ।९
देवौतत्रसमुत्पन्नात्वविश्वनौभिषजांवरौ ।
नासत्यदस्रौततयावविश्वक्राादिनिर्गतौ ।१०
मार्त्तन्डस्य सुतावेताविश्वरूपधरस्यहि :
रेतसोऽन्तेचरेवन्त खंगीधन्वीतनुत्रधृक ।११
अश्वरूढ़:समुद्भूतोवाणतूणसमन्वितः ।
ततस्रूपममलदश्रयामासभानुमान् ।१२
तस्याशान्त समालोक्यसारूपमुद्मादर्दे ।
स्वरूपधारिणीचेमांसनिनायनिजालयम् ।१३
संज्ञाभार्य्यांतीतोमतीभास्करोवारितस्करः ।
तत, पूर्वसुतोयोऽभुद्वैव वतोमनुः ।१४

उनको समीप आते देखकर संज्ञा का अपने सतीत्व रक्षा की चिंता हुई और वह उनके सामने मुँह करके खड़ी हुई। अब दोनों की नासिकायें मिली तो सूर्य भगवान का तेज नाक के भाग से ही घोड़ी के भीतर प्रविष्ट हुआ और उससे दोनों अश्विनीकुमार उत्पन्न हुए जो देवगण के वैद्य बने। उनके मुख से निकले तेज से 'नासत्य' और दस्र की उत्पत्ति हुई और शेष भाग से रेवन्त का जन्म हुआ और रक्षा-आवरण, खड्ग और धनुषधारी हैं। फिर जब सूर्य भगवान ने अपना निर्मल शांत रूप दिखाया तो संज्ञा परम प्रसन्न हुई और वास्तविक् रूप ग्रहण करके उनके साथ स्वगृह में गई।८।१४।

द्वितीयश्च मशापाद्धर्मदृष्टिरतुग्रहात् ।
यमस्तुतेनशापेतनभुशपीडितमानसः ।१५
धर्मोभिरोचतेयस्माद्धमराजस्ततःस्मृत ।
कृमयोमांसमादायपादतरतेमहींतलम् ।१६

पतिष्यत्तीतिशापान्त तस्यचक्र पितांस्वयम् ।
धर्मदृष्टियतश्चासौसमोमित्रे तथाऽहिते ।१७
ततोनियोगेत याम्येचकारतिमिरापहः ।
तास्मैंददौपितविप्रभगवाँल्लोकपालताम् ।१८
पितृणामाधिपत्यचपरितुष्टादिवाकरः ।
यमुनांचनदीचक्रेकलिदान्तरवाहिनीम् ।१९
अश्विनौदेवभिषजौकृतौपित्राभहात्मना ।
गुह्यकाधिपतित्वेचरेवन्तोविनियोजितः ।२०

संज्ञा के ज्येष्ठ पुत्र वैवस्वत मनु की पदवी पर अधिष्ठित हुए, उनसे छोटे यम धर्म के ज्ञाता होने से धर्मराज बने । वे धर्म और सत्य पर स्थिर रहकर प्रत्येक प्राणी के साथ न्याययुक्त व्यवहार करते थे, उससे उन्हें जीवों के कर्मों का फल देने का कार्य दिया गया । उनको छाया संज्ञा ने जो शाप दियाथा । उसके फलस्वरूप उनके पैर का मांस कृमि पृथिवी तल पर लेगये । सूर्य भगवान ने उनको लोकापाल और पितरों का अधिकार भी दिया । पुत्री यमुना को कलिन्द देश में बहने वाली नदी बाताया गया । अश्विनीकुमारी को देवताओं का वैद्य व वैद्य व रेवन्तको गृह्यकों का शासक नियुक्त किया ।१५-२०।

एवमप्याहचतातांभनबाँल्लोकभावितः ।
एवमप्यशाबलोकस्यपूज्योवत्सभविष्यसि ।२१
अरण्यादिमहादावालरिदस्यभवेषुच ।
त्वाप्मरिष्यन्त्रियेनर्त्यामोक्षन्ततेमहापदः ।२२
क्षेमवुद्धिसुखराप्यमारोम्यकीर्तिसुन्नसितमम् ।
नराणांपरितुष्टस्त्वपूजितः संप्रदास्यसि ।२३
छायासंज्ञातुतश्चापिसावर्णिःसमुहायशाः ।
भाव्वयऽनांगतेकालेनुमार्यणिकोऽष्टमः ।२४
मेरुपृष्ठेतपोघोरमद्यापिचरयिप्रभुः ।
भ्रन्ताशनैश्चरस्यतस्यग्रहेऽभूच्छासनाद्रवः ।२५

यवीयसीतुयाकन्याऽऽदित्य ताभुद्द्विजोत्तम्।
अभवत्मासरित्श्रेष्ठाल्लपतीशोकपावनी ।२६
यस्तुज्येष्ठोमहाभाग:शर्मोयस्येहसाम्प्रतम् ।
विस्तरन्तस्यवक्ष्यामिमनोर्वैवस्वतस्यह ।
इदय जन्मदेवानांशणुयाद्वापठेदवा ।
विवस्व्रतस्तुनजानारवोर्माहात्म्यमेवच ।२८
आपदप्राप्यमुच्येतप्राप्तुयाच्चमहयश: ।
अहोरात्रकृतपापमेतच्छमयतेश्रुतम् ।
माहात्म्यमादिदेस्यमार्तन्डायमहात्मन: ।२६

भगवान् सूर्य नारायण ने रेवन्त से कहा कि तुम सब लोकों में पूजनीय होगे और जो कोई अग्नि, शत्रु; चोर आदि के भय से आक्रांत होकर तुम्हारा रमण करेगा तो तुम विपत्ति में उनकी रक्षा करने में समर्थ होगे। छाया संज्ञा के पुत्र सावर्णमेरु पर्वत पर तपस्या में निरत हैं और वे आगामी 'सावर्णक' नाम के मन्वन्तर में मनु होकर महान् यशस्वी होगे। उनके भ्राता शनैचर को प्रमुख ग्रह नियत किया। यमुना जी को भी नदियोंमें श्रेष्ठ स्थान दिया गया और वे लोकपावनी प्रसिद्ध हुई। ववस्वत मनु का मन्वतार समय में चल रहा है उनके बश का विस्तार और वर्णन मन्वन्तर में किया जायेगा। इस प्रकार जो व्यक्ति सूर्य भगवान का महात्म्य और उनकी सन्तानों की कथा श्रद्धापूर्वक श्रवण करते हैं, वे सब प्रकार की आपत्तियों से छुटकारा पाकर सुख सौभाग्य के अधिकारी बनते हैं और उनके समस्त पाप दूर हो जाते हैं।२१-२६।

१०१-(क) राज्यवर्द्धन की आयु और वृद्धि

भ्रम न्यपित:सभ्यग्मानो:सत्यतिसम्भय: ।
माहात्म्यतांदिदेवस्यस्य पचातिबिस्तरात् ।१
भूयोऽपिभास्वत:सम्वगमाहात्म्यमुनिसत्तम् ।
श्रोतुमिच्छम्यहन्तमेप्रशन्तोवक्त महसि ।२

श्रुयतामादिदेवस्यमाहात्म्यंकथयामिते ।
विवस्वतोयच्चकारपूर्वमाराधिताजनैः ।३
दमस्यपुत्रोविखणतोराजाभूद्राज्यवर्धनः ।
सम्यक्पालनचक्रे पृथिव्याःपृथिवीपत्तिः ।४
धर्मतःपाल्यनतुतेनराष्ट्रं महात्मना ।
ववृधेऽनुदिनयियजतेनचधनेनच ।५
हृष्टपुष्मतीवासित्तचोर्व्यापौरजानपदोजनः ।६
नोपसर्गोनचव्याधिनंचव्यालोद् भवंभयम् ।
नचावष्टिभयन्तदमपुत्रमहीपतौ ।७

क्रोष्टुकि बोले—हे भगवन् ! सूर्य के महात्म्य को मैं पुनः श्रवण करना चाहता हूँ आप मुझ पर प्रसन्न होकर उसे सुनाइये । मार्कण्डेय जी ने कहा—आदिदेव भगवान सूर्य ने पुराकाल से आराधित होकर जो कुछ किया, वह सब तुम्हारे प्रति वर्णन करता हूँ । दम से पुत्र राज्य वर्धन नाम से प्रसिद्ध हुये और उन्होंने भले प्रकार से पृथ्वी का पालन किया । हे ब्रह्मन् ! उन्होंने अपने धर्म का पालन करते हुए प्रजा की रक्षा की इसलिये उनके शासन काल में धन, जन, से राष्ट्र की नित्य वृद्धि होने लगी । उनके राज्यारूढ़ होने पर राजा पुरजन और सम्पूर्ण पृथिवी अत्यन्त पुष्ट हुई । उन राजा राज्यवर्द्धन के राज्य में कोई उप-सर्ग, रोग, हिंसक जीवों का तथा अनावृष्टि का भय आदि न था ।१-७।

सईजेचमहायज्ञैर्ददौनानिचार्थिनाम् ।
सुधर्मस्याविरोधेनवुभुजेविषयानपि ।८
तस्यैवकुर्वतोराज्यंसम्यक्पालयतः प्रजा ।
सप्तवर्षसहस्राणिजग्मुरेकमहर्यथा ।९
विदूरथस्यतनयादक्षिणात्यस्यभूभृतः ।
तस्यपत्नीवभूवाथमानिनीनाममानिनी ।१०

कदाचितस्यसासु भ्रशिरसोऽऽयजताहृता ।
पश्यतोराजलाकस्यमुमोचाश्रुणिमनिनी ।११
तमश्रूविन्दवोगात्रेयदातस्यमहीपतेः ।
तदावीक्ष्याश्रवदनांताम्पृच्छतमाननीम् ।१२
किमेतदित्तिपप्रच्छमानवीराज्यवर्द्धनः ।१३
पृष्टाभातुतस्तेनभर्त्राप्रापमननिवनो ।
नकिंचिदितिताभूय पप्रच्छसमहीपतिः ।१४

यह महायज्ञों का अनुष्ठान करके अभ्यार्थियों को दान देते और विषयों का भोग भी धर्म सहित करते थे । इस प्रकार राज्य शासन चलाते और भले प्रकार प्रजा का पालन करते हुए उनका सात सहस्र वर्ष का समय एक दिन के समान व्यतीत होया । उनका विवाह दक्षिण देश के राजा विदुरथ की पुत्री मानिनी से हुआ था । एक समय राज पुरुषों के समक्ष रानी मानिनी राजाके सिरपर तेल मल रही थी, तभी उसके नेत्र से आँसू टपक पड़ा । जब वह आँसू राजा के शरीर पर पड़ा तब उन्होंने उनके अश्रुपूर्ण नेत्र देखकर उसका कारण पूछा परन्तु उसने कोई उत्तर नहीं दिया और वह विना शब्द किए रुदन करने लगी, यह देखकर राजा ने पूछा तुम क्यों रोरही हो ? रानी ने राजा के प्रश्नों का उत्तर कोई बात नहीं कहकर दिया ।६-१४।

बहुश पृच्छतस्त यभुभृतःसासुमध्यमा ।
नकिंचिवितिह्येवाचपाभूयोराज्यवर्धनम् ।
किमेतदिनपप्रच्छमानिनीपार्थिवः पुनः ।
वहुशःप्रेरितातेनसाभर्वातत्रभामिनी ।
दर्शयामासपलितकेशभारान्तरोदभवम् ।१५
पौराणांचमहीपालकिमन्यन्मपकारणम् ।
ममातिमन्दभाग्यातारजहापाणनृपस्ततः ।१६
सविहस्वाहर्तापत्नीशुण्वतासर्वभूभृतम् ।
पौराणांचमहीपालायेतत्रासन्समावृताः ।१७

शोकेनालंशालाक्षिरोदित यन्नतेशुभे ।
जन्माद्धपरिणामाद्याविकारा:सर्वजन्तुषु ।१८
अधीता:सकलावेवाइष्टायज्ञासहस्त्र: ।
दत्तद्विजानपुत्राश्चसमुत्पन्नावराननें ।१९
भुक्ताभोगास्त्वयामासाद्धयेमर्त्यैरतिदुर्लभा: ।
सम्यक्वपालितापृथ्वीशौर्येयुद्धेष्वनुष्टितम् ।२०
मित्रैंस हेष्टैहैसितंविहृतचवनान्तर ।
किमन्यन्नक्तंभद्रे पलितेभ्योविभेयियद् ।२१

राजा के पुन: अनेक बार प्रश्न करने हर भी जब रानी ने कोई उत्तर नहीं दिया तो राजा का आग्रह बढ़ा और उनके बारम्बार पूछने पर रानी ने उनके वालों के बीच में एक श्वेत बाल दिखाया ।१५। और बोली हे--महाराज ! क्रोधित होने का कोई कारण नहीं है, आप इसे देखिये यह मेरा मन्दभाग्य ही है, रानी की यह बात सुनकर राजा बड़े जोर से हंस पड़े ।१६। उन्होंने हँसते-हँसते ही राजपुरुषों और गुरुजनों के समक्ष ही मानिनी से कहा ।१७। हे कल्याणि ! हे विशाल नेत्रवाली! तुम रोओ मत, क्योंकि सभी जीवों में जन्मवृद्धि परिणामादि विकार उन्पन्न होते रहते हैं, इसलिए इस विषय में शोक नहीं करना चाहिये ।१८। मैंने सभी वेदों का अध्ययन, हजारों यज्ञों का अनुष्ठान, ब्राह्मणों को दान और पुत्रोत्पादन ।१९। मनुष्यों के लिये तुर्लभ सुखों का तुम्हारे साथ उपभोग, भले प्रकार पृथिवी-पालन न्यायपूर्वक संग्राम ।२०। तथा मित्रों के साथ हास-परिहास और वत-विहार आदि सभी कार्य मेरे द्वारा होने से रह गया है, जिसके लिये तुम मेरा पका हुआ बाल देख कर डर रही हो ।२१।

भवन्तुकेशा:पालितावलय:सन्तुमेशुभे ।
शणिल्यमेतुमेकाय:कृतकृत्योऽस्मिमानिनी ।२२
मूर्ध्नियत्दर्शितंभद्रे भवत्यापालितंमम ।
चिकित्सामे वतस्याहकरो मिवनसंश्रयात् ।२३

बाल्येबालक्रियापूर्वंतद्वत्कौमारकेचया ।
यौवनेचांधियायोग्यावार्द्धं केवनसंश्रया ।२४
एवेनत्पूर्वजैर्भद्रे कृतत्वन्पूर्वजैश्चयत् ।
अतोनतेश्रुपातस्यांकिचित्पश्यामिकारणम् ।२५
अलन्तेमन्यनाभद्र नन्यभ्युदयकारिमे ।
दर्शनपलितस्यास्यभारोदीनिष्प्रयोजनम् ।२६
तत प्रणम्यतभूपा: पौराश्चबससमीपगा: ।
माम्नाप्रोचुर्महीपालामहर्षेराजवर्धनम् ।२७
नरोदितव्यमनयातवपानराधिप: ।
रौदितव्यमिहास्माभिरथवासर्वजन्तुभि: ।२८

हे शुभे ! मेरे बाल पक गये हों, चाहे देह शिथिल होजाय, इसमें अब मैं कोई हानि नहीं समझता, क्योंकि मैं अब धन्य हो गया हूँ। तुमने मेरे शिर में जो पका हुआ बाल देखा है इसकी चिकित्सा बन का आश्रय लेकर करूँगा। बाल्यकाल में बाल-क्रीड़ा कौमारावस्था में उसके अनुरूप कार्य और युवावस्थामें भोगादि तथा बृद्धावस्थाके प्राप्त होने पर बन का ही आश्रय करना चाहिऐ। मेरे पूर्व पुरुषों ने इसी प्रकार किया है, इसलिये मैं तुम्हारे रुदन को व्यर्थ ही समझता हूँ इस-लिए शोक को छोड़ दो। मेरे इस श्वेत केश का दिखाई देना मेरा भाग्योदय होना ही है, इसलिये रुदन नहीं करना चाहिए। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे महर्षे ! फिर पास में बैठे हुये राजपुरुषों और पुरवासियों ने महाराजा राज्यबर्द्धन को प्रणाम करके विनयपूर्वक कहा हे राजन् ! आपकी भार्या का रुदन व्यर्थ है, अब हमारे अथवा अन्य सब प्राणियों के रोने का समय आगया है ।२२-१७।

त्वब्रवीषियथानानाथवनवासाश्रितवच ।
पतन्तितेनन: प्राणाललालितानांत्वयानृप ।२९
सर्वेयास्यामहेंधूपयदियातिभवान्वनम् ।
ततोऽशेषक्रियाहानि: सर्वपृथ्वीनिवासिनाम् ।३०

भविष्यतिगसन्देहस्त्वयिनाथवनाथवनाश्रये ।
साचधर्मोपघातायतांयथदितवप्रविनुच्यताम् ।३१
सप्तवर्षसहस्राणित्वयेयपालितामही ।
तत्समुत्थमहापुण्यमालोकयनराधिप ।३२
वनेवसन्महाराजत्वंकरिष्यसियत्तपः ।
तन्महीपालनस्यकलानार्हतिषोडषीम् ।३३
सप्तवर्षसहस्राणिमयेयपालितामही ।
इदानीवनवासस्यममकालोयमागतः ।३४
ममापत्याजितानिद्दृष्टवामेऽपत्यसन्ततीः ।
स्वल्पेरेमहोतिर्मेह्यन्तकोनसहिष्यति ।३५

हे नाथ ! आप हमारे प्रति पालन करने वाले हैं, आपके मुख से वन का आश्रय ग्रहण करने की वात सुनकर हमारे प्राण ही निकले जा रहे हैं। यदि आप वन को जाते हैं तो हम सभी आपके साथ चलेंगे, क्योंकि आपके वनवासी होने पर मनुष्यों की सभी क्रिया नष्ट होजायगी यदि आप इससे धर्म की हानि समझेंतो अपने वनाश्रयी होने के विचार को छोड़ दीजिये । हे राजन् ! आपको इस पृथ्वी का पालन करते हुए सात सहस्र वर्ष हुए हैं, इतने काल में जितने महापुण्य की उपलब्धि हुई है इस पर विचार कीजिये । राजन् वन में निवास करके वहाँ आप तपस्या करेंगे उसका फल इस पृथिवी पालन रूप कर्म के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं होगा । राजा बोले-मैं सातसहस्र वर्ष से इस पृथिवी का पालन कर रहा हूँ, अब बनवास करने का उपयुक्त अवसर मेरे समक्ष उपस्थित हैं । मेरे पुत्र उत्पन्न हो चुके हैं, उन पुत्रों की जो सन्तान होगी, उसे देखकर यमराज अब कुछ समय के लिए भी जीबित रहना सहन नहीं करेंगे ।२९-३५।

यदेतत्पलिपंमूर्ध्निलद्विजामीतनागराः ।
दूतभूतमनाथ्यैस्यमृत्योरत्पुयग्रकर्मणः ।३६
सोऽहराज्येसुतकृत्वाभोगांस्त्वत्यवावनाश्रयः ।

तपस्तप्स्यैसमायाम्तिनयावयसैनिका: ।३७
ततोयियामु:सवनदेबज्ञानवतीपति: ।
पुत्रराज्याऽभियेकायदिनलग्नान्यापृच्छत: ।३८
श्रुत्वाचतेतुनृपतेर्गैवोव्याकुलचेतस: ।
दिनलग्नंचहोराश्चनविदु:शास्ष्टय: ।३९
उवाचतमहीपालत्वज्ञाबा पगद्गदम् ।
सर्वज्ञानप्रणष्टानिश्रुत्वैतत्तेवचोनृप: ।४०
ततोऽन्यनगरभ्यश्चधूत्यराष्ट्रेभ्यएवच: ।
तथस्तस्माच्चनगराप्राचर्येणाभ्युपागमन् ।४१
ससुत्पत्तमहीपालतमियत्सुमुनेवनम् ।
प्रकम्पिशिरशोभत्वाप्रोचुर्ब्राह्मणत्तमा: ।४२

हे नागरिको ! मेरे सिर में जो श्वेत केश देखा गया है उसी केश को उग्र कर्म वाली मृत्यु का दूत समझो ।३६। इसलिये मैं पुत्र का राज्याभिषेक करके और सम्पूर्ण भोगों को छोड़कर वनमें निवास करता हुआ यम-सैनिकों के आने तक तप करूँगा ।३७। मार्कण्डेयजी ने कहा फिर राजा ने वन में जाने का दृढ़ निश्चय कर ज्योतिषियों से पुत्र के राज्याभिषेक का दिन और लग्न दिखवाया ।३८। राजा के वचन को सुनकर वे शास्त्रदर्शी ज्योतिषी भी व्याकुल हृदय होगये और भ्रम कारण लग्नादि देखने में असमर्थ रहकर ।३९। गद्गद स्वर से राजा के प्रति बोले—हे राजन् ! आपकी बात सुनकर हमारा सभी ज्ञान लुप्त होगया है ।४०। हे मुने ! इसके पश्चात् जो अन्यान्य राजा उन महाराज के आधीन हुए थे, उनसे, तथा उसी राजधानी के अन्य नगरों से अनेकानेक बृद्ध ब्राह्मण वहाँ ।४१। आये और उन्होंने अपने सिर को कम्पित करते हुए राजा से इस प्रकार कहा ।४२।

प्रसीदपाहिनोराजन्पालिता:स्मयथापुरा ।
सीदिष्यत्यखिलोलोकस्त्वयिभपवनाश्रये ।४३
त्वकुरुष्वतथाराजन्याथतोसादतेजगत् ।

यावज्जीवामहेवोरस्वकालमिमेवम् ।
नेच्छामश्चद्धछन्यंद्रष्टुं सिंहासनविभो ।४४
इत्येवंतस्तथान्तैश्चद्विजैःपोरपुर सरैः
मूपैर्भृत्यैरमात्यैश्चराजाप्रोक्तःपुनःपुनः ।४५
वनव सविनिरिर्बन्धंनोपसंहारतेतदा ।
क्षमिष्यत्यन्तकोनेतिददौसचतदौत्तरम् ।४६
ततोऽत्मात्या चमूपाश्चपौरवृद्धास्तथाद्विजाः ।
समेष्यमन्त्रयामासुःकिमत्रक्रियतामिति ।४७
तेषामन्त्रयतांविप्रनिश्चयोऽयमजायत ।
अनुरागवनांतत्रमहीपालेऽतिधार्मिके ।४८
ससम्यग्ध्यानपराभूत्वाप्रार्थयामःसमाहिताः ।
तपसाराध्यभास्वन्तमायुरस्थमहीपतेः ।४९

हे राजन् ! प्रसन्न होइये, हम पर अनुग्रह करते हमारा पालन कीजिये, हे महाराज ! आपके वन में जाने से सभी जीव अत्यन्त दुःखित होंगे इसलिये, जिस प्रकार यह विश्व दुःखी न हो वैसाही कार्य करिये, हमारा जीवन अल्पकाल का ही रह गया है इतने समय में हम इस सिंहासन को सूना नहीं देखना चाहते। मार्कण्डेयजी ने कहा—उन विप्रगण, राजगण, प्रजाजन, मन्त्रिगण और भृत्यों के द्वारा बारम्बार अनुरोध किये जाने पर भी उन्होंने वनवास की इच्छा को नही छोड़ा और उन सबको यही उत्तर दिया कि यम मुझे क्षमा नहीं करेंगे, तब ब्राह्मणों, वृद्ध पुरुवासियों, मन्त्रियों तथा भृत्यों ने परस्पर विचार करना प्रारम्भ किया कि 'अब क्या करें ? ब्रह्मन् ! राजा के प्रति स्नेह रखने वाले उन विप्रादि ने यही निश्चय किया कि हम भले प्रकार ध्यानपूर्वक सूर्य की आराधना करें और इस राजा की आयु वृद्धि के लिये प्रार्थना करें ।४३-४९।

तत्रैकदिश्चयाःप्राय्येकेचिद्गेहेचभास्करम् ।
सम्यगर्वोपचाराद्यै रुपहारैरपूजयन् ।५०

अपरेमौनिनोभत्वाऋग्जापेनतथाऽपरे ।
यजुषामथसाम्नांचतोवर्यांचिच्रिरेरविम् ।५१
अपरेचनिर ह्ानानदीपुलुमशायिस: ।
तपांसिचकुरिच्छतोमास्करराराधनद्विज: ।५२
अग्निहोत्रपराश्चान्येरतिसुक्तान्वहर्निशम्: ।
जेपुस्तचापरेतस्युभास्करेत्य तद्दष्टय: ।५३
इत्येवमतिनिर्वन्धं भास्करराराधनप्रति ।
वहुप्रकारकास्तेतत वधिमुपाश्रिता: ।५४
तथातुयततातेषांभास्करराराधनंप्रति ।
यद्याराधनमिष्टंवोभास्करस्य द्विजातय: ।
तदेतत्क्रियतायनभानु:प्रीति मुपैष्यति ।५६

ऐसी निश्चय करके सब सूर्य की पूजा करने लगे, किसी ने अर्घ्य देकर और किसी ने अन्य विधि से सूर्य भगवान् का पूजन किया, किसी ने मौनावलम्बन कर ऋक् मन्त्र से किसीने सामवेद के मन्त्रों से और किसी ने यजुर्वेद के विधान से भगवान् भास्कर को सन्तुष्ट किया। कोई नदी तट पर तप करके सूर्य को प्रसन्न करने लगे । किसी ने अग्नि होत्र परायण होकर दिन रात निरन्तर रविसूक्त का जप किया और कोई भगवान् सूर्य की ओर देखते हुए ही खड़े रहे । इस प्रकार के सब अपनी अपनी विधि से सूर्य की आराधना में निश्चयपूर्वक लग गये । उन्हें इस प्रकार सूर्य की आराधना में दृढ़ता से लगे हुए देख कर एक सुदामा नामक गन्धर्व वहाँ आया और उन आराधकों से कहने लगा—हे विप्रगण ! यदि सूर्य की ही आराधना आपका लक्ष्य है तो इस प्रकार से आराधना करो जिससे वह प्रसन्न हो सकें ।५०-५६।

यस्माद्गुरुविशालाख्यंवनंसिद्धनिषेवितम् ।
कामरूतेमहांशैलेगम्यततांतत्र वैलघु ।५७

तस्मिन्नाराधनंभानोःक्रियतांसुसमाहितैः।
सिद्धक्षेत्रासेततत्रसर्वकामनबाप्स्यथ ।५८
इतितेतद्वश्चश्रुत्वागत्वातत्काननद्विजाः ।
ददृशुर्भास्वततस्तत्रपुण्यमायतनशुभम् ।५६
तत्रतेनियताहारावर्णानिप्रादयोद्विजः।
पुष्पानुलेपनाद्यैश्चधूपगन्धादिकैस्तथा।
जपहोमन्नदानाद्यःपूजनतेसताहितः ।
कुर्वन्ततुष्टवुर्ब्रह्मान्विन्तद्विजातयः ।६०

कामरूप महापर्वत में एक गुरु विशाल नामक वन हैं, जो सिद्धों द्वारा सेवित है, तुम उसी वन में जाकर ।५८। सावधान चित्त से सूर्य का आराधन करो, इससे आपके इच्छित कार्य की सिद्धि होती है, क्योंकि ऐसे कार्यों के अनुष्ठान में सिद्ध क्षेत्र ही अधिक फल देने वाला होता है ।५८। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे द्विज श्रेष्ठ! गन्धर्व की यह बात सुनकर सब आराधक ब्राह्मण उस वन में पहुँचे, वहाँ उन्हें भगवान् सूर्य का पवित्र मन्दिर दिखायी दिया ।५६। ब्राह्मणादि सभी वर्णों ने वहाँ नियत आहार का अवलम्बन करके, प्रसाद रहित हो गन्ध पुष्पादि के द्वारा सूर्य का पूजन किया ।६०। हे विप्र! गन्ध, पुष्प, अनुलेप, धूप, दीप, नैवेद्य पूर्वक जप, होमादि करते हुए सावधान चित्त से सभी आराधक ब्राह्मण सूर्य की स्तुति करने लगे ।६१।

देवदानवयक्षाणांग्रहाणाज्योतिषामपि ।
तेजसाभ्यधिकदेवब्रजामशरणंरविम् ।६२
दिविस्थितंचदेवेद्योतयन्तंसमन्ततः ।
वसुधामन्तरिक्षचप्याप्न वन्तंमरीचिभिः ।६३
आदित्यभास्कर भानुसवितारं दिवाकरम् ।
पूषाणमर्यमाणचस्वर्भानदीप्तदीधितिम् ।६४

चतुर्युगान्तकालाग्निदु प्रेक्ष्यप्रलायन्तगम् ।
योगीश्वरमनन्तंचरक्तपीतसितम् ।६५
ऋषीणामग्निहोत्रेषुयज्ञदेवेत्ववस्थितम् ।
ब्रजामशरणदेवतेजोराशितमच्युतम् ।
अक्षरपरगुह्यमोक्षद्वारमनुत्तमम् ।६६
छन्दोभिरश्चरूपैश्चसकृद्यक्तै विहंगमम् ।
उदवास्तमनेयुक्तं सदामेरो:प्रदक्षिणे ।६७
अनृतचऋतंकैवपुण्यतीर्थपृथिग्विधम् ।
विश्वस्थितिमचचिन्त्यन्चप्रपन्नास्म:प्रभाकरम् ।६८

ब्राह्मणों ने कहा-देवता, दैत्य, यक्ष और ज्योतिष-ग्रहोंमें अत्यधिक तेज सम्पन्न भगवान् भास्कर की शरण में हम आये हैं ।६२। जो देवे-से सम्पूर्ण पृथिवी और अन्तरिक्ष को व्याप्त कर रहे हैं ।६३। जो आदित्य भास्कर भानु सवितादेव, दिवाकर, पूषा अर्यमा, स्वर्भानु, दीप्ति, दीधित ।६४।और योगीश्वर कहे जाते हैं और चतुर्युगी के अन्त में दुष्प्रेक्ष्य कालाग्नि के समान होते हैं अथवा जो अनन्त लाल, पीले, श्वेत और कृष्ण है ।६५। जो ऋषियों के अग्निहोत्र के समय यज्ञदेव के रूप में अवस्थित होते हैं, जो अक्षर, परमगुह्य, अत्यन्त श्रेष्ठ मुक्तिद्वार रूप ब्रह्म हैं जो एकबार युक्त हुए छन्दरूप अश्व पर आरूढ़ होकर आकाश में स्थित हैं, उदय अस्त तक गमनशील और सुमेरु की प्रद-क्षिणा में सदा तत्पर रहते हैं ।६६-६७। जो सत्य-असत्य, पुण्य तीर्थ तथा पृथक् रूप से विश्व में अवस्थित हैं, उन अदिति-पुत्र अचिन्त्य स्वरूप आदिदेश भगवान् प्रभाकर की हमने शरण ग्रहण की है ।६८।

योब्रह्मायोमहादेवोयोविष्णुय:प्रजापतिः ।
वायुराकाशमापश्चपृथिवीगिरिसागराः ।६९
ग्रहनक्षत्रचन्द्राद्यावानस्पत्यद्रूमौषधम् ।
व्यक्ताव्यक्तेषुभूतेपधर्माधर्मप्रवर्त्तक: ।७०

ब्राह्मीमाहेश्वरीचैववैष्णवीचैवतेतनुः ।
त्रिथायस्यस्वरूपन्तुमानोभाँवान्प्रसीदतु ।७१
यस्यसर्गमयस्येदमंगभूतंजहृत्प्रभा ।
सनःप्रसीदतांभास्वाजगतांयश्चजीवनम् ।७२
यस्यक्रमक्षररूपंप्रभमामण्डलदुर्ष्टशम् ।
द्वितीयमैंन्दवसौम्यनोभा वान्प्रसीदतु ।७३
ताभ्यांचतस्यरूपाभ्यामिददिश्व विनिर्मिममम् ।
अग्नीषोममयंभास्वान्सनोदेव प्रसीदतुः ।७४
इत्थस्तुन्यातदाभक्त्यासम्यक्पूजाविधानतः ।७५
तत पमन्डलादुद्यन्निजविवसतप्रभः ।
अवतीर्यंददौतम्वोदुर्दशोदर्शनंरयिः ।७६
ततस्तेस्पष्टरूपंतसवितारमजजना ।
रूपुलकोतम्पिनोविर्भात्तनम्राःप्रणेमिरे ।७७
नमोबमस्तेम्तृसहश्ररश्मेसर्वस्यहेतुस्त्वमशेषकेतुः ।
पातात्वमीडयोऽखिलयज्ञधामध्येयस्तथायोगाविदांप्रसीद ।७८

जो ब्रह्मा महादेव, विष्णु, प्रजापति वायु, आकाश, जल, पृथिवी, पर्वत और सागर हैं। जो ग्रह नक्षत्र, चन्द्रमा, वृक्ष, वनस्पति, औषधि स्वरूप हैं तथा जो व्यक्त और अव्यक्त भूतों के धर्म और अधर्म का प्रवर्तन करने वाले हैं, तथा ब्राह्मी, माहेश्वरीऔर वैष्णवीके भेदसे जिनका स्वरूप तीन प्रकार का हुआ है, वह सूर्य नारायण हम पर प्रसन्न हों। जिन अनादि जगदीश्वर के अङ्क में विश्व के सभी पदार्थ स्थित हैं और जो विश्व के प्राणरूपहैं वह भगवान् भास्कर हम पर प्रसन्न हों। उसका प्रकाशमानप्रभा मण्डल दुर्दर्श एवं अद्वितीय है जिनके दिवाकर तथा सुधाकर दो रूप हैं, वह भास्कर हम पर प्रसन्न हों जिनके उन्हीं विख्यात दो स्वरूपों से इस अग्नि-सोममय संसार की रचना हुई है, वही भगवान् प्रसन्न हों। मार्कण्डेयजी ने कहा-हे द्विजश्रेष्ठ ! इस प्रकार स्तोत्र-पाठ

पूर्वक जब उन्होंने तीन महीने तक पूजन किया; तब भगवान् प्रसन्न हुए तथा स्वयं दुर्दर्श होकर भी उन्होंने आकाश मण्डल में प्रकट होकर अपनी उदयकालीन प्रभा सहित दर्शन दिया। उनके प्रत्यक्ष स्वरूप का दर्शन करके पुलकायमान हुऐ उन मनुष्यों ने भक्ति से विनम्र होकर उन अनादि सवितादेव को प्रणाम करते हुए कहा हे सहस्ररश्मे ! आपको नमस्कार है, यज्ञधाम! आप ही सब यज्ञों के आश्रय और योगियों के ध्यान योग्य हो, आप हम पर प्रसन्न हों।६९-२८।

—※—

१००-(ख) राजा और प्रजा की आयु वृद्धि

ततःप्रसन्नभगान्भामुराह्यखिलांजनाम् ।
प्रियतायदभिप्रेतमत्तःप्राप्तु द्विजादयः ।१
ततस्तेप्रणिपत्योचुर्दिप्रक्षनादयोजनाः ।
ससाध्वपनशीताशुभलोक्यतुःस्थितम् ।२
भगवन्यदियोभ्वेत्धाप्रनन्नास्तिमिरापह ।३
दशवर्षसहस्राणिततोनोजीवतानृपः ।
निरामयोजितारातिसुकोशःस्थिरयौवनः ।४
तथेत्युक्त्वाजनान्भस्व इ योऽभून्महामुने ।
तेऽपिलब्धवरत्दृष्टाःसमाजग्मुर्जनेश्वरम् ।५
यथावृत्त चतेत मैनरेन्दायन्यवेन्यदयन् ।
वरलब्ध्वांसहस्राशीःसकाशादखिलद्विजः ।
तच्छ्रुत्वाजत्हृपेतस्यसापत्नीमानिनीद्विजाः ।६
(प्रहर्षपरमयाताहर्सोदगततनूरुहाः)
सचराजचिरंदध्यौनाहकिञ्चिच्चतजनम् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा-फिर भगवान् सूर्य ने प्रसन्न होकर उन सबसे कहा—हे ब्राह्मण ! तुम मुझसे जो प्राप्त करना चाहते हो, वह

मुझ से माँगो ।१। तब उन ब्राह्मणों ने उनको सामने देखकर उन्हें प्रणाम किया और उन वरदायक भगवान से बोले ।२। विप्रप्रजागण ने कहा-हे भगवान् ! हे अन्धकार का नाश करने वाले प्रभो ! यदि आप हमारी भक्ति के कारण हम पर प्रसन्न हुए हैं ।३। तो हमारे महाराज राज्यवर्द्धन रोग-रहित, शत्रुओं के विजेता और स्थिर यौवन वाले होकर दश सहस्र वर्ष तक जीवित रहें ।४। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे महामुने ! भगवान् सूर्य ने उनसे 'ऐसा ही होगा' कहा और अन्तर्धान हो गये। तब वे सभी ब्राह्मण वर प्राप्ति से प्रसन्नचित्त होकर राजा के पास पहुँचे ।५। हे ब्रह्मन् ! सहस्र रश्मि वाले भगवन् सूर्य से वर प्राप्त होने इत्यादि का सम्पूर्ण वृत्तान्त उन ब्राह्मणों ने राजा को बताया ।६। उस वृत्तान्त को सुनकर राजमहिषी मानिनी अत्यन्त प्रसन्नता को प्राप्त हुई, जिससे उसका देह पुलकित हो गया, परन्तु राजा मौन रहकर बहुत समय तक विचार करते रहे ।७।

ततःसमानिभूर्पहर्षापूरितमानसा ।
दिष्टयाऽऽयुषामहीपालवर्द्धस्वेत्याहतपतिम् ।८
तथातयामुदाभर्त्तामानिन्याथसभाजितः ।
नाहकिंचिन्महीपालश्चिन्ताजडमनाद्विजः ।९
सापुनःप्राहभर्त्तारंचिन्तायानमधोमुखम् ।
तस्मन्न तस्मन्नहर्षमभ्येपिपरमाभ्युदयेनृप ।१०
दशवर्षसहस्राणिनीरुजः स्थिरयौवनः ।
भावत्यमद्यप्रभृतिकितथापिनाहृष्यसे ।११
किन्तुतत्करणंब्रूहियच्चिन्ताक्रष्टमानसः ।
परमाभ्युदयेऽपित्वसप्राप्तेपृथिवीपते ।१२
कथमभ्युदयोभद्रे किंसभाजयसेचमाम् ।
प्राप्तादुःखसहस्राणिकिंसभाजनमिष्यते ।१३
दशवर्षसहस्राणाणिजीविष्याम्यहमेककः ।
नत्वतवविपत्तौमेकिन्नुदुःखंभविष्यति ।१४

फिर मानिनी ने प्रसन्न चित्त होकर अपने स्वामी से कहा—हे महाराज ! इस बढ़ी हुई आयु के द्वारा आप वृद्धि को प्राप्त हों ।८। चिन्तत चित्त के कारण कुछ उत्तर नहीं दिया ।६। चिन्ता से नमस्कार किये हुए राजा को देखकर मानिनी ने उनसे कहा—हे महाराज ! ऐसे आनन्द के समय भी आप प्रसन्न क्यों नहीं है ? ।१०। अब आप निरामय और स्थिर यौवन होकर दश सहस्र वर्ष तक और जीवित रहेंगे फिर आप प्रसन्न क्यों नहीं हैं ? हे राजन् ! ऐसे आनन्द का समय आ गया है, तो भी आप चिन्ता से व्याकुल हैं इसका क्या कारण है यह मुझे बताइये ।१२। राजा ने कहा—हे भद्रे ! मेरा कौन-सा भाग्योदय हुआ है ? तुम मेरा उतना सत्कार किस लिये कर रही हो ? सहस्रों दुःखों को प्राप्त होकर भी मैं किस आनन्द का उपभोग करूँगा ? ।१३। मैं एक एकाकी ही दश सहस्र वर्ष जीवित रहूँगा, परन्तु तुम जीवित नहीं रहोगी, फिर क्या तुम्हारे न रहने का मुझे दु;ख नहीं होगा ।१४।

पुत्रान्पौत्रान्प्रपौत्राश्चतथान्यान्निष्घटान्धवान् ।
पश्यतोनेमृतान्दुर्कंकिमल्पहिभविष्यति ।१५
भृत्येषुचातिभक्तेषुमित्रवगयथामृते ।
भद्रेदुःखमपारमेभविष्यतितुसन्ततम् ।१६
येमदर्थंतषस्तप्तकृशैर्धमानसन्ततैः ।
तेमरिय्यन्हभोगीजोवियामातिधिक्कारम् ।१७
सेयम पद्वरारोहप्राप्तानभ्युदयोमम् ।
कथवामन्यसेनस्वयत्सभाजयसेऽद्यमाम् ।१८
महाराजयधत्थत्वतथैन्नात्रसंशयः ।
मयापोरैश्वदोषोऽयंप्रोत्याज्ञालोकितल्यव ।१६
एवगतेऽत्रकिकार्य्यंनरनाथविचिन्त्यताम् ।
नान्यथामाविनत्प्राहप्रसन्नोभगवान्रविः ।२०
उपकारःकृतःपौयैपीत्याभृत्यैश्चयोमम् ।

चथभोक्ष्याम्यहभोगान्गात्वातेवाभक्ष्कृतिम् ।

पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र तथा प्रिय बान्धवादि को मरते हुए देखकर क्या मुझे कुछ कम दुःख होगा ? हे भद्रं ! अत्यन्त भक्ति वाले भृत्यों और मित्रों की मृत्यु होने पर मुझे सदा ही महान् दुःख भोगना पड़ेगा। जिन्होंने मेरी आयु के निमित्त तप किया है, वे भी मर जायेंगे परन्तु मैं जीवित रहकर सुख भोगूँगा, क्या मेरे ऐसे जीवन को धिक्कार नहीं है ? मेरी यह दश सहस्र वर्ष की परमायु वृद्धि क्या हुई यह तो मेरे लिए विपत्ति बन गई हैं सब बातों का विचार किए बिना ही तुम मुझे हर्षित करना चाहती हो। मानिनी ने कहा—हे महाराज ! यथार्थ ही यह इतना दुखकर होगा इस बातसे मैंने व पुरवासियों ने आपको प्रीति के कारण न्याय नहीं दिया था। अब, ऐसा होगया है, तो क्या करना चाहिए इस पर विचार कीजिये, भगवान् सूर्य ने जो कुछ कहा है वह कदापि मिथ्या नहीं हो सकता। राजा ने कहा—पुर वासियों और भृत्यों ने जो मेरा उपकार किया है, उसके विपरीत परिणाम को रोककर किस प्रकार सुख को भोगूँ ।१५;२१।

सोऽहमद्यभृत्यो गत्वार्नियतमानसः ।
(पौरलोकहितार्थतचतोषष्यामिभास्करम् ।
यथापौराममकृतेबान्धवाश्चसमन्तयः ।
आराधनायदेवेशतधापमपिसांप्रतम्ः ।
तप त स्येनिराहारोभानोराराधनोद्यतः ।२२
दशशर्षसहस्राणियथाहस्थिरयौवनः ।
तस्यप्रसाद्देवस्यजीविष्यामिनिरामयः ।२३
तथायदिप्रजा सर्वाभत्यास्त्वंचसुताश्चमे ।
पुत्रःपौत्राःप्रपौत्रश्चसुहृदश्चवरानने ।२४
जीवन्त्येतंप्रसादंचकरोतिभगवान्रविः ।
ततोऽहभविताराज्येभोक्ष्येभोगास्तथामुदा ।२५
नचेदेवकरोत्यर्ककर्त्यंस्तदांद्रौतत्रमानिनि ।

तपस्तप्स्येनिराहारयाज्जीवितसंचय ।२६
इत्युक्तासातदातेनतथेत्तहनराधिपम् ।
जगामतेनचसममसाऽपितधरणीधरम् ।२७
सतदायातनगत्वाभार्ययासहपार्थिवः ।
भानोराराः धनं चक्रेशुश्रूषानिरतोद्विज ।२८

इससे तो यही उचित है कि मैं अब प्रभृति पर्वत पर जाकर पुरवासियों के लिये घोर तप करूँ जिस प्रकार उन्होंने मेरे हितार्थ आराधन के उद्देश्य से निराहार रहकर तपस्या करूँगा ।२२। जैसे उनकी कृपा से मैं स्थिर यौवन और रोग रहित होकर दश सहस्र वर्ष तक जीवित रहूँगा वैसे ही मेरी सम्पूर्ण प्रजा जीवित रहे, यदि भगवान् भास्कर मुझ पर कृपा करेंगे तभी मैं प्रसन्न चित्त पूर्वक राज्य का भार वहन करता हुआ सुख-भोग करूँगा ।२२-२५। परन्तु, यदि भगवान सूर्य ने ऐसी कृपा नहीं की, जब तक मेरा जीवन रहेगा, तब तक निराहार रहकर उसी पर्वत में तप करता रहूँगा ।२६। मार्कण्डेयजी ने कहा महाराज की बात सुनकर राजमहिषी भामिनी ने उनका अनुमोदन किया और वह अपने पति के साथ उसी पर्वत में चली गई ।२१। हे ब्रह्मन् ! अपनी पत्नी सहित राजा उसी मन्दिर में पहुँचे और आराधना में तत्पर बुए ।२२।

निराहारकृशासाचयथासौपृथिवीपतिः ।
तेपेतपस्तेवोग्रं शीतवातातपक्षमा ।२६
तस्यपलयोभातुतप्यतश्चतपोमहत् ।
साग्रं संवत्सरेवातेततः प्रीतिर्दिवाकरः ।३०
समस्तभ्रत्यपौरादिपुत्राणांचकृतंद्विज ।
ददौयथाभिलषितपरंद्विजवरोत्तम् ।३१
लब्ध्यावरसनृपतिः समभ्यौयात्मनःपुरम् ।
वकारसुंदितीराज्यप्रजःधर्मेसपालयन् ।३२

इजेयज्ञान्सचवहुन्ददौनाब्यहर्निशम् ।
मानिन्यासहितोभागान्बु जेचसधर्मवित् ।३३
दशवर्षसहस्राणिपुत्रपौत्रादिभिः सह ।
भृत्यं:पोत्रैः प्रमुदितः सोऽभवत्स्थिरयौवनः ।३४
तस्येतिचरितंदृष्ट्वाप्रमतिर्नामिभार्गवः ।
विस्मयाकृष्टादहृदयोगाथामेतामगायत ।३५

निराहार राजा दिनों दिन कृश होते जा रहे थे, वैसे ही रानी भी शीत, उष्णतादि कष्ट सहती क्षीण देह होने लगी ।२९। हे द्विजश्रेष्ठ ! जब उन्होंने इस प्रकार भगवान सूर्य की उपासना में वर्ष से अधिक काल व्यतीत कर दिया, जब भगवान ने प्रसन्न होकर ।३०। समस्त भृत्य गुरुजन और पुत्रादि के सहित वाला मनोवांछित वर उन्हें प्रदान किया ।३१। राजा पत्नी सहित घर लौटे और प्रसन्नचित धर्मपूर्वक प्रजा पालनादि करते हुए राज्य करने लगे ।३२। वह धर्मात्मा महाराज अनेक यज्ञानुष्ठान करते और सत्पात्रों को दान देते हुए सुख भोगने लगे ।३३। उन्होंने अपने पुत्र, पौत्र, भृत्य, पुरवासी आदि के सहित स्थिर यौवन और प्रसन्न चित्त से दश सहस्र वर्ष व्यतीत किये ।३४। उस समय भृगु-बंशी महर्षि प्रमति ने उनका ऐसा चरित्र देखकर विस्मय युक्त होकर इस प्रकार गाथा कीर्तन की थी ।३५

भानुभक्तेरहोशक्तिर्यद्राजाराज्यबर्द्धनः ।
आयुषोवर्द्धनेजातःस्वेजनस्यतथात्मनः ।३६
इतितेकथितविप्रत्पृष्टाऽहंत्वयोदिता ।
आदिदेवस्यमहात्म्यमादित्यस्यविव वतः ।३७
विप्रैतदाखलश्रु त्वाभानोर्माहात्म्यमुत्तम् ।
पठश्चमुच्यतेपापैसप्तरात्रकृतैर्नरः ।३८
अरोगीधनानाड्यकुलेमहतिधीमताम् ।
जांयतेचमहाप्राज्ञोयश्चैतद्धारयेद्वुधः ।३९

(यजतेचमायज्ञैः समाप्तवरक्षिणै ।
श्रुत्वाचरितमेतद्धिसमानलभतेफलम् ।)
मन्त्राश्चयेऽत्राभिहितिभास्वतोमुनिसत्तमः ।
जपः प्रत्येकमेतेषांत्रिषांजिसध्यपातकापहः ।४०

समस्ततेतन्माहात्म्यत्रचायतनेरवेः ।
पठ्येतत्रभगवान्साान्निध्यंनविमुचति ।४१

तस्मादेतत्वयाब्रह्मन्भानोर्माहात्म्यमुतमम् ।
धार्य्यमनसिजाप्यचमहत्पुण्यमभीप्सता ।४२
सुवर्णशृङ्गीमतिशोभनांगीपयस्विनीर्गाप्रददातियोहि ।
शृणोतिचैतत्र्यमात्मवान्नरः समंतयोःपुण्यफलंद्विजग्न्य ।४३

भगवान् भास्कर की कितनी आश्चर्यमय शक्ति है, जिसके प्रभाव से राजा राज्यवर्द्धन ने अपनी और अपने आत्मीयजनों की आयु वृद्धि की ।३६। हे ब्रह्मन् ! तुमने आदिदेव सूर्य के जिस माहात्म्य के विषय में प्रश्न किया था वह तुम्हारे प्रति कहा गया ।३७। सूर्य के इस उत्तम माहात्म्य को ब्राह्मण के मुख से सुनने और पाठ करने वाले मनुष्य सप्तरात्रके किये हुए पापों से मुक्त होते हैं ।३८। उन सूर्य के माहात्म्य को जो बुद्धिपूर्वक करते हैं, वह धनी, निरोग और महान विद्वान होकर जन्म लेते हैं ।३९। तथा महान् दक्षिणा वाले यज्ञों के अनुष्ठता होते और इस चरित्र को सुनकर समान फल को प्राप्त करते हैं । मूर्ख व्यक्ति पाप कर्म करके भी यदि सूर्य के इस माहात्म्य का जप करते हैं, उनके पाप नष्ट हो जाते हैं ।४०। जिस देव-मन्दिर में सूर्य के इस माहात्म्य का पाठ होता है,उसके सामीप्य से भगवान नहीं हटते ।४१। इसलिये, हे ब्रह्मन् ! तुम भी महान पुण्य की कामना से सूर्य के इस माहात्म्य को हृदय में धारण कर जप करो ।४२। जो मनुष्य सोने के सींगों को मढ़ाकर दूध वाली गौ का दान करते और संयत चित से तीन दिन तक माहात्म्य को सुनते हैं उन दोनों को समान फल की प्राप्ति होती है ।४३।

१०० [ख] सूर्य वंशानुक्रम

एवप्रभावोभगवाननादिधनौरविः ।
यस्यत्वक्रोष्टुकेभक्तयामात्म्यंपरिपृच्छसि ।१
परमात्मासवोगिनांयुंजतांचेतसांलयम् ।
क्षेत्रज्ञः सांख्ययोगनांयज्ञे शोयज्विनामपि ।२
सूर्याधिकारंवहतोविष्णोरीशस्यवेधसः ।
मनुस्तस्याभवत्पुत्रश्छिन्नसर्वार्थसंशयः ।३
मन्वन्तराधिपोविप्रय यसप्यममन्वन्तरम् ।
इक्ष्वाकुर्नाभगोरिष्टोमहाबलपराक्रमः ।४
नरिष्यन्तोऽथनाभागःपृषध्रोधृष्ठएवच ।
एतेपुत्रामनोस्तस्यपृथग्राज्यपालकाः ।५
विख्यातकीर्त्तयः सर्वेशस्त्रास्त्रपारगाः ।
विशिष्टतरमन्विच्छन्मनुः पुत्रं तथापुनः ।६
मित्रावरुणचर्रिष्टिचकारकृतिनांवरः ।
यत्रचापहुतेहोतुयपचारान्महामुने ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे क्रौष्टुकि ! तुमने जिस भगवान् भास्कर का माहात्म्य भक्ति सहित पूछा था, वह भगवान ऐसे प्रभाव वाले हैं ।१। वह संयतचित योगियों के ईश्वर, सांख्य योग वालों के क्षेत्रज्ञ और याज्ञिकों के यज्ञेश्वर हैं ।२। ब्रह्मा, विष्णु, शिव स्वरूप सूर्याधिकार के वहन करने वाले उन भगवान् भास्कर के संशय रहित एक पुत्र 'मनु' नाम से हुआ ।३। जिसे मनु का सातवाँ मन्वन्तर इस समय चल रहा है, महाबली एवं पराक्रमी इक्ष्वाकु नाभाग रिष्ट ।४। नरिष्यत, नाभाग, पृशध्र और धृष्ट नामक यह सभी मनु-पुत्र पृथक्-पृथक् राज्यों के परि-पालन करते ।५। प्रसिद्ध यश वाले, शास्त्रों में पारंगत और अस्त्र विद्या के ज्ञाता की अभिलाषा से मित्रावरुण यजन किया, परन्तु यह सब यज्ञ के होता के आचार से अगहीन हो गया ।६-७।

इलानामसमुत्पन्नामनो:कन्यासुमध्यमा ।
तांदृष्ट्वाकन्तकांतत्रसमुत्पनांततोमनु ।८
तुष्टावमित्रावरुणौवानयचेदमुवाचह ।
भवत्प्रसादात्तनयोविशिष्टोमेभवेदिति ।९
कृतेमखेसमुत्पन्नातनयाममधीमत: ।
यदिप्रसन्नोवरदौतदियन्तनयानम् ।१०
प्रसादाद्भवते:पुत्रीभवत्वयिगुणान्वित: ।
इथेतिचाभ्यामुक्तेतुदेवाभ्यांसैवकन्यका ।११
इलासमभवस्सद्य: सुद्यम्नइतिविश्रुत: ।
पुनश्चेश्वरकोपेनमृगयामततावने ।१२

इस कारण इला नाम की कन्या उत्पन्न हुई, उस यज्ञ से उत्पन्न हुई कन्या को देखकर ।८। मनु ने मित्रावरुण की स्तुति की और उनसे निवेदन किया कि आपकी कृपा से मुझे एक असाधारण पुत्र की प्राप्ति हो ।९। इसी कामना से मैंने यज्ञ किया, जिससे इस कन्या की प्राप्ति हुई है, यदि आप मुझ पर प्रसन्न हुए हैं, तो आपकी कृपा से मेरी यह कन्या ही अत्यन्त गुण सम्पन्न पुत्र हो जाय। इस पर दोनों देवताओं ने 'ऐसा ही हो' कहा और वह कन्या उसी समय पुत्र हो गया, जिसका नाम सुद्युम्न हुआ, यह मेधावी मनु पुत्र एक दिन आखेट के लिये गया और ईश्वर से क्रोधित होने से यह पुन: स्त्री हो गया ।१०-१२।

स्त्रीत्वमासादितंतेनमनुयुत्रेणधीमता ।
पुरूपवसनामानंचक्रवर्तिनमृजिम् ।१३
जनयामासतनयंयभसोमसुत्तोबुधा ।
जातेसुतेपुन:कृत्वासोऽश्वमेधं महाक्रतुम् ।१४
पुरुषत्वमनुप्राप्तसुद्युम्न:पार्थिवोऽभगंत् ।
सुद्युम्नस्यत्रय:पुत्राउत्कलोविनियोगय: ।१५
पुरुषत्वेमहावीर्यायिज्विन:पृथुलौजस: ।
पुरुषत्वेतुयेजातातास्तस्यराज्ञस्त्रय:सुता ।१६

वुभुजुस्तेमहींमेतांधर्मेनियतचेतसः ।
स्त्रीभतस्यतुयोजातस्यराज्ञःपुरूरवाः ।१७
नसमेभेमहीभागंयतोबुधसुतोहिसः ।
ततोवसिष्ठदचनात्द्रतिष्ठानंपुरोत्तमम् ।
तस्मैदत्त सराजाभूत्तत्रातोवमनोहरे ।१८

ऐसा होते ही चन्द्रमा के पुत्र-वधु ने उसके गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न किया जो पुरूरवा नामक चक्रवर्ती राजा हुआ, उस पुत्र के उत्पन्न होने के पश्चात अश्वमेध काअनुष्ठान करने से ।१३-१४। उस सुद्युम्न को पुरुषत्व की प्राप्ति हुई, जब से वे पुरुष राजा हुए तब उनके उत्कल, विनय और गय नामक ।१५। तीन अत्यन्त वीर यज्ञ करने वाले और विपुल तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुए थे वे तीनों पुत्र ।१६। राज्य को प्राप्त धर्म पूर्वक पृथिवी का पालन करने लगे और राजा जब स्त्री हुये थे, तब उनके पुरूरवा नामक पुत्र हुए थे ।१७। वह वधु के कारण भू भाग प्राप्त नहीं कर सके परन्तु वसिष्ठ ऋषि की आज्ञा से उन्हें प्रतिष्ठान नामक एक श्रेष्ठ नगर दिया गया, जहाँ के वह राजा हुए ।१८।

—×—

१०० (घ) पृषध्रोपाख्यान

पृषध्रख्यमनो पुत्रोमृगयायाममद्वनम् ।
तत्रचक्रमाणोऽसौविविनेनिजनेव ।१
नाससादमृमकंचिद् भानुदीधितत्तापितः ।
क्षत्तट्तापपरीतांगइतश्चेतःचचक्रमन् ।२
सददर्शतदातत्रहोमधेनमनोहराम् ।
लतान्तर्हेहछिन्नार्धाब्राह्मणस्याग्निहोत्रिणः ।३
समन्यमानोगवयमिषुणातामताडयत् ।
पपातसापितद्बाणविभिन्नहृदयाभुवि ।४

ततोग्निहोत्रिणापुत्राब्रह्मचारीतपोरतिः ।
शम्रवान्सपितुर्दृष्टवाहोमधेनुं निपातिताम् ।५
गोपालःप्रेषितः पुत्रोवाभ्रव्योनामनामतः ।
कोपामर्षपराधीनचित्तवृत्तितस्तोमुने ।६
चुकोपविगलत्स्वेदजललोयाविलक्षणः ।
तंक्रुद्धं प्रेक्ष्यनृपःपषध्रोमुनिदारकम् ।७
प्रसीदेतिजगौकस्माच्छद्रवकुरुषेरुषम् ।
नक्षत्रियोनचावैश्यएवंक्रोधमुपैतिवै ।
यथात्वंशूद्रवज्जातीविष्टेब्रह्मणाःकुले ।८

मार्कंण्डयजी ने वर्णन किया कि किसी मनु के पुत्र राजा पृषध्र शिकार के लिए जंगल में गये। वह उनको शिकार योग्य पशु नहीं मिला और वे चलते-चलते भूख-प्यास से अत्यन्त व्याकुल हो गए ।१। वहाँ उन्होंने किसी अग्निहोत्री ऋषि को छोटी गाय पेड़ों के भीतर छिपी देखी। राजा ने उसे जंगली गाय समझकर बाण चला दिया जिससे गाय का प्राणान्त हो गया। ।२-४। जब उस अग्निहोत्री के पुत्र 'बाभ्रव्य' ने गौ को इस प्रकार मरकर पृथ्वी पर गिरते देखा तो वह अत्यन्त क्रोधित हुआ और शरीर से पसीना और नेत्रों से अश्रु बहाता हुआ राजा को शाप देने लगा ।५-६। राजा ने उसकी ऐसी दशा देख कर कहा-क्रोध को छोड़कर प्रसन्न हो जाइए। इस प्रकार क्रोध करना तो शूद्र का लक्षण है। आप उत्तम कुलोत्पन्न होकर ऐसा शूद्र सदृश आचरण क्यों करते हैं? इस प्रकार तो कोई क्षत्रिय वैश्य क्रोध के वशीभूत नहीं होते? ।७-८।

इतिनिर्भर्सितस्तेगसराज्ञामौलिनः सुतः ।
शशापतदुरात्मानंशूद्रएवभविष्यसिः ।९
प्रयास्यतिक्षयंब्रह्मन्यत्तोऽधीतगुरोर्मुखात् ।
होमधेनुमंमगुरोयदियहिंसितात्वया ।१०
एवंशप्तोनृपः क्रुद्धस्तच्छापप्रपीडितः ।
प्रतिशापपरोविप्रतोयंजग्राहपाणिना ।११

सोऽपिराज्ञोनिशावायकोपं चक्रु द्विजोत्तमः ।
तमभ्येत्यत्वरायुक्तावारयमासवैपिता ।१२
वत्सालमलमत्यर्थकापेनावोववैरिणा ।
एहिकामुष्मिकहितः शमएवद्विजन्मनाम् ।१३
कोपस्तपोनाशयतिक्रुद्धोभ्रश्यत्यथायुः ।
क्रुद्धस्यगलतेज्ञानक्रुद्धश्चार्थाच्चहीयते ।१४
नधर्मः क्रोधशीलस्यनार्थचप्नोतिरोपणः ।
नालः सुखायकामाप्तिः कोपेनाविष्टचेतसाम् ।१५

राजा के अपने लिए भर्त्सनायुक्त वाक्य सुन वे ऋषि पुत्र रोष में आ गए और शाप दिया कि तुम 'शूद्र' ही हो जाओगे और गाय के वध के कारण तुम्हारी पढ़ी समस्त विद्या नष्ट हो जायेगी ।९-१०। इस शाप को सुनकर राजा भी बड़ा दुःखी और क्रोधित हुआ और ऋषि-बालक को प्रतिशाप देने के उद्देश्य से हाथ में जल लिया ।११। इस पर 'वाभ्रव्य' और भी क्रोध में आ गया और राजा को नष्ट करने के लिए दूसरा शाप देने को उद्यत हुआ। पर उसी समय उसके पिता यहाँ आ पहुँचे और उसे रोकते हुए समझाने लगे। पुत्र ! इस प्रकार का क्रोध अन्त में अपने लिए ही अहितकारी होता है। ब्राह्मण का धर्म तो शांति ही है और उसी से लोक तथा परलोक में उसका कल्याण होता है ।१२-१३। इससे तपस्या, आयु, ज्ञान और धन का नाश होता है। क्रोध के वशीभूत होने वाला धर्म, अर्थ, काम मोक्ष से वंचित हो जाता है ।१४-१५।

यदिराज्ञाहतोधेनुपियांविज्ञानिनासता ।
युक्तमत्रदयाकर्तुमात्मनोहितबोधिना ।१६
अथवाऽजानताधेनुरियव्यापादितामम ।
कत्प्रथशापयोग्योऽयैदुष्टनास्यमनोयतः ।१७
आत्मनोहितमन्विच्छन्बाधतेयोऽपरंनरः ।
कर्तव्यामूढविज्ञानेदयातत्रदयालभिः ।१८

अज्ञानत:कृतेदण्डपातयन्तिवधायदि ।
बुधेज्यस्तमहृअन्येवरमज्ञानिनोनरा: ।१९
नाद्यशापस्त्वयादेय:पार्थिवस्यास्यपुत्रक ।
स्वकर्मवपतितागौरेषाद:खमृत्युना ।२०
पृषघ्रोऽपिमुने:पत्रंप्रणम्यानम्रकन्धर: ।
प्रसीदेतिजगासोच्चैरज्ञानाद्घातितेतिति च ।२१
भयागवयबुद्धयागौरवध्याघातितामुने ।
अज्ञानाद्धोमधेनुस्तेप्रसीदत्वंचनोमुने ।२२

ऋषि ने फिर कहा–हे पुत्र ! अगर राजा ने गाय का वध जान कर किया है तो अपना हित चाहने वाले को इन पर दया ही करनी चाहिए। यदि यह कार्य अनजान में भूलवश हो गया तो शाप देने का कोई कारण हो ही नहीं सकता; क्योंकि मन में किसी प्रकार पाप की भावना नहीं होती ।१५-१७। दयालु पुरुष तो उन व्यक्तियों का भी अहित नहीं करते जो जानबूझकर उनके दुःख का कारण होते हैं, फिर भूल से होने वाले अपराध पर दण्ड देना तो अज्ञानियों के लिये भी अनुचित है ।१८-१९। मैं जानता हूं कि अपने भाग्यवश ही दुर्घटना में ग्रस्त हुई हैं उनके लिये राजा को शाप देना उचित नहीं ।२०। राजा ने भी ऋषि पुत्र के सम्मुख मस्तक झुकाकर प्रार्थना की–हे मुनिश्रेष्ठ ! प्रसन्न होइये, मैंने भूल से ही इस धेनु पर बाण चलाया था। अतएव आप क्रोध को त्यागकर मुझे क्षमा करें ।२१-२२।

आजन्मनोमहीपालनमयाव्याहृतंमृषा ।
क्रोधश्चाद्यमहाभागनान्यथामेकदाचन ।२३
तन्नाहमेनंषक्नोमिशापंकर्तुंनृपान्यथा ।
यस्तेसमुद्यत शापोद्विनीय:सनिवर्तित: ।२४
इत्युक्तवन्तंतंवालमादायसपितातत: ।
जगामस्वाश्रमंसोऽपिपृषध्र शूद्रतामगात ।२५

ऋषि ने कहा—राजन् ! मैंने आज तक कभी मिथ्याभाषण नहीं किया इसलिये मेरे मुख से जो वचन निकल चुका था वह अब मिट नहीं सकता । पर मैं आपको जो दूसरा शाप देने वाला था उससे अब विरत होता हूँ । ऋषि पुत्र का यह कथन सुनकर मुनि उसे आश्रम के भीतर लिवा ले गये और वृषघ्र भी शूद्रत्व को प्राप्त हो गया ।२१-२४।

१०१—नाभागोपाख्यान [१]

कारुषा:क्षत्रिया शूरा:करुषस्याभवन्सुता: ।
तेतुसप्तशतवीरा तेभ्य चान्येसहस्रश: ।१
दिष्टपत्रस्तूनाभाग: स्थित: प्रथमयोवने ।
ददर्शवैश्यतनयामतीवसुमनोहराम् ।२
अस्यांसद्दष्टमात्रायांमदनाक्षिप्तमानस: ।
यभुवभूपतनयोनि:श्वासादापतत्पर: ।३
तस्या सगत्वाजनकवप्रेतांवै: यकन्यकाम ।
ततोऽनगपराधीनभोवृत्तिनृपात्मजम् ।४
तचाहसपितातस्याराजपुत्र कृतांजलि: ।
विभ्यत्तस्तपितुर्विप्रप्रश्रयावनतंवच: ।५
भवन्त भुभुजोभृत्यावयव: करदायका: ।
कथंसम्बन्धमसमैरस्माभिरभिवाञ्छसि ।६

मार्कण्डेयजी ने वर्णन किया कि करुप नामक राजा के वंशज हजारों वीर उत्पन्न हुए । इसी वंश में दिष्ट नामक राजा के पुत्र 'नाभाग' ने युवावस्था में किसी समय एक परम सुन्दरी वैश्य कन्या को देखा । वह उसे देखते ही मोहासक्त हो गया और वैश्य से कन्या का विवाह अपने साथ कर देने की प्रार्थना करने लगा। इस पर वैश्य ने राजभय से भयभीत होकर हाथ जोड़कर कहा कि आप राजा हैं और हम सेवक की भाँति आपकी प्रजा है, इसलिए आप ऐसे असमान सम्बन्ध का प्रस्ताव क्यों करते हैं ।१-६।

सामर्थ्यंमानुषदेहस्यकाममोदिभि कृतम् ।
तथापिकालेतेरेवयोज्यतेमानुषवष: ।७
तथैवचोषकारायजायन्तेतस्तान्तपि ।
अन्यानिचान्येजीवन्तिभिन्नजातिमतांसताम् ।८
तथान्यान्यप्यवोस्ययानियोग्गान्तिकालत: ।
योग्यान्ययोग्यतायान्द्धिकालवश्याहियोग्यता ।९
आप्याय्यतेयच्छरोरमाहादिभिरीप्सितै: ।
कालशान्वातणाभुक्तेतदेवपरिशिष्यते ।१०
इत्थममैषाभिमतातनयादीयतांत्वया ।
अन्यथामच्छरीरस्यविपत्तिरुपलक्ष्यते ।११
परतन्त्रावयंत्वचपरतन्त्रोमहीभुज: ।
पित्रातेनाभ्यनुज्ञातस्त्वंगृहाणददाम्यहम् ।१२

राजपुत्र 'नाभाग' ने कहा कि सभी मनुष्यों के भीतर काम, क्रोध, आदि ब्रह्माजी ने ही उत्पन्न किए हैं। पर ये काम, क्रोध सदैव बने रहते हों ऐसी बात नहीं है, किसी संयोगवश वे उत्पन्न हो जाते है। ये काम, क्रोध, विभिन्न जाति के व्यक्तियों में विभिन्न प्रकार के भावों में प्रकट होते हैं, पर उनका अभाव किसी में नहीं होता और वे किसी परिस्थिति में उचित और किसी में अनुचित बन जाते हैं। उनका बुरा या अच्छा कहा जाना काल के ही आधीन है। जिस प्रकार भोजन द्वारा शरीर की वृद्धि होती है, पर यदि इनको असम में ग्रहण किया जाता है तो वह उल्टा ही नरक हो जाता है ।७-१०। इसलिए संयोगवश तुम्हारी कन्या के लिए मेरी अभिलाषा हुई है तो तुम उसे मुझे दे दो, अन्यथा मेरा अन्त हो जायगा। इस पर वैश्य ने कहा कि मुझे राज्य के अधीन रहना पड़ता और आपको भी महाराज के अनुकूल रहना है, इसलिए आगे उनकी आज्ञा ले लें, मैं कन्या का विवाह कर दूँगा ।११-१२।

प्रष्टव्या: सर्वकार्येषुगुरवोरवर्तिभि: ।
नवीदृशे व कार्येषुगुरूणांवाक्यगोचर: ।१३

क्वमन्मथकथालापोगुरूणाश्रवणांक्वच ।
विरुद्धमेतुदन्यंत्रप्रष्टव्यागुरवीनृभिः ।।१४
एवमेतत्स्मेरालापस्तवातं पृच्छमागुरुम् ।
अहुपृच्छामिनालापोममकामकथाश्रय ।१५
इत्युक्त सोऽभवन्मौनीराजपुत्रः सचापितत् ।
तत्पित्रेसर्वमाचष्टराराजपुत्रस्ययन्मतम् ।१६
ततस्तस्यपितापिताविप्रानृचीकादीन्द्विजोत्तमात् ।
श्रवेश्वराजपुत्रंचयणाखनन्यवेदयन् ।।१७
निन्त्रेचचततःप्राहमुनोनेवव्यवस्थिते ।
यत्कर्तव्यतदादेष्टुमर्हन्तिद्विजोत्तमाः ।१८
राजपुत्रनुरागस्तेयद्य यांवैश्यन्ततौ ।
तदस्तुधर्मएवैषकिन्तुन्यायक्रमेणसः ।१९
मूर्धाभिषिक्ततनयापाणिग्रहोत्सवः पुरा ।
भवत्वनन्तरंचेयतवभार्याभविष्यति ।२०
एवंनदोषोभवति त थेमामुषभुञ्जतः ।
अन्वधाऽस्तेतितेजातिरुष्कृष्टावालकानयात् ।२१

राजपुत्र ने कहा कि यद्यपि मनुष्यों को गुरुजनों की इच्छानुसार चलना चाहिए और सभी विषयों में उनकी आज्ञा लेनी चाहिए, पर यह बिषय ऐसा है जिसे उनके सम्मुख प्रकट नहीं किया जा सकता। कहाँ तो गुरुजनों का पद और महत्व और कहाँ यह काम कथा का वर्णन। इन दोनों बातों में कोई मेल नहीं, इसलिए इस बात को उनके सामने नहीं कह सकता। वैश्य ने कहा—ठीक है, इस सम्बन्ध में गुरुजनों की आज्ञा लेना काम कथा होगी, पर यदि मैं इस सबन्ध में चर्चा करू तो वह काम-कथा नहीं मानी जायगी ।१३-१४। इस बात पर राजकुमार निरुत्तर हो गया और वैश्य ने सब वृत्तान्त राजा के समक्ष जाकर निवेदन किया। राजा ने अपने पुत्र तथा ऋचीक आदि कर्मतत्त्ववेत्ताओं के सामने बुलाकर समस्त हाल कह सुनाया और पूछा कि इस विषय में आप क्या

निर्णय करते हैं ? ऋषियों ने कहा—राजकुमार ! यदि आप वैश्य कन्या पर आसक्त हो गये हैं तो इसमें कोई बड़ा अधर्म नहीं हैं, पर इसका न्यायोचित मार्ग यह है कि पहले आप किसी स्वजातीय कन्या का पाणिग्रहण कर लें, जो राजमहिषी के पद पर अभिषिक्त हो सके, उसके पश्चात इस वैश्य कन्या को भी अपनी पत्नी बनायें। इस प्रकार वैश्य कन्या से विवाह करने से किसी प्रकार का दोष नहीं होगा अन्यथा हीन वर्ग की कन्या से सम्बन्ध हो जाने पर आपको भी उसी जाति का हो जाना पड़ेगा।१६-२१।

इत्युक्तास्तदपास्यैववचस्तेषांमहात्मनाम् ।
विनिष्क्रम्यगृहीत्वातामुद्यतासिरथाब्रवीत् ।२२
राक्षसेनविवाहेनमयावै यसुताहृता ।
यस्यसामर्थ्यमत्रास्तिसएतांमोचयत्विति ।२३
ततः सवैश्यस्तांदुष्ट्वागृहीतांतनयांद्रुतम् ।
त्राहीतिपतिपतस्तयोश्शरणद्विज ।२४
ततस्त यपिताक्रुद्धरादिदेशवलमहत् ।
हन्यतांहन्यतांदुष्टोनाभागोधर्मदूषकः ।२५
ततस्तद्युयुधेसैन्यतेनभ्रभृत्सतेनवै ।
कृपा त्रेणतदास्शेणतत्प्राचुर्येणपतितम् ।२६
सश्रुत्वानिहतंसैन्यंराजपुत्रेणभूपतिः ।
स्वयंमेवयौयोद्धुंस्वसैन्यपरिवारितः ।२७
तसोयुद्धमभूत यभूभुलः वसुतेनयत् ।
राजपुत्रैलशम्त्राम्त्रैम्तत्रातिशयितपिता ।२८
ततोऽन्तरिक्षादागस्यपरिव्राटसहसामुनिः ।
प्रच्यवाचमहीपालविरमावेतिसयगात् ।२९
त्वापुत्रस्यमहाभागविधर्मोऽवमहात्मनः ।
तबापिवंश्येनसहनयुद्धंधर्मवन्नुप ।३०

यद्यपि इस प्रकार ऋषियों ने राजपुत्र को बहुत समझाया, पर यह मार्ग उसे पसन्द न आया और उसने बाहर आकर वैश्य कन्या को पकड़ लिया और तलवार निकालकर कहा कि मैं इसके साथ बलपूर्वक राक्षस विवाह करता हूँ जिसकी सामर्थ्य हो वह इसे मुझसे छुड़ावे। वैश्य यह देखकर भागा हुआ राजा के पास गया और रक्षा करो यह कहकर पुकारने लगा। इस पर क्रोधित होकर राजा ने आज्ञा दी 'इस अधर्मी अभागे को शीघ्र ही मारो।' राजा की आज्ञा पाकर सेना 'नाभाग के साथ लड़ने लगी, पर उसने अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग करके उसे शीघ्र ही हरा दिया। सेना के पराभव का वृत्तान्त सुनकर राजा उससे लडने आया और संघर्ष होने पर 'नाभाग' को दबा दिया। पर उसी समय आकाश मार्ग से नारद मुनि का वहाँ पर आगमन हुआ और उन्होंने राजादिष्ट से कहा—महाराज ! अब आप द्वन्द युद्ध बन्द कर दीजिए। आपका यह पुत्र अपने वर्ण से पतित होकर वैश्य हो गया है, इसलिए उसके साथ आपका युद्ध करना धर्म संगत नहीं है ।२२-३०

ब्राह्मण्यांब्राह्मणःतूर्वंकुर्वन्दासपरिग्रहम् ।
ब्राह्मण्याप्सर्ववर्णेषुनहानिमुपगच्छति ।३१
तथैवक्षत्रियसतांक्षत्रियःपूर्वसुदहन् ।
इतरेचततोराजंश्चवतेनस्वधर्मतः ।३२
पूर्ववैश्यस्थावैश्यांपश्चाच्छूद्रकुलद्भवामि ।
महीयतेवैश्यकुलादयन्यायः क्रमोवितः ।३३
ब्राह्मणाक्षत्रियवैश्याःसवर्णाप्राणिसंहम् ।
अकृत्वांऽत्यभवापाणे पतन्तिनृपसंग्रहम् ।३४
यस्यायस्याहिहनायाः कुरुतेपाणिसंग्रहम् ।
अकृत्वावर्णसयोग सोऽपितद्वर्णभाग्भवेत् ।३५
सोऽयंवैश्यत्वमापन्नस्तवपृत्रषगन्दधीः ।
नास्याधिकारीयुद्धयक्षत्रियेणत्वयासह ।३६
ययमेतन्नजानीमःकारणनृपनन्दन ।
यथाभविष्यतीदचनिवर्त्तरण कर्मतः ।३७

नारदजी ने कहा—शास्त्र का यह विधान है कि यदि ब्राह्मण पहले ब्राह्मण स्त्री से विवाह करके उसके पश्चात् तीनों वर्ण में से किसी भी वर्ण की स्त्री को ग्रहण करे तो उसका ब्राह्मणत्व नष्ट नहीं होता। इसी प्रकार क्षत्रिय अगर पहले अपने वर्ण की कन्या से विवाह करने के पश्चात् शूद्र कन्या से विवाह कर ले तो वैश्यकुल से भ्रष्ट नहीं होता पर किसी भी वर्ग का व्यक्ति यदि प्रथम अपने वर्ण की कन्या से विवाह किए बिना दूसरे वर्ण की कन्या से विवाह कर लेता है। सर्व प्रथम सवर्णा का हो जाता है जिस वर्ण की वह कन्या होती है। सर्व प्रथम सवर्णा कन्या से विवाह न करने के कारण वह पिता के उत्तराधिकार का पात्र भी नहीं माना जाता। इस नियम के अनुसार आपका यह मन्द बुद्धि पुत्र वैश्यत्व को प्राप्त हो गया और आप क्षत्रिय हैं, इससे आप दोनों का युद्ध उपयुक्त नहीं आगे उसका क्या परिणाम होगा यह तो नहीं कहा जा सकता। पर अब आप युद्ध बन्द कर दें।३१-३७।

—०—

१०२—नाभागोपाख्यान [२]

निवृत्तौसौततोभूपः संग्रामात्स्वमुतेनवै ।
उपयेमेचतांवैश्यतनयांसोऽपितत्सुतः ।१

ततःसवैश्यतांप्राप्तसमुतेत्याहपार्थिवम् ।
भूपालन्यमयाकायतत्समादित तांमम् ।२

धर्माधिकरणेयुक्तावाभ्रव्यद्या तपस्विनः ।
यदस्यकर्मधर्मयितद्वदतुतधांचर ।३

ततस्तेमुनस्यतस्यपाशुपाल्यंतथाकृषिम् ।
वाणिज्यं चयषंधर्ममाचचख्युः सभासदः ।४
तथैवचक्रेससुतस्तस्यराज्ञोयणोदितम् ।
तेधैमंवादिभिधर्मच्यतस्यनिर्जमतः ।५

मस्यपु स्ततोजातोनाम्नाख्यांतोभलन्दनः ।
समात्राप्रहितोगच्छद्गोपालोभवपुत्रक ।६
मांत्रातथानियुक्तोऽथप्रणितत्यस्वमातरम् ।
राजर्षिमगमन्नीपं हिमवत्पर्वताश्रयम् ।७

इस प्रकार नारदजी के समझाने पर राजा ने युद्ध बन्द कर दिया और नाभाग भी वैश्य कन्या से विवाह करके वैश्यत्व को प्राप्त हो गया फिर वह राजा के पास गया और पूछा—महाराज ! अब मैं क्या काम करके जीवन निर्वाह करूँ उसका आदेश दें ।' राजा ने कहा कि वाभ्रव्य आदि जो ऋषिगण धर्माधिकार का निर्णय करते हैं, उससे पूछकर जैसा यह बतलावें तदनुसार आचरण करो । तब उन धर्माधिकारी मुनियों ने कहा—खेती, पशुपालन और व्यापार ही वैश्य के लिए निहित धर्म है । राजपुत्र नाभाग ने इस निर्णय को स्वीकार किया और वैश्य कर्मों का आचरण करके निर्वाह करने लगा ।१-५। यथा समय उनके भलन्दन नामक पुत्र हुआ । उसके बड़े होने पर माता ने आदेश दिया पुत्र ! गोपाल होओ' अर्थात् गौ पालने का कार्य करो । पर गौ का अर्थ पृथ्वी भी होता है और भलन्दन ने उसी धर्म को ग्रहण किया । वह हिमालय निवासी नीप नामक राजर्षि की सेवा में उपस्थित हुआ ।६-७।

तंसमेत्यचजग्राहतस्तपादौयथाविधि ।
प्राणिपत्याहचैदैनं राजर्षिसभलन्दनः ।८
आदिष्टोभगवन्मात्र गोपालस्त्वंभवेतिवै ।
मयाचपालिनीयाक्ष्मातस्याः स्वीकरणंकथम् ।९
मयाहिगौः पालनीकासायदास्वीकयामवेम् ।
आक्रांतवलवाद्भिः सादायादैः पृथवोमम ।१०
तांयथाप्राप्नुयांपृथ्वीत्वप्रसादविभो ।
तथादिशकरिष्यामिमवाज्ञांप्रणतोऽस्मिते ।११
ततःसनीपीराजर्षि तस्वैनिरवशेषतः ।
भलन्दायददौब्रह्मन्नस्त्रग्राममहात्मने ।१२

प्राप्तास्त्रविद्यः सययौपितृव्यतनयान्द्विज ।
बसुरातादिकन्पुत्रनादिष्टि समहात्मना ।१३
अयाचतसराज्याघंपितृषैतामहोचित्तत् ।
तेवोचुर्वैश्यपुत्रत्वंकृथभोक्ष्यसिमेदिनीम् ।१४

भलन्दन ने राजर्षि नीप की यथा-विधि वन्दना की और कहा कि मेरी माता ने मुझे 'गोपाल' होने का आदेश दिया है। इसलिए पृथ्वी पालन मेरा कर्तव्य है। पर इस समय पृथ्वी पर मेरे अन्य कुटुम्बियों ने अधिकार कर रखा है। इसलिए आप मेरा इस प्रकार मार्ग दर्शन करें जिससे मैं पृथ्वी को प्राप्त करके उस कर्तव्य को पूर्ण कर सकूँ। राजर्षि नीप उसकी शालीनता से सन्तुष्ट हुए और उन्होंने और सम्पूर्ण अस्त्र विद्या की शिक्षा दी। इस प्रकार शक्तिशाली वन अपने पितृव्य पुत्र वसुरात् के पास गये और उनसे राज्य भाग देने को कहा। उन्होंने कहा—तुम वैश्य सन्तान हो इससे राज्यशासन के अधिकारी नहीं हो ।८-१४।

ततस्तैर्युद्धममभवद्भलन्दम्याष्मवंशजैः ।
वसुरातादिभिःक्रुद्धैःकृता त्रस्यास्त्रवर्षिभीः ।१५
अजित्वातानशेषांस्तुशस्त्रविक्षतसैनिकान् ।
सहारपृथिवीनेषांधर्मयुद्धेनधर्मवित् ।१६
सनिर्जितारिःसकलांपृथिवीराज्यंतथापितुः ।
निवेदयामासततस्तत्पिताजागृहेनच ।१७
प्रत्युवाचसनंपुत्रंभार्यायाःपुरतस्तदा ।
भलन्दराज्यमेतत्तेक्रियातापूर्वजैन्कृतम् ।१८
अहनंकृतवान्राज्यनासामर्थ्ययुतपुरा ।
वैश्यतांतुपुरस्कृत्यर्थवाज्ञाकरः पितुः ।१९
कृत्वाऽप्रीतिपितुरहवैश्यकन्यापरिग्रहात् ।
नपुण्यलोकभाग्राजायावदाभूतसंप्लवम् ।२०
यल्लध्याज्ञांमपुनस्त यपःलयामिमहीयदि ।
नास्तिमाक्षस्ततोनेनंममकल्पशतैरपि ।२१

नाचापियुक्तं त्वद्‌लाहुर्निर्जितमशानिनः ।
राज्य भोक्तुमनीशस्यदुर्बल स्येवकस्यनित् ।२२
राज्यकुरुस्वयंपुत्रदायादेभ्योविमुंगवा ।
ममाज्ञापायनशस्तंपितुर्नक्षितिपालनम् ।२३

इस पर भलन्दनने उनको युद्धके लिए आवाहन किया और अस्त्रों के प्रयोग से उनकी सेना को घायल करके राज्य पर अधिकार कर लिया । इस प्रकार भलन्दन ने समस्त राज्य जीतकर पिताके चरणोंमें अर्पण किया, पर पिता उसे ग्रहण करने को तत्पर नहीं हुए । उन्होंने कहा-हे पुत्र ! पूर्वजों द्वारा शासित इस राजका उपभोग तुम्हीं करो । मैं राज्य नहीं कर सकता ऐसी बात नहीं है, पर मैंने पिता की आज्ञा को अस्वीकार करके वैश्य कन्या से विवाह किया और इसके लिए राज्य अधिकार को त्याग दिया । अगर अब मैं राज्य का पुनः अधिकार ग्रहण करूँगा तो यह पिता की आज्ञा का उल्लंघन होगा । इस मिथ्या व्यवहार के कारण मैं और मेरे पिता प्रलय काल पर्यन्त मुक्ति लाभ नहीं कर सकेंगे ।१५-२३। वैसे भी मेरे जैसे निराकांक्षी व्यक्ति को तुम्हारे बाहुबल से जीता राज्य उपभोग करना उचित नहीं है । इसे तुम्हीं भोगों या कुटुम्बियों को ही वापस कर दो । मेरे लिए पिता की आज्ञा पालन करना ही हितकारी है ।२९-२३।

ततःप्रहस्यतद्‌भार्य्यासुप्रभानाभामिनी ।
प्रत्युवाचभर्तिभूपगृह्यतांराज्यमर्जितम् ।२४
नत्वंवैश्नानचैवाहजातावैश्यकुलेनृप ।
क्षत्रियस्त्वतथैवाहक्षत्रियाणांकुलोद्‌भव ।२५
पूर्वमासीन्महीपालः सुदेवइतिविश्रुतः ।
तस्याभूच्चसखारारराज्ञोधूम्राश्वस्यमुतोनलः ।२६
सतेनसख्यासहितोजगामाम्रवनम् ।
पत्नीभिः समरन्तुं माधवे मासिपार्थिव ।२७
ततः पानान्युनेकारिभक्ष्याणिबुभुजेतदा ।

भार्य्याभिः सहितस्ताभिस्तेनसंख्यासमन्वितः ।२८
ततः पुष्करिणीतीरेददशांतिमनोरमाम् ।
पत्नीच्यवनपुत्रस्यप्रमतेः पार्थीवात्मजाम् ।२९
सखातस्यमोमत्तोशगहेतां चद्दुर्मतिः ।
पश्यतस्तस्यराज्ञश्चताततातेतिवादिनीम् ।३०

इस वार्तालाप को सुनकर नाभाग की पत्नी सुप्रभा ने हँसते हुए कहा कि वास्तव में आप वैश्य नहीं हैं और मैं भी वैश्या नहीं हूँ, मेरा जन्म क्षत्रिय वंश में ही हुआ है। इसलिए आप खुशी से इस राज्य को ग्रहणकर सकते हैं। इसका रहस्य यह है कि मेरे पिता पूर्वकाल में सुदेव नाम के राजा थे और उनके मित्र राजा धूम्राश्व के नल नाम के राजा थे। एक दिन राजा और उनके मित्र अपनी पत्नियों सहित आमों के वन में विहार करने लगे। वहाँ वे भाँति-भाँति के खाने पीने की वस्तुएँ उपभोग करने लगे। इसके पश्चात् नल ने सरोवर के किनारे च्यवन पुत्र प्रमति की सुन्दर पत्नी को देखा जो किसी राजा की पुत्री थी। दुष्टमति नल ने उस रमणी को जाकर पकड़ लिया। इस पर वह 'रक्षा करो' 'रक्षा करो' कहकर राजा के सम्मुख रोने लगी।२४-३०।

आक्रन्दितनिशम्यैवसतस्याः प्रमतिः पतिः ।
आचगामत्वरायुक्तः किमेतदितिवव्वदन् ।३१
ततोददर्शराजानसुदेवहत्रसस्थिम् ।
गृहीतांचतथापत्नीननेनसुदुरात्मना ।३२
ततः सुदेवप्रमतिः प्रहार्यशास्यतामिति ।
त्वंचशा ताभवद्राज्येदुष्टच्श्रायनलोनृप ।३३
तस्यार्तस्यवचः श्रुत्वासुदेवोनलंगौरवात् ।
प्राहवैश्योऽस्मिगच्छान्यक्षत्रियत्राणकाणात् ।३४
ततः सप्रमतिकुद्धाऽसौतेजसानिर्दहन्निव ।
प्रत्युवाचाथराजानवैश्योऽस्मीत्यभिभाषिणम् ।३५
एवमस्तुभवान्वैश्यः क्षत्रियः क्षतरक्षणात् ।

क्षत्रिययैर्धार्म्यतेशस्त्रंन त्तं शब्दोभवेदिति: ।
सत्वनक्षत्रियोभावीवैश्याएवकुलाधम: ।३६

उधर से महर्षि प्रमति भी क्या हुआ ?' कहते हुए शीघ्रता पूर्वक वहाँ आये । प्रमति ने सुदेव से कहा कि आप इसे रोकिए क्योंकि आप ही यहाँ के शासक हैं और ऐसे कार्य को रोकना आपका कर्तव्य है । प्रमति के इस प्रकार विनीत वचन राजा सुदेव अपने मित्र की सम्मान रक्षा के विचार से बोले—मैं तो वैश्य हूँ आप किसी क्षत्रिय के सम्मुख जाकर रक्षा की प्रार्थना कीजिये ।' सुदेव की इस तरह की बात सुनकर प्रमति को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने कहा—तथास्तु तुम सचमुच वैश्य हो जाओगे, क्योंकि क्षत्रियों की उत्पत्ति तो अन्यान्य-पीड़ितों की रक्षा के लिए ही की गई हैं । क्षत्रिय इसलिए शस्त्र धारण करते हैं कि कोई व्यक्ति अन्याय से पीड़ित न हो । इस धर्म का पालन न करने से तुम क्षत्रिय नहीं रह सकते और वैश्य ही हो गये ।३१-३६।

कृपावती उपाख्यान

तस्मैदत्त्वात: शापांनलक्रुद्धोऽब्रवीद्विज ।
प्रमतिर्भार्गव: कोपांत्त्रैलोक्यंनिर्दहन्निव ।१
मन्दान्मतोभार्य्याभवानत्रममाश्रमे ।
बलाद्गृह्णातिभस्मत्वतस्यादव्रजतुमाचरम् ।२
तेनोदाहृतमात्रेचवाक्येमर्स्मिदानल: ।
देहजेनाग्निनासद्योभस्मपुञ्ज तदाऽभवत् ।
दृष्ट्वाप्रभावततस्यसुदेवीविरदस्तत: ।
प्रणामनभ्र प्राहेदक्षम्यतांक्षम्यतामिति ।४
यदुक्तवांस्तत्वाँभगवन्मुरापानपदाकुलम् ।
तत्क्षम्यताप्रसीदत्वंझपोऽयंवनिवर्न्यतान् ।५
एवंप्रसादितस्तेनप्रमति: प्राहभार्गव: ।
गतकोपानलेदग्धेनानीतेरचेतसा ।६

नात्यथाभावितद्वाक्यंयन्मयासमुदीरितम् ।
बथापितेकरिष्यामप्रसन्नोऽनुग्रहपरम् ।७

इस प्रकार सुदेव को शाप देकर प्रमति ने अत्यन्त क्रोधित होकर नल से कहा—कि जब तूने उन्मत्त होकर मेरे आश्रम में मेरी पत्नी को जवर्दस्ती पकड़ लिया तो तू तुरन्त भस्म हो जा ! यह वचन मुँहसे निकालते ही नल के देह में भयंकर ज्वाला प्रकट हुई और वह तुरन्त भस्म हो गया। प्रमति का ऐसा प्रभाव देखकर सुदेव की मत्तता दूर हो गई और वह बार-बार प्रणाम करके कहने लगे भगवान् ! क्षमा करो। मद्यपान के दूषित प्रभाव के कारण मैंने जो वक-झक की उसके लिए क्षमा प्रदान करें और शाप से मुझे मुक्त करें। राजाके इस प्रकार विनय करने और बल के नष्ट हो जाने से प्रमति का क्रोध शान्त हुआ और उन्होंने कहा--जो वाक्य मेरे मुख से निकल चुके थे अब मिट नहीं सकते, तो भी आपकी प्रार्थना पर कुछ अनुग्रह कर सकता हूँ।१-७।

भवितादेश्यजातोयोवान्नस्त्यत्रसंशयः ।
भविताक्षत्रियोवश्यस्तस्मिन्नेवाशुजन्मनि ।८
ग्रहीष्यतिबलात्कन्यांयदातेक्षत्रसम्भवः ।
तदात्वंक्षत्रियोवश्यगृहीतोभविष्यसि ।९
एवसर्वैष्योभूपालसु वाऽस्मत्पिताभवत् ।
अहचयामहाभागतत्सवश्रयतांत्वया ।१०
सुरथोनामराजर्षिः प्रागासीगन्धमादने ।
तपस्वीनियताहानस्त्यक्तसंगीवनाश्रयः ।११
ततः श्येनमुखभ्रष्टांदृष्ट्वैकांसारिकांधुविः ।
कृपाऽभूज्जतितामूर्च्छातिधातस्यमहात्मनः ।१२
ततोमूर्च्छावसानेतस्योत्शन्नाशरीरतः ।
समांदृष्टाचग्राहस्नेहमानेनचेतसा ।१३

यष्मात्कृपाभिभूतस्यममजातेय मात्मजा ।
स्मात्कृपावतीनाम्ना भविष्यप्यहास प्रभो ।१४

प्रमति ने कहा—आपको कुछ काल के लिए वैश्य तो अवश्य होना पड़ेगा पर जब कोई क्षत्रिय राजकुमार आपकी कन्या को बल पूर्वक पत्नी बनायेगा तो आप इसी जन्म में पुनः क्षत्रिय हो जायेंगे । इस प्रकार घटनावश मेरे पिता को वैश्य होना पड़ा था । मैं भी ऐसी ही अन्य घटनावश वैश्य के घर उत्पन्न हुई थी । कुछ काल पूर्व गन्धमादन पर्वत के समीप सुरथ नाम के राजा वन में रहकर तपस्या करते थे । एक दिन उन्होने बाज के मुख से पृथ्वी पर गिरी सारिका को छटपटाते देखा तो वे दुःख के मारे मूर्छित हो गये। मूर्छा दूर होने पर भी उन्हीं के शरीरमें उत्पन्न हुई । उन्होंने मुझे देखकर बड़ास्नेह किया और कहा कि इस कन्या का आविर्भाव मेरे कृपाभिभूत होने से हुआ है,इस प्रकार इसका नाम 'कृपावती' ही होगा ।८-१४।

ततोऽहमाश्रमेतस्यवर्धनादिवाविशनम् ।
सखीभिः सहतुल्माभिर्विचरामिवनानिषु ।
ततोमुनेरगस्तस्यभ्रातागस्त्इतिश्रुतः ।१५
सचिन्सुकानतेवन्य सखीभिकोपितोऽशपत् ।१६
यस्मान्माँवैश्यइत्याहभगवतीतेनपे ।
वैश्याभशिष्यसीत्युक्ते प्रसादद्योक्नोमयामुनिः ।
नापरांधंकृतवतीतवहद्विजसत्तम ।
अन्यासामपराधेकिमर्थंशप्तवानसिः ।१७
दुष्टतांदुष्टसर्गाद्दुष्टत्वमपिगच्छति ।
सुराबिन्दुनिपातेनपञ्चगव्यघटोयथा ।१८
प्रणिपत्यह्यानिष्टौपियत्वयाहवसादितः ।
तस्मादग्रह बालेश्शृणुष्वचकरोम्यहम् ।१९
वैश्ययौनीय दाजातात्तंपुत्रवाधयिष्यसि ।
राज्यायजातिस्वरतांतदान्वसमवाप्स्यसि ।२०

ततोभूयः क्षत्रजातिप्राप्यात्वपतिनासह ।
दिव्यानवाप्स्यसेभोगान्गच्छभीतरवैतुते ।२१

गवशप्तास्ति राजेन्द्रतेनपूर्वमर्षिणा ।
पितः चमेभक्तः प्रमातिनाऽभवत् ।२२

एववैश्योनराजस्त्वनचवैश्यः पितामम् ।
नत्वहिमयि संस्थ्विदुष्टोदुष्यसेकथम ।२३

सुप्रभा ने कहा—मैं उन्हीं राजर्षि के आश्रम में रहकर पलने लगी और बड़ी होने पर समान वयस्कों सखियों के साथ विचरण करने लगी। वहाँ एक दिन अगस्त्य मुनि के भ्राता पुष्प बीन रहे थे । उन्हें देखकर मेरी सखियों ने उन्हें चिढ़ाया, जिस पर क्रोधितहोकर उन्होंने मुझे शाप दिया है कि तुमने मुझको वैश्य कहकर चिढ़ाया है, इसलिए वैश्य की ही कन्या हो जायगी ।' इस शाप को सुनकर व्यथित होकर मैंने कहा-'हे महामुने ! मैंने तो आपसे कुछ बुरा नहीं कहा, अन्य सखियों के दोष के कारण मुझे शाप क्यों देते हैं ।' ऋषि ने कहा—जिस प्रकार पंचगव्य से पूर्ण पवित्र घट एक बूँद सुरा के पड़ जाने से दूषित हो जाता है उसी प्रकार निर्दोष व्यक्ति भी दुष्टों के संग रहने से दूषित हो जाता है । पर अब तेरी विनय सुनकर मैं तुझ पर यह अनुग्रह करता हूँ कि वैश्य वर्ण में उत्पन्न होने के पश्चात् जब तू अपने पुत्र को राज्य ग्रहण करने का उपदेश देगी तो तुझे अपनी पूर्ण जाति का स्मरण हो जायगा और पति के संग क्षत्रियत्व को प्राप्त कर दिव्य भोगों की अधिकारिणी होगी । इसलिए अब तू भय त्यागकर अपने आश्रम में निवास कर ।१५-२१। हे राजेन्द्र ! इस प्रकार ऋषि के शाप के कारण मैं वैश्य योनि को प्राप्त हुई थी और मेरे पिताभी महर्षि प्रमतिके शाप वश वैश्य हो गये थे । वस्तुतः आप वे मेरे पिता कोई नहीं हैं और इस कारण मेरे साथ सम्पर्क होने से आपका वैश्य होना भी निराधार है ।२२-२३।

१०३ [क] भलन्दन वत्सप्रीति चरित्र

इति यावच: श्रुत्वपुत्रस्यसचपार्थिव: ।
पुन: प्रोवाचधर्मश्रस्तांपत्नीतमयतथा ।१
यन्मयापितुरादेशात्यक्त राज्यंतत्पुन: ।
ग्रहीष्यापिवृथोक्तेनकिमात्मक्लिश्ययेत्व ।२
अर्हतेसम्प्रास्यामिकरंवैश्यव्रतेस्थित: ।
भुश्वराज्येनशेषन्वमिच्छयावापरित्यज ।३
इत्यक्तु सतदापित्राराजपुत्रोभलन्दन: ।
चकारराज्यंधर्मेचतद्वद्दारपरिग्रहम् ।
अव्याहततस्यचक्रं पृथिव्यामभवेद्द्विज ।
नचाधर्मेमनोभूपास्तस्यसर्वेऽभवन्वशे ।५
तेनेष्टोविधिवद्यज्ञसम्ष्ठक्शास्तिवसुन्धराम् ।
सएशैकोऽभवदभर्त्तापृथिव्यामरिशासन ।६

पत्नी और पुत्र की बात सुनकर नाभाग ने उत्तर दिया कि चाहे जो कुछ हो, पर जिस राज्य को मैंने पिता की आज्ञानुसार एक बार त्याग दिया तो अब उसे फिर ग्रहण करके अपनी प्रतिज्ञा को भंग नहीं कर सकता । अब तुम्हीं इस राज्यके अधिकारी बनो और चाहोतो दूसरों के लिये छोड़ दो, मैं तो वैश्यवृत्ति में रहकर राजा का कर देता रहूँगा इस प्रकार पिता की आज्ञा पाकर भलन्दन राजा शासन करने लगे और यथा समय विवाह करके गृहस्थ बने । राजा भलन्दन बड़े प्रतापी थे और उनका रथ पृथ्वी पर सर्वत्र भ्रमण करता था वे कभी अधर्म मार्ग पर अग्रसर नहीं हुए, इसलिये सब राजा उनके अनुगामी बन गये । वे राज्य धर्मानुसार यज्ञानुष्ठान करते और प्रजाका पूर्ण कर्त्तव्य परायणता से पालन करते थे और उन्हें सर्वत्र एक अद्वितीय शासक माना गया ।१-६।

अजायतरुत तत्यवत्प्रीतिस्तुनामत ।
पितातिशयित्तोयेनतगुणौग्रेनमहात्मना ।७

तस्यापिभार्य्यासौनन्दाविदूरथसुताऽभवन् ।
पतिव्रतामहाभागासाप्राप्तातेनशौर्य्यतः ।
हत्वापुरन्दररिपुं कुजृम्भंदितिजेश्वरम् ।८
भगवस्तेनसप्राप्ताकुजृम्भंनिधनात्कथम् ।
एतदाख्यारमाख्याहिप्रसन्नेनान्तरात्मना ।९
विदूरथोनामनृपः ख्यातकीर्तिरभूदभुवि ।
तस्यपुत्रद्वयजातंसुनीतिः सुमतिस्तथा ।१०
एकदातुवनयातोमृगयांसविदूरथः ।
ददर्शतंसुमहद्भूमेर्मुखाभवोद्गतम् ।११
तंदृष्ट्वाचिन्तयामासनिमेतदितिभैरवम् ।
पातालविवरमन्येनेतम्भूमेश्चरन्तरम् ।१२
चिन्तयन्नितित्रत्रासोददर्शविजनेवने ।
ब्राह्मणसुव्रतंनामतपस्विनमुपागतम् ।१३

मार्कण्डेयजी कहने लगे—महाराज भलन्दन के पुत्र वत्सप्रीति हुए जिन्होंने अपने गुणों से पिता की कीर्ति को और बढ़ाया । वत्सप्रीति का विवाह विदूरथ की कन्या 'सौनन्दा' से हुआ था और उन्होंने इन्द्र के शत्रु कुजृम्भ' नामक दैत्य पति को मार कर उसे प्राप्त था । यह सुनकर क्रौष्टुकि ने पूछा 'भगवान् ! वत्सप्रीति का आख्यान बतलाइये कि उसने किस प्रकार कुजृम्भ से सौनन्दा को छुड़ाया ।' मार्कण्डेयजी ने कहा—विदूरथ एक बड़े प्रतापशील और प्रसिद्ध नरेश थे । उनके सुनीति और सुमति नामक दो पुत्र थे । एक दिन राजा ने वन में शिकार के लिये भ्रमण करते हुए एक अथाह गढ़ा देखा । उन्होंने विचार किया कि यह कैसे उत्पन्न हो गया । सम्भवतः यह पाताल लोक का मार्ग है ।' उसी समय वहाँ उनको सुव्रत नामके एक तपस्वी ब्राह्मण दिखाई दिये ।८-१३।

सतंपप्रच्छचनृपः किमेतदितिविस्मतः ।
अतिगंभीरमबनेर्दर्शितांतर्गतदरम् ।१४

किन्नवेत्सिमहीपालवागर्थस्त्यहिमेततः।
ज्ञेय सवनरे द्रणवचचेयन्महीतते ।१५
दानवसृससावीर्ष्योवसत्युग्रोरसातवे ।
सजृम्भयतिष्पुत्राकुजृम्भः प्राच्यतेततः ।१६
क्रिययेतेनयत्किचद्ररत्नभूतमहीतले ।
त्रिदेवेवानरप्रेतकथवेत्तिनोभवान् ।१७
सुनन्दनाममशलत्त्वष्ट्रायन्निर्वितपुरा ।
तज्जहारसदुष्टात्तेनहन्तिरद्यरितूत ।१८
पातालन्तगस्तेनभिनत्तिबसुधासिमाम् ।
ततोऽसुराणांसर्वेषांद्वाररणिक्रु तसूरः ।१९
थेनभिन्नायवसुधासुनन्दमुशलेनतु ।
भोक्ष्यतेवसुधामेतांतमयित्वाकथभवान् ।२०
यज्ञान्विध्वसयत्युग्रादेवायासुपरोधकः ।
आप्ययपयतिदैतेतान्सवलीशलायुधः ।२१

राजा ने उनको वह दिखाकर पूछा कि यह क्या है ? तपस्वी ने कहा कि क्या आप इसे नहीं जानते ? राजा को तो अभी विशेष बातों का पता अवश्य रखना चाहिए। अब मैं आपको इसका सब वृत्तान्त बतलाता हूँ। रसातल में एक बहुत बलवान् दैत्य रहता है। जिसको 'कुजृम्भ' कहते हैं क्योंकि वह समस्त पृथ्वी को जंभाई लिवाता है। पृथ्वी और स्वर्ग के प्राणी मात्र का जभाई लेना उसी के कारण होता है। प्राचीन समय में विश्वकर्मा ने 'सुनन्द' नाम का जो 'मूसल' (अस्त्र) बनाया था। यह दुष्ट राक्षस उसी को लेकर युद्ध में शत्रु को मारता और पृथ्वीको भेदकर रसातल का मार्ग भी बना देता है जिससे अन्य दानव भीतर जा सकें। उस सुनन्द मूसल से ही उसने यह विचार बना दिया है, वह शक्तिशाली दैत्य उस 'मूसल' के द्वारा अजेय बन-कर यज्ञ और देवताओं को नष्ट करता रहता है और दैत्यों की मनो-वांछा पूर्ण करता है।१४-२१।

यद्यरिंघातयस्येनंपालान्तरगोचरम् ।
ततः समस्तवसुधासतिस्त्वंपरमेश्वरः ।२२
मुशलन्तस्यवलिनः सौनन्दंप्रोच्यतेजनैः ।
तथाबलावलचैवतंवदन्तिविचक्षणः ।२३
तत्तु निर्वीर्य्यतांयातिस्पृष्टयोषितानृपः ।
तस्मिन्दिनेद्वितीऽह्निवीर्य्यवत्तदुदीय्यते ।२४
नसतेत्तिदराचारः प्रभावंमशलस्यतम ।
योषित्कराग्रसंस्पर्शंदौशवीर्य्यविशानम् ।२५
एवतस्यवलभपदानवस्यदुरात्मनः ।
मशलस्यचतेप्रोक्त यद्युक्त तत्समाचारः ।२६
आसन्नमेतद्भवतापुरस्यपृथिवीपते ।
कृतनेनमहारध्रनिश्चिन्तः किंभवान्यथा ।२७

ऋषि ने फिर कहा—आप अब रसातल में रहने वाले इस दानव पर विजय प्राप्त कर सकेंगे तभी पृथ्वी के सच्चे अधीश्वर बन सकेंगे। सर्वसाधारण में इस मुसल का नाम 'सौनन्द' प्रसिद्ध है और जानकर व्यक्ति उसके सम्बन्ध में कहते हैं कि जिन दिन 'मुसल' स्त्री के हाथ से छू लिया जाय उस दिन उसकी शक्ति जाती रहती है पर दूसरे दिन वह पूर्ववत् हो जाता है। वह दानव मूसल की यह विशेषता और स्त्री के हाथ से छूजाने से उसकी शक्ति नष्टहो जाने की बात नहीं जानता। अब मैंने उस दुष्ट दानवका और मूसल का सब स्वरूप आपको दिया। आपका कर्तव्यहै कि इस विषय में निश्चित न रहकर दैत्यको नष्ट करने का उपाय करें क्योंकि उसने एक पाताल मार्ग आपके नगर के समीप ही बनाया है।२२-२७।

इत्युक्तवागतेतस्मिन्पुवंगत्वामहीपतिः ।
मन्त्रयामासमावज्ञैः पुरमध्येतुमन्त्रिभिः ।२८
यथाश्रुतमतृषत्तकथयामासमन्त्रिणाम् ।
मुशलस्य प्रभावाच्चवीर्य्यशमनमेवच ।२९

तमन्त्रक्रियमाणन्तुमन्त्रिभिस्तेनभूमृत: ।
तत्पार्श्ववर्तिनीकन्याशुश्रावायमुदावतो ।३०
तत:कतिपयाहेतुतांकन्यावयसन्विताम् ।
जहारौमवनाद्देत्या:कुजम्भ वसखीवृताम् ।३१
तच्छरूत्वासमहीपाल:क्रोधयपर्य्याकुलेत्रणा ।
पुत्राबुचात्वरितंगच्छतवरकौविदौ ।३२
निर्विन्ध्यायास्तटेगर्त्त स्तेनगत्वारसातलम् ।
सहृयतांयोऽपहर्ता मुदावत्या सुदुपति ।३३
तयस्तौतस्सृताप्राप्यंतगर्त्तं तत्पानाभुगौ ।
युयधातेकुञ्जम्भेणस्वसैन्येनातिकोपितो ।३४
तत:परिघनिस्त्रिशशक्तिशूलपरश्वधै: ।
वाणैश्चाविरतंयुद्धतयामीसीत्सुदारूणम् ।३५
ततोमालाबलवतातेनदैत्येनताभवौ ।
राजपुत्रोंरणेवद्धोनिहृताशेषसैनकौ ।३६

जब ऋषि इस प्रकार राजा को सब बातें बतलाकर चले गये तो राजा अपने नगर में वापस आये और वहाँ अपने मन्त्रियों से इसमें सलाह करने लगे। उन्होंने मूसल के प्रभाव तथा उसकी शक्ति नष्ट होने की बात मन्त्रियों को बतलाई। उस समय उनकी कन्या मुदावती भी वहीं पर बैठी सब बातें सुन रही थी। इस घटना से कुछ ही समय पीछे शीघ्र ही एक दिन जब मुदावती अपनी सखियों के साथ उपवन में गई थी कुजृम्भ दानव वहाँ आकर उसे पकड़कर ले गया। जब यह खबर राजा को मिली तो वह बड़े क्रोधित हुए और अपने दोनों पुत्रोंको बुलाकर कहा कि तुम दोनों वन-प्रदेश का हाल जानते ही हो इसलिए वहाँ जाकर निर्विन्ध्या नदी के तटवर्ती पाताल विवर में होकर कुजृम्भ दानवको मारो क्योंकि वह तुम्हारी बहिन को हर करले गया है। राजा के आदेशानुसार दोनों पुत्र उस विवर पर पहुँचे और वहाँ दानव पैरों के चिन्ह देखते हुए कुजृम्भ के निवास स्थान पर आ गये तब राजपुत्रों

की सेना का दानव की सेना के साथ घोर युद्ध हुआ जिसमें परिघ, निस्त्रिंश, शक्ति शूल फरसा और बाणों से आघात किए जाने लगे। पर दैत्य सेना ने माया बल से दोनों राजपुत्र और उनकी सब सेना को बाँध दिया।२८-३६।

तच्छ्रुत्वासमहीपालः प्राहेदसवबसैनिकान्।
वद्भपुत्रपरामर्दिसुपेतोतोमुनिसत्तप्रती।३७
तस्तंनिहत्यश्वैतेयमौचयिष्यतिधसुताम्।
तस्माहंप्रदास्थमितामेवायतयोचनाम्।३८
इत्येवघोयथाचक्रसराजास्वपुरेतदा।
निराशपुत्रस्यावन्धमोक्षायावैभृते।३६
ततः शुश्रावबत्सप्रीभलन्दनसुतोह्रितत्।
आघोष्यमाणबलवान्कुतास्त्रः शौर्य्यसंयुक्त।४०
सचागम्याविभार्य्यं नप्राहपार्थिवसत्तमम्।
विनयावनतोभूत्वापितुमित्रमनुत्तमम्।४१

जब राजा बिदूरथ ने अपने दोनों पुत्रों के बांधे जाने का समाचार पाया तो वे बड़ा दुःखी हुए और अपने सेनाध्यक्षों से उन्होंने कहा कि जो कोई दैत्यों को जीतकर मेरे पुत्रों तथा कन्या को लावेगा उसके साथ ही मैं अपनी कन्या का विवाह कर दूँगा। राजा इस विषय में बड़े निराश हो गये थे और इसीलिए उन्होंने उक्त घोषणा का ढिंढोरा अपने राज्य में पिटवा दिया। यह समाचार भलन्दन के पुत्र बत्सप्रीति को भी मिला और उसने अपने पिता के मित्र राजा बिदूरथ के पास पहुँचकर विनय पूर्वक कहा कि यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं आपके प्रताप से उस दैत्य को मारकर कन्या तथा पुत्रों को छुड़ाकर लाऊँ। ।३७-४१।

अज्ञाषयाशुमामेवचनयौमोचयामित।
तबैवतेजसात्वन्तुदैत्यहितनयाश्चते।४२
सतभूदापरिष्वज्य प्रियसख्युरथात्मजन्।
गम्यतामितिसिद्धयैवत्सेत्याहसपार्थिवः।४३

स्थानेम्धास्यविभेवत्सोद्यधकुरुतेर्ध्विधिम् ।
तत्सैतत्किपलामाग्यद्यूत्सहिततस्तव ।४४
ततः सखंगः सधनर्बद्धगोधांगुलित्राणवान् ।
जगामवीरपातालतेनगतनसत्वरः ।४५
तयोज्यास्वनमप्युग्रं मूचक्रे पाणिवात्मजः ।
येरपातातमखिलमासापूरितान्तरम् ।४६
ततोज्यास्नमाजण्यकुजृम्भोदानवेश्वरः ।
अजगन्मातिकोपेनस्वर्थैन्यपरिवारितः ।४७
ततोयुद्धमभूतस्येननपार्थिवसूतुना ।
ससैन्यस्यससैंन्येवलितोवलशालिनः ।४८
दिनानित्रोणिसयदायोचिथस्तेनदाव ।
ततः कोपपरीतात्मामुसजाभ्यधावत् ।४९

महाराज विदूरथ ने मित्रपुत्र वत्सप्रीति का हार्दिक स्वागत करते हुए कहा—हे वत्स ! यदि तुम इस कार्य को कर सकोगे तो मैं तुम्हारा मित्र पुत्र होना सार्थक समझूँगा । अतएव यदि तुम्हारे मनमें इसके लिये पूर्ण उत्साह हो तो शीघ्रातिशीघ्र इसे पूरा करने का प्रयत्न करो । तदनन्तर महावीर वत्सप्री खड्ग, धनुष, गोधा और अंगुली त्राण धारण करके शीघ्रतापूर्वक उस शिविर में घुस और वहाँ पहुँचकर अपने शक्तिशाली धनुष की प्रत्यञ्चा की टंकार भरी जिससे वह समस्त शिविर महाशब्द से परिपूर्ण हो गया । उस टंकार के घोर रव को सुनकर दानव श्रेष्ठ कुजृम्भ क्रोध से भरगया और अपनी सेना को लेकर लड़ने के लिए तैयार हो गया । राजकुमार और कुजृम्भ का युद्ध तीन दिन तक होता रहा पर तब भी वह वत्सप्रीति को जीत न सका । तब वह मूसल को लेने के लिए अपने महल में गया ।४३-४९।

गन्धैर्माल्यैस्तथाधूपः पूज्यमानः सतिष्ठति ।
अन्तः पुरेमहाभागप्रजापतिविनिर्मितः ।५०
ततोविज्ञातमुशलप्रभावासामुदावतो ।
पस्पर्शंमुशलश्रेष्ठम तनफ्राशिरोधरा ।५१

पुनर्यावत्मगृण्णातिसुशस्लंतंमहासुर: ।
तावात्सावन्दनव्याजात्स्पर्शनिकश:शुभा ।५२
ततसगत्वायुयधेमुशलेनासुरेश्वर: ।
व्यर्थामुशलपातास्तेसजग्मुस्नेपुशत्रुषु ।५३
परमात्रंतुनिवीर्येसीनन्देमुशलेमुने ।
अस्त्रेशस्त्रैश्वदैतेय:सीयुध्यतरणेऽरिणा ।५४
यस्त्रास्त्रैनंससस्तस्यराजपुत्रस्यसोऽसुर: ।
सुशलेह्वलन्तस्यतस्यच्चन्ल्यानिराकृतम् ।५५

राजा विदूरथ की कन्या जो मुदावती जो दानव के महल में कैद थी, इस मूसल के विषय में सब रहस्य अपने पिता से सुन चुकी थी इसलिए उसने उस मूसल को प्रणाम करके उसे छू लिया। जब कुजृम्भ उस मूसल को ले जाने लगा तब तके मुदावती ने पूजा के बहाने उसे बार-बार छुआ जब दानव पति उस मूसल को लेकर युद्ध क्षेत्र में लड़ने लगा तो उसका प्रहार बार-बार असफल होने लगा, क्योंकि उसकी शक्ति स्त्री के स्पर्श के कारण नष्टहो चुकीथी। यह देखकर दानव अस्त्र-शस्त्र द्वारा युद्ध करने लगा। पर अस्त्र युद्ध में प्रीति दानवकी अपेक्षा अधिक निपुण था। उसको जिस मूसलका भरोसा था वह अब चतुराई से व्यर्थ कर दिया गया था ।५०-५५।

तत:पराजित्यसभूपसुनुरस्त्राणिशस्त्राणिचदानवस्य ।
चकारसद्योविरथततश्चचमग:पुनरप्यधावत् ।५६
तमापन्तंरसाऽयुदीर्णविस्पष्टकोपंत्रिमशेन्द्रशकुम् ।
शस्त्रेणवन्हेर्भू विनाजपुत्रीजघानकालानलसप्रभेण ।५७
सपावकास्त्रेणहृदिक्षतोभृशंशत्याजदेहंत्रिशारिरात्मन: ।
वभूवसद्यश्चवसीरगाणरसातपान्तेषुमहानथोन्सव: ।५८
ततोपतत्पूष्पवृष्टिर्महीपालसतोपरि ।
जगुगन्धर्वपतयोदेववाद्यानिमस्वनुसु: ।५९
सचापिराजपूत्रस्तंहृत्वातौतनृपतसुती ।
मीजयामासतन्वंगीताञ्चकन्याप्रदावपीम् ।६०

तच्चापिमुशलमस्मिन्कुजृम्भेवनिपानिते ।
जग्राह्नागाधिपतिनन्तशेषसंद्यित: ।६१
तप्याव्श्रपरितुष्टोऽसौशेष:सर्वोरजेश्वर: ।
मुदावत्यासुदाध्वातमनोवृत्तिस्तपोधन: ।६२
सुनन्दमशलस्पर्शचच्चकारपुन:पुन: ।
योषित्करतलस्पर्शप्रभावज्ञातिशोभना ।६३
मुदावज्यास्तयोनामनागराजस्तदाकरोत् ।
सुनन्दामितिसानन्दंसौनन्दगुणजद्विज ।६४

जब वत्सप्रीतिने दानव राज के सब अस्त्र शस्त्र व्यर्थ करके उसके रथको भी नष्ट कर दियातो तलवार ढाल लेकर वत्सप्रीतिसे युद्ध करने के लिए वड़े वेग से दौड़ा पर वत्सप्रीति ने इस बीच में ही कालाग्नि के समान सुप्रकाशित आग्नेयास्त्र से मार दिया ।५६-५७। यह कुजृम्भ देवताओं तथा पातालवासी नागोंके लिये वड़ा कष्टकारक था,इससे उसके मरते ही नागगण महान उत्सव करने लगे । उस समय चारों ओर से राजपुत्र वत्सप्रीतिपर पुष्पवर्षा होने लगी । गन्धर्व गायन करने लगे और देवराज तरह तरह के वाद्य बजाने लगे । वत्सप्रीति ने दानव की कैद से राजा विदूरथके दोनों पुत्र सुनीति तथा सुमति और कन्या मुदावती को छुड़ाया । कुजृम्भ का अन्त हो जाने पर उसका मूसल नागराज अनन्त नेग्रहण किया औरवे राजकन्या-मुदावती चतुराईको जानकर बड़े प्रसन्न हुए । उसी ने मूसल को बार बार छुकर उनकी शक्ति को मिटा दिया था और इस प्रकार कुजृम्भ का नाश कराया था । उस मूसलका नाम सौनन्द होने से नागराज ने मुदावती का नाम 'सोनन्दा' रख दिया ।५८-६४।

सचापिराजपुत्रस्तांभ्रतुभ्यांसवितांपितु: ।
समीपमानिनायाशुप्रणिपत्याहचैवतम् ।६५
आनीतोतनयोतातत थैवेयंमुदावती ।
तवाज्ञयामयान्यद्यत्कर्तव्यतत्समादिश ।६६

ततःप्रहृषसंपूर्णस्तदयः समहीपतिः ।
साधुसाध्वित्यथाहोच्चैत्सवत्सेति सोभंनम् ।६७
समाजितीऽस्मिविदशैर्वत्साहकारणस्त्रिभिः ।
त्वंजामाताचयत्प्राप्तोच्चारिविनिपातितः ।६८
अगतान्यनतान्यग्नच्च पात्यानिमेपुनः ।
तद्ग्रहाणाद्यस्तेऽह्निनपाणिमस्याभयोदितम् ।६९
त्वराजपुत्रचर्वगयाः कन्यायादुतितुर्मम ।
सुमावत्यामुदायुक्तः सत्यवाक्यके व्वमाम् ।७०

तत्पश्चात् राजकुमार वत्सप्रीति ने दोनों राजकुमारों तथा कन्या को अपने साथ लाकर राजा विदूरथ की सेवामें उपस्थित किए और उनको प्रणाम करके निवेदन किया—महाराज आपकी आज्ञानुसार आपके दोनों पुत्र तथा कन्या मुदावती को कुजृम्भ को मारकर छुड़ा लाया हूँ। अब जो अन्य कोई कार्य हो तो वैसी आज्ञा दें ।६५-६६। यह सुनकर राजा बड़े प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए और बारम्बार वत्सप्रीति की सराहना करके उसे धन्यवाद देने लगे। उन्होंने कहा—आज मेरे लिए बड़ी प्रसन्नता का दिन है क्योंकि तीनों कारणों से मैं देवताओं की प्रशंसा का अधिकारी बन गया हूँ। प्रथम तो तुमको जामाता के रूप में प्राप्त किया, दूसरे ऐसा दुर्धर्ष शत्रु मारा गया और तीसरे मेरे पुत्र और कन्या सकुशल मुझे प्राप्त हो गये। इसलिये अब मैं अपनी प्रतिज्ञानुसार अपनी कन्या को तुम्हें देता हूँ। तुम उसका पाणिग्रहण करो ।६७-७०।

तातस्याज्ञामयाकायार्यापदब्रवीषिकरोमितम् ।
त्वंमेवनजानीयेवीवाधिकृतावयम् ।७१
ततस्तयोसहजेद्रव्यक्रोवैवाह्निकक्रमम् ।
मुदायत्याव्क्षदुहितुभलन्दतसुतस्थवै ।७२
ततःसहतयारेमेयत्सप्रीनंत्रयावनः ।
रमणीयषुवेशेषुप्रासामशिखरेषुचः ।७३
कालेनगच्छतावुद्धःपितातस्यभलन्दनः ।
वमंजगामबत्सप्रीः सवभूवमहीपति ।७४

इयाजयक्षसतंप्रजान्धर्मेणपलायन ।
पुत्रवत्पाल्यमानास्तुप्रजास्ढ्वनमहात्मना ।७५
ववृधुर्विषमेयस्यन चाभूद्वर्णसङ्कर: ।
नदस्युव्यायदुर्वृत्तभयापाच्चकस्यचित् ।
नोपसर्गभयचेवतस्मिन्छासतिभूपतं ।७६

राजपुत्र वत्सप्रीति ने कहा—महाराज ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है । आप जानते ही हैं कि मैं गुरुजनों की आज्ञा पालन को सदैव तत्पर रहा हूं । तब राजा विदूरथने वत्सप्रीति तथा सुदावतीका विवाह-संस्कार बड़ी धूमधाम से सम्पन्न किया । ये दोनों नवयुवा पति-पत्नी रमणीय स्थानों और महलों में प्रेमपूर्वक विहार करने लगे । कुछ समय पश्चात् वत्सप्रीति के पिता भलन्दन अधिक वृद्ध हो जाने से पुत्र को राज्य देकर बन को चले गये । वे सभी राज्य का संचालन और प्रजा का पालन बड़ी योग्यता से किया जिससे समस्त प्रजाजन निरन्तर समृद्धिशाली और सुखी होने लगे । उनके राज्य में कोई वर्णसंकर नहीं होते थे और हिंसक जन्तु दुष्ट लोगों ठगों धूर्त आदि का भय जाता रहा ।७१-७६।

१०४—खनित्र चरित्र [१]

तस्यतयस्यांसुनन्दायांपुत्राद्वादशजज्ञिरे ।
प्राशु:प्रवीर:शूरश्चासुचक्रोविक्रत: ।१
वयीवलाकश्चचण्डश्चप्रचण्डश्चसुविक्रम: ।
सुनयश्चमहाभागा:सर्वेसंग्रामजित्तमा: ।२
तेषांज्येष्ठोमसावीर्य्य:प्रांसुरासीन्नराधिप: ।
इतरेभृत्यवत्तस्यवभूवुर्वशवर्तिन: ।३
तस्ययज्ञद्विजत्यक्तैर्ननेकैर्द्रव्यराशिभि: ।
त्युनवर्णंविसृष्टंश्चसत्यनासावबुत्थरा ।४

सम्यक्पालयतस्तस्यप्रजा पुत्रानिवौनसात् :
यऽभूद्धनचय:कोशेनपिष्पादितास्तुये ।५
क्रतवशतंसहस्रास्तेतेषांसंख्यानविद्यते ।
अयुताद्येनकोदीभिर्नचपद्मादिभिर्मुने ।६

मार्कण्डेयजी ने कहा-सूर्यवंशोत्पन्न महाराज वत्सप्री के बारह पुत्र हुए थे, जिनके नाम प्राँशु, प्रवीर शूर,सुचक्र, विक्रम, क्रम, बलाक, चण्ड प्रचण्ड सुविक्रम और सुनय हुए यह सब अत्यन्त भाग्यशाली और युद्धमें विजय प्राप्तकरने वाले थे। उनमें सबसे प्राशु राज हुए और अन्यग्यारह भाई उनके अधीन भृत्य के समान रहने लगे। उनके यज्ञ करने के समय में ब्राह्मणों तथा अन्य जाति के मनुष्योंने भी धन का त्याग नहीं किया था, इसीलिए पृथिवी का नाम वसुन्धरा पड़ा। उन्होंने अपने पुत्र के समान ही प्रजा का पालन किया था उनके राजकोष में जो धन एकत्र होता था उसी धन के द्वारा सभी असंख्य यज्ञानुष्ठान सम्पन्न हुये थे। उन यज्ञों की आयुत, करोड़ अथवा पद्म आदि संख्या में गणना संभव नहीं है ।५-६।

प्रजातिस्यतस्वपुत्रोऽभूद्यस्यज्ञेशतक्रतु: ।
अवाप्यतुप्तिलांयज्ञभागै सुरै:सह ।७
दानवानांसुवीर्य्याणांजघाननवतीर्नवा ।
वलंवलिनाँश्रेष्ठोजभ्भंवासुरसत्तम् ।८
अन्याँश्चसुमहावीर्य्यानिजघानामरद्विष: ।
प्रजातेस्तनयाप चखमित्रप्रभुखामुने ।९
तेषांखनित्रोराजासूत्प्रख्यातौर्निजविक्रमै: ।
सतान्त:सत्यवाक्छूर सर्वप्राणिहितेरत: ।१०
स्वधर्माभिरतोनित्यंवृद्धसेवीबहुश्रुत: ।
वाग्मीविनयं संपन्न:कृतास्त्रोऽप्यविकत्थन: ।११
सर्वलोकप्रियोनिस्यमुवाचैतदहूर्भिशम ।
नन्दन्तूसर्वभूतानिस्निह्यन्नुबिचनेष्वपि ।१२

स्वस्त्यस्तुसर्वभूतेषुनिरातङ्कानिसन्तुघ ।
माव्याधिरस्तुभूतानामाधयचोनभवन्तुच ।१३

उन राजा प्रांशु के प्रजाति नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई, उनके यज्ञ में देवताओं के सहित इन्द्र यज्ञ भाग प्राप्त कर तृप्त हुए थे और उन्होंने अत्यन्त पराक्रमी बल और जम्भ नामक दैत्य तथा अन्य देवशत्रु असुरों का बध किया था उस राजा प्रजापति के खनित्र इत्यादि नाम वाले पाँच पुत्र हुये थे ।६-६। उन पांचों में खनित्र ही अपने बल, बीर्य से प्रसिद्ध राजा हुए, यह शान्त सत्यवक्ता, वीर, सब जीवोंका हित चिन्तन करने वाले थे ।१०। अपने धर्म में परायण, वृद्धजनों की सेवा करने वाले अनेक शास्त्रों के देखने वाले वाग्मी, अस्त्र-शस्त्र के ज्ञाता, विनयशील, अहंकार-हीन तथा सर्व लोकप्रिय थे । वह सदैव कहते रहते—सभी जीव आनन्दित रहें, विजन स्थान में स्नेह युक्त हों, सभी जीवों का कल्याण हों, सब निर्भय हों, सब की पीड़ा नष्ट हो और मनोव्यथा किसी की भी न हो ।११-१३।

मैत्रीमशेषभूतानितुष्यन्तुसकलेजने ।
शिवमस्तुद्विजातीनांप्रीतिरस्तुपरस्परम् ।१४
समृद्धि सर्ववर्णानांसिद्धिरस्तुचकर्मणाम् ।
भूलोक:सर्वभूतेषुशिवाजोऽस्तुसदामतिः ।१५
यथात्मनियथापुत्रेहितिमिच्छधसर्वदा ।
तथासमस्तभूतेषुवर्त्तध्वंहितबुद्धयः ।१६
एतद्वाहितमत्यन्तकीवाकस्याशराध्यते ।
यत्करोत्यहितंकच्चिष्कस्यचिन्मूढमानसः ।१७
तसमभ्येतितन्यूनकर्तुगामिफलयतः ।
इतिमत्वासमस्तेषभोलोकाहितबुद्धयः ।१८
सन्तुमालौकिकूपतलौपाः प्राप्स्यथवैबुधा ।
योमेऽद्यस्निह्यतेतस्यशिवमस्तुसुदाभुवि ।१९

सभी प्राणी सबसे मित्रता प्रकट करें, ब्राह्मणों का कल्याण;

पारस्परिक स्नेह ।१४। सभी वर्णों की समृद्धि और सभी कर्मों की सिद्धि हो । हे मनुष्यो! तुम्हारी मङ्गलमयी बुद्धि सदैव सब प्राणियों के हित में लगी रहे ।१५। जैसे तुम अपनी और अपने पुत्र की शुभ कामना सदा किया करते हो, वैसे ही,समस्त प्राणियों के हितकी कामना करो । इसी में तुम्हारा अत्यन्त हित निहित है,कौन किसके प्रति अपराधी है ? जो मन्द बुद्धि मनुष्य किसी का अहित करता है ।१७। उससे उसी का अहित होता है क्योंकि कर्म के फल भोगने वाला कर्म कर्त्ता ही है, ऐसा विचार करके सभी प्राणियों के हित में अपनी बुद्धि को रखो ।१८। हे ज्ञानियो ! लौकिक पाप में प्रवृत्त मन होना, इसी से तुम्हें पुण्यलोक प्राप्त हो सकते हैं, मुझसे स्नेह रखने वाले मनुष्य का भूमण्डल में सर्वत्र कल्याण हो और जो मेरे प्रति द्वेष करे, उसका भी कल्याण हो ।१९।

यश्चमांद्वेष्टिलोकेऽस्मिन्सोऽपिभद्राणिपश्यतु ।
एवंस्वरुप पुत्रोऽभूत्खनित्रस्तस्यभूसतेः ।२०
समस्तगुणसम्पनःश्रीमानब्चदलेक्षणः ।
तेनतेभ्रातरःप्रीत्यापृथग्राज्यषुयौजिताः ।२१
स्वयंचपृथिवीमेतांबुभुजेसागराम्वराम् ।
प्राच्यांतेतक्रंतःशौरिदक्षिणस्यामुदावसुः ।२२
दिशिप्रतीच्यामुनयउतरश्यांमहारथा ।
तेपांतस्यचभूपस्यपृथग्गोत्राःपुरोहिताः ।२३
वभुबुर्मुनयश्चैवमन्त्रिवशक्रमागताः ।
शौरेरत्रिकुलोद्भूतःसुहोत्रोनामवंद्विजः ।२४
उदावसो कुशावर्त्तोगौतमान्वयंजोऽभवत् ।
काश्यपःप्रमतिर्नामसुनयस्थपुरोहितः ।२५
महारथस्यवासिष्ठःपुरोधाऽभून्महीभृत ।
वभुजुस्तेस्वराज्यानिचत्वारोऽपिनराधिपाः ।२६
खनित्रश्चाधिपस्तेषामशेषवसुधाधिपः।
तेषुभ्रातृष्वशेषुखनित्र समहीपतिः ।२७

प्रजासुचमस्तासुपुत्रेष्विवदाहितः।
एकदामन्त्रिणशौरिःसप्रोक्तोविश्ववेदिना।२८

हे राजपुत्र ! खनित्र इस प्रकार की कामना वाले थे, उन्होंने अपने सब भाइयों के पृथक–२ राज्य देकर।२०-२१। स्वयं भी समुद्र तक इस पृथिवी का पालन करते रहे, शौरि को पूर्व प्रदेश में, उदावसु का दक्षिण में।२२। सुनय को पश्चिम में और महारथ को उत्तर प्रदेश में बसाया और पृथक राजा के पृथक् गोत्र के पुरोहित हुए।२३। खनित्र और उनके भाइयों के मत्रिवंश के क्रम के उपलब्ध पृथक् गोत्र वाले पुरोहित के, उसी के अनुसार शौरि के अत्रि वंशोत्पन्न सुहोत्र उदावसु के गौतम वंशोत्पन्न कुशवर्त सुनय के कश्यप गोत्रीय, प्रम तथा महारथ के वसिष्ठजी पुरोहित थे, इस प्रकार चारों भाई राजा होकर राज्य करते थे। सम्पूर्ण पृथिवी के स्वामी खनित्र उनके अधीश्वर हुए, राजा खनित्र सभी भाइयों और प्रजा के प्रति पुत्र के समान व्यवहार करते थे, एक दिन राजा शौरि से उनके मन्त्री विश्ववेदी ने कहा।२७-२८।

विविक्तेपृथिवीपालकिंचिद्वक्तव्यमस्तिनः।
यस्येयंपृथिवीकृत्स्नायस्यभूपावशानुगाः।२९
सराजातस्यपुत्रश्चपौत्राश्चान्वयस्ततः।
इतरेभ्रातरस्तस्यप्राक्स्वल्पविषयाधिपाः।३०
तत्पुत्राश्चाल्पकास्तस्मात्तत्पौत्राश्चाल्पकल्पकाः।
कालेनह्रासमाद्यपुरूपान्तरम्।३१
कृष्योपजीविनीभूषवन्तीतिवदन्वयाः।
नोद्धारकुरुतेभ्राताभ्रातृन्नेहबलार्षणः।३२
स्नेहःवःपृथिवीपालापरयोभ्रातृपुत्रयो।
तत्पुत्रयो परतरामर्तिपार्थिवः।३३
तत्पुत्राकेनेकार्य्येशर्प्रीतियुक्तोभविष्यति।
अथवायेर्ननैयसयोपंकुरुतेनृपः।३४

क्रियतेतत्किर्थन्तुभूपैमंत्रिपरिग्रह: ।
भुज्यतेसकलराज्यंमयातेमंत्रिणासता ।३५

हे राजन् ! मुझे इस एकान्त के समय में कुछ निवेदन करना है यह सब पृथिवी और राजागण जिनके अधीन हैं ।२६। यह तथा उन्हीं के वंशधर राजा होते हैं, उनमें अन्य भाई पहिले थोड़े से राज्य के अधिकारी होते हैं।३। फिर उनके पुत्र उनमें भी थोड़े और पौत्र तो पुत्रों की अपेक्षा भी अत्यन्त अपराज्य के अधिकारी होते हैं, समय पाकर क्रमांतर से पीढ़ी राज्य के घटते-२ अन्त में ।३१। उस वंश के लोग कृषि कर्म से जीविका चलाते हैं । हे राजन् ! भाई के स्नेहमें बंधा हुआ भाई कभी भी अपने भाई का उद्धार नहीं करता ।३२। फिर दोनों भाइयोंकी सन्तान भी एक दूसरे को पराया ही मानने लगती हैं उनके भी जब सन्तान होती है, तो वे और भी दूर होती जाती हैं । उनके मन में अपनी सन्तान के सुख की ही चिन्ता रहती है, यदि राजागण सन्तोष का ही अवलम्बन करे तो मन्त्रियों की नियुक्ति क्यों करें ? मेरे जैसे मन्त्री के होते हुए और सम्पूर्ण राज्य का सुख भोग सकते हैं ।३३-३५।

तत्किमुधाधारयसेसतोषकुरुतेयदि ।
कार्मनिष्पादकराज्यंकसणंकर्तु रिष्यते ।३६
राज्वलब्धुश्तोर्यत्वकर्त्तात्वंकर्त्ताकरणंवयम् ।
सोऽस्माभि:करणैराज्यपितृपतामहकुरु ।
फलंप्रदाभविष्याम:परलोकेनतेवयम् ।३७
ज्येष्ठोभ्रातामहीपालोवययस्यानुजायत: ।
ततःसभुंक्तेपृथिवीवयचाल्पवसुन्धराम् ।३८
वयन्तभ्रातर: पंचपृथ्वीवैकामह्यामते ।
अतोऽस्या पृथगैश्वर्य्यंकथकृत्स्न भविष्यति ।३९
एवमेतद्भवत्नत्रयद्येकाबसुनन्धरानृप: ।
तांत्वमेवाभिपद्यरुवज्येष्ठ:शास्तुयथाभवान् ।४०

सर्वाधिपत्व:सर्वेभ्योभवत्वमखिलेश्वर: ।
यन्तेचयथंहंतेतेषांमपिहिमन्त्रिण: ।४१

मैं चेष्टा करने को प्रस्तुत हूँ तो आप सन्तोष को व्यर्थ ही क्यों धारण किये हुए हैं ? राज्य निष्पादन कर देना मन्त्री का कर्तव्य है ।३६। परन्तु उस राज्य प्राप्ति के कार्य में कारण हूँगा और आप कर्त्ता होंगे, इसलिए कारण के द्वारा अपने पैतृक राज्य पर अधिकारी होंगे, इसलिए कारण के द्वारा अपने पैतृक राज्य पर अधिकार करिये, हम तो इसी लोक में आपके लिए फल देने वाले हैं, परलोक में नहीं ।३७। राजा बोले—पृथिवी का पालन करने वाले राजा हमारे बड़े भाई हैं, इसलिए वे समस्त पृथिवी का राज करते हैं और हम थोड़ी पृथिवी को भोगते हैं ।३८। हम पाँच भाई हैं और पृथिवी एक ही है, इसलिए पृथिवी के सम्पूर्ण ऐश्वर्य को हम सब पृथक रूप से किस प्रकार भोग सकते हैं ।३६। इस पर विश्ववेदी ने कहा—हे राजन् ! आपका वचन सत्य है परन्तु यदि पृथिवी एक ही है तो इस पर आप ही अधिकार करिए और सबके अधीश्वर होकर इस पृथिवी को भोगिये । सम्पूर्ण आधिपत्य को प्राप्त होकर सब भाईयोंमें आप ही सबके स्वामी बनिए, मेरे द्वारा नियुक्त अन्य मन्त्रिगण भी ऐसी ही चेष्टा कर रहेहैं ।४०-४१

ज्येष्ठोराजायथाप्रोत्याभजतेऽस्मात्सुयानिव ।
कथंततस्यकरिष्यामिमत्वजगतोगचम् ।४२
राज्येस्थित: पूजयेथाज्येष्ठं सूपार्हणैधनै: ।
कनिष्ठज्येष्ठताकेतंराज्यंप्रथियतानृणाम् ।४३
तथेतिचप्रतिज्ञातेभूभुजातेनसत्तम: ।
विश्वदेदीततोमन्त्रातद्भ्रातृननयद्वशम् ।४४
तेषांपुरोहितांश्चैवआत्मन:शांतिकादिषु ।
नियोजयाषासतत:खनित्रस्थाभिचारके ।४५
विभेदत्तस्यनिभृतान्सानदानादिभिस्तथा ।
जक्रैचपरमोद्योगनिचदण्डप्रभावने ।४६

राजा बोले—बड़े भाई पुत्र के समान परिपालन कर रहे

हैं, फिर उनके राज्याधिकार में मुझे ममत्व क्यों करना चाहिये ? ।४२। विश्ववेदी ने कहा—फिर तो आप राज्याधिकार पूर्वक विभिन्न प्रकार के सत्कारों द्वारा उनका पूजन करिये, वैसे राज्य की कामना वाले पुरुषों के लिये छोटे बड़े का विचार करना व्यर्थ ही है ।४३। मार्कण्डेय जी ने कहा—राजा द्वारा विश्ववेदी के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने पर विश्ववेदी ने उनके अन्य भाइयोंको अपने वशमें किया तथा उनके पुरोहितों को अपने लिये शान्ति कर्म और खनित्रके प्रति आभिचारिक कर्म करने के लिये नियुक्त किया तथा खनित्रके विश्वास पात्र भृत्यों को भी सामदानादि की नीति से अपने वश में करने का यत्न करने लगा ।४४-४६।

आभिचारिकमत्युग्रमह तद्दनिकुर्वताम् ।
पुरेऽध्वसांचतुर्णाचजजज्ञकृत्याचतुष्टयम् ।४७
विकरालमहाबलत्रमतिभीणदर्शनम् ।
समुद्यतमहाशूलप्रभूतमतिदारुणम् ।४८
तस्यतदातन्त्रखनित्रीयत्रपार्थिवः ।
निरस्तं चाप्यदुष्टस्यतस्यपुण्यचयेनतम् ।४९
कृत्याचतुष्टयातषुनिपयातदुरात्मसु ।
पुरोहितेषुभूतानांयणावैविश्वशेदिनि ।५०
ततोनिहन्त्यानिर्दग्धाःकृ यायनेपुरोहितः ।
विश्ववेदीतथ मंत्रीसशोरेदुष्टिमंवीदः ।५१

जब पुरोहितोंने अत्यन्त उग्र अभिचार कर्म किया तब चार कन्यायें उत्पन्न हो गईं । वह सभी विकराल शरीर वाली अत्यन्त भयानकप्रतीत होती थी, उनके हाथों में महाशूल स्थित थे और वे अत्यन्त बिशाल तथा दारुण थीं । इसके पश्चात् वे चारों कृत्यायें राजा खनित्र के पास पहुँची, परन्तु पाप-रहित राजा के पुण्य प्रभाव से तेजहीन होकर उन दुरात्मा पुरोहितों व विश्ववेदी के पास लौट आई देने वाला वह दुष्ट मंत्री विश्ववेदी यह सभी उनलौटी कृत्याओं के द्वारा मारे जाकर भस्मा भूत हो गये ।४७-५१।

१०५—खनित्र चरित्र [२]

ततसमस्तलोकस्यविस्मय:सोऽभवन्महान्
यदेकालनेशुस्तेपृथक्पुरनिवासिन: ।१
तत:शुश्रावनिधनयातान्भ्रातृपुरोहितान् ।
मन्त्रिणं चतथा भ्रातृर्दग्धतविश्वेदिनम् ।२
किमेतत्तदितिसीऽत्तोवविस्मतोमुनिसत्तम् ।
खनित्रोऽभन्महाराजोताजानातच्चकारणम् ।३
ततोवसिष्ठंपप्रच्छसराजागहमागतम् ।
यत्क्रानणतिमेशुस्तेभ्रातमन्त्रिपुरोहिता: ।४
तेनपष्ठस्तदाप्राहयथावृत्तं महामुनि: ।
यच्छोरिमन्त्रिणाप्रोत्तं यच्चशौरिरुवचितम् ।५
यथाचानुष्ठिन्तेनभ्रातृणाभेदकारिवे ।
मन्त्रिणानेनदुष्टेनच्चक्रुश्च पुरोहिता: ।६
यन्निमित्तं विमेशुस्तनपासस्यापकोरिथ: ।
पुरोहितास्तस्यरराज्ञशक्षावपिदयावत: ।७

मार्कण्डयजी ने कहा—उस समय सभीको यह विस्मय हुआकि यह पृथक् पृथक् नगर में निवास करने वाले होकर भी एक समय में किस प्रकार नष्ट हो गये ? ।१। हे मुनिवर ! तदुपरान्त राजा खनित्रने अपने भाई के पुरोहित और मन्त्री बिश्ववेदी का मृत्यु समाचार सुना तो ।२। इसका कारण न समझकर ऐसा क्यों हुआ, इस प्रकार विस्मय युक्त विचार करने लगे ।३। फिर जब वसिष्ठजी घर पर आये तब उनसे राजा ने अपने भाई के मन्त्री और पुरोहितों के इस प्रकार मारने का कारण पूछा ।४। महामुनि वसिष्ठ से पूछने पर उन्होंने शौरि उनके मन्त्री के मध्य जो वार्ता हुई थीं तथा उस दुष्ट मन्त्री ने भाइयों में फूट डालने के जो कार्य किए थे और पुरोहितों ने जिस कर्म का अनुष्ठान किया तथा शत्रुओं पर दया करने वाले वह पुरोहित निरपराध के

अपकार में तत्पर होकर स्वयं ही नाश को प्राप्त हो गये थे, वह सब वृत्तांत आद्योपान्त राजा खनित्र को सुना दिया ।७।

सतच्छ्रुत्वा तोराजाहाहतोऽस्मीतिवैवदन् ।
निनिन्दात्मानत्यथांवसिष्ठस्याग्रतोद्विज ।८
धिक्मामपुण्यसस्थानतल्पभाग्यमशोभनम् ।
दैदोपकृतांपसर्वलोकविगर्हितम् ।६
मन्निमित्तिविनष्टतत्तद्ब्राह्मणणचतुष्टयम् ।
मत्त कऽस्य पाततरोभविष्यतिपुमान्भुवि ।१०
नाभविष्यंयदिपुमानषत्रमहीतले ।
ततस्तेनविनश्नेयुर्मम भ्रातृपुरोहिताः ।११
धिग्राज्यंधिक्चमेजन्म भभुजाँमहताकुले ।
कारणत्वंवतायोऽवविनाशस्यद्विजन्मनाम् ।१२
कुर्वतःत्वमिनांऽथभातृणांगमयाजकाः ।
नाशं ययुर्नदुष्टास्तेदुष्टोऽहनाशकारणे ।१३
किंकरोमिक्वगच्छामिनान्योमत्तोहिपापकृत् ।
पृथिव्यामस्तिहेतुत्वंद्विजनाशस्ययोगतः ।१४

यह वृत्तांत सुनकर राजा अत्यन्त दुःखित होकर वसिष्ठजी के समक्ष ही अपने को धिक्कारने लगे । राजा ने कहा—मैं कितना मन्दभाग्य, असंचित पुण्य वाला तथा शोभा रहित हूँ कि दैव भी मेरे अनुकूल नहीं है, मैं लोक में निन्दा का पात्र और, पापी हूँ, इसलिए मुझे धिक्कार है । क्योंकि मेरे कारण चार ब्राह्मणों की मृत्यु हुई है, इसलिए पृथिवी पर मुझसे बढ़कर अन्य कौन पापी हो सकता है ? यदि मैं इस पृथिवी पर पुरुष के शरीर में उत्पन्न न हुआ होता तो मेरे भाईयों के पुरोहित नाश को प्राप्त न हुए होते । उन ब्राह्मणों के नाश का कारण मैं ही हूँ, इसलिए मेरे इस राजा को महान राज्यवंश में जन्म लेने को धिक्कार है । मेरे भाइयोंको प्रयोजन-सिद्ध के लिए कम करके जो याचकगण नाश को प्राप्त हुए हैं, उसमें वे स्वयं दोषी नहीं थे, उनके नष्ट होने का

कारण मैं ही था, इसलिए दोषी भी मैं ही हुआ। अब मेरा क्या कर्त्तव्य है, मुझे कहाँ जाना चाहिए ? ब्रह्महत्या का कारण होने से मेरे समान पापी इस भूमण्डल पर अन्य कोई नहीं है।८-१४।

इत्थमुद्विग्नहृदयःखनित्रपृथिवीपतिः।
बनयियासुः युत्रस्तकृतवानभिषेवनम् ।१५
अभिषिच्यसुतं राज्येक्षुपसंज्ञंमहीपतिः।
भार्य्याभिस्तिसभिःसार्धसतसेवननंययौ ।१६
तत्रागत्वातपस्तेपेवानप्रस्थविधानवित्।
शतामित्रोणिवर्षाणांद्वानिनृपसत्तमः ।१७
तपसाक्षीणदेहस्तुयाजर्य्योद्विजोत्तमः।
निगृह्यसर्वंस्रोतांसितत्याजासन्वनेचरः ।१८
ततः पुण्यान्ययौलान्सर्वकामदुहोऽक्षयान्।
अश्वमेघादिभिर्यज्ञै रवाप्यायेनराधिपैः ।१९
भार्य्याश्चतस्यतास्तिस्रःसमन्तेनैवतत्युजुः।
द्राणन्वापुःसालोक्यतेनैवसुमहात्मना ।२०
इतत्खनित्रचरितंश्रु तकल्पमषनाशनम्।
पठतांचहाभागक्षुपस्यातीनिशामय।
विविंशेशासतिमहींमहीपालेमसौजजि ।२१

राजा खनित्र ने उस प्रकार उद्विग्न चित्त से बनवासी होने की इच्छा करके अपने पुत्र का राज्याभिषेक किया।१५। क्षुप नामक पुत्र को राज्य देकर स्वयं अपनी तीन पत्नियोंको साथ लेकर तप करने के लिए वन में गये।१६। और वन में वास करते हुए वानप्रस्थी रहकर साढ़े तीन सौ वर्ष तक उन्होंने तप किया।१७। फिर हे द्विजश्रेष्ठ ! उन बनवासी राजा ने तपके द्वारा कृश शरीर होने पर सब स्रोतोंके निरोध पूर्वक प्राण का परित्याग कर दिया।१८। अन्यान्य राजागण सैकड़ों अश्वमेघ यज्ञों को करके भी जिस लोक को पा नही सकते, उस सर्व अभीष्ट देने वाले अक्षय पुण्य लोक को राजा खनित्र ने प्राप्त किया।१९ उनकी तीन पत्नियाँ भी उनकी अनुगमन करके उन्हीं के साथ समान

गति को प्राप्त हुई, हे महाभाग ! इस प्रकार खनित्र के चरित्र को तुम्हारे प्रति कहा है, उसके पढ़ने या सुनने से पापों का नाश होता है, अब क्षुप का चरित्र कहता हूँ, उसे श्रवण करो ।२१।

१०६–विविंश चरित्र

क्षप:खनित्रपुत्रस्तुप्राप्यराज्यंयथापिता ।
तथैवपालयामासप्रजाधर्मेणरंजयन् ।१
सदानशीलोयष्टाचयज्ञानामवनीपतिः ।
समःशत्रौचमित्रे चव्यवहारादिवर्त्मनिः ।२
एकदासमहीपालौनिजस्थातगगतोमुने ।
सूतैरुक्तोयथापूर्वंक्षुपोराजातथाऽभवन् ।३
ब्रह्मणस्तनतःपूर्वंक्षु पोऽभूत्पृथिवीपतिः ।
यादृक्चरितमस्यासीत्तादृक्तस्यैवचेष्टितम् ।४
श्रोतुमिच्छाचरितंक्षुपायसुमहामिनः ।
यदितादृश्यं मयाशक्यचेष्टितुं तत्करोम्यहम ।५
सचकाराकरान्भूपराजानोब्राह्मणान्पुरा ।
षष्ठांशेनकृताचोर्व्यामिष्टिस्तेरमहात्मनः ।६
तेषांमहात्मनांराज्ञांकोऽनुयास्यतिमद्विधः ।
तथाप्युक्रुष्टचेतानाचेष्टासूद्यमवान्भवेत् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—राज्य में अभिषिक्त हुए खनित्र पुत्र क्षुप प्रजा को प्रसन्न करते हुए अपने पिता के समान ही प्रजाका पालन धैर्य पूर्वक करने लगे ।१। यह राजा क्षुप भी अपने पिता के समान यज्ञकर्त्ता दाता और शत्रु-मित्र सभी से समान व्यवहार करने वाले हुए ।२। एक समय की बात है कि सूतों ने राज्य सिंहासन में प्रतिष्ठित राजा क्षुप से कहा—आप अपने पूर्ववर्ती क्षुप राजा की प्रतिमूर्ति जैसे ही हैं ।३। पुराकाल में ब्रह्माके पुत्र क्षुप ने पृथिवी पर राज्य किया था, उनका जैसा चरित्र तथा जैसी चेष्टा थी, वैसी ही सब बातें आपमें हैं । राजा बोले-

मैं उन महात्मा क्षुप का चरित्र सुनना चाहता हूँ यदि मैं भी उनके जैसा ही आचरण कर सकूँ तो वैसा ही प्रयत्न करूँगा। सूत बोले-हे महाराज वह राजा क्षुप गौ ब्राह्मण से कर प्राप्त नहीं करते थे तथा छठे अंश से यज्ञोंका अनुष्ठान करते थे। राजा बोले—मेरा जैसा मनुष्य उनके कार्यों का अनुकरण कैसे कर सकता है? फिर भी उसे महात्माओं के उत्कृष्ट आचरण पर चलने का प्रयत्न करना चाहिए।१-७।

तच्छ्रूयतांप्रतिज्ञायासाप्रतं क्रियतेमया।
क्षुपस्यानुकरिष्यामिमहाराजस्यचेष्टितम् ।८
त्रीस्त्रीन्यास्करिष्यामिसस्यापऽतेगतागते।
पृथिव्याचतुरतापांप्रतिज्ञेयकृतामया।९
यच्चगोब्राह्मणा पूर्वमदद्वज्मृलेकरम्।
तमेवप्रतिदास्यामिब्राह्मणानांतथागतम् ।१०
इतिप्रतिज्ञायवचः क्षुपस्तक्नवांस्तथा।
सस्यापातेसयज्ञांस्त्रीनयजद्यचतांवरः।११
गौब्राह्मणाः पुराराज्ञामदद्य चवकरम्।
तावत्सरूयमदादित्तमायद्वोब्राह्मणायसः।१२
तस्यपुत्रोऽभवद्वीरः प्रमथायामनिन्हितः।
तस्यप्रतापशौर्याभ्यांकृतावश्यामसीभूतः।१३
तस्यापितन्दिनोमवैदर्भीदयिताऽभवत्।
विविशत नयं तस्याजनयामाससप्रभुः।१४

इसलिए मैं प्रण करता हूँ उसे श्रवण करो, मैं उन महाराज क्षुप के कार्य का आज मैं अनुकरण करूँगा। मैं चारों वर्ण और पृथिवीके प्रति यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि कृषिके आने वाले समयमें तीन-२ यज्ञोंका अनुष्ठान करूँगा तथा पहिले जिस—२ समयमें मैंने राजाओंसे ब्राह्मणोंसे जो कर लिया है, उसे मैं उनको लौटा दूँगा। मार्कण्डेयजी ने कहा—यज्ञकर्त्ताओं से राजा क्षुप ने ऐसी प्रतिज्ञा करके उसकी रक्षा की अर्थात्कृषि की उपस्थित के समय तीन यज्ञानुष्ठान किये तथा पहिले राजाओं ने

गौ और ब्राह्मणों ने जितना कर दिया था, उतना धन उनको दे दिया उनकी प्रथमा नामकी भार्या हुई, उसके गर्भ से एक सुन्दर और बलवान् पुत्र की उत्पत्ति हुई। उस पुत्र ने अपनी शूरता और पराक्रम से सभी राजाओं को अपने अधीन कर लिया था। उसकी भार्या विदर्भ देश के राजा की पुत्री नन्दिनी हुई उसके गर्भ से विविश नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ।८-१४।

विविशेशासतिमहींमहीपालेमहौजसि।
महीतलमभूदव्याप्तनिरन्तरतयानरै: ।१५
ववर्षकालेपर्जंन्योमहीपस्यवतीतथा।
सुफलानिचसम्यानिरसवन्तिफलानिच ।१६
रसा:पुष्टिकराश्चसनून्पुष्टिर्नोन्मादकारिणी।
नवित्तनिचानृणांप्रभूतामददेतव: ।१७
तत्पतापेनिरपवोभयमापूर्वमहामुने।
स्वास्थ्यजन:सुहृद्वर्गोमुदमापसुपूजित: ।१८
इष्ट्वासज्ञान्सुबहून्सम्यक्पाल्यमेदिनीम्।
संग्रामेनिधनप्राप्यशक्रलोकमितोगत: ।१९

राजा विविंश के राज्यकाल में पृथिवी पर इतनी प्रजा थी कि कहीं भी स्थान शेष नहीं था।१५। उस काल में मेघ यथा समय वृष्टि करते थे और पृथिवी भी उनसे परिपूर्ण रहती थी। सभी भूमि फल से युक्त और सभी अन्न तथा फल रस युक्त थे।१६। रस में पोषक तत्व होते थे, उससे होने वाली पुष्टि से मनुष्य उन्मत्त नहीं होता था, बहुत धनवान् होकर भी मनुष्यों में मिथ्यामद नहीं था।१७। उनके बल से सदा भयभीत तथा अस्वस्थ रहते थे, सुहृदों को सदा सन्तोष रहता था।१८। इस प्रकार राजा विविंश ने अनेकानेक यज्ञ किये और भले प्रकार प्रजा का परिपालन किया, अन्त में युद्ध करते हुए मृत्यु को प्राप्त होकर स्वर्ग लोक को गए थे।१९।

१०७–खनी नेत्र चरित्र

तस्यपुत्र:खनीनेत्रोमहाबलपराक्रम: ।
यस्ययज्ञेष्वगायन्वगन्धर्वाविस्मयान्विता: ।१
खनीनेत्रसमोनान्योभुवियज्वाभविष्यति ।
तेनयज्ञायुतेपूर्णेदत्तापृथ्वीससागरा ।२
दत्वाचसकलांपृथ्वीब्राह्मणानांमहात्मनाम् ।
तगसाद्रव्यमासाद्यमोदन्यसाधितेनय: ।३
यतश्चप्राप्यवित्तर्द्धिमतुलांदातृसत्तमात् ।
जगृहुर्ब्राह्मणाविप्रनांन्यारज्ञ:प्रतिग्रहम् ।४
सप्तषष्टिसहस्राणिमप्तषष्टिशतानिज ।
सप्तषष्टिचयोयज्ञागयदद्भूरिदक्षिणाम् ।५
अपुत्र समपीपालोनगयामुपचक्रमे ।
पुत्रार्थपितृयज्ञायमांसकामोमहामुने ।६
अश्वारूढोविनासैन्यमेकएवमहावने ।
बद्धगोधाङ्गुलित्राणोवाणखङ्धनुर्धर ।७

मार्कण्डयजी ने कहा—राजा विविंश के पुत्र खनी नेत्र हुए, वे महाबली और पराक्रमी थे। उनके यज्ञनिष्ठा को देखकर विस्मयको प्राप्त हुए गन्धर्वों ने उनकी गाथा का इस प्रकार कीर्तन किया था ।१। इस पृथ्वी पर खनी नेत्र के समान कोई यज्ञ-कर्ता नहीं होगा क्योंकि उन्होंने दश सहस्र यज्ञों का अनुष्ठान किया और समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण पृथिवी का दान कर दिया ।२। उन राजा खनी नेत्र ने ब्राह्मणों को सब पृथिवी दे दी हे ब्रह्मन् ! उन दानियों में श्रेष्ठ राजा खनीनेत्र से ब्राह्मणों ने विपुल ।१। द्रव्य प्राप्त करके पुन: अन्य किसी से दान ग्रहण नहीं किया था ।१। उन्होंने तिहत्तर हजार सरसठ यज्ञों का अनुष्ठान किया और सभी यज्ञों में विपुल धन की दक्षिणा दी ।५। एक समय की बात है कि खनी नेत्र ने पुत्र की कामना से पितृ यज्ञ के अनुष्ठान की इच्छा की उस समय

अनुष्ठान के निमित्त मृग के लिए धनुष बाण आदि धारण कर वन में आखेट के लिए गये ।६-७।

तत्रायन्तंतुरगमन्यतोगहनाद्वनात् ।
वनिष्क्रिंभ्यवृगःप्राहत्वाभिमतंकुरु ।८
अन्येमृगा पलायन्तेसहाभीत्याविलोक्यमाम् ।
कथमात्मप्रदानंत्वंमत्यवेकर्तु मिच्छसि ।९
अपुत्रोऽहंमपाराजवृथाजन्मयोजनम् ।
विचारयन्नपश्यामिप्राणानामिहधारणम् ।१०
अथाभ्येत्यमृगः प्राहतमन्योवसुधापिम् ।
मृगत्यतस्यक्षमलमेतेनपार्थिव ।११
घातयस्वेमासैधर्मकर्मसमाचार ।
यथाकृतार्थतातेस्यान्मचाप्सुपकारितत् ।१२
पुत्रार्थत्वंमहाराजस्त्वपितृन्यष्टुमिच्छसि ।
अपुत्रस्यास्यमासेनलप्स्यसेवाच्छितकथम् ।१३
याहक्कर्मविनिष्पाद्यताहग्द्रव्यमुपाहरन् ।
दुर्गन्धानांगन्धज्ञानांगन्धज्ञानविनिर्णयः ।१४

जब उन्होंने एक वन में अपने अश्व को दौड़ाया तभी एक मृग ने उनसे कहा—हे राजन् ! मेरा वध करके अपना इच्छित कार्य करिये राजा बोले—और सभी मृग तो देखते ही भाग जाते हैं परन्तु तुम मरने के लिए क्यों इच्छा कर रहे हो ? मृग ने कहा—हे राजन् ! मैं पुत्रहीन हूँ इसलिए जीवित रहना व्यर्थ समझता हूँ मार्कण्डेयजी ने कहा —तभी एक अन्य मृग वहाँ आकर राजा से बोला—हे राजन् ! इस मृग का आप क्या करेंगे ? आप मेरा वध करके अपने कार्यका सम्पादन करेंगे तो आपका अभीष्ट सिद्ध होगा और मेरा भी उपकार होगा । हे राजन् ! आप पुत्र की कामना से जो पितृ यज्ञ करना चाहते हैं उसकी सिद्धि इस पुत्रहीन के मांस से कैसे हो सकेगी ? जो जैसा कर्म हो उसके

लिए वैसा ही द्रव्य ग्रहण करना चाहिए, भला दुर्गन्ध से सुगन्धकी पूर्ति हो सकती है ? ।१४।

वैराग्यकारणं प्रोत्तमनेनापुत्रतासम ।
कथ्यतांप्राणसत्यागेयत्ते वैराग्यकारणम् ।१५
बहवोमेसुताभूपबह्वयोदयितरस्तथा ।
यच्चिन्तादुःखदावाग्निज्वालामध्येवसाम्यहम् ।१६
सर्वसाध्यानरेन्द्रेयमृगजातिः सुकातरा ।
तेष्वपत्येषुमेच्चातिमत्वतेनदुःचिता ।१७
मनुष्यसिंहशार्दूलवृकादिभ्योगिभेम्यहम् ।
विहीनात्सर्वसत्वेभ्यः श्ववृगालाद्रपिप्रभो ।१८
सोऽहनिमित्तबन्धूनाहिमांशून्यांवसुन्धराम् ।
नृसिंहादिभयात्सर्वामिच्छामिसुनृशंसकृत् ।१९
तृणान्यन्येऽपिखादन्तिगोऽजांवितुरगादिकाः ।
तांस्ततेषांपोशणायाहमिच्छामिनिधनगतान् ।२०
निष्क्रांतेषुततस्तेषुममापत्येषुवैपृथक् ।
भवन्तिचिन्ताः शमशोममत्वावृतचेतसः ।२१

राजा बोले—उस प्रथम मृग ने पुत्रहीनता को ही अपने वैराग्य का कारण बताया है, परन्तु तुमको वैराग्य किसलिए हुआ है, जो अपना प्राण देने को तत्पर हुए हो ? मृग ने कहा—हे राजन् ! मेरे पुत्र पुत्रियों की अधिकता है, उन्हीं की चिन्ता से मैं दुःख रूपी अग्नि में जलता रहता हूँ । यहमृग जाति सभी के वश में हो जाती, है, मुझे अपनी संतानके प्रति अत्यन्त मोह है, इसलिए मैं सदाहीं दुःखित रहताहै । हे राजन् ! मनुष्य, सिंह, व्याघ्र वृक्ष तथा प्राणियों में अत्यन्त हीन श्वान और गीदड़ आदि से भयभीत रहता । मैं सदा ही कामना करता हूँ कि मनुष्य सिंहादि के डर से यह पृथिवी मुक्त हो जाय और मैं भी विघ्न रहित होजाऊँ । गो, बकरी, अश्वआदि पशु जबइस पृथिवी के सम्पूर्ण तृण कोखा जायेंगे तब मेरे पुत्र पुत्री आदि क्याखाकर जीवन धारण करेंगे ? इसलिए

अपनी सन्तान के पोषणार्थ मैं तृण खाने वाले जीवों के मरने की कामना करता हूँ। जब मेरे पुत्र-पुत्री पृथक्-२ रूप से गमन करते हैं, तब उनके स्नेह के कारण मेरे हृदय में सैकड़ों चिन्ताऐं उपस्थित हो जाती हैं।१५-२१।

किक्कूटपाशकिंवज्र वागुग्रांकिसुतोमश ।
प्राप्तोश्चरन्वनेकिंबानृसिहादिवशंगमः ।२२
प्राप्तोऽयमेकः संप्राप्तास्तेवस्थाकीदृशीमम ।
साम्प्रतंतेचिरायन्तेगताःसुमहावनम् ।२३
दृष्ट्वाप्तान्ममाभ्याशमहान्तानात्मनान्ननृप ।
ईषदुच्छ्वसिशःक्षेममिच्छामिरजनीपुनः ।२४
प्रभातेदिवसंक्षेमस्तगेके निशामपि ।
वांछम्यहंकदाक्षेमंतर्वकालंभविष्यति ।२५
ऐत्ततेकथितभूपामहोद्वेगस्यकारणम् ।
अतःप्रसादकुरूमेवाणोऽयंपात्यतांमयि ।२६
इतिदुःखशताविष्टप्राणान्नर्हत्यजामियत् ।
तत्कारणनिबोध वंब्रुवतोममपार्थिव ।२७
असूर्यानामतेलोकायान्गच्छन्त्युयांत्मघातकाः ।
यज्ञोपयुक्ताःपशवःसम्प्रयान्त्युछ्रिती प्रभो ।

कभी-कभी लगता है कि कोई पुत्र किसी कठोर पाश में बँधा है सिंहादि के द्वारा मारा गया है। यदि एक आ जाता है तो दूसरे की चिंता रहती है। जो वन में चरने के लिये गये हैं, कैसी दशा में होंगे यह मुझे ज्ञात नहीं है। हे राजन् ! जब वह सब मेरे पास आ जाते हैं, तब उन्हें देखकर कुछ सन्तोष होता है, परन्तु उस समय भी समस्त रात्रि मङ्गल पूर्वक व्यतीत हो, यही चिन्ता करता हूँ। प्रातःकाल होने पर दिन भर की मङ्गलकामना और सूर्यास्त होने पर रात्रि के मङ्गल-पूर्वक व्यतीत होने, की चिन्ता करता हूँ कि यह हर समय निरापद अवस्था में रहे। हे राजन् ! मेरे उद्वेग का यही कारण है जो मैंने आपसे कहा है, अब आप मुझ पर वाण चलाइये। हे राजन् ! मैं जिस

लिए सैकड़ों दुःखों से दुःखित हृदय हुआ अपने प्राण त्याग की कामना कर रहा हूँ उसे आप यथार्थ समझिये। हे प्रभो, आत्मघात करने वालों को असूर्य नामक नरक की प्राप्ति होती है और यज्ञ के लिये प्रयुक्त हुये पशुओं को सद्गति की प्राप्ति होती है।२२-२८।

अग्निःपशुरभत्पूर्वपशुरासीज्जलाधिपः।
भास्वानथोच्छ्रितो प्राप्तायाज्ञेनिष्ठामुपागताः।२९
तन्समैतांकृत्वानयमामुच्छ्रितनृपः।
आत्मनश्चेप्सितंकामपुत्रलाभादवाप्स्यसि।३०
राजेन्द्रनैषहन्तव्योधन्योऽयसुकृतीमृग।
वहवस्तनयाह्यस्यन्तव्योऽमसन्तति।३१
एकदेहभवंयस्यदु खधन्यःसवैभान्।
बहूनियस्यदेहानितस्यदुःखान्यनेनकधा।३२
एकोयदाहमासनुक्तादादेहजंमम।
दुःखमासीन्ममंत्वेतुभार्य्यायाश्तदभूद्द्विधा।३२
वदाजातान्यपप्यानितयावन्तिवतानिवै।
तावच्छरीरभूमीनिपमदुखान्यथाभवन्।३४
नकृतार्थोभवाम्यस्यनातिदुखायसम्भवः।
ईहदुःखायमत्सूतिःपरत्रचविरोधिनी।३५
यतोरक्षणपोषार्थमपत्यानांकरोमितत्।
चिन्तयामिचसंभूतिस्तेनमेनरकेध्रुवम्।३६

पुराकाल में अग्नि, वरुण और सूर्य भी पशु होकर यज्ञार्थ नियुक्त हुए, इसीलिए उनकी सद्गति की प्राप्ति हुई थी। हे राजन्! इसीलिये मुझ पर कृपा करके आप मुझे सद्गति को प्राप्त कराइये, ऐसा करके आप अपने इच्छित पुत्र को प्राप्त करेंगे। प्रथम मृग ने कहा-हे राजन् यह मृग अधिक सन्तान वाला तो स्वयं ही कुकर्मवान् होता है, इसलिए मुझ पुत्रहीन का ही वध करिए। इस पर दूसरे मृगने कहा—एक शरीर वाले को एक ही दुःख होता है, वह तुम्हारे समान धन्य ही है, परन्तु अधिक देने वाले को अनेकानेक दुःख की प्राप्ति होती है। जब मैं भी एक था

तब मुझे भी एक देह काही मोह था। परन्तु जब पत्नी हुई, जब स्नेहके कारण इसकी दो भागों में विभक्ति हुई फिर जितनी सन्तान होती गई उतने ही भागों में दुःख बढ़ता गया, इस प्रकार मुझे अनेक देहों के कारण अनेक दुःखों की प्राप्ति हुई है ? जब तुम्हें अधिक दुःख नहीं है, तब क्या तुम धन्य नहीं हो ? मुझे तो मेरी यह सन्तान इस लोक में दुःख का कारण और परलोक में भी अहितकर हैं। मैं अपनी संतति के पोषण और रक्षार्थ जो प्रयत्न अथवा चिन्ता करता हूँ, वह सभी मेरी नरक प्राप्ति का साधन रूप ही है।२९-३६।

नवेद्‌मिकिंसन्ततिमान्धन्योऽपुत्रोऽत्रकिंमृग
पुत्रार्थंश्चायमारम्भोममदोलायतेमनः।३७
दुःखायसन्ततिः सत्यमैहिकामुष्मिकायतम्।
तथाप्यतनयान्यान्तिऋणानीतिश्रुतमया।३८
सोऽहंयतिप्येपुत्रार्थमृतेप्राणिवधमृग।
तपसैवप्रचण्डेनयथापूर्वंमहीपतिः।३९

राजा बोले—हे मृग ! पुत्रहीन और पुत्रवान् इन दोनों में किसका जीवन सफल है, वह मुझे ज्ञान नहीं है, मैं पुत्र प्राप्ति के कार्य में प्रयत्न वान् हूँ, परन्तु मेरा मन अत्यन्त चंचलता को प्राप्त हो रहा है।३७। यद्यपि इहलोक और परलोक में सन्तान के कारण ही दुःखों की प्राप्ति होती।३८। परन्तु ऐसा सुना जाता है कि पुत्रहीन पुरुष ऋण मुक्त नहीं भूपालोंके समान घोर तप करके ही पुत्र लाभ का प्रयत्न करूँगा।३९।

——

१०८—करन्धम चरित्र

ततः सनपतिर्गत्वामोगतींपापनाशिनीम्।
तत्रतुष्टावनियतोभूत्वादेवं पुरन्दरम्।१
तप्यमानस्तपश्चोग्रंयतावाक्कायमानसः।
तुष्टावप्रयतः शक्रमपत्यार्थं महीपतिः।२

तस्यस्तोत्रेणतपसाभक्त्याचापिसुरेश्वरः ।
तुतोषभगवानिन्द्रः प्राहचैनमह्ममुने ।३
अनेनतपसाभक्तयास्तोत्रेणीच्चारितेनच ।
परितुष्टोऽस्मितेबूपव्रियताभवतावरः ।४
अपुत्रस्यतुनोमेसुसर्वशस्त्रभृतांवरः ।
सदाचाव्याहतैश्वर्योधर्मकृद्धमवित्कृती ।५
तथैतिचोक्तशक्रेणराजाप्राप्तमनीरथः ।
प्रजा पालयितु भूपआजगामनिजपुरम् ।६
तत्रास्यकुर्वतोयज्ञ सस्यक्पालयत प्रजाः ।
ऊजायतसुतोविप्रदाशक्रप्रसादतः ।७

तदन्तर राजा ने गोमती किनारे जितेन्द्रिय रहते हुए पुरन्दर देव का स्तवन किया ।१। हे मुने ! राजा ने जब देह मन और बचन से संयत होकर पुत्र की इच्छा से देवेन्द्र की स्तुति की, तब भगवान पुरन्दर ने उसको भक्ति और स्तुति से प्रसन्न होकर कहा ।२-३। हे राजन् ! तुम्हारी तपस्या, भक्ति और स्तुति से मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ हूं, इसलिए मुझसे वर मांगो ।४। राजा बोले—हे प्रभो ! पुत्रहीन हूँ, मेरे सभी शस्त्रधारियों से बढ़कर, बाधा रहित और ऐश्वर्यवान् धर्म के जानने वाला-एक पुत्र हों ।५। मार्कण्डेयजी ने कहा-इन्द्र ने ऐसा हीं हो, कहकर जब राजा की प्रार्थना स्वीकार की, तब राजा अपने नगर में लौट आए ।६। वहाँ प्रजापालन में तत्परता पूर्वक यज्ञ का अनुष्ठान करने पर इन्द्र की कृपा से उन्हें एक पुत्र की प्राप्ति हुई ।७।

तस्यनामपिताचक्रेबलाश्वउतिभूपतिः ।
अस्त्रग्राममशेषंचग्रासयामासतसुतम् ।८
पितर्यु परतेविप्रसोऽधिराज्येस्थितपोनपः ।
सबलाश्वोवशनिन्येभुविसर्वमहीक्षितः ।९
करचदापयामाससारग्रहणपूर्वकम् ।
ससर्वभूपिपान्लराजापालयामासचप्रजा ।१०

अथाखिलनरेन्द्रास्तेदायास्तस्यदुर्मदाः ।
नखाभ्युत्थायततेचास्मैप्रददुःखकरान् ।११
व्युत्थिताःस्वेषुराष्ट्रेषुनसन्तोषपरास्ततः ।
भुवंतश्यनरेन्द्रयगृहस्तेनराधिपाः ।१२
सगृहीत्वास्वकराज्यपुणिवीशोवलान्मुने ।
तस्थौस्वनगयेभूपेविरोधीबहुभिःकृतः ।१३
समेत्यमुमहावीर्य्याःससाधनधनास्ततः ।
रुरुधुस्तमहीपालपुरेनत्रनरेश्वराः ।१४

पिता ने उसका नाम 'जलाशय' रखा और सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा दी। पिता के मरणोपरान्त, सब राजाओं को जीतकर सम्राट बन गए ।८-९। उन राजाओं से सारा रूप कर को लेकर भले प्रकार प्रजा का पालन करने लगे। समय प्राप्त कर राजाओं और जाति वालों ने राजा को कर देना रोक दिया ।१०-११। तब वह राजागण बलाश्व के अधीनता से मुक्त होकर ही सन्तुष्ट न हुए वरन् उन्होंने राजा बलाश्व-की भूमि भी छीन ली ।१२। राजा बलाश्व अपने शत्रुओं से युद्ध करते-करते इतने बलहीन हो गए कि उनके पास अपना राज्य मात्र ही रह गया और वह अपनी राजधानी में ही रहने लगे ।१३। इसके पश्चात् उन धन-साधन सम्पन्न राजाओं ने इन राजा बलाश्व को उनके नगर में ही घेर लिया ।१४।

पुररोधेनतनाणकुपितःसमहीपतिः ।
स्वल्पकोशोल्पदण्डश्चवैक्लव्यपरमगतः ।१५
अपश्यमानःशवणंसवलौद्विजसत्तम ।
करौमुखाग्रःकृत्वांनिशश्वासार्तमाकसः ।१६
ततोऽस्यजस्तबिरवान्मखानिलसमहितः ।
निर्जग्मुःशतशोयोधारथनागतुरङ्गमाः ।१७
ततःक्षणेनतत्सर्वंनगरतस्यभूपतः ।
व्याप्तमांसीद्बलौघरसारेणातिवलान्मुने ।१८

अथसोऽतिबलोघनमहतातेनसम्वृतः।
निर्मथ्यनगरात्तस्मान्विजिग्येनराधिपः ।१९
चित्वाचवशमानीयचकारकरदाम्पुनः ।
यथापूर्वमहाभागमहाभाग्योनरेश्वरः ।२०
सुतयोःकरयोर्जयतस्तयारिदाहृदम् ।
बलकरन्धमस्तस्मात्सवलाश्वोऽभिधीयते ।२१

सधर्मात्मामहात्मावसमैत्रःसर्वजन्तुषु ।
करन्धमोऽभवद्भूपस्त्रिषुलोकेषुश्रितः ।२२
सम्प्राप्तस्यपराभार्त्तिददावरिविनाशनम्ः ।
बलन्धर्मेणचाक्षिप्वमभ्युपेत्यस्वयंनृपम् ।२३

नगर के घिर जाने से बलाश्व को बड़ा क्रोध हुआ, परन्तु वह अल्प कोष और अल्प दण्ड व्यवस्था वाले होने के कारण ।१५। रक्षा का कोई अन्य उपाय न देखकर अत्यन्त व्याकुलता पूर्वक मुख को दोनों हाथों से ढककर दीर्घ निःस्वास छोड़ने लगे ।१६। ऐसा करने से उनक मुख की वायु के साथ ही सैंकड़ों योद्धा, रथ हाथी और अश्व निकल पड़े ।२७। हे मुने ! क्षण भर में ही इस प्रकार अत्यन्त बलयुक्त सेनाओं के द्वारा बलाश्व का सम्पूर्ण नगर व्याप्त हो गया ।१८। तब उन राजा बलाश्व ने अपनी उस महान् सेना के सहित नगर से बाहर जाकर युद्ध किया और शत्रुओं पर विजय प्राप्त की ।१९। और उन सबको अपने अधीन करके उन्हें पुनः करदाता बनाया, इस प्रकार वह पुनः सौभाग्यशाली हुए ।२०। बलाश्व के काँपते हाथों से जो सेना उत्पन्न हुई उसके कारण राजा बलाश्व की प्रसिद्धि 'करन्धम' नाम से हुई ।२१। करन्धम त्रैलोक्य में प्रसिद्ध धर्मात्मा तथा सब प्राणियों के प्रति सख्यभाव वाले थे ।२२। वह राजा स्वयं बल प्राप्त करके परम आर्त्त प्राणियों के शत्रुओं और उनके दुःखों का नाश करने वाले हुए ।२३।

१०६—अवीक्षित चरित्र (१)

वीर्य्यचन्द्रसुतासुभ्रर्वीरानामशुभव्रतां ।
स्वयंवरेसाजगृहेमहाराजंकरन्धमम ।१
तस्यांपुत्रंसराजेन्द्रोजनयांमासवीर्यवान् ।
अवीक्षितानितिख्यातिमुपेत जगतीतले ।२
जातेतस्मिन्सुतेराजासदेवज्ञानप्रच्छत ।
कच्चित्प्रशस्तनक्षत्रेशस्तलग्नेसुतोमम ।३
मच्चिच्चालोकितंजन्ममपुत्रस्यशोभनै ।
ग्रहैःकच्चित्नष्टानांग्रहाणांदृक्पथंगतम् ।४
इत्युक्तास्तेनदैवज्ञास्तमूचुर्नृपतिंततः ।
शस्तेमुहूर्तेनक्षत्रेलग्नेचैवसुतस्तव ।५
समुत्पन्नो महावीर्योमहाभागोमहाबलः ।
भविष्यतिमहाराजस्तववात्मज ।६
अवैक्षतेमदेवानांगुरु शुक्रश्चसप्तमः ।
सोमश्चतुर्थस्तनयंतवैन समवैक्षतं ।७
उपान्तसंस्थितश्चैवसोमपुत्रोप्यवैक्षतं ।
नावैक्षतेमंसवितानभौमोनशनैश्चरः ।८

मार्कण्डेयजी ने कहा—महाराज करन्धम ने स्वयंवर में वीर्यचन्द्र नरेश की कन्या शुभव्रता वीरा का पाणिग्रहण किया था। वीरा के गर्भ से महाराज करन्धम के एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ जिसका अवीक्षित नाम लोक में प्रसिद्ध है। उसके जन्म लेने पर राजा ने ज्योतिषियों को बुलाकर कहा कि मेरे पुत्र ने प्रशस्त लग्न और शुभ नक्षत्र में तो जन्म लिया है ! इसके लग्न स्थान में शुभ ग्रहोंकी दृष्टि है किसी दुष्ट ग्रह की दृष्टि तो नहीं पड़ी ? राजा के प्रश्न सुनकर ज्योतिषियों ने गणना करके बतलाया कि महाराज ! उत्तम मुहूर्त शुभ नक्षत्र और श्रेष्ठ लग्न में उत्पन्न हुआ है। इसलिए बड़े भाग्यशाली वड़े पराक्रमी, असीम शक्ति

शाली नृपति होंगे। इनकी कुण्डली में वृहस्पति तथा शुक्र सप्तम हैं और सप्तम घर पर देखते हैं। चौथे घर को चन्द्रमा देख रहा है और ग्यारहवें पर बुध की दृष्टि है। रवि, मङ्गल तथा शनिचर जैसे क्रूर ग्रहों की दृष्टि नहीं।७-८।

ततपुत्रमहाराजधन्योऽयंतनस्तव।
सर्वंकल्याणसम्पत्तिसमवेतोभविष्यति।९
इतिदैवज्ञवचनंनिशम्यबसुधाधिप:।
सषपर्णमना:प्राहनिजस्थानगस्तदा।१०
अवैक्षतेमदेवांर्नागुरुसीम:सितोबुध:।
नावैक्षतैनमादित्योनाकसुनुर्नभूमिज:।११
अवक्षतेतियत्प्रोक्तभवद्भिवहुशोवच:।
अविश्चतेतिनेनास्यख्यातनामभविष्यति।१२
अविक्षत:सतस्तस्यवेदवेदाङ्गपारग:।
अस्त्रग्राममशेषसकण्वपुत्रदथ ग्रहीत्।१३
सरुपेणाविभिषजौदेवानांपार्थिवात्मज:
वुद्धयावाचस्पतिकान्त्याशशांकतेजसारबिम्।१४
धर्मेणाबिभतथर्वी चसहिष्णुत्वेनवीर्यवान्।
शौर्येणनमस्तस्यकश्चिदासीन्महात्मन:।१५

इसलिये महाराज! आपके पुत्र बड़े मान्य, भाग्यवान् और वैभवशाली होंगे। यह सुनकर राजा प्रसन्न होकर कहने लगे कि आप के कथनानुसार वृहस्पति और बुत्र पुत्र का अवलोकन करते है, पर रवि, मङ्गल, शनि की इस पर दृष्टि नहीं है, आपने वार-वार 'अवीक्षत' शब्द कहा हैं इसलिये इसका नाम अवेप्रित रख दिया जाय। मार्कण्डेय जी बोले—वड़ा होने पर राजकुमार अवक्षितने वेद-वेदांग की शिक्षा प्राप्त करके अण्वपुत्र से अस्त्र विद्या का पूर्ण रूप से अभ्यास किया। यह राजपुत्र परम रूपवान्, बुद्धिमान् कान्तिमान् और तेजस्वी था। वह समुद्र के समान धैर्यशाली और पृथ्वी के समान सहिष्णु भी था। उस समय उसकी तुलना का कोई नहीं मिलता था।९-१५।

स्वयंवरेतंजगृहेहेमधर्मात्मजावरा ।
सुदेवतनयागौरीसुभद्राबलितःसुता ।१६
लोलावतोतीरसतावीरभद्रयुतानिभा ।
भीमात्मजामन्यवृतीदम्भपुत्रीकुमुद्वती । १७
याश्चैननाभिनन्दन्तिस्यंवरकृताक्षणाः ।
काश्चापिसवलाद्वीरोजग्राहनपतेःसुतः १८
निराकृत्यनृपात्सर्तान्तासांपितृकुलानिच ।
स्वयंहिवीर्यमाश्रित्यवलवान्सवलाद्धतः ।१९
एकादातुविशालाधिपतेःसताम् ।
वैशालिनीससुदतींस्वयंवरकृक्षणाम ।२०
परभूयाखिलान्भूपान्स्वेच्छयानवृत्तस्तया ।
वयाज्जग्राहविप्रर्षेयथान्यावलगर्वितः ।२१

धर्म की कन्या वरा, सुदेव की कन्या गौरी, बलि की पुत्री सुभद्रा वीरभद्रा की निभा, वीर-पुत्री लीलावती, भीम-पुत्री, मान्यवती ने उन्हें स्वयंवर में वरण किया था और फिर अनेक कन्याओं को जिन्होंने उनको वरण नहीं किया था वह शक्ति से ग्रहण करके ले आये थे . एक बार विशाल राजा की कन्या सुरती ने स्वयंवर में उनको वरण नहीं किया। इस पर उन्होंने बल के गर्व से सब राजाओं को पराजित कर उसे भी अन्य कन्याओं की भांति बलपूर्वक ग्रहण किया ।१६-२१।

ततोस्तेभूभृतः सर्वेवहुशस्तेनमानिना ।
निराकृता सृनिर्विण्णा प्रोचुरन्योन्यमाकुलाः ।२२
क्षमतांवचनामेमामेकस्माद्बलशालिनाम् ।
वहनामेकवर्णानांजग्गधिग्वोमहीभृताम् ।२३
क्षत्रियोयःक्षतात्त्राणवध्यमानस्यदुर्मदैः ।
करोतितस्यतन्नामवृथैवान्येहविभ्रवि ।२४
आत्मदोपिवतत्राणदुष्टादस्मादकुर्वताम् ।
भवतांक्षत्रिकुलेजातानांकीदृशोमतिः ।२५

उच्चार्यतेस्तुतिर्याव:सूतमागधवन्दिभि: ।
सासत्यामावृथावींराभवत्वरिविनाशनात् ।२६
चिरतांसामथैवैषामूपाश्चारैर्दिगन्तरे ।
पौरुषाश्रयिण: सर्वेविशिष्ठकुलसम्भवा: ।२७
विभेतिकोनमरणात्कोयुद्धेनविनाऽमर: ।
विचिन्त्यंतन्नहोतव्ययौपौरुषंशस्त्रवृत्तिभि: ।२८
एतन्निशम्यतेभूपाविस्पष्टामर्षपूरिता: ।
ऊचु:परस्परं सर्वेससुत्तस्थुश्चमायुधा: ।२९
केचिद्रथानारुरुहु:केचिन्नागास्तथातयान् ।
अन्येऽमर्षैपराधीनास्तमुपेता:पदातय: ।३०

K. P. SABHA AMBPH
LIBRARY
No ....
Date..........
JAMMU

इस पर वे राजा बारम्बार पराजय होने से दुखी होकर परस्पर कहने लगे कि इतने राजाओं के इस स्थान पर एकत्रित होने पर भी इस अकेले ने बलपूर्वक इस कन्या को ग्रहण कर लिया और तुम सब देखते रह गये यह धिक्कारने योग्य बात है। दुर्मद मनुष्य के आघात करने पर भी अन्य की रक्षा रूप कर्तव्य-पालन में तत्पर रहता है वही वास्तविक क्षत्रिय है अन्यथा क्षत्रिय का नाम धारण करना व्यर्थ है ।२२-२४। पर तुम तो दूसरे की क्या अपनी रक्षा का उद्योग भी नहीं कर पाते। क्षत्रिय कहलाने पर भी यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है? सूत, मागध, वन्दीगण तुम्हारी शूर वीरता की जो प्रशंसा करते हैं उसे असत्य सिद्ध मत करो वरन् शत्रु का पराभव करके उसे यथार्थ सिद्ध करके दिखलाओ। तुम संसार में 'भूप' के नाम से प्रसिद्ध हो इसे वृथा मत होने दो। तुम सबने श्रेष्ठ कुलों में जन्म लिया है और तुम सभी वीरता और पराक्रम में प्रसिद्ध हो ।२५-२७। और पुरुष मृत्यु का भय कब करते हैं और युद्ध से विमुख होने वाला कौन अमर होता है ? इन सब बातों पर विचारकर क्षत्रिय नामधारी को कभी पौरुष का त्याग नहीं करना चाहिए। एसे उत्तेजना पूर्ण वचनों को सुनकर राजागण क्रोध से भर गये और आपस में उत्साह वार्तालाप करके हथियार लेकर तैयार हो गये। कोई रथ

पर, कोई हाथी पर, कोई घोड़े पर सवार हो गये और कोई पैदल हो अवीक्षित के समीप आये ।१०-३०।

११०—अवीक्षित चरित्र (२)

इतिसंग्रासमसज्जास्ते भूपाभूपसुतस्तथा ।
निराकृता सुबहुशस्तत्कालञ्चाप्यविक्षिता ।१
ततोवभूवसंग्रामस्तस्यतौ सहदारुणाः ।
एकास्यबहुभिभूपभूपपुत्रवरैर्मुने ।२
तऽसिशक्तिगदावाणपाणयस्तंसुदुर्मदा ।
अभिघ्नन्तौयुयुधिरेतं सपस्तैरसावपि ।३
सतांञ्छरशतैरुग्रैर्विभेदनपनन्दनः ।
कृतस्त्रोवलवान्वाणैस्तेचतविभिदुःशितै ।४
कस्यशिच्चच्छिदेवाहुमन्यस्यचशिरोधराम् ।
हृदिविव्याथचैवान्यंवक्षस्यताडयन् ।५
करञ्चिच्छेदकरिणस्तुरगस्यताथाशिरः ।
रथस्येषान्तथैवाश्वान्नथस्यान्यसारथिम ।६
बाणानापततश्चकेद्विधालाणैस्ताथाद्विषाम् ।
चिच्छेदान्यस्गखङ्गञ्चधनुरन्यस्यलाघवात् ।७
तनुत्रेपहृतेतेननताशान्योनृपात्मजः ।
अविक्षिताहृतश्चान्याप्रजहौरणम् ।८

मार्कण्डेयजी कहने लगे—उस अवसर पर अवीक्षित द्वारा पर जित हुए वे कितने ही राजा एक साथ मिलकर भयंकर संग्राम करने लये । वे खड्ग शक्ति गदा बाणों आदि से आघात करने लगे और अवीक्षित भी अकेलाही उनके साथ युद्ध करने लगा । प्रसिद्ध वीर नन्दन ने सैकड़ों बाणों से अवीक्षित पर आघात किया और उसने तीक्ष्ण बाणों से उनको विद्ध किया । अवीक्षिव ने किसी की भुजा, किसी का मस्तक काट दिया और किसीका हृदय छेदकर छातीपर आघात किया । किसी

के हाथी की सूँड़ काट डाली किसी का घोड़ा मार किया। उन्होंने शत्रुओं के शत-शत बाणों को बीच में ही दो खण्ड करके गिरा दिया, कोई वीर कवच के कट जाने से मारा गया और कोई पैदल युद्ध करने वाला घायल होकर युद्ध क्षेत्र से हट गया।१-८।

इत्याकुलीकृतातोतस्मिन्सग्रे मराजमण्डले ।
तस्थ सप्तशतंवीरामरणेकृतानिश्चयाः ।९
आभिजात्यवयःशौर्य्यं जज्जाभारसमन्विताः ।
निर्जितेसनलेसैन्येपलायनपरायणे ।१०
तै समेत्यमहीपाले सतुपुत्रोमहीभृताः ।
युयुधेधर्मयुद्धे नंतेनर्तनातिकोपिताः ।११
विच्छिन्नयन्त्रकवचान्सतानपिमहाबलः ।
कर्त्तव्यवस्थितस्तेचततक्रुद्धामहामुने ।१२
धर्ममुत्सृज्ययुयुधुयु्ध्यमानेनधर्मतः ।
नरेन्द्रपुत्राप्रस्वेदजलक्लिन्नानना समम् ।१३
विव्य धुकश्चिद्बाणोघैः कश्चिच्छेदकार्मुकम् ।
ध्वजतस्यापरोवाणंश्छित्वाभूमावपातयत् ।१४
जघ्नुरन्येतथैवाश्व न्वभंजुश्चापरेरथम् ।
गदापासनाथचान्यैबाणै पृष्ठमताडयन् ।१५

जब अवीक्षित से इस तरह समस्त राजाओं को व्याकुल कर दिया और उनकी सेना भागने लगी तो सात सौ वीर अपने वंश, कीर्ति और वीरता का विचार करके मरने का भय त्याग कर युद्ध में तत्पर हुए। अवीक्षित भी अत्यन्त क्रोधित हो उनके साथ धर्म-युद्ध करने लगा। अब वह उनके अस्त्रों और कवच आदि को काटने लगा तब वे पसीनेसे लथपथ राजागण धर्म विरुद्ध साथ मिलकर उन पर शस्त्रों का आघात करने लगे। किसीने शरीर पर बाण मारे, किसीने धनुषको तोड़ दिया, किसी ने ध्वजा को काट डाला, किसी ने घोड़ों को मार दिया, किसीने रथ को तोड़ा, किसी ने शस्त्र का आघात किया।९-१५।

छिन्नेधनुषिसक्रोधःसतदानृपतेःसुतः।
जग्राहासितथाचर्मंतदाप्यन्योन्तपातर्यत् ।१६
च्छिन्नासिचर्माजग्राहसगदांगदिनांवर ।
तामष्यःक्षुरप्रेणचिच्छेदकुतहस्तवद् ।१७
अन्येशहसहस्रेणशतेनान्येनराधिपाः ।
विव्यथु कोष्टकीकृत्यधर्मयुद्धपरांमुखाः ।१८
सवह्विलःपपतीव्यमिकोवहुभिरदितः ।
राजपुत्रामहाभागाविवन्धस्तेचतंततः ।१९
तमधर्मेणतेसर्वेगृहीत्वानपते सुतम् ।
विशालेनसमराज्ञावैदिशविवशःपुरम् ।२०
हृष्ट प्रमुदितावद्ध त्रामादायनृपात्मजम् ।
स्वयंवराचायन्यात्तातेनततःपुरः ।२१

धनुष के कट जाने पर क्रोधित होकर अवीक्षित ढाल तलवार लेकर युद्ध करने लगा, पर एक अन्य ने उसे भी काट गिराया। इस पर गदा-लेकर संग्राम में प्रवृत हुआ तो एक अन्य ने गदा को भी काट दिया। इसके पश्चात उन-धर्म-विमुख राजाओं ने उस शस्त्रहीन को घेरकर हजारों और सैकड़ों वाण मारे। उनसे विद्ध होकर जब वह व्याकुल होकर गिर गया तब सबने मिलकर उसे बाँध लिया और उसे लेकर राजकुमार अवीक्षित को विशाल नृप के सामने खड़ा किया।१६-२१।

पुनःपुनश्चपित्रोक्तातथापिचपुरोधसा ।
आलम्ब्यतामितिवरोयस्तेराजसुरोचते ।२२
यदासामानिनीकं चिन्नजग्राहवरसुने ।
तदापप्रच्छतेवज्ञ विवाहाथनरेश्वरः ।२३
विशिष्टतमेतस्याबिवाहायदिनवद ।
नद्यं तद्दीहक्सजातथद्धविघ्नोपपादकम् ।२४

इतिपष्टोलरेन्द्रेणसदैवज्ञोविमृश्यतत् ।
दुर्मना प्रापविज्ञातपरमार्थोमहीपतिम् ।२५
भविष्यन्त्यपराणीहदिनानिपृथिवीपते ।
प्रशस्तलग्नयुक्तानिशोभानान्यचितेणवै ।२६
करिष्यसिविवाहंत्वतेषुप्राप्तेषुमानद ।
अलमेतेनयत्रापमहाध्निउपस्थित: ।२७

तत्पश्चात् राजा और पुरोहितों ने उस स्वयंवरा कन्या से कहा कि वह इन राजाओं में से जिसे उचित समझे वरण करे, पर उसने किसी को भी वर रूप में स्वीकार नहीं किया। तब राजा ने इस सम्बन्ध में ज्योतिषियों की सम्मति माँगी। उन्होंने कहा कि आज तो स्वयंवर पर बहु विघ्नकारी युद्ध उपस्थित हो गया, उससे आप विवाह का कोई अन्य शुभ मुहूर्त बतलावें। राजा के इस प्रकार पूछने पर ज्योतिषी उस सम्बन्ध में विचार करने लगे और कुछ देर बाद उन्होंने कहा–हे महाराज ! आपकी कन्या के विवाह के उपयुक्त अच्छी लग्न वाला और शुभ दिन शीघ्र ही आयेगा। उसी दिन आप विवाह की समुचित व्यवस्था करें आज तो इसमें जो यह महाविघ्न पड़ा है, इसलिए इस कार्य को स्थगित कर देना ही उचित है ।२२-२७।

—※—

१११–अवीक्षित चरित्र (३)

नतः शुश्रावतंवद्धंतनयसकरन्धम ।
तस्यपत्नीतथावीराअन्येचापिमहीभृत: ।१
तमधर्मेणतनत्तंबद्धश्रुत्वामहीपति ।
सामन्तै:पथिवीपालैश्चिरन्दध्योमहामुने ।२
केचिद्र्मचर्म हीपालावध्या:सर्वेमहीभूत: ।
यैरेक:सयुगेबद्धसमस्तरथर्मत: ।३
युज्यतांवाहिनीशीघ्रमूचन्येकिमास्यते ।
विशालोवाध्यतांदुष्टस्तत्रयेऽन्समागता: ।४

अन्येतथोचधर्मोऽत्रत्यक्तापूर्वंमहीक्षिता ।
अन्यायेनबलाद्ये नग हीतारामवांछती ।५
स्वयंवरेष्वशेषेतुषुनराजसुतास्तदा ।
खिलोकृतास्तात: सर्वेसमेत्यसवशीकृतः ।६
तेषामेतंद्वच: श्रु त्वाबीरावीरप्रावती ।

जब राजकुमार अवीक्षितके वध जाने का समाचार महाराज करन्धम को मिला तो वे बहुत चिन्तत होकर सामन्तों और मन्त्रियों से सलाह करने लगे । किसी ने कहा कि जिन बहुत से राजाओं ने मिलकर अकेले वीर को अधर्म युद्ध में पराजित करके बांध लिया है ने सब मार देने योग्य है । दूसरे ने सम्मति दी कि अब निश्चिन्त क्यों बैठे हो, अब तुरन्त विशालराजा और वहाँ एकत्रित अन्य राजाओं पर आक्रमण करके उन सबको बाँध लेना चाहिये । किसी-२ ने यह भी कहाकि राजकुमार ने भी वरण करने को अनिच्छुक राजा-कन्या को वलपूर्वक ग्रहण करके धर्म विरुद्ध कार्य किया है । इन्होंने पहले भी गई स्वयंवरों में ऐसा ही कार्य करके अन्य राजपुत्रों से शत्रुता मोल ले ली है और इसी कारण सब ने मिल उन्हें पराजित किया ।१-६।

वीरगोत्रसमुद्भूताधीरपत्नीप्रहर्षिता ।७
उवाचभर्त्तु प्रत्यक्षमन्येषांच महीक्षिताम् ।
भद्रकृतभद्र भुज ममपत्रे थपार्थिया: ।८
गृहीतायद्लात्कन्याजित्वासर्वमहीक्षितः ।
तदर्थयुध्यमानोऽयं बद्धएकानधर्मत ।९
तदन्यस्यत्सुतास्याजौमन्येनापचयप्रदम् ।
एतदेवहिपौरुष्यंयदसर्यवशान्नरः ।१०
नोतिनगक्षयत्येवजिघांसुरिकेसरी ।
स्वयंवराविन्यस्तामपुत्रेणकन्यका ।११
सहवयोगृहीताभूपानांपश्यतामतिर्मनिनाम् ।
स्वक्षत्रियकुलेजन्मकवयांचाहीनसेविता ।१२

वलादेवसमादत्तेक्षत्रियोवलिनम्पुरः ।
लोहशङ्खलबद्धानानवशंशयानतिकातराः ।१३
प्रसह्यकारिणीयान्तिराजानोधर्मशालिनः ।
तदलन्दौर्भनस्येनश्लाध्यमेवास्यवन्धनश्च ।१४

इस प्रकार की वात सुनकर अवीक्षित की माता और वंशीय वीरा देवी बहुत प्रसन्न होकर महाराज करन्धम तथा अन्य सामन्तों के सामने कहने लगी कि मेरे पुत्र ने यदि सब राजाओं को हराकर कन्या को बल पूर्वक ग्रहण किया तो यह कार्य प्रशंसा योग्य ही है। इसके फलस्वरुप वह अधर्म युद्ध में बाँध लिया गया तो इसमें भी मेरी सम्मति में उसकी कोई हानि हुई। पुरुषार्थी का तो यही कर्तव्य है कि वह अधर्म से मारने की इच्छा रखने वालों से भयभीत न हो और सिंह के समान सबका मुकाबला करता रहे। अगर मेरे पुत्रने अनेक स्वयम्बरों में सभी राजाओं के सम्मुख कन्याओं को वलपूर्व ग्रहण किया तो इसे भी मैं क्षत्रियोचित कार्य ही मानती हूँ। तुच्छ व्यक्तियों के समान किसी वस्तु को मांगने की अपेक्षा उसे और शक्ति प्रकट करके ग्रहण करना श्लाघनीय ही है। क्षत्रियों की शोभा तो इसीमें हैकि वह बलवानों के सम्मुख भी अपना पराक्रम दिखलाकर बलपूर्वक ग्रहण करें। इस प्रकार के कार्य में अगर जँजीर मे बाँध लिया जाय, तो भी वह भयभीत होकर किसी की वस्यता स्वीकार नहीं करता। यदि मनुष्य निडर होकर पूर्णवीरता दिखलाने के बाद यदि वन्धनग्रस्त भी होजाय तो इसमें बुराई नहीं समझती वरन् मैं तो ऐसी पराजय को सदा प्रशंसा का ही कारण मानती हूं।७-१०।

युस्माकमपियेपूर्वंकृत्वावारीणांनिपातनम् ।
तलहृत्वैवपृथिवीशानांपुत्रादिकंवसु ।१५
भार्य्यावीर्यनिमत्तानिततीयाताातिगोरवम् ।
तत्वर्य्यतांरणायाशुस्यदन्नान्यधिरोहत ।१६
सज्जीकुरुतनागांश्वमचिरेणससारथिम् ।
मन्यध्वंकिमहीपालैर्बहुभिः सहविग्रम ।१७

प्रभृताएवतोषायशुनस्याल्परणेक्रिया: ।
कस्यनाल्पेपसामर्थ्यंनरेन्द्रादिषुजायते ।१८
येभ्योनविद्यतेभीतिर्विक्रांतस्यापिशत्रुषु ।
व्यरोचतेतिशूर: सतमांसीवदिवाकर: ।१९
इत्यमुद्धर्षितोराजऽनयापत्न्याकरन्धम: ।
चकारसवलोद्योगहन्तुपुत्राहितान्मुने ।२०
ततस्तस्यसमंभूपैर्विशालेनचसगर: ।
बभूबद्धपुत्रस्यतैरबैर्महामुने ।२१

वीरा ने कहा कि आपके पूर्वजों ने भी इसी प्रकार शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके उनके राज्यकोष और पुत्रादि पर अधिकार किया था। राजा लोग पृथ्वी, धन, भार्यादि समानता वालों से ही छीनकर इकट्ठी करते हैं और उसके लिए आघात सहना भी श्लाघनीय मानते हैं। इसलिए आप शीघ्र रथ, हाथी, घोड़ों को सजाकर युद्ध के लिए तैयार हो। वीरगण छोटे युद्ध में भी अपनी पूरी पूरी वीरता दिखलाकर गौरव प्राप्त करते हैं तो फिर ऐसे सामान्य राजाओं पर आक्रमण करने में आप लोगों को क्या भय हो सकता है? सूर्य जिस प्रकार समस्त दिशाओं के अन्धकार को नष्ट कर देता है उसी प्रकार जो सूर्यवीर हर प्रकार के शत्रुओं को पराजित करने के लिए तैयार रहता है वही सच्चा बहादुर है। मार्कण्डेयजी ने कहा कि राजमहिषी के, इस प्रकार उत्साह और प्रेरणा दिखाये जाने पर महाराज करन्धम तुरन्त पुत्र के शत्रुओं पर आक्रमण करने को रवाना होगये और शीघ्र ही विशाल राजनगर के समीप पहुँचकर वहाँ एकत्रित सब राजाओं से युद्ध करने लगे।१५-२१।

दिनत्रयमभूद्युद्धतेनराज्ञासमतदा ।
करन्धमेनभूपानांविशालायानुकुर्वताम् ।२२
यदापराजितप्रायंतत्सर्वंभूपमण्डलम् ।
तदाविशालोऽर्घ्यंकर: करन्धममुपस्थित: ।२३

करन्धमोऽपिसप्रीत्यतेनराज्ञाभिपूजित: ।
विमुक्तेतनयेतत्रनिशांतांसुभमावसत् ।२४
तांचकन्यागुपादायविशालंस्समुपस्थितम् ।
अविक्षित्प्राहविप्रर्षेविवाहार्थापितु: पुन: ।२५
नाहमेतांग्रहीष्यामिनचान्यांयोषित नृप: ।
परैर्यख्यानिपीक्षान्त्या: संग्रामेऽहं राजित: ।२६
अन्यस्मैसप्रयच्छेनीमियचान्यवृणौतुतम् ।
अखण्डितयशौवीर्य्योय: परैर्नापमानित: ।२७

विशाल राजा और उसके साथी राजाओ से करन्धम का युद्ध तीन दिन तक चलता रहा और अन्त में वे सब पूर्णत: पराजित हो गये। अब विशालराज पूजा सामग्री लेकर करन्धम के सम्मुख उपस्थित हुए। करन्धम ने इस पर शत्रु भाव त्याग दिया और राजा द्वारा पूजित हो कर तथा पुत्रको छुड़ाकर उसदिन वहीं ठहरे। जब विशालराज अपनी कन्याका विवाह अवीक्षित से करने पर प्रस्तुतहुए तो उसने इसे अस्वीकार कर दिया और पिता के सामने ही कहा कि हे महाराज ! जिस कन्या के सामने मैं शत्रुओं से परास्त होगया उसको तो कभी ग्रहण कर हीं नहीं सकता साथ ही अब अन्य कन्या से भी विवाह नहीं करूँगा। आप इसका विवाह ऐसे वीरसे करें जो कभी शत्रुओं से पराजित न हुआ हो और जिसका यश अखंडित बना हो ।२२-२७।

परोपराजितोऽहंयत्नातरेययथाऽबला ।
किमत्रमानुषत्वमेनैतस्याममचान्तरम् ।२८
स्वतंत्रतामनुष्याणांपरतंत्रासदाऽबला ।
नरोऽपिपरतंत्रोयस्तस्यकीदृशमनुष्या ।२९
सोऽहमस्य: मुखभूयोदृ ट दर्शयिताकथम् ।
योऽहमस्या: पुरोभूमौपरभू पैखिलीकृत: ।३०
इत्युक्ते तेनतनयामुवाचजगतीपति: ।
श्रुतंतेवचनंवत्सेवदतोऽस्यमहात्मन: ।३१

वयवासप्रयच्छामोयस्मिस्कस्मिस्तवाहृते ।
एहर्हत्यिोंकमातिष्ठमार्गयोरुचिराननें ।३२
पराजितोऽयंवहुभिर्नसम्यगाचरन् ।
संग्रामेतद्यशोवीर्य्यंन्नानिकारिनपार्थिव ।३३
एकोबहुनांयुद्धायगाजानामिवकेसरी ।
यत्ससंस्थितपर शौर्य्यंतेनास्यप्रकटीकृतम् ।३४
नकेवलमयंतरस्थौयद्धे तेऽप्यखिलाजिताः ।
वहुशोऽनेनविक्रमोऽमोऽपिप्रंकाशितः ।३७
शौर्य्यविक्रमसंयुक्तमिम सर्वंमहीक्षितः ।
धर्म्मयुद्धमधर्मेणजितवन्तोऽत्रकात्रपा ।३६

अवीक्षित ने कहा—हे राजन् ! जब मैं इसके सामने एक कायर अबला के समान शत्रुओं द्वारा बन्धन ग्रस्त हो गया तो मेरा पुरुषत्व ही क्या रहा ? अतएव अब मुझमें और इस कन्या में कोई भेद नहीं रहा। पुरुष का मुख्य लक्षण तो स्वाधीन होता है और नारियाँ सदैव पराधीन मानी गई हे। इसलिए पुरुष होकर जो पराधीन हो गया उसका पौरुष कहाँ रहा ? जिसके सामने मैं समस्त राजाओं से पराजित हो गया हूँ उसको अपना मुँह किस साहस से दिखलाऊँगा ? महीपाल विशाल ने अवीक्षित के वचन सुनकर कन्या से कहा कि तुमने राजकुमार की वात सुन ली। अब तुम्हारी इच्छा हो तो किसी भी राजा की स्वेच्छा पूर्वक वरण करलो अन्यथा पिता के कर्तव्य का ध्यान रखता हुआ मैं जिसके योग्य समझूँ उसके साथ तुम्हारा पाणिग्रहण संस्कार करदूँ । इन दोनों बातों में से तुमको जो स्वीकार हो वह कहो ।२८-३२। कन्या ने कहा-पिताजी ! इन राजकुमार ने बहुत से वीरों के साथ संग्राम किया और फिर भी पूर्णतः पराजित नहीं हो सके । इन्होंने जो अकेले ही इतने राजाओं के साथ घोर युद्ध किया इसमें ही इनका सर्वोत्कृष्ट शौर्य प्रकट हो गया। केवल युद्ध मे निर्भीक भाव में स्थित ही नहीं रहे वरन् समस्त राजाओं को इन्होंने अनेक बार हराया भी। फिर इन धर्मयुद्ध के नियम

का पालन करने वाले को अनेक राजाओं ने मिलकर अधर्म युद्ध में हराया, इसमें मुझे लज्जा की कोई बात नहीं जान पड़ती ।३३-२५।

नचापिरूपमात्रेऽहंलोभक्ष्यागपातित: ।
शौर्य्यविक्रमधैर्याणिहरत्त्यस्लमनोमन: ।३७
तत्किमुक्तेनवहुनायाच्यतांमत्कृतेनृप: ।
त्वयामहानुभा वोऽयनात्योमेभवितापति: ।३८
राजपुत्रसुताप्राहममैतच्छोभवनवच: ।
एवकैवत्वयातुल्य: कुमारोनमहीतले ।३९
अविसंवादितेशौर्य्यमतीवचपराक्रम: ।
पावयास्मत्कुलंवीरदुहितर्मेपरिग्रहात् ।४०
नाहमेताग्रहीष्यामिनचान्यांयोषितंनृप ।
आत्मन्येवहिमेबुद्धि स्त्रोमयीमनुजेश्वर: ।४१
तत:करन्धम:प्राह्पुत्रेगगृह्यतांत्वया ।
विशालतनयासुभ्रूस्त्वयिहार्दवतीदृढम् ।४२
नाभाभंगकदाचित्ते कृत: पूर्वमयाप्रभो ।
तथाऽऽज्ञापयमांतातयथाज्ञाकरबाणिते ।४३

कन्या ने कहा—मैं इनके रूप को देखकर ही विवाहोद्यत नहीं हुई हूँ वरन् इनके शौर्य तथा पराक्रम ने मेरे मन में घर कर लिया है । इस लिए पिताजी ! मैं निश्चय कर चुकी हूँ कि इनके अतिरिक्त में किसी अन्य को वरण नहीं करूंगी । आप इनको ही मेरे लिए समझाइये । इन पर राजा विशाल ने अवीक्षित से कहा—राजकुमार ! मेरी कन्या ने जो कुछ कहा बिल्कुल ठीक ही है । तुम्हारे समान राजकुमार मुझे कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता । तुम्हारी वीरता में कुछ भी सन्देह नहीं और तुम्हारा पराक्रमी भी प्रत्यक्ष ही है, इसलिए तुम्हारे द्वारा मेरी कन्या का पाणिग्रहण किए जाने से मेरा कुल पवित्र होगा । यह सुनकर अवीक्षित ने कहा—हे राजन् ! अब मैं इसे अथवा किसी भी अन्य स्त्री को ग्रहण नहीं करूंगा क्योंकि मैं अब अपने को स्त्री ही समझता हूँ। तब

महाराज करन्धम ने भी अपने पुत्र को समझाया कि तुम इस कन्या का पाणिग्रहण करो क्योंकि इसको तुम्हारे प्रति हार्दिक अनुराग उत्पन्न होगया है। अवीक्षित ने उत्तर दिया—पिताजी ! मैंने आज तक कभी आपकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया। इसलिए आप मुझे ऐसी कोई आज्ञा न दें जिसे पालन करने में मैं समर्थ न होऊँ ।३७-४३।

अत्यन्तनिश्चितमतौतस्मिन्नाजयुतेसुताम् ।
तामुवाचविशालोऽपिब्याकुलीकृतमानसः ।४४
निवर्त्यतामनः पुत्रियतस्माच्चप्रयोजनात् ।
अन्यंवरयभर्त्तारसन्त्यनेकेनपात्मजाः ।४५
वरंवृणोम्यहंतातमामेषयदिनेच्छति ।
तपसाऽन्योनमेभर्त्ताजन्मन्यस्मिन्भविष्यति ।४६
ततः करन्धमोराजविशालेनसमंमुदा ।
स्थित्वादिनत्रयंतत्रनिजमभ्याययौपरम् ।४७
अवीक्षितोपितेनैवपित्रात्यैश्चनराधिपैः ।
निदर्शनेपुरावृतैः सांत्वितोऽभ्यागमत्पुरम ।४८

जब विशाल राजा ने देखा कि अवीक्षित ने विवाह न करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है तो उसने पुत्री से कहा कि जब राजकुमार की ऐसी भावना होगई तो अब तू इस विचार का त्यागकर किसी अन्य राजकुमार का वरण करले। कन्या ने उत्तर दिया—पिताजी ! यदि वे राजकुमार विद्यार्थी नहीं होते तो मेरा निश्चय भी यही है कि इस जन्म में मेरा पति 'तपस्भा' के अतिरिक्त और कोई नहीं होगा। मार्कण्डेयजी ने कहा—राजा करन्धम तीन दिन तक विशाल राजा के यहाँ अतिथि सत्कार ग्रहण करके अवीक्षित भी उनके साथ चले गये ।४४-४८।

सापिकन्यागनंगत्वानिसृष्टानिजवान्धवैः ।
मपस्तेपेनिराहारावैराग्यं परमास्थिता ।४९
निराहारयदासातुमासत्रयमवस्थिता ।

सप्राप्यपरमामर्निकृशाधमनिसन्तना ।५०
मन्दोत्साहातितन्वगीममूषृ परिबालिका ।
देहत्यागायसाचक्रेतदावुद्धिनृपात्मजा ।५१
आत्मत्यागायतांज्ञात्वाकृतबुद्धिसुरास्ततः ।
ममेत्यप्रेषयामाससुर्देवदतन्तदन्तिकम् ।५२
समुपेन्यतांप्राहदूतोऽहपार्थिबात्मजे ।
प्रेषितस्त्रिदशैस्तुभ्ययत्कार्यतन्निशामय ।५३
नभत्वृत्तापरित्याज्यशरीरमतिदुर्लभम् ।
त्वभविष्यसिकल्याणिजननीचक्रवर्तिनः ।५४
पुत्रेणचमहाभागेभोक्तव्यानिहृतारिणा ।
अव्याहताज्ञेनचिरंसप्तद्वीपवतमही ।५५
हन्तव्यस्तेनतरुजिद्‌देवानांपुरतोरिपुः ।
अयः शंकुस्तथाक्रः रोक्षमेंस्थाप्यास्ततः प्रजा ।५६
परिपालनीयमखिलंचातुर्वर्ण्य स्वधर्मतः ।
हन्तव्यादस्यवोम्लेच्छायेतुष्टचेष्टिताः ।५७
व्यष्टव्यविविधैर्यज्ञैः समाप्तवरदक्षिणै ।
वाजिमेवादिभिभद्रेषटसहस्रैश्चसंख्यया ।५८

विशाल राजा की कन्या भी परिवार वालों से विदाले वन में वास करती हुई बड़े समय तक नियम से तपस्या करने लगी। तीनमहीने तक निराहार रहने से वह अत्यन्त दुर्बल होगई और शरीरकी नसें दिखलाई पड़ने लगी। अपने शरीर की ऐसी दशा देखकर उस कन्या ने निराश हो प्राण त्यागने का निश्चय कर लिया।' जब देवताओं ने उन्हें ऐसा कार्य करते देखा तो उन्होंने एक देवदूत उसके पास भेजा। जिसने आकर कहा-हे राजकुमारी ! मैं देवताओं का दूत हूँ। उन्होंने कहलाया है कि वह दुर्लभ शरीर सहज में नहीं मिलता। तुम आगे चलकर एक चक्रवर्ती राजा की जननी बनोगी। हे महाभागे ! तुम्हारा पुत्र बाहुबल से समस्त शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके अनेक वर्षों तक समस्त पृथ्वी

का अधीश्वर बना रहेगा। वह देवगणों के शत्रु परजित और अपाशंकु को भी मारकर उनका हितकारी होगा। वह प्रजा को धर्माचरण के लिए प्रेरित करेगा, चातुर्वर्ण्य में धर्म को प्रतिष्ठित करेगा और म्लेच्छ, दस्यु आदि दुष्टों को नष्ट करके प्रजा को सुखी करेगा वह हजारों अश्वमेघ आदि हजार यज्ञ करके बहुत दक्षिणा देगा।४६-५८।

तद्दृष्टवासाऽतीरक्षस्थंदिव्यस्त्रनुलेपनम् ।
देवदूतमुवाचेदराजपुत्रीततोमृदु: ।५६
सत्यत्वमागतस्वर्गाद्देवदूतानसंशय: ।
किन्तुमर्त्राविनापुत्र: सकथमेभगिष्यति ।६०
अविक्षितमतेभर्त्तामम्नान्योऽत्रजन्मनि ।
भवितेतिप्रतिज्ञातंमयैतत्सन्निधौपितु: ।६१
सचनेच्छतिमांप्रोक्तोमत्पितृजनकेनच ।
करन्धेमेनाथसम्यग्याचित्तश्वमयातथा ।६२
किमनेनमहाभागेबहुनोक्तेनतेसुत: ।
समुत्पत्स्यतिमात्याक्षीस्त्वमात्मानमधर्मत: ।६३
अत्रैवकाननेतिष्ठतनुक्षीणाँचपोषय ।
तप: प्रभावादेतत्ते सर्वसाधुभविष्यति ।६४
इत्युक्त्वादेवदूतोऽसीयथागतमच्छत ।
चकारानुदिनंसुश्रूसाप्यात्मतनपोषणम् ।६५

मार्कण्डेयजी कहने लगे—यह राजकन्या उन दिव्य जिन्होंने युक्त देवदूत को आकाश में देखकर मीठी बाणी से कहने लगी—आप स्वर्ग के देवदूत हैं इस कारण आपकी बातें असत्य नहीं हो सकती, किन्तु पति के बिना मेरे पुत्र किस प्रकार होगा। मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि अबीक्षित के अतिरिक्त मैं किसी और को बरण नहीं करूंगी और उन्होंने मेरे पिता, अपने पिता, तथा मेरे अनुरोध को भी स्पष्ट, अस्वीकार करके बिवाह न करने का दृढ़ निश्चय प्रकट किया है। देवदूत ने कहा—देवगण का कथन अ यथा नहीं हो सकता निःसन्देह तुमको पुत्र उत्पन्न होगा। इसलिए तुम इस आत्महत्या रूपी पाप के विचार को

त्याग कर इस वन में रहकर ही अपनी देह की रक्षा करो। तपस्या के प्रभाव से तुम्हारे सभी मनोरथ अवश्य पूर्ण होंगे। इस प्रकार विशाल राजा की कन्या को समझाकर देवदूत अपने स्थान को चला गया और वह भी आहार ग्रहण करके शरीर का पोषण करने लगी।५६-६५।

११२-अवीक्षित चरित [४]

अथसाऽविक्षितोमातावीराप्रजावती।
पुण्येऽहनिसमाहूयप्राहपुत्रमविक्षिनम् ।१
पुत्रहभ्यनुज्ञातोतवपित्रामहात्मना।
उपवासकरिष्यामिदुष्कारोऽयकिमिच्छक। ।२
सचायत्तस्तवपितुस्त्वयाध्योतयापिच।
प्रतिज्ञातेत्मतापुत्रतस्तत्रयतांम्यहम् ।३
द्रव्यस्यार्द्धं महाक्कोशातवदास्याम्यहपितु:।
धनतेपितुरायत्तमनुज्ञाताऽस्मितेनच ।४
क्लेशसाध्योमदात्तः सहिक्षेयोभविष्यति।
साध्योभवेद्वायदितेकश्चिं दूबलपराक्रमः ।५
सतेऽसाध्यो न्यथोवादुःखसाध्योभष्यिति।
तत्वंतप्रतिज्ञांकुरुषेर्यदिपुत्रात्रचैवते।
तदैहवंमाऽस्येकथ्यतांयन्मततब ।६

मार्कण्डेयजी कहने लगे—किसी समय अवीक्षित की माता वीरा देवी ने अपने पुत्र को बुलाकर कहा बेटा! मैं 'किमिच्छक' नाम का दुष्कर व्रत करना चाहती हूँ और तुम्हारे सहयोग से पूर्ण हो सकता है। यह व्रत तुम्हारे पिता, मेरे और तुम्हारे सहयोग से पूर्ण हो सकता हैं, इसीलिए जब तुम उसकी प्रतिज्ञा कर लोगे तभी मैं उसे आरम्भ करूंगी। उस व्रत में मुझे राजकोष का आधा धनदान करना है और इसके लिए तुम्हारे पिता ने स्वीकृति देदी है। शरीर के कष्ट सहन करना मेरा काम है, उसे मैं भली प्रकार सम्पन्न करूंगी और बल तथा पराक्रमसे

होने वाला जितना काम है वह तुम्हारे अधीन है। इसलिए तुम सभी कार्यों को पूर्ण करने की प्रतिज्ञा करो तो मैं इस व्रत को आरम्भ करूँ। इसलिए तुम्हारा जैसा विचार हो यह स्पष्ट करो।५-६।

वित्तमेपितुरायत्तंमत्स्वामित्वनतत्रव ।
यन्मच्छारीरनिष्पाद्यंतत्करिष्येत्वयोदितम् ।७
किमिच्छकव्रतंमातर्निश्चिन्ताभवनिर्व्यथा ।
राज्ञाहिनाऽभ्यनुज्ञातंर्यदिवित्तेश्वरेणमे ।८
ततः साराजमहिषीतद्व्रतंसमुपोषिता ।
यथोक्तंसाऽकरोप्पजांराजराजस्यसंयता ।९
निधीनामप्यशेषाणांनिधिपालगणस्यच ।
लक्ष्म्याश्चपरयाभक्त्यायतवाक्कायमानसा ।१०
वविक्तेतुगृहस्थोऽयमथराजाकरन्धमः ।
आसीनउक्तः सचिवैर्नीतिशास्त्रविशारदैः ।११
राजन्वयः परिणतन्तवैतच्छासतोमहीम् ।
एकस्तेनयोऽविक्षित्यक्तदारपरिग्रहः ।१२
अपुत्रसचतेतिष्ठायदाभूपगमिष्यति ।
तदारिपक्षपृथिवीनिशिचतंतवयास्यति ।१३
वंशक्षस्तेभवितापितृपिण्डोकदकक्षयः ।
एतन्मत्तेऽरिभयक्रियाहान्यभविष्यति ।१४
तस्मात्कुरतथाभूपयथातेतनयः पुनः ।
करोतिसततबुद्धिपितृणामुपकारिणम् ।१५

अवीक्षित ने कहा—राज्य भण्डार का धन तो पिताजी का ही है, उसके लिये कुछ भी कहना नहीं है। मेरे शरीर मे होने वाले कार्यों के लिए मैं आपकी आज्ञा का हर तरह से पालन करने को प्रस्तुत हूँ यदि पिताजी धन व्यय करने को प्रस्तुत हैं तो आप निश्चिन्त होकर प्रसन्नता पूर्वक 'किमिच्छक' व्रत का अनुष्ठान करिए। मार्कण्डेयजी कहने लगे—

तत्पश्चात् राजमहिषी वीरा देवी ने बड़े उत्साह पूर्वक उस व्रत को आरम्भ किया और उपवास रखकर मन, वचन, कामसे पूर्ण संयम करते हुए शास्त्र विधि से निधि समूह, निधिपालगण और लक्ष्मी देवी का पूजन करने लगी। इस अवसर पर महाराज करन्धम अपने सुयोग्य मन्त्रियों के साथ मन्त्रणागृह में बैठकर व्यवस्था करते रहते थे। उस समय मन्त्रियों ने राजा से कहा—हे महाराज! राज्य का पालन करते हुए आपकी अवस्था पूर्ण हो चली है और आपके एकमात्र पुत्र ने स्त्री सम्पर्क त्यागकर कोई सन्तान उत्पन्न नहीं की है। यदि वे आजन्म इसी प्रकार ब्रह्मचारी बने रहे तो अन्त में आपका यह राज्य शत्रुओं के अधिकार में चला जायेगा। इस प्रकार आपका वंश क्षय होकर पितरों का श्राद्ध और तर्पण बन्द हो जायगा। इसलिए जैसे भी संभव हो आप ऐसा उपाय कीजिए जिसमें आपका पुत्र गृहस्थ आश्रम स्वीकार करके पितरों के श्राद्ध और तर्पण को स्थिर रख सके।७-१५।

एतस्मिन्नन्तरेशब्दशुश्रावजगतीपतिः।
पुरोहितस्यवीरायागतोह्यर्थिनप्रतिः।१६
कःकिमिच्छतिः दुसाध्यंकस्यंकिसाध्यतामिति।
करन्धमस्यमपिषीकिमिच्छवामुपोषिता।१७
राजपुत्रोऽप्यविक्षित्तुश्रुत्वापौरोहितंवचः।
प्रत्युवाचार्थिनःसर्व्वाम्राजदारमुपागतान्।१८
मयासाध्यं शरीरेणयस्यकिञ्चिद्ब्रवीतुसः।
ममसातामहाभाग किमिच्छिकमुपोषिता।१९
शृणुवन्तुमेऽर्थिनः सर्वेप्रतिज्ञातंमयातदा।
किमिच्छथदंदाम्येषक्रियमाणोकिमिच्छके।२०
ततोराजानिशम्यैतद्वाक्यंपुत्रमुखाच्छ्रुतम्।
तमुत्पत्याब्रवीत्पुत्रमहामर्थोप्रयच्छमे।२१
दातव्यंयन्मयातातभवतेतद्ब्रवीहिमाम्।
कर्तव्यंदुष्करंवातेसाध्यंदुःस्साध्य।२२

मार्कण्डेजी कहने लगे—उसी समय राजा के कानों से पुरोहितों के ये शब्द आये कि 'करन्धम की राजमहिषी 'किमिच्छक' व्रत करती है। तुम क्या इच्छा करते हो ? जिसका जो कठिन कार्य पूरा किया जाने को हो वह उसके सम्मुख कहो।' अवीक्षित ने भी पुरोहितों के इन वचनों को सुना और तब वह भी द्वार पर आकर कहने लगे—'हे अर्थीगणो ! मेरी प्रतिज्ञा है कि मेरी भाग्यवती माता जी 'किमिच्छक' व्रत कर रही हैं, उनके सम्बन्ध में भी प्रत्येक कार्य जो कुछ मेरा शरीर से सम्बन्ध है, पूरा करने को प्रस्तुत हूँ। जब राजा करन्धम ने अवीक्षित को इस प्रकार कहते सुना तो उसने अवीक्षित के सामने जाकर कहा—पुत्र ! मैं भी अर्थी हूँ, मेरी अभिलाषा को भी पूर्ण करो अवीक्षित ने कहा—पिताजी ! आपको क्या दूँ ? आप जो चाहते हो उसकी आज्ञा दें। मैं उसे पूरा करूंगा।१६-२२।

यदिसत्यप्रतिज्ञस्त्वददासिचकिमिच्छकम् ।
पौत्रस्यदर्शयमुखममौत्संगतस्यतत् ।२३
अहन्तवैस्ततनयोब्रह्मचर्य्यं चमेनृप ।
नमेपुत्रोऽस्तिपोत्रस्यदर्शयामिकथमुखम् ।२४
पापायब्रह्मचर्य्यंन्यदिदंधाय्यतेत्वया ।
तस्मात्वमोचयात्मानंममपौत्रचर्शये ।२५
विषमस्यान्महाराजयदन्यत्तत्समदिश ।
वैराग्येणमयायक्तः स्त्रीसंभगस्तथास्तुसः ।२६
वलादेवसमादत्तेक्षत्रियावलिनम्पुरः ।
बहुभियुंध्यमानाँदृष्टोवैवैरिणाँजयः ।
तत्रापियदिवैराग्मुपेषितदपण्डितः ।२७
किंवानीबहुनोक्तेनब्रह्मचर्य्यपरित्यज ।
मातुस्त्वमिच्छया वक्त्रपौत्रस्यमादर्शय ।२८

राजा ने कहा—'अगर तुमने किमिच्छिक व्रत में दान करने की प्रतिज्ञा सचमुच की है तो मुझे पौत्र का मुख दिखाओ। अवीक्षित ने उत्तर दिया—पिताजी। आपका एक मात्र पुत्र तो मैं ही हूँ और मैंने

सदा के लिए ब्रह्मचर्य पालन का निश्चय किया है और मेरे कोई पुत्र नहीं है। इस कारण आपको पौत्र का मुख कैसे दिखा सकता हूँ ? महाराज करन्धम ने कहा—तुमने जो ब्रह्मचर्य धारण किया है। वह नीति विरुद्ध पाप कार्य है इसलिए उसे त्याग कर मुझे पौत्र का मुख दिखाओ। अवीक्षित ने कहा कि इस प्रकार ब्रह्मचर्य व्रत का त्याग मत के बहुत विरुद्ध है। मैंने वैराग्य भावना से स्त्री सम्पर्क का त्याग किया हैं, अतएव आप मुझे ऐसी आज्ञा दें जिससे मेरा व्रत खंण्डित न हो। राजा ने कहा तुमने बड़ी-बड़ी सेनाओं सहित बलवान वैरियों को हराया है इस पर भी तुम वैराग्य धारण करते हो तो कोई तुमको बुद्धिमान नहीं कह सकता। कुछ भी हो, इस समय में अधिक विवाद न करके मुझे पौत्र का मुख दिखाओ।२३-२८।

यदासबहुशस्तेनप्रोक्त: पुत्रेणपार्थिव: ।
नान्यत्प्रार्थयतैकिंचित्तदापुत्रोऽप्रवीत्पुन: ।२६
दत्वाकिमिच्छकंभ्यंप्राप्तोऽहतासंकटम् ।
तत्करिष्यामिनिलज्जोभूयोदारपरिग्रहम् ।३०
स्त्रिया समक्षंविजित पतितोधरणीले ।
स्त्रीपतिर्भविताभूयस्तात्रैतदतिदुष्करम् ।३१
तथापि किंकरोम्येषसत्यपाशबंगत: ।
करिष्यामियथाऽऽत्थत्वभुज्यतांनिजशासनम् ।३२

मार्कण्डेय जी कहने लगे—यद्यपि अवीक्षित ने बार-बार अपनी कठिनाई बतलाई और राजा से कोई दूसरी बात माँग लेनें को कहा—पर जब वे न माने तो उसनें कहा—पिताजी ! मैं 'किमिच्छिक' व्रत के लिए इच्छानुसार दान देने की प्रतिज्ञा करके संकट में पड़ गया हूँ, इस लिए निर्लज्ज होकर फिर गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होना ही पड़ेगा। अन्यथा सच्ची बात तो यह थी कि अब मैं स्त्री के सामनें पराजित होकर पृथिवी में गिर गया तो अब मैं स्त्री और यह पति के समान होगी, वास्तव में यह मेरे लिए बड़ा कठिन कार्य हैं। तो भी जब मैं आपसे

प्रतिज्ञा-बन्धन में बँध गया हूँ, तो आपने जो कहा है उसे अवश्य करूँगा आप अब इस विषय में निश्चित हो जायें और अपना राज्य-कार्य करते रहें ।२९-३२।

११३–अवीक्षित चरित्र (५)

कदाचिद्राजपुत्रेऽसौमृगयामचरद्वने ।
मृगांन्विध्यन्वराहांश्चशार्दूलादींश्चदंष्ट्रिण: ।१
शश्रावसहसाशब्दंत्रात्रहितियोषित: ।
विक्रोशन्त्या: सुबहुशौभयगद्गदमुच्चकै: ।२
माभैर्मा भैरितिवदतिराजपुत्र: सवेगित: ।
चोदयामासतुरगंयत: शब्द: समागत: ।३
तत: चसापिचुक्रोशचन्यकाविजनेवने ।
गृहीतादनुपुत्रेणदृढकेशेनमानिनी ।४
करन्धमसुतस्याहंभार्याचाहमवक्षित: ।
हृत्यनायोविपिनेपृथिवीशस्यधीमत: ।५
यस्यसर्वेमहीपालास्तथागन्धर्वगुह्यका: ।
नसमर्थापुर: स्थातुं तस्यभार्याहृतात्म्यहम् ।६
यस्यमृत्योरिवक्रोध: शक्रस्येवपराक्रम: ।
करन्धमसुतस्यैषातस्यभार्याहृतास्म्यहम् ।७

मार्कण्डेयजी कहने लगे–कुछ समय पश्चात् राजकुमार अवीक्षित वन में शिकार के लिए गये थे और मृग, वराह, सिंह आदि को बाणों द्वारा मार रहे थे। अकस्मात् उन्होंने किसी उच्च स्वर में रोती हुई स्त्री का 'त्राहि-त्राहि' शब्द सुना। उसे सुनते ही अवीक्षित ने 'भय नहीं, 'भय नहीं' कहते हुए उसी ओर घोड़ा दौड़ाया। उन्होंने सुना कि दानव द्वारा ग्रस्त वह युवती कन्या कह रही है कि 'मैं महाराज करन्धम के पुत्र अवीक्षित की पत्नी हूँ, यह पापी दानव मुझे बलपूर्वक पकड़ रहा हैं। जिनके सामने कोई भी राजा और गुह्यक, गन्धर्व आदि देवगण भी

शत्रु-भाव से नहीं ठहरते, मैं उनकी ही पत्नी होकर हरण की जा रही हूँ। जिनके क्रोध में पड़कर कोई बचकर नहीं जा सकता उन महाराज करन्धम के पुत्र की भार्या को यह पापी हरण कर रहा है।१-७।

इत्याकर्ण्यमहीलातनयः सशरासनी।
चिन्तयामासकिमिदममभार्यात्रकानने।८
मायेयंरक्षसांनूनदुष्टानांकाननौकसाम्।
अथवागताएवाहृत सर्ववेत्स्यामिकारणम्।९
त्वरितः सततांगत्वाहृदर्शातिमनोहरमाम्।
काननेकन्यकामेकांसर्वालंकारभूषिताम्।१०
गृहीतांदनुपुत्रेणदृढकेशेनदंडिनः।
त्राहित्राहीतिकरुणवक्रोशन्तीपुनपुनः।११
माभैरितिसतामाहहतोऽसीतिचतं वदन।
शासतीमांमहीदुष्टकोदूयेतकरन्धमे।१२
शस्यप्रतापावनभुविसर्वेमहीक्षितः।
ततस्तमागतं दृष्टवाग्रहीतवरकामुकम्।१३
मांत्राहीत्याहतन्वीहृतास्म्येयेतिचासकृत्।
राज्ञःकरन्धमस्याहस्नुषाभार्य्याऽविक्षितः।
हृतास्म्येतेनदुष्टेपसनाथाऽनाथवद्वने।१४

मार्कण्डेयजी कहने लगे—अवीक्षित इन शब्दों को सुनकर विचार करने लगा कि इस वन में मेरी पत्नी कहाँ से आई। हो न हो यह राक्षसों की माया है। तो भी जब आगे बढ़कर उन्होंने देखा कि दृढ़केश नामक दानव अनेक आभूषणों से युक्त एक अत्यन्त मनोहर कन्या को पकड़ रहा है और वह बार-बार 'त्राहि-त्राहि कहकर रो रही है तो इन्होंने कन्या से कहा—'डरो मत।' फिर वे दानव से बोले—अब तेरी मृत्यु आ चुकी है, महाराज करन्धम के शासन काल में कौन इस प्रकार अत्याचार कर सकता है। जिन महाराज करन्धम के सम्मुख पृथ्वी के समस्त नृपतिगण मस्तक झुकाते हैं, उनके शासन में कोई दुष्ट

जीवित नहीं रह सकता। उस प्रचण्ड धनुष धारण किये राजकुमार को वहाँ आया देखकर वह कुमारी बार-बार कहने लगी—मेरी रक्षा करो। यह दुष्ट मुझे अपहरण कर रहा है। मैं करन्धम पुत्र अवीक्षित की भार्या हूँ और अनाथ के समान हरण की जा रही हूँ।८-१४।

ततोविमममृशेवाक्यमविक्षिप्सतथोदिम्।
कथमेषाहमेभार्य्यास्तुपातातस्यवाकथम्।१५
अववामीचयाम्येतांतन्वीवेतयामितत्पुन:
क्षत्रियैर्धायतेशस्त्रमार्त्तानांत्राणकारणात्।१६
तत:क्रोद्धोऽप्रवीदवीरोदानबंतसुदुर्मतिम्।
जीवन्गच्छविमुच्यैनामन्यथानभविर्षसि।१७
तत:सतांविहायोच्चैर्दण्डभुत्क्षप्यदानच:।
तमप्यधावत्सोऽयेनंशरवर्षेस्वाकिरात्:।१८
सवीर्यमाणोंवाणौर्घर्दानवोऽातमुदान्वित:।
राजपुत्रायचिक्षेपद डशंकुशतावृतम्।१९
सृमारतन्तच्चिच्छेदशरेर्भू पसुतस्त:।
सौप्यासन्नगहीत्वोच्चैद्रं माजोव्यवस्थित:।२०
तृजतशपत्रपाणितचिछेदततोद्रुमम्।
सचततिलशश्चक्र भल्लै: कामुकमोचितै:।२१
ततश्चिछेपचशिलांराजपुत्रादानव:।
सापिमोघापपातीर्व्यामुज्झततेनलागवत्।।
राजपुत्रायकुपितेयद्यच्चिक्षंपदानव:।
तत्तच्चिचेदवाणौघेर्भूभृत्सूनु: सलीलया।२३

मार्कण्डेयजी कहने लगे—राजकुमार अवीक्षित कन्या के इस वचनों को सुनकर विचार करने लगे कि यह कन्या अपने को मेरी पत्नी और महाराज करन्धम की पुत्र वधू किस प्रकार कहती है जो कुछ भी हो पहले इसकी रक्षा करनी चाहिए फिर सब बात मालूम हो जायेगी। क्योंकि अत्यन्त दु:खी और अत्याचार पीड़ित

व्यक्तियों की रक्षा के लिएही क्षत्रीगण शस्त्र धारण करते हैं। तत्पश्चात् उन्होंने अत्यन्त क्रोधपूर्वक उस दुष्ट दानव से कहा यदि तुझे अपनी जान बचानी है तो यहाँ से शीघ्र भाग कर चला जा अन्यथा मैं तुझे अभी यमालय पहुंचाता हूं। राज पुत्र की बात सुनकर वह उस कन्या कोछोड़ दण्ड हाथ में ले उन्हें मारने दौड़ा। अवीक्षित ने उसे बीच में ही बाणों से रोक दिया। दानव ने उन बाणों को रोककर बड़े अहंकार के साथ राजपुत्र पर दण्ड को फेंककर मारा, पर उन्होंने उसे बाणों से काटकर टुकड़े-२कर दिया। तब दानव एक बड़ा वृक्ष उखाड़कर मारने को चला पर अवीक्षित ने बाणों द्वारा उसे भी खन्ड-खन्ड कर डाला। तत्पश्चात् वह बड़े-२ शिलाखंड लेकर उनको फेकने लगा, पर राजकुमार ने उन सब बाणों को व्यर्थकर दिया। उसने मारने के लिये जो कुछ चलाया उसे अवीक्षित ने सहज म काट डाला।१५-२३।

ततोविच्छन्नदण्डोसाविच्छिन्नसकलायुधः।
मुष्टिमुद्यम्यसक्रोधोराजपुत्रमधावत ।२४
तस्यापततएवासौकरन्धमसुतः शिरः।
छित्वावेतसमत्रेणपातयामासवैभुवि ।२५
तस्मिन्विहतेवैदानिवेदुश्टचेष्टिते।
करन्धससुतसर्वः साधुसाध्वितिभाषितः।२६
वरवृणोष्वेतितदादेवैरुक्तोनृपात्मजः।
वव्रे पुत्रमहावीर्यपितुः प्रियच्चिकीर्षया।२७
भविष्यतिहितेतुत्रश्चक्रवर्ती महाबलः।
अस्थापृवह्किन्यायांमोक्षितायाँत्वयानघ।२८
पितामहसत्यपाशेनबद्धइच्छायहसुतम्।
राजाभिर्निर्जितेनाजीत्यक्तोमेदारसंग्रह।२९
साचमेयावतात्यक्ताविशालनृपतःसुता।
तयाचमन्कृतेत्यक्तोमामृतेनरसंगमः।३०
तत्कथंतामपास्याद्यविशालनयामहम्।

नृशांसात्माकरिष्यामिअन्यनारीपरिग्रहम् ।३१

इस पर वह क्रोध से भर गया और घूंसा उठाकर प्रचण्ड वेग से राजपुत्र पर झपटा, पर उन्होंने एक कराल बाथ ऐसा छोड़ा कि उसका मस्तक कटकर पृथ्वी पर गिर गया । उस महादुष्ट दानव को इसप्रकार मरा हुआ देखकर देवगण 'साधु स धु' कह उसकी प्रशंसा करने लगे और कहने लगे कि तुम्हारी जो अभिलाषा हो वही वर माँगो अवीक्षित ने अपने पिता द्वारा इच्छित मांग का स्मरण करके एक पराक्रमीपुत्रकी प्रार्थना की । देवगण बोले–हे निष्पाप ! जिस कन्या की तुमने दानव से रक्षा की है उसी के गर्भ से तुमको एक महावीर चक्रवर्ती पुत्र पैदा होगा । राजपुत्र ने कहा—मैं पिता के सम्मुख प्रतिज्ञा करने के कारण पुत्र की कामना कर रहा हूँ, अन्यथा स्वयम्बर के अवसर पर युद्ध मेंहार कर मैंने स्त्री का विचार सर्वथा त्याग कर दिया था । जब मैंनेविशाल राजा की कन्या के साथ विवाह करना अस्वीकार कर दिया था, तबसे उस कन्या ने भी मेरे अतिरिक्त और किसी को वरण न करने की प्रतिज्ञा करली थी । अब मैं उस कन्या को छोड़कर अन्य नारी को किस प्रकार ग्रहण कर सकता हूँ ।२४-३१।

इयमेवहितेभार्याशलाध्यतेयात्वयासदा ।
विशालस्यसुतासुभ्रूस्त्क्रतेयाऽऽश्रितातपः ।३२
अस्यासुतपत्स्यतवीर सप्तद्वीपप्रसाधकः ।
यष्टायज्ञसहस्राणाँचक्रवर्तीतुतस्तत ।३३
इत्युच्चाययय्युर्देवाः कन्धमसुतद्विज ।
सोयाहतातदापत्नीकथ्यतांभीरुकिंत्विदम् ।३४
साचास्मैकथामासत्यक्ताहंभवतायदा ।
त्यक्तवन्धुजनाऽरण्यनिर्वेदात्समुपागता ।३५
अत्राहतपसावीरक्षीणप्रायकलेवरम् ।
त्यक्तुकामससम्येत्यदेवदूतेनवारिता ।३६
भविष्यतिचपुत्रस्तेचक्रवर्तीमहाबलः ।

प्रीणयिष्यतियोदेवानसुरांश्चहनिष्यति ।३७
इतिदेवाज्ञायातेनदेवदूतेनवारिता ।
नसत्यक्तव्रतीदहत्वगममनोरथा ।३८

देवी ने कहा—यह वही विशाल नृप की कन्या है। जिसकी तुम प्रशंसा कर रहे हो और जो तुम्हारे लिए वनवासिनी होकर तपस्याकर रही है। इसी के गर्भ से तुमको एक ऐसा पुत्र जन्म ग्रहण करेगा जो सातों द्वीपों का शासन, सहस्रों यज्ञों का करने वाला होगा।' जब देव गण यह कहकर अन्तर्धान हो गये तो राजकुमार ने पत्नी से पूछा—तुम इस विपत्ति में किस प्रकार फँस गई। वह कहने लगी—जब आप मेरे पिता के नगर से मुझे छोड़कर चले आये तब मैं भी दुःखित चित्त से परिवार वालों को त्याग वन में रहने चली आई। यहाँ पर निराहार तपस्या करने से जब मैं अत्यन्त दुर्बल हो गई और निराशहो कर देह त्याग का विचार करने लगी तो एक देवदूत ने आकर मुझे ऐसा कहा—तुम्हारे गर्भ से एक महापराक्रमी पुत्र जन्म लेगा, जो असुरों को मारकर देवताओं का कृपापात्र बनेगा, इसलिए तुम इस प्रकार आत्मघात मत करो। इस प्रकार आशान्वित होकर मैंने जीवन त्याग करने का विचार छोड़ दिया।३२-३८।

परश्वश्चमहाभागस्नानुं गङ्गाह्लदता ।
अवतीर्णाविकृष्टास्मिवृद्धनागेनकेनचित् ।३९
ततोरसातलनीतातेनतत्रचमेपुरः ।
नागाः सहस्रशस्तथुर्नागपत्न्यः कुमारकाः ।४०
तुष्टुवुर्मासमभ्येत्येतमामन्येऽपूजयस्तथा ।
ययाचिरेसविनयंनागामाभंगनास्तथा ।४१
प्रसादकुरुसर्वेषांत्वमस्यांकंसुतस्त्वया ।
अपराधमुपेतानांस निवार्योवधोन्मुखः ।४२
अपराधकरिष्यन्ति त्वत्मपुत्रस्यानिलाशनः ।
तन्निमित्तं नियार्योऽसौप्रसादः क्रियतामिति ।४३

तथेतचमयाप्रोक्तेदिव्यैः पातालभूषणैः ।
भूपिताहतथापुष्पैर्गन्धचामोभिरुतमैः ।४४
समानीतानणालोकमिन्तेनानिलाशिना ।
पुरायथाकान्तिमतीयूर्ववद्रूपशालिनी ।४५
इतिरूपवतीदृष्ट्वासलांङ्कारभूषिताम् ।
जग्राहदृढकेशोऽयहतु काम सुर्दुमंति ।४६
युष्मद्बाहुलेनाबहराजपुत्रविमोक्षिता ।
तत्प्रसीदमहाबाहोमाप्रतीच्चत्वयामसः ।
भूलोके राजपुत्रोऽन्यौनास्तिसत्यवीम्यहम् ।४७

अभी दो दिन पूर्व जब गंगा निकटवर्ती कुण्ड में स्नान करने गई तो एक बूढ़ा नाग मुझे खींचकर रसातल में ले गया, जब मैं वहाँ गई तो हजारों नाग, नाग-रमणियाँ और बालक मेरे सामने इकट्ठे हो गये और मेरी पूजा, स्तुति करके कहने लगे कि आप हमारे ऊपर कृपा करें। जिस समय हम किसी अपराध के कारण आपके पुत्र के सम्मुख दण्डनीय हों तो आप उनको रोककर हमारी रक्षा करना। यदि वायु भक्षण करने वाले नागगण तुम्हारे पुत्र का कोई अपराध करे तो उस समय आप हमारी सहायिका बने यही प्रार्थना हम करते हैं।३९-४४। जब मैंने उनकी बात स्वीकार करली तब उन्होंने पाताल-लोक के दिव्य आभूषणों, मनोहर गन्ध, वस्त्र, पुष्प आदि से मुझे सजायाऔर सर्पगण मुझे पृथ्वी पर पहुंचा गये और नागों के प्रभाव से पूर्ववत रूपवती और सौन्दर्य युक्त हो गई। आज मुझे इस प्रकार आभूषणों से विभूषित रूप सम्मान वेखकर यह दृढ़केश नामक दुष्ट दानव हरण करके लियेजा रहा था कि आप आ गए और उसके पन्जे से छुड़ा लिया। आजआपके ही बाहुबल से मेरी रक्षा हो सकी है इसलिए आप ही तुझे ग्रहण करके कृतार्थ करें। मेरा अटल विश्वास है कि इस समय आपके सदृशगुणवान राजकुमार कहीं भी नहीं हैं।४४-४७।

११४. भरत जन्म वर्णन

इतितस्यावचः श्रुत्वास्मृत्वापितृवचः शुभम् ।
किमिच्छकेप्रतिज्ञातेयतुक्तंतेनभूभृता ।१
प्रत्युवाचसतांकन्याविक्षिनृपतेः सुतः ।
सानुरागमनाकन्यात्यक्तभोगाञ्चतत्कृते ।२
यदाहृत्यक्तवास्तन्वीत्वामरातिपराजितः ।
वजित्यशत्रून्सप्राप्ताऽवंमयात्रकरोमिकिमि ।३
ममपाणिगृहाणात्वरमणोयेऽत्रकानने ।
सकामायाः सकामेनसङ्गपोगुणवान्भवेत् ।४
एवभनुभद्रन्तेविधिरेवात्रकाननम् ।
अन्यथाकथमन्यत्रश्वामञ्चसमगतः ।५

मार्कण्डेयजी ने कहा राजकुमार अवीक्षित हूँ जब राजकन्या के मुख से यह सुना और किमिच्छक व्रत के अवसर पर पिता से की हुई प्रतिज्ञा का स्मरण किया और यह भी देखा विशाल राज-कन्या ने मेरे ही लिये सब भोग त्याग रखे हैं तब उसके चित्तमें उस सौन्दर्यमयी के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया। उसने कहा—हे सुन्दरी ! शत्रुओं से हार जाने पर ही मैंने तुम्हारा त्याग किया था और आज फिर शत्रु को जीतकर ही तुमको प्राप्त किया हैअतः अब मैंक्या करू? राजकुमारी ने उत्तर दिया—इस रमणीक वनस्थल में ही आप मेरा पाणिग्रहण करें तो दो सकाम युवक युवती का वह सम्मिलित सुख शान्ति और सत्परिणाम से सिद्ध होगा। राजकुमार अवीछित ने कहा—ऐसा ही हो तुम्हारा मंगल हो। इस घटना के पीछे स्पष्ट-रूप से दैव का हाथ है, अन्यथा तुम और मैं पृथक-पृथक स्थान में रहते हुए भी आज इस अवसर पर कैसे इकट्ठे हो सकते थे ।१-५।

एतस्मान्नन्तरेप्राप्तोगन्धर्वतनयोयुमे ।
राप्सरोभिः सहितोगन्धर्वरपरैव्रतः ।६
राजपुत्रसुतेयम्मेभामिनीनाममानिनी ।

अभिशापदगत्यस्यविशालतनयाऽभवत् ।७
वालभावेवेनलोऽगस्त्य: कोपित: क्रीडमानया ।
ततस्तेनतदाशप्तामानुषीत्वभविष्यसि ।८
प्रसादित: सचास्मभिर्वातियमाविवेकिनी ।
तवापराद्धत्रिप्रर्येप्रसाद. क्रियतामिति ।९
प्रसाद्यमान: सोऽस्माभिर्हिदमाहमहामुनि: ।
बालेतिमत्वाज्ञापोदत्तोऽस्यानान्ययैवतत् ।१०
इतिशाष गण्त्यस्यविशालभवनेशुभा ।
जातेयमस्स् तास् भ्रू र्भामिनीनामनामत: ।११
तदस्यापकृतेप्राप्ततोगृहानेमांनृपात्मजाम् ।
ममात्मजांस् तस्पेऽत्रक्रवर्ती भविष्यति ।१२

मार्कण्डेयजी कहने लगे—जिस समय अवीक्षित और विशाल राज कन्या का यह वार्तालाप हो रहा था उसी समय तनय नामक गन्धर्व अन्य अनेक गन्धर्वों के साथ वहाँ आया। उसने कहा यह कन्यावास्तव में मेरी ही है और इसका नाम मानिगी हैं। अगस्त्य ऋषिको इसने एक बार क्रोधित कर दिया था तब उन्होंने शाप दिया कि तू मनुष्य योनि में जन्म ले। मैंने उनसे प्रार्थना की कि यह एक अबोध कन्या है इसके ऊपर क्रोधित होना उचित नहीं। आप इस पर कृपा करें। महामुनि अगस्त्यजी ने मेरी प्रार्थना से प्रसन्न होकर कहा कि बालिका समझकर ही मैंने इसे सामान्य शाप दिया है। पर अब वह सर्वथा मिट नहीं सकता मेरी प्रिय कन्या ने स्त्री शाप के कारण विशाल राजा के यहाँ जन्म ग्रहण लिया था। अब मैं इसके लिए ही यहाँ आया हूं कि आप मेरी कन्या का पाणिग्रहण करें इसके गर्भ से आपको चक्रवर्ती पुत्र प्राप्त होगा ।९-१२।

तथेत्युक्त्वेतितस्याश्चसपाणिपार्थिवात्मज: ।
जग्राहविधद्धोमंचक्रे तत्रचतुम्बुरु: ।१३

प्रजगुर्देवगन्धर्वाननृतुश्चाप्सरोगणाः।
पुष्पाणिससृजेर्मेघादेववाद्यानिसस्वनुः।१४
विवाहेराजपुत्रस्यतयात्रसमेयुषः।
समस्त वसुधात्राणकर्तृ कारणभूतया।१५
ततोगन्धर्वलोकतेसहतेनमहात्मना।
निशेषेणययुः साचस चराजसुतोमुने।१६
भामिन्ययुमुदेसार्द्धं मविक्षिन्तृपन्दन।
याचतेनसमत्रभोगसम्पत्ससन्विता।१७
कदाचिदति रम्येअसौगगकोपवनेतया।
विक्रीडतिसमंतन्वयाक्काचिदुपर्वते।१८
कदादित्पुलिनेनद्याहसंसारसशोभिते।
कदाचिद्भवनस्यान्तेप्रासादेचाति शोभने।१९
विहारदेथेष्वन्येषुरमणीयेष्वहर्तिशम।
सरेमेसातिस्तन्व्यासाचतेनमहात्मना।२०

राजकुमार अवीक्षित ने गन्धर्व का वचन सुनकर तथास्तु कहा—तब गन्धर्वों के पुरोहित तुम्बरु ने उनदोनों का पाणिग्रहण संस्कार यथा विधि होम करके सम्पादन कराया। उस अवसर पर देवता, गन्धर्व हर्ष से गाने बजाने लगे, अप्सरायें नाचने लगीं आकाश में पुष्पवर्षाहोने लगी और देवगण अपने वाद्य बजाने लगे। तत्पश्चात् पृथ्वीमण्डल के पालनकर्ता (चक्रवर्ती शासक) की जननी होने वाली कुमारी यथा राजकुमार अवीक्षित के विवाह में आये हुये समस्त गन्धर्व उस प्रमुख गन्धर्व तनय के साथ गन्धर्व लोक को चले गये। राजकन्या और राजकुमार अवीक्षित उनके साथ गये। वहाँ पर वे दोनों पति-पत्नी एक-दूसरे के सहवास और प्रेमयुक्त व्यवहार से अत्यन्त सन्तोष को प्राप्त हुए। वे अपनी उस मनोहर भार्यासहित कभी नगर के उपवनोंमें कभी उपपर्वतों की क्रीड़ा करने लगे। कभी हन्स-सारस आदि से शोभायमान नदियों के तट पर, कभी भवनों में, कभी ऊँचे महलों और कभी अन्य रमणीक स्थानोंमें वे दोनों विहार सुख प्राप्त करने लगे।१३-२०।

भक्ष्यानुलेपनंवस्त्रस्रक्पानादिकमुत्तमम् ।
उपाजह्रुनुस्तयास्तत्रमुनिगन्धर्वकिन्नराः ।२१
तयाचरमतस्तस्यभामिन्यासहदुर्लभे ।
गन्धवलोकेवीरस्यपुत्रंसासुषुवेशुभा ।२२
तस्मिञ्जातेमहायोयेगन्धर्वाणांमहोत्सवः ।
बभूवमनुजव्याघ्रतेनकार्यमशेक्षताम् २३
जगुःकेचित्तथवान्येमृदगपटहानकान् ।
अवादयन्तचैवान्येवेणुवोणादिकाँस्तथा ।२४
ननृतुश्चतथातत्रवहवोऽप्सरसागणाः ।
पुष्पवृष्टिमुचोमेगाजगर्जूर्मृदुनिस्वराः ।२५
तथाकोलाहलेतस्मिन्वतमानेऽथतुम्बुरु ।
प्रणयेनस्मृतोम्येत्यजातकर्माकरान्मुनिः ।२६

वहां रहने वाले मुनि, गन्धर्व और किन्नर उनको उत्तम भक्ष्यपदार्थ पानी, वस्त्र माता और गन्ध आदि भेट स्वरूप देने लगे भोगों से भरपूर गन्धर्व लोक में राजकुमारी भामिनी के इस प्रकार विहार करते हुए राज-कन्या ने एक पुत्र को जन्म दिया। उस महावीर्य शाली पुत्र का जन्म होने पर भविष्य से उसके द्वारा महान कार्यों के सिद्ध होने की आशा से गन्धर्वों ने महान उत्सव का आयोजन किया। वहाँ पर कोई गान करने लगा, कोई मृदंग, पटह, ढोल, वेण वीणा आदि बजाने लगे। अप्सरायें मनोहर नृत्य करने लगी और मेघ फलों को वर्षा करते हुए मधुर मन्द शब्द करने लगे। इस प्रकार जब वहाँ सर्वत्र मंगल शब्द हो रहा था तब स्मरण करते ही पुरोहित तुम्बरु ने वहाँ आकर शिशु का जातकर्म पूरा किया।२१-२६।

देवाः समाययुः सर्वेतथादवर्षयोऽमलाः ।
पातालास्पत्नेगेन्द्राश्चसेषवासुकितक्षकाः ।२७
तथादेवासुरांचपेपृधानद्विजोत्तम ।
यक्षांणांगुह्यकानाँवत्रायत्रश्चतथाऽखिलाः ।२८

तदाऽऽगतं रशेषर्षिदेवदानवपन्नगौ ।
मुनिभिश्चाकुलमभू द्गन्धर्वाणामत्तहपुरम् ।२६
ततः सतुम्बरुः कृत्वाजातकर्मादिकाः क्रियाः ।
चक्रे स्वस्त्ययवालस्यतुयुतिपूर्वकम् ।३०
चक्रवर्तीमहावीर्योमाहाबाहुर्महाबलः ।
महात्तकालमीशित्वमशेषांयाः क्षितेः कुरु ।३१
इमेशक्रादयः सर्वेलोकपालास्तणर्षयः ।
स्वस्तिकुर्वन्तेवीरवीर्यचारिविनाशनम् ।३२
मरुत्तावशिवायास्तुवातिपूर्वेणयोऽरजाः ।
मरुत्तोविमलोऽक्षीणोऽभषस्यायास्तुदक्षिणः ।३३
पश्चिमस्तेमरद्वीर्य्यमुत्तामन्तेप्रयच्छतु ।
बलच्छत्रुचोत्कृष्टमरुत्तोवतथोत्तारः ।३४

मार्कण्डेयजी कहने लगे। उस समय वहाँ पर भी देवर्षि, पाताल निवासी शेष, वासुकि, तक्षक आदि नागगण, राजा, देव, असुर, यक्ष, गुह्यकों के प्रधान व्यक्ति और समस्त वायु कुल उपस्थित हुए। उस अवसर पर आने वाले ऋषि, देव दानव, पन्नग और मुनियों से गन्धर्वों का सम्पूर्ण नगर भर गया। जातकर्म सम्पन्न हो जाने पर उन तुम्बरु' ने बालक का स्वस्त्ययन इस प्रकार किया—हे वीर तुम महाबली महावीर्य और महाबाहु होकर पृथ्वीपर सार्वभौम आधिपत्य प्राप्तकरके अत्र श्रेष्ठ शासक बनो। समस्त इन्द्रादिलोकपाल और ऋषिगण तुम्हारा मंगलमय और शत्रुओं की विजय कराने वाला वीर्य विधान करें। पूर्व दिशा से चलने वाली स्वच्छ वायु तुम्हारा कल्याण करे। अक्षोण और विमल दक्षिण पवन तुम्हारे अनुकूल रहे। पश्चिम कामरुत तुमको महा-वीर्य और उत्तर का पवन बल प्रदान करे।२७-३४।

इतिस्वस्त्ययनस्यान्तवागुच्चाचाशरीरिणी ।
मरुत्तावेतिवहुशोयदिदंगुरूरब्रुवीत् ।३५
मरुतदृतितेनामं सुविख्यातोभविष्यति ।

भविचास्यमहीपालायास्यःत्याज्ञाबशायत: ।३६
एषसर्वक्षितीशानांवीरः स्वास्यतिमूर्द्ध नि ।
चक्रवर्तीमहामहावीर्यः सप्तद्वीपवतींमहीम् ।३७
आक्रम्यपृथिवीपालानय मोक्ष्यत्यवारित: ।
प्रधान: पृथिवीशानांभविष्यत्यपयाज्वनाम् ।
आधिक्य शौर्य्यवीर्येणभविष्यत्यस्यराजस् ।३८
इत्याकर्ण्यवच: सर्वेकेनाप्युक्त दिवोकसाम् ।
तुतुषुविप्रवन्धत्र्श्चिस्यमातातथापिता ।३९

इस स्वस्त्ययन का पाठ समाप्त होने पर आकाशवाणी हुई कि गुरु ने बार-बार 'मरुत' शब्द का उच्चारण किया है इसलिए इसबालक का नाम 'मरुत' ही होगा और समस्त संसारमें विख्यात होगा। समस्त राजागण इसके आज्ञावर्ती होंगे इस प्रकार सब राजाओं में शिरोमणि होगा। यह सब राजाओं को हराकर चक्रवर्ती पदवी पायेगा सातों द्वीपों में विस्तृत पृथ्वी का वरण करेगा। यह सब नरेशों और यज्ञ करने में श्रेष्ठ होगा और समस्त राजाओं की अपेक्षा बलवीर्य में प्रधानता प्राप्त करेगा। देवगण वाणी को सुनकर सब ब्राह्मण, गन्धर्व और बालक के माता पिता अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए ।३५-३९।

११५. मरुत चरित्र (१)

तत: सराजपुत्रस्तमादातितस तम् ।
पत्नीचानुगतोविप्रगधन्त्रैरायययोपुरम् ।१
सपितुर्भवनाप्राप्यववन्दपितुरादरात् ।
चरणौसाचतन्वंगीह्रीमतोनृपते सुता: ।२
तथाहराजपुत्रोऽसौगृहीत्व: बालकसुतम् ।
धर्मासनगत भूपराज्ञामध्येकरन्धमम् ।३
मुखपौत्रस्यपश्यतद्रुतसंगस्यययन्मया ।
किमिच्छकेप्रतिज्ञात तभ्य मातु:कृत पुरा ।४

इत्युक्त्वापितुरुत्संगेतंकत्वायनयन्तः ।
यथावृत्तमशेषसकथयामासतस्तत् ५
सपरिष्वज्यतंपौत्रमानन्दास्राविलेक्षणः ।
सभाग्योऽस्मीत्यथात्मानप्रशशंसपुनः पुनः ।६
ततन्सोर्घ्यादिनासम्यग्गन्धर्वान्मुप गतान् ।
समानयामासमुदाविस्मृतान्यप्रयोजनः ।७

मार्कण्डेयजी कहने लगे राजकुमार अपने नवजात पुत्र तथा पत्नी को साथ अपने नगर में ले आये। उन्होने राजभवन में जाकर पिता की वन्दना की विशाल राजकन्या नेभी सलज्ज भाव से उनको प्रणामकिया अवीक्षित ने पुत्र को लेकर बड़े-बड़े सरदारों के साथ राज सिंहासन पर विराजमान अपने पिता महाराज करन्धम से कहा—'माताओ के किमिच्छक व्रत के अवसर पर मैंने आपसे जो प्रतिज्ञा की थी तदनुसार पौत्र को गोदी में लेकर इसका मुख देखिये।' यह कहते हुए उन्होंने पुत्र को पिता की गोदी में दे दिया और विवाह तथा पुत्र जन्म का पूरा वृत्तान्त सुना दिया। पौत्र को देख आनन्दअश्रु से पूर्ण हुए राजा अपने सौभाग्य पर स्वयं ही अपनी प्रशंसा करने लगे। फिर उन्होंने सब गन्धर्वों का सब प्रकार से सम्मान किया।१-७।

ततः पुरेमहानासीदानन्दः पौरवेश्मसु ।
अस्माकसप्ततिर्जातानाथस्येतिमहामुने ।८
हृष्टपुष्टेषुरेमस्मित्गीतवाद्यैर्वरांगनाः ।
विलासिन्योऽतिचार्वंगयोननृतुस्यमुत्तमम् ।९
राजाचद्विजमुख्येभ्योरत्नानिचवसूनिच ।
गावोवस्त्राण्ययङ्कारानदादाहृष्टमानसः ।१०
ततः सवालावबृधेशुक्लपक्षयथाशशी ।
पितृणांप्रीतिजनकोजनस्येष्टश्चसोऽभवत् ।११
आचार्य्याणांसकाशात्सप्राग्वेदांजगृहेमुने ।
ततः शस्त्राण्येशेषाणिधनुर्वेदततः परम् ।१२

कृतोद्योगोयदासोऽभूत्वखंगकर्मकर्मणि ।
अन्येषुचतथावीरशस्त्रैषुविजितश्रमः ।१३
ततोऽस्त्राणिसजाग्राहभावीद्भुमुंभवात ।
विनयावनतोतोविप्रगुरो प्रीतिपरायथा ।१४

मार्कण्डेयजी ने कहा-उस समय नगर में भी बहुत बड़े उत्सवहोने लगे और लोग यह कहकर खुशी मनाने लगे कि हमारे रक्षक राजा के सन्तान हुई है।' उस समय नगर के भीतर स्थान स्थान पर नर्तकियाँ नृत्य और गायन करने लगी। महाराज करन्धम गुणवान् ब्राह्मणों को धन, रत्न, वस्त्र आभूषण और गौओं का दान देने लगे। इसप्रकार के प्रसन्नतापूर्ण वातावरण में यह बालक क्रमशः बड़ा होता हुआ पिता का प्रीतिपात्र और अन्य साधारण मनुष्यों का भी प्यारा बन गया। बड़ा होने पर उसने आचार्यके समीप रहकर वेद,शास्त्र और धनुर्वेदकी शिक्षा ग्रहण की जब वह इन सब शास्त्रों का ज्ञाता हो गया तो खडग धनुष बाण और अन्यान्य शस्त्रों का प्रयोग सीखने के लिये भृगुवंशीय भार्गव के निकट जाकर उनका रहस्य सीखने लगा।८-१४।

ग्रहीतास्त्रः कृतीवेदेधनुर्वेदस्यपारगः ।
निष्णातः सर्वविद्यासुनवभुवततः परः ।१५
विशाशोऽपिसुतात्वात्तामुपलभ्याखिला सिमाम् ।
हर्षनिर्भरचित्तोऽभद्दौसित्रस्यचयोग्यताम् ।१६
अथराजासुतं दृष्ट्वाप्राप्तमनोरथः ।
यज्ञाननेकान्निगष्प्याद्यदत्वादानानिचाथिनाम् ।१७
कृतनेपक्रियोयुक्तःवनर्णधर्भयोपहीम् ।
परिपाल्यारिविजयीबलबुद्धिसमन्वितः ।१८
सायियासुवंनपुत्रमवक्षितमभाषत ।
पुत्रवृद्धोऽस्मिगच्छाभिवनराज्यंगृहाणमे ।१९
कृतकृत्योस्मिनास्त्यन्यचित्वमभिषेचनात् ।
सुनिष्पन्नमतोराज्यंत्वंगृहाणद्ययार्पितम् ।२०

इस प्रकार सुयोग्य गुरुओं से परिश्रम पूर्वक शिक्षा ग्रहण करके वह धनुर्वेद में पारंगत बन गया और सम्बन्धी सब कलाओं में पूर्ण निष्णात हो गया। उस समय इन विभाओं में उससे बढ़कर कोई अन्य दिखाई नहीं पड़ता था। अपनी कन्या के मनोरथ की सिद्धि दौहित्रकी विशेष योग्यता को जानकर विशाल राजा को अत्यन्त हर्ष हुआ। शत्रु पर सदा विजय प्राप्तकरने वाले और परम बुद्धिमान् महाराज करन्धम के पौत्र को प्राप्त करने की खुशी में अनेक यज्ञ करके अर्थियोंको बहुत सा दान दिया और बहुत से सत्कार्य करके प्रजा का हित साधनकिया। तदन्तर कुछ समय पीछे बन जाने की इच्छा से उन्होंने अपने पुत्र अवीक्षित से कहा—पुत्र ! अब मेरी वृद्धावस्था है और मेरी अभिलाषा वन में रहकर भगवद् भजन करने की है, अतएव अब तुम इस राज्य को ग्रहण करो। मैं दृष्टियों से अपने अपने जीवन को सफल हुआ देख रहा हूँ, अब तुम्हारा राज्याभिषेक करने के लिये कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा गया हैं, इस कारण मैं तुमसे इस भाँति से सम्पन्न राज्य काशासन भार ग्रहण करने का आग्रह करता हूँ।१९-२०।

इत्युक्तः पितरप्राहसोऽविक्षिन्नृपनन्दनः।
प्रश्रयावनतोभूत्वायियासुस्तपसेवनम् २१
नाहतातुकरिष्यामिपृथिव्याः परिपालनम्।
तापतिह्नीमनसिराच्येऽन्यत्वनियोजय।२२
तातेनमीक्षियोबद्धानस्ववीर्य्यादहंयतः।
ततः क्रियत्पौरुषमेपुरुषैपाल्यतेमहीम्।२३
योऽहनपालनापालमात्मनोऽपिवसुन्धराम्।
सकथपालयिष्मामिराच्यमन्त्रवक्षिप।२४
सस्त्रीसधर्मापुरुषोयस्त्रान्येनावद्रुह्यते।
आत्माऽसोहायश्चवातःबन्धनाद्योनमोक्षितः।२५
सोऽहकथभाविष्यामिस्त्रीसधर्मामहीपतिः।
स्त्रियः पुमान्भवेद्भर्तायि भूरेसमहीपतिः।२६

पर राजकुमार अवीक्षित स्वयं वन में जाकर तप करने के इच्छुक थे। उन्होंने कहा—'पिताजी ! मैंराज्य करने में असमर्थ हूँ। अभी तक मेरी पहली लज्जा की भावना दूर नहीं हुई है, इसलिए आप इस उत्तरदायित्व को और किसी को दे। जब मैं हारकर वन्धनग्रस्त हो गया और पिता के द्वारा छुड़ाया गया तो मेरे पुरुषार्थ और वीरता का महत्त्व ही क्या रह गया। जब मैं स्वयं अपनी रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सका तो पृथ्वी का पालन किस तरह कर सकता हूं ! बुद्धिमान और धर्माचरण वाला होने पर भी जो स्वयं शत्रुओं से पराजित होगया जो अपनी आत्मा का भी उद्धार न कर सका और पिता की सहायता से ही जो बन्धनमुक्त हो सका, वह पुरुष कहे जाने के योग्य नहीं। वह तो एक प्रकार से स्त्री ही है और कदापि राज्य करने में समर्थ नहीं हो सकता।१२-२२।

नभिन्नएवपुत्रस्य पित।पु त्रस्तथापितुः।
नान्येनमोक्षितोवीरयस्त्वपित्रामोक्षितः।
मृदयनान्यथानतु मयाशक्यनरेश्वरः।२७
हृदयेह्लीर्नमावस्त्वहमोक्षितस्त्वया।२८
पित्रोपात्तांश्रियंभुङ्तेपित्राकृच्छात्सनुद्धृतः।
जिज्ञायज्ञयः पित्रामानवः सोस्तुनोकुले।२९
स्वयमर्जितत्रित्तानाँख्यातिस्वथमुतेयुषाम्।
स्वयनिस्तीर्णकृच्छाणांयतिः साऽस्तुमेगति।३०

करन्धम ने कहा–हे वीर श्रेष्ठ, पिता और पुत्र में कोई अन्तर, नहीं होता, अतएव मेरे द्वारा छुड़ाये जाने में पराये का कोई प्रश्न नहीं और न लज्जा का कोई कारण हो सकता है। अवीक्षित ने उत्तर दिया—महाराज ! आपका कथन सत्य है, पर मेरे हृदय से वह ही भावना अब दूर नहीं हो पाती और सर्वत्र उस पराजयतथा अपमानका स्मरण हो जाता है। जो व्यक्ति की उपार्जित सम्पत्ति के भरोसे सुख प्राप्त करता है, आपत्ति में पड़जाने पर पिता द्वारा छुटकारापाता

है और पिता की कीर्ति के आधार पर ही प्रसिद्ध होता है उसका कुछ भी महत्व समझना व्यर्थ है जो स्वयं अपने पुरुषार्थ द्वारा वैभव प्राप्त करता है, स्वयं नाम कमाता, स्वयं ही आत्मा से छुटकारा पाने में समर्थ है, यही सच्चा पुरुष है ।२७-३७।

इत्याहवहुशः पित्रदाप्पुक्तोऽमसौमुने ।
तदापस्यसुतराज्येमरुत्तकरोन्नृपः ।३१
सपित्रासमनुज्ञातराज्यप्राप्यपितामहाद् ।
चकारसम्थक्सुहृदामानन्दंमुपपादयन् ।३१
राजासरधमश्चापिवीरामादायतान्तथा ।
वनजगामतसेगतवाक्कायमानसः ।३३
तत्रवर्षसहस्रंसतपस्तप्त्वासुदुश्चरम् ।
विहायदेहनृपतिः शक्रस्यापसलोकताम् ।३४
सास्यपत्नीतदावीरावर्षाणामपरंशतम् ।
तपश्चचारविप्रषजटिलामलथकनी ।३५
सालोक्यमिच्छतोभर्त्तुस्वर्गंत्रस्यमहात्मनः ।
फलमूलकृताहाराभार्गवाश्रमसंश्रया ।
द्विजातिपत्नीमध्यस्थाद्विजशुश्रूषणादृता ।३६

मार्कण्डेयजी ने कहा—जब अवीक्षित ने बारम्बार कहने पर भी राज्य भार ग्रहण करने में अपनी असमर्थता प्रकट की तो महाराजकरन्धम ने उस पुत्र मरुत को राज्य भार दे दिया । मरुत ने पिता की अनुमति पाकर पितामह द्वारा प्रदत्त राज्य भार को स्वीकार कियाऐसे सुचारु रूप से संचालन करने लगे जिससे उनके समस्त निकटवर्तियों को परम सन्तोष और आनन्द हुआ । तब महाराज करन्धम भी अपनी पत्नी वीरा कोसाथ लेकर मन वचन काया से तपस्या में निरत होने के लिए वन में चले गये वहाँ पर करन्धम एक हजार वर्ष तक कठिन तप करके देह त्याग करने पर इन्द्रलोक को प्राप्त हुए । उनकी पत्नी वीरा देवी इसके पश्चात भी सौ वर्ष तक तपस्यामें निरत रही। वहसदैव

परलोक मेंभी पति का सामीप्य प्राप्त करने की इच्छा करती रहीऔर केवल फल, मूल का आहार करके भार्गव के आश्रम में द्विज पत्नियोंके साथ सेवा और सम्मान पाती हुई समय व्यतीत करती थी। ३१-३७।

— ⁝ —

११६. मरुत–चरित्र

भगवन्विस्तरात्मसर्वममैतत्कथितंत्वया।
करन्धमस्यचरितमविक्षिच्चरितचयत्।१
आविक्षितस्तनृपतेर्मरूत्तस्यमहात्मनः।
श्रोर्चमच्छामिचरितश्रूयतेसोऽचेष्टितः।२
चक्रवर्तीमहाभागः शूरकान्तोमहापतिः।
धर्मविद्धर्मकृच्चैवसम्यक्पालयिताभुवः।३
सपित्रासमनुज्ञातराज्यप्राप्यपितामहात्।
धर्मतः पालयामासपितापुत्रानिवौरसान्।४
इयाजसुबहून्यथावस्त्वाप्तदक्षिणान्।
ऋत्विक्पुरोहितादेशर्हविष्णोमहीपतिः।५
तस्याप्रतिहतंचक्रमासीद्द्वीतेषुसप्तसु।
गतिश्चाप्यनवच्छिन्नास्वः पातालजयादिषु।६
ततः प्राप्यधनप्रियथावत्ससक्रियापरः।
अयजत्सभपायज्ञैदेवानिंद्रपुरोगमात्।७

क्रौष्टुक बोले—हे भगवन्! जब मैं सूर्यवंश के राजा मरुत के चरित्र को सुनना चाहता हूँ, सुना जाता है कि वह अत्यन्त उद्यमीप्रतिष्ठवान्।१ चक्रवर्ती महाभाग, शूर कान्त, श्रेष्ठ, बुद्धि, धर्मज्ञ, धर्माचारी तथा भले प्रकार से पृथिवी को पालन करने वाले थे।२। मार्कण्डेय जी ने कहा—पिता की आज्ञा से मरुत ने अपने पितामह सेराज्य को प्राप्त किया और प्रजा का पालन अपने पुत्र के समान करने लगे।३। यात्रियों और पुरोहितों की अनुज्ञा पर

उन महाराज ने अनेकानेक यज्ञों का अनुष्ठान किया। उनके रथ के पहिले 'सातों द्वीप में न रुकने वाले अपने कर्म में तत्पर हुए उन मरुत ने धन पाकर सब महायज्ञों के द्वारा इन्द्रादि देवताओं का यजन किया था।५-७।

इतरेचयथावर्णा स्वेस्वेकर्मण्यतन्द्रिता: ।
तदुपात्तधनांश्चक्रुरिष्ठापूर्त्तादिका क्रिया: ।८
पाल्यमानामहीतेनमरुत्तेनमहात्मना ।
योस्पर्द्धं त्रिदशावासवासिभिर्द्विजसत्तम: ।९
तेनातिशयिता सवकेवलन महीक्षित: ।
यज्विनदेवराजोऽपिशतयज्ञाभिसन्धना ।१०
ऋत्विक्तस्यतुसवर्तोवभूवांगिरस सुत: ।
भ्रातावृहस्पतर्विप्रमहात्मातपसांन्निधि: ।११
सोवर्णोमजवान्नामपर्वत: सुरसेवित: ।
षातिततेनच्छंगंक्रतंतस्यमहीपते: ।१२
तेनयस्याखिलंयज्ञ भूमिभागादिकद्विज ।
प्रसादाश्चकृता: शुभ्रास्तपसासर्वकाञ्चना: ।१३
गाथाश्चाप्यत्रगायन्तिमरुत्तचरिताश्रया: ।
सातत्येनषय: सर्वेकुर्वन्तंध्ययनयथा ।१४

सभी वर्ण अपने-अपने कर्म में तत्पर रहकर उनसे प्राप्त धन के द्वारा इष्टापूर्त इत्यादि कर्म को करते थे।७। महात्मा मरुत के द्वारा पालन की जाती हुई पृथिवी देवताओं से भी स्पर्द्धा रखती थी।९। वह मरुत राजाओं में ही प्रमुख नहीं हो गये थे, वरन् सैकड़ों यज्ञों को करने के कारण यह इन्द्र से भी श्रेष्ठ हो गये थे।१०। हे ब्रह्मन्! अङ्गिरा सुवन, बृहस्पतिजी के भाई तपोनिधि महात्मा संवर्त उनके ऋत्विक् हुए।११। देवताओं द्वारा सेवित स्वर्णमय एक पर्वत भुंजवान् नाम से प्रसिद्ध है, ऋत्विक् अपने तपोबल से उसका शृङ्ग उखाड़ कर राजा के निमित्त ले जाते थे।१२। इसी शृङ्ग के द्वारा राजा का समत यज्ञस्थान

स्वर्णमय उज्ज्वल भवनों का निर्माण हुआ था ।१३। इन मरुत के चरित्र को आधार बनाकर ऋषिगण सदा इनके चरित्र का अध्ययन करते थे ।१४।

मरुत्तनसमोनाभूद्यजमानौमहीतले ।
सदसपस्तंयद्यज्ञ प्रासादाश्चेवकांचना ।१५
अमाद्यदिन्द्रः सोमेनदक्षिणाभिर्द्विजातयः ।
विप्राणांपरिवेष्टारः शक्राद्यास्त्रिदशोत्तमाः ।१६
यथायज्ञ मरुत्तस्यतृप्ता सर्वेमहीपतेः ।
सुवर्ण्य मखिलंत्यक्तरत्नपूर्णगृहेद्विजैः ।१७
प्रासांदशिसमस्तचसौवर्णतस्ययत्क्रतौ ।
त्रयोवर्णाह्यलभ्यन्ततस्मात्केत्तिथाददुः ।१८
तेनत्यक्तेनशिष्टायेजनाः पूर्णमनोरथाः ।
तेपितज्ञान्यजैतेस्मदेशेदेशेपृथक्पृथक् ।
यस्यैवकुर्वतोराज्यसम्यक्पालयतः प्रजाः ।
तपस्वीकश्चिदभ्येत्यतमाहमुनिसत्तम् ।१९
पितुर्मातवादेहदृष्ट्वातापसमण्डलम् ।
विषाभिभूममुरगैमदौन्मत्तैर्निश्चरः ।२०
पितामहस्तेस्वर्यातः सम्यंवसंपाल्यमेदिनीम् ।
पितातवतथाशक्तोहित्वाग्रानंवनंगतः ।
तपश्चरणशक्ताऽहमिचौनांश्रमेस्थता ।२१

जिनके यज्ञ में समस्त सभा भवन एवं प्रसाद स्वर्णमय बनाये गये थे, इन्द्र सोमपान करके और दक्षिणा को प्राप्त करके मत्त हो उठे थे, उन मरुत के समान यज्ञ करने वाला कोई पुरुष पृथ्वी पर उत्पन्न नहीं हुआ । ब्राह्मणों ने जितने रत्नमय गृह और स्वर्णमय राशि मरुतके यज्ञ में प्राप्त की थीं उतनी अन्य किसके यज्ञ में प्राप्त की? उनके समयमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनों वर्ण स्वर्णमय भवनादि को पा सके थे, उनके अतिरिक्त ऐसा दान और किस पुरुष ने दिया है? उसके धनको प्राप्तकर जो मनुष्य पूर्ण काम हुए उन्होंने भी अपने द्वारा समस्त यज्ञों का संपा-

दन किया था। हे मुनिवर ! उनके इस प्रकार के श्रेष्ठ राज्य शासन एवं प्रजापालन काल में एक दिन एक तपस्वी उसके पास जाकर बोला हे राजन् ! तुम्हारी पितामही ने तापस मण्डली को मदोन्मत्त सर्पों के विष से पीड़ित होता हुआ देखा और यह सन्देश भेजा है। तुम्हारे पितामह भले प्रकार से पृथिवी का पालन करने के कारण स्वर्ण को प्राप्त हुए हैं और तुम्हारे पिता ने भी वन का आश्रय लिया है (मैं भी तप में आसक्त होकर औवश्रिम में स्थित हूँ।१५-२१।

साऽपश्याभिवैकल्पतंवराज्यंप्रससत।
पितामहस्तेनाभू द्यत्पूर्वेषांचतेनृप।२२
ननंप्रमत्तोभोगेषुसक्तोवांऽयिजितेन्द्रियः।
चारान्धतायंतोस्तीयदुष्टादुष्ट नवेत्सियत्।
पातालदभ्युपेतस्तु पुजगैर्दशशालिभिः २३
दष्टामुनिसुताप्तदूषिताश्चजलाशयाः।२४
स्वेदभूत्रपुरोषेणदूपितसुणृतहविः।
अपराधंसमुद्दिश्यदत्तोनागबलिश्चिरात्।२५
एतेसमर्थामुनयोभस्मीकर्तुं भुजंगभान्।
किन्त्वेषांनाधिकारोऽत्रप्वमेवात्राधिकारवान्।२६
तावत्सुखंभूपतिजैर्भोगजप्राप्यतेनृप।
अभिषेकजलंयावन्नमूर्ध्निविनिपात्यते।२७

हे राजन् ! जो घटनायें तुम्हारे पूर्व पुरखाओं के शासन काल में घटी हैं, उन्हें तुम्हारे शासन काल में घटती हुई देख रहा हूँ। तुम या प्रमत्त हो अथवा जितेन्द्रिय न रहकर भोगों के प्रति अनुरक्त हुए हो, तुम दूतों को रखने के कारण अच्छी बुरी घटनाओं को जानने में समर्थ नहीं हो। दर्शनशील नागों ने पाताल से आकर सात मुनि कुमारों को डस लिया है तथा स्वेद, मूत्र, पुरीष के सब जलाशय और यज्ञ हवि को दूषित कर दिया है, इसलिये अपराध हुआ जानकर मुनिगण सर्पोंको बलि दे रहे हैं। यद्यपि मुनिगण सर्पों को स्वयं भस्मकर सकते हैं परन्तु

उस कार्य के तुम्हीं अधिकारी हो। राजन्! राजपुत्री को भोग जनित सुख के भोगने का अधिकारी तभी तक है, जब तक उनके शीश पर अभिषेक का जल नहीं सींचा जाता।२२-२७।

कानिमित्राणिकः शत्रुर्ममशत्रोबलकियत्।
कोऽहकेमन्त्रिणः षक्षेकेवाभूपतयौमम् ।२८
कियान्कोशोबलंकिवाकोनुरक्तोनोमम्।
विरक्तौवापरैर्भिन्न्ः परेषामपिकीदृशः।
कः सम्यगत्रनरेविषयेवाजनोमम् ।२९
धर्मधर्माश्रयोमूढ सम्यगपिवर्त्तते।
कोदण्डयपरिपाल्यः कः केचोपेक्ष्यानरामया ।३०
सामभेदतयादभ्यादेशकालमवेक्षता।
चारांश्चचारयेदन्यैज्ञातान्भूपतिश्चरैः ।३१
सचिवादिषुसर्वेषचरान्दद्यान्महीपतिः।
इत्यादौभूपतिर्नित्नकर्मण्यासक्तमानसः ।३२
मयेदिदनतथारात्रिनतुभोगपरायणः।
राज्ञाँशरीरग्रहणनभोगायमहीपते ।३३

मित्र कौन है? शत्रु कौन है? शत्रु के पास कितनी शक्ति है? कौन मन्त्री कैसा है? कौन राजा अपने पक्ष का है? ।२८। मेरे पास कितना कोष है? कितनी शक्ति हैं? कौन मुझसे प्रीति करता है? शत्रु के द्वारा भेद को किसने पा लिया? कौन शत्रु किस प्रकार का है? अपने नगर अथवा राज्य में धर्म कर्म का आश्रय लेने वाला कौन है? ।२९। कौन मूर्ख रहता है? कौन दण्डनीय है? कौन पालनीय और कौन उपेक्षणीय है ।३०। छिद्र भेद के भय से किसके प्रति दृष्टि रखनी चाहिए? सबका ज्ञान करने के लिये दूत एवं परिचित गुप्तचरों को नियुक्त करना उचित है ।३१। सब सचिवादि पर दृष्टि रखने के लिये भी दूत की नियुक्ति करे, इस प्रकार राज्य-काल के प्रति राजा को दत्तचित होना चाहिए ।३२। इसी में दिन-रात्रि व्यतीत करे और भोग परायण

न हो हे राजन् राजाओं का जन्म भोग के लिए नहीं होता है।३३।

क्लेशायमहतेपृथ्वीस्वधर्मपरिपालने।
सम्यक्पालयतः पृथ्वीस्वधर्मंचमहीपतेः।३४
इहक्लेशामहान्स्वर्गेपरमसुखमक्षयम्।
तदेतदवबुध्यस्वहित्वाभोगान्नरेश्वरः।३५
पालतायक्षितेः क्लेशमंगीकर्तुमिहार्हसि।
इहिवृत्तसृषीणांसद्भयसमत्वशिशासति।३६
भुजंगहेतुकभूपचारान्धोनापिवेत्सित्।
वहुनात्रकिमुक्तेनदुष्टोदण्डोनिपात्यताम्।३७
शिष्टापालयराजंस्त्वंधर्मषड्भागमाप्यसि।
अरक्षन्पारमखिलंदुष्टैरविनायत्कृतम्।३८
ससावाप्स्यसन्दिग्धंयदिच्छासिकुरुष्वतत्।
एतन्मयोक्तस कलयन्नवाहपितामही।
कुरुष्वेवस्थितेयत्तौरोचतेबसुधाधिप।३९

पृथिवी का पालन और अपने धर्म का पालन करने के लिये उन्हें तो महाकष्ट ही भोगने होते हैं उन्हें अपने धर्म और पृथिवी के पालन से ।३४। इस जन्म में अत्यन्त क्लेश भोग लेने पर परलोक में उन्हें अक्षय सुख की प्राप्ति होती है, हे राजन्! इस पर विचार करके और भोग का परित्याग करके ।३५। तुम्हें पृथिवी का पालन करने के लिये क्लेश को अङ्गीकार करना चाहिये, तुम्हारे शासन-काल में ऋषियों को सर्पों, से जो भय उपस्थित हुआ है ।३६। उस भय को दूतों के न होने के कारण ही जानने में समर्थ नहीं हुए, राजन्! तुम दुष्टों को दण्डित करो ।३७। और शिष्टजनों का पालन करो, इससे धर्म के षष्ठ की प्राप्ति होगी। दुष्टगण जिस उद्दण्डता को करते हैं उससे सज्जनों की रक्षा न करोगे तो ।३८। तुम अवश्य ही पाप के भागी होंगे, अब जो कर्त्तव्य समझो, वह करो, हे राजन्! मैं तुम्हारी पितामही हूँ, इसलिये ऐसा कहा है अब तुम्हें जो उचित प्रतीत हो, वही करो ।३९।

११७—मरुत चरित्र [३]

इतितापसवाक्यसश्रु त्वालज्जापरोनृपः ।
धिङ्मांचारान्धमित्युक्त्वानिः श्तस्यजगृह्येधनुः ।१
ततः सत्वरितगत्वाखल्वौर्वस्याश्रमप्रति ।
ववन्देशिरसावीरांमातरपितुरात्मनः ।२
तापसांश्चयथान्यायतैश्चाशीर्भिरभिष्टुतः ।
दृष्ट्वाचतापसान्सप्तनागैदष्टान्मृतान्भुवि ।३
निनिन्दात्मानमसकृत्पुरस्तेषांमहीपतिः ।
उवाचचैतदद्याहमद्वीर्य्यमवमन्यताम् ।४
यत्कारोमिभुजंगानांदुष्टानांब्राह्मणद्विषाम् ।
तत्पश्यतुजगत्सर्वंसदेवासुरमानुषम् ।५
इत्युक्त्वाजगृहेकोपादस्त्रसंवर्तकनृपः ।
नाशायाशेषनागारांपातालौर्व्वीविचारिणाम् ।६
ततो जज्वालसहसानागलोकसमन्ततः ।
महास्त्रेजसाविब्रह्ममानोनिवारिता ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—तापस की बात सुनकर राजा लज्जित हुए और मुझ आचारान्ध को धिक्कार है, ऐसा कहते हुए हाथ में धनुष उठाया ।१। और अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक औवश्रिम में जाकर नतमस्तक हो अपनी पितामही वीरा ।२। और तपस्वियों को प्रणाम किया, उन्होंने भी राजा को आशीर्वाद दिये, फिर राजा ने सर्पदंश से मरे हुए सात तपस्वियों को पृथ्वी पर पड़ा देखा ।३। राजा ने मुनियों के समक्ष बार-म्बार अपनी निन्दा की और बोले—यह दुष्ट नाग मेरे बल के तिरस्कार पूर्वक ।४। ब्राह्मणों से द्वेष करते हैं इसलिए अब मैं उनकी दशा करता हूं, उसका देवता दैत्य और सम्पूर्ण विश्व अवलोकन करे ।५। मार्कण्डेयजी ने कहा—ऐसा कहकर राजा ने पृथिवी और पाताल में रहने वाले सर्व नागों को नष्ट करने के उद्देश्य से सवर्तक अस्त्र को

हाथ में उठाया ।६। उस समय उस महा अस्त्र के तेज से समस्त नाग लोक प्रकाशमान होकर भस्म होने लगा ।७।

हाहातातेतिहामातहाहावत्सेतिसंभ्रमे ।
तस्मिन्नस्त्र कृतेवाचः पन्नगापामथाभवन् ।८
केचिज्ज्वलाद् भिपच्छाग्रैः फणैरन्येभुलंगमाः ।
गृहीतपुत्रदाराश्चत्यक्ताभरधवांससः ।९
पातालमुंत्सृज्यययुःशरणभामिनीतदा ।
मरुतमातरपूर्वयायादत्तांतदाफयम् ।१०
यामुपेत्योरगाः सर्वासप्रमाणंभयातुर ।
सगद्गदमिदप्रोचु स्यर्यतांन पुरोमितम् ।११
प्रणमयाभ्यर्थितपर्वयदस्माभीरसातले ।
तस्यकाऽलोशमायातस्त्राहिवीरप्रजायिनि ।१२
पुत्रोनिवार्य्यतांराज्ञिप्राणैः संयोज्यमस्तुनः ।
दह्यतेसकलोलोकोनागानामस्त्रवह्निना ।१३
एवसदह्यमानानामस्माकतनयेयंते ।
त्वामृतेशरणंनान्यत्कृपाकुरुयशस्विनि ।१४

इस अस्त्र के भय से भयभीत हुए नागगण, माता, तात, वत्सादि पुकारते हुए चीत्कार करने लगे ।८। किसी की पूँछ किसी का फण दग्ध होने लगा । किसी ने वस्त्राभरणों को त्याग कर स्त्री पुत्र सहित ।९। पाताल लोक को छोड़ राजा मरुत की माता भामिनी की शरण ग्रहण की क्योंकि उसने इनको सभी अभयदान दिया था ।१०। सभी नाग इसके समक्ष उपस्थित होकर गदगद वचनों से कहने लगे—आप रसातल में हमारे द्वारा की हुई प्रार्थना का स्मरण करिये, उसके निर्वाह का यही समय है, आप हमारी रक्षा करिये ।११-१२। हे राजमाता ! अपने पुत्र को रोककर हमारे प्राणों की रक्षा करिये. समस्त नागलोक उनके अस्त्रों में उत्पन्न अग्नि से भस्म हुआ जाता है ।१३। हे यशस्विनी ! आपका पुत्र इस विधि से हमें जलाता है, इसलिये आपके

अतिरिक्त अन्य किसी की शरण हम नहीं ले सकते, आप हम पर दया करें ।१४।

इतिश्रुत्वावचस्तेषांसस्मृत्यादौच्चभाषितम् ।
भर्ताहमाहसासाध्वीसंभ्रमदिवचः ।१५
पूर्वमेवतत्राख्यातपातालेयदभुजंगमैः ।
प्रोक्तमर्थनापूर्वंसमासित्ततनयप्रति ।१६
तइमेऽस्यागताभीतादह्यन्तेतस्यतेजसा ।
मामेतेशरणंपूर्वंदत्तमेभ्योमयाऽभयम् ।१७
येमाशरणंमापन्ना तेत्वाँशरणमागताः ।
अपृथग्धर्मचरणायाताहंशशरणतव ।१८
तन्निवार पुत्रंवमरुत्तवचनात्तव ।
मयाचाभ्यर्थितोऽवश्यंशमसभ्युपयास्यति ।१९
महापराधेनियतमरुत्तः क्रोधमागतः ।
दुर्निवर्त्यमहंमन्येत यत्क्रोधंसुतस्यते ।२०

मार्कण्डेयजी ने कहा—सर्पों के करुणापूर्ण वचन सुनकर उस साध्वी स्त्री को सर्पों को दिया अपना अभय वचन स्मरण हो आया तो वह संभ्रम-सहित अपने स्वामी से बोली ।१५। भामिनी ने कहा पाताल स्थित सर्पगणों ने विनय पूर्वक जो कुछ मेरे पुत्र के सम्बन्ध में कहा वह पूर्व ही मैंने आपसे वर्णन किया ।१६। वही सर्पगण इस काल मेरे पुत्र के तेज के कारण दग्ध हुए जाते हैं मैंने पहले तो इन्हें अभय-वर दिया था इसलिये भयभीत होकर वे मेरी शरण में आये हैं ।१७। जो मेरी शरण में आये हैं, वे आपके भी शरणागत हैं क्योंकि एक धर्माचरण के कारण मैं आपकी शरणागत हुई हूँ ।१८। इसलिये आप पुत्र मरुत को रोकिये । आपके आदेश और मेरे आग्रह से वह निश्चय ही शान्त हो जायगा ।१९। अवीक्षित बोले—इनकी सदैव अपराधी प्रवृत्ति के कारण-वश ही मरुत-क्रोधित हुआ है । इस कारण तुम्हारे पुत्र का क्रोध सरलता से शान्त हो जायगा, ऐसा प्रतीत नहीं होता ।

शरणागतास्तववयप्रसादः क्रियतांनृप ।
क्षत्रस्यार्तपरित्राणनिमितशस्त्रधारणम् ।२१
नागानांतद्वचःश्रुत्वाभूतानांशरणैषिणाम् ।
तथाचभ्यर्थितः पत्न्याप्राहावीक्षिन्महायशाः ।२२
गत्वाब्रवामितंभद्रे तनयंन्वरयातव ।
परित्राणावनांगानांनध्याज्याःशरणागताः ।२३
नोपसंहरतेसोस्त्र यदिमद्वचनानृपः ।
तदास्त्रैर्वारयिष्यामितस्यास्त्रनमस्यते ।२४
ततोगृहीत्वासधनुरविक्षित्रियोत्तमः ।
भार्य्यायसहितः प्रायात्वरावान्भार्गवाश्रमम् ।२५

११८–मरुत चरित्र (४)

सर्प बोले—हे राजन् ! हम आपके शरणागत हैं, आप हम पर कृपा करिए । क्षत्रिय मनुष्य सदैव दुःखी मनुष्यों की रक्षार्थ ही शस्त्र ग्रहण करते हैं ।२१। मार्कण्डेयजी ने कहा-यशस्वी अवीक्षित ने पत्नी का निवेदन और शरण में आये हुए सर्पों के वचन सुनकर कहा ।२२। हे भद्रे ! मैं तुरन्त ही तुम्हारे पुत्र मरुत के निकट जाकर नागों की रक्षा हेतु उनसे कहता हूँ । शरण में आये को शरण न देना कभी उचित नहीं है ।२३। यदि तुम्हारा पुत्र राजा मरुत मेरे कहने पर भी अस्त्र त्याग नहीं करेगा तो मैं उसके विरुद्ध अस्त्र का प्रयोग करूँगा ।२४। मार्कण्डेयजी ने कहा—इसके पश्चात् नर श्रेष्ठ अवीक्षित धनुष धारण करके भार्या को सङ्ग लेकर भार्गवाश्रम गए ।२५।

सतुतत्रसुतंदृष्ट्वागृहीतबरकार्मुकम् ।
धनुः शस्त्रचतस्योग्रं ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ।१
उद्गिरन्तंमहावह्निदीपिताखिलभूतलम् ।
पातालान्तर्गतप्राप्तमसह्य घोरभीषणम् ।२
सतंदृष्ट्वामहीपालंभृकुटिकटिलाननम् ।

काक्रुधस्त्वंमरुत्तास्त्रमुपसंन्हियतामिति ।३
प्राहासकृच्चानुलुप्तवर्णक्रममुदारधीः ।
गनिशम्यगुरोर्वाक्यंदृष्ट्वातंचपुनः पुनः ।
गृहीतकार्मुकापित्रोः प्रणिपत्यसगौरवम् ।४
प्रत्यवाचापरांद्धामेसभृशन्नगा पिता ।५
शासतीमाँमयिमहींपरिभूयवयममं ।
सांप्ताश्रममुपागम्यदष्टामुनिकुमारकाः ।६
ऋषीणामाश्रमंस्थानाममीषामवनीपते ।
मयिशासतिदुर्वत्तै दुषितानिहवीषिच ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—अवीक्षित ने वहाँ आकर देखा कि मरुत धनुष पर शस्त्र चढ़ाए हुए हैं, जिसकी तीव्र ज्वाला से समस्त दिशा मण्डल प्रकाशित है ।१। उस उग्र अस्त्र में तीव्र अग्नि उत्पन्न होकर पृथ्वी को प्रदीप्त कर रही है जो कि अत्यन्त भीषण व असहनीय हैं एवं पाताल तक पहुँच रही है ।२। यह देखकर कि महीप मरुत की मुखाकृति व भ्रकुटि है वे बोले—हे मरुत अस्त्र त्याग दो और अपने क्रोध को समाप्त करो ।३। बार-बार इस प्रकार कहकर जब चुप हो गए तो उन बुद्धिमान मरुत ने उनकी ओर देखकर ।४। पिता व माता दोनों को प्रणाम सहित आदर पूर्वक बोला—हे पिता ! यह सर्पगण मेरे घोर अपराधी हैं ।५। मेरे पराक्रम की अवहेलना करके इन्होंने मेरे राज-काल में आश्रम में आकर सात मुनिकुमारों को काटा है ।६। एवं महाराज ! मेरे राज्य-काल में इन दुर्बुद्धि नागों ने इन सम्पूर्ण आश्रम निवासियों के हवि जलाशयों को दूषित कर डाला ।७।

जलाशयास्तणाष्येतैः सर्वएवहिदूषिताः ।
तदेत्कारणकिञ्जिन्नवक्तव्यंत्वयापितः ।
ननिवारषितव्योऽवब्रह्मघ्नान्प्रातिपन्नगान् ।८
यद्येभिर्निहताविप्रायास्यन्तिरकसृताः ।
ममैतत्क्रियतावाक्यविरमास्त्रप्रयोगतः ।९

नाहमेषांक्षमिष्यामिदुष्टानामपराधिनाम् ।
अहमेवगमिष्यामिनरकयदिपापिनाम् ।
ननिग्रहेयताम्येषांनानिवारयमापितः ।१०
मामेतयरणंप्राप्ताः पन्नागाममगौरवात् ।
उपसह्रिवतामस्त्रमलकोपेनतेनृप ।११
नाहमेषांक्षमिष्यामिदुष्टानामपराधिनाम् ।
स्वधर्ममुल्लंक्ष्यकथंकरिष्यामिवचस्तव ।१२
दण्ड्येनिपातयदण्डभूप शिष्टांश्चपालयन ।
पुण्यलोकानवाप्नोतिनरकांश्चाप्येक्षणत् ।१३

इसलिए आप इन सर्पगणों के विषय में कुछ भी न कहें और ब्रह्महत्यारे नागों के संहार-कार्य से मुझे न रोकें ।८। अवीक्षित बोले-यदि उन्होंने ब्रह्महत्या की है तो मरने के पश्चात नरक को जायेंगे किंतु तुम अस्त्र का प्रयोग न करके मेरे वचन की रक्षा करो ।९। मरुत बोले— यदि इन पापियों पर नियन्त्रण का यत्न छोड़ दूँ तो मुझे ही नरक की प्राप्ति होगी, इसलिये हे पिताजी ! आप मुझे उसके संहार से मत रोकिए, मैं इन दुष्टों को क्षमा नहीं करना चाहता ।१०। अवीक्षित बोले ये नाग मेरी शरण को प्राप्त हुए हैं, इसलिये मेरे गौरव की रक्षा के निमित्त क्रोध छोड़कर अस्त्र त्याग दो ।११। मरुत बोले—इन दुष्टों को मैं क्षमा करके अपने धर्म का उल्लंघन कैसे करूँ और आपके वचन को कैसे निभाऊँ ।१२। दण्ड योग्य जीवों को दण्ड देकर ही राजा पुण्यलोक को प्राप्त होते हैं अन्यथा उन्हें नरक लोक की प्राप्ति होती है ।१३।

एवंसवहुशः पित्रावार्य्यमाणोम्वयासह ।
नोपसंहरतेसोस्त्रततोऽसौपुनरब्रवीत् ।१४
हिंसमेपन्नागान्भीतान्मतैताञ्छरणगतात् ।
वार्यमाणोऽपितस्मात्तोकरिष्यामिप्रतिक्रियाम् ।१५
मयायायस्त्राण्यवाप्तनिनत्वमेकऽस्त्रविद्भुविः ।
मामग्रतः सुदुर्वृत्तपौरुषञ्चकियत्तव ।१६

ततः कार्मुकमारोप्यकोपताम्रविलोचनः ।
अविक्षिदस्त्रं जग्राहंकालस्यमुनिपुङ्गवः ।१७
ततोज्वालापरीवारमनिसंघग्नमुत्तमम् ।
काकास्त्रं तुमहावीर्य्ययोजयामासकार्मके ।१८
ततश्चुक्षोभजगतीसवर्त्तारत्रप्रतापिता ।
साब्धिशैलाऽखिलाविप्रकालस्यास्त्रमुद्यते ।१९
कालास्त्रमुद्यतपित्रामरुत्तः सोऽपिवीक्ष्यतत् ।
प्राहोच्चैरस्त्रमेतन्मेदुष्टशास्तिसमुद्यतम ।२०
नत्वद्वधायकालास्त्रमयिमुंचतिकिमवान् ।
स्वधर्मचारिजिसुतेसदैवाज्ञाकरेतव ।२१

मार्कण्डेयजी ने कहा—पिता के बारम्बार विरोध किये जाने पर भी जब मरुत ने अस्त्र का परित्याग नहीं किया तब अवीक्षित ने कहा—ये नाग भयभीत होकर मेरी शरण को प्राप्त हुए मेरे द्वारा निवारण किये जाने पर भी तुम इनकी हिंसा मे प्रवृत्त हो इसलिए मैं इसका प्रतिकार करूँगा। पृथ्वी पर एकमात्र तुम्हीं अस्त्र विज्ञाता नहीं हो, मैंने भी अनेक अस्त्र प्राप्त किये हैं मेरे सामने तुम्हारा पौरुष नगण्य है। हे मुनिश्रेष्ठ ! अवीक्षित ने ऐसा कहकर क्रोध से धनुष उठाकर कालास्त्र ग्रहण किया। ज्वाला से परिपूर्ण शत्रुओं के नाश करने वाला वह श्रेष्ठ कालास्त्र धनुष पर चढ़ाया। हे ब्रह्मन् ! मरुत के सवर्तकास्त्र से तप्त हुए पर्वत एवं समुद्र से युक्त सम्पूर्ण विश्व कालास्त्र के सन्धान में क्षोभ को प्राप्त हुआ। मरुत भी धनुष पर चढ़ाये हुए कालास्त्र को देखकर उच्च स्वर में बोले—मेरा संवर्तकास्त्र दुष्टों का शमन करने के लिए तत्पर हुआ है। वह आपके हनन के लिए नहीं है और अपनों की आज्ञापालन में तत्पर रहने वाले बेटा के प्रति आप इस कालास्त्र को क्यों छोड़ते हैं ।१४-२१।

मयाकार्यमहाभागप्रजानांपरिपालनम् ।
त्वयैवाक्रयतेक्रुस्यान्मद्धधायास्त्रमुद्यतम् ।२२

शरणागतसंत्राणंकर्तुं व्यवसितावयम् ।
तस्यव्याघातकर्त्तात्वंनमेजीवन्विमोक्ष्यसे ।
मांवाहत्वारस्त्रवीर्येणजहिदुष्टानिहोरगान् ।
त्वांवाहत्वाऽहमस्त्रेणरक्षिष्यामिमहोरगान् ।२४
धिक्तस्यजीवितपुं सशरणार्थिनमागतम् ।
यानार्तमनुग्रहणासिवरिपक्षमपिध्रुवम् ।२५
क्षत्रियोऽहमिमेभीताः शरणमामुपगताः ।
अपकर्त्तात्वमेवषांकथंवध्योनमेभवान् ।२६
मित्रं बाबान्धवोवाऽपिपितावायदिवागुरुः ।
प्रजापालनविघ्नावयोहन्तव्यः सभूभृता ।२७
सोऽहन्तेप्रहरिप्यतिनक्रोद्धव्यत्वयापितः ।
स्वधर्मः परिपाल्योमेनास्तिक्रोधस्तवोपरि ।२८

हे महाभाग ! प्रजा पालन ही मेरा परम कर्तव्य है, फिर आप मेरे संहार के लिए इस प्रकार के शस्त्रों को क्यों प्रयुक्त करते हैं।२२। अवीक्षित बोले—मैंने शरणागतों की रक्षा का दृढ़ निश्चय किया है,तुम उस कार्य में विघ्न उपस्थित करते हो इसलिये तुम मेरे जीवित रहते रक्षा नहीं प्राप्त कर सकते ।२३। इस काल या तो तुम्हीं मुझे अस्त्र बल से मारकर दुष्ट नागोंको मार डालो या मैं ही अस्त्रों की सहायतासे तुम्हारा वध करके इन सर्पों की रक्षा करूँगा ।२४। जो शत्रु पक्ष के मनुष्य भी आर्त होकर शरण ग्रहण करे उनकी रक्षा न करने वाले पुरुष के जीवन को धिक्कार है ।२५। मैं क्षत्रिय हूँ, भयभीत होकर मेरी शरण में आये हैं और तुम्हीं इनका अपकार करते हो, इसलिये तुम मेरे द्वारा मारे जाने योग्य हो ।२६। मरुत बोले—'मित्र बन्धु पिता अथवा गुरु भी यदि प्रजा पालन से विघ्न उपस्थित करे तो राजा के द्वारा वध किये जाने के योग्य है ।२७। इसलिये हे पिता ! मैं आप पर जो संहार करूँ उससे आप क्रोधित न हों मैं अपने धर्म के पालन के लिए ही ऐसा करने को तत्पर हुआ हूँ । यह मेरा क्रोध नहीं है ।२८।

ततस्तौनिश्चतीदृष्ट्वापरस्परवधंप्रति ।
समुत्पयान्तरेतफ्थुर्मुनयोभार्गवादयः ।२९
ऊचुश्चीनमोक्तव्यत्वयात्रं पितरं प्रति ।
त्वयाचनायंहन्तव्याः पुत्र प्रख्यातचेष्टितः ।३०
मयादुष्टानिहन्तव्याः सन्तोरक्ष्यामहोक्षिता ।
इमेचदुष्टाभुजगाः कोपराधाऽत्रमेद्विजाः ।३१
शरणागतसन्त्राणमयाकार्यतयञ्चम ।
अपराध्यः सुतोर्विप्रायोहन्तिशरणागतान् ।३२
इमेवदन्ति भुजंगास्त्रसलीलर्विलोचनाः ।
सजीवयाभस्तान्विप्रांन्येदष्टादुष्टपन्नगैः ।३३
तदलविग्रहेधोभौराजवयोप्रसीदताम् ।
उभावपिनिर्व्यूढप्रतिज्ञे धर्मकोविदौ ।३४
सातुवीरासमभ्येत्यपुत्रमेतदभाषतः ।
मद्वाक्यादेषतेपुत्रोहन्तुं नागान्कृतोद्यमः ।३५
तन्निष्पन्नंयदाविप्रास्तेजीवन्तितथामृताः ।
संजीवन्त चामुच्यन्तयद्युष्मच्छरणगतताः ।३६

मार्कण्डेयजी ने कहा—इन दोनों को परस्पर संहार करने में प्रवृत्त देखकर भार्गवादि मुनि शीघ्र आकर दोनों के मध्य खड़े हो गए और मरुत से कहा—पिता के ऊपर अस्त्र चलाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है और अवीक्षित ने कहा कि आपको भी इस श्रेष्ठकर्मा पुत्र को नष्ट करना अनुचित है। मरुत बोले—हे द्विजो ! मैं राजा हूँ, दुष्टों का वध करना और श्रेष्ठजनों का पालन करना मेरा कर्तव्य है। ये नाग भी दुष्ट हैं, इसलिये इनके विषय में मेरा क्या अपराध है ? अवीक्षित बोले—हे विप्रो ! शरणागतों की रक्षा करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ, जो मेरे शरणागतों का वध करने को तत्पर है, वह मेरा अपराधी है। ऋषि बोले—भय से चञ्चल नेत्र हुए भुजंगों ने कहा कि जिन ब्राह्मणों को दुष्ट नागों ने डस लिया है हम उनको जीवित कर रहे हैं।

इसलिये अब युद्ध की आवश्यकता नहीं रह गई आप दोनों ही राज श्रेष्ठ, धर्मज्ञानी और प्रतिपालक हैं। मार्कण्डेयजी ने कहा-तभी वीरा ने आकर अपने पुत्र अवीक्षित से कहा कि मेरे कहने से तुम्हारा पुत्र सर्पों को नष्ट करने में तत्पर हुआ था और जब ये मृतक ब्राह्मण जीवित हो रहे हैं, तब उनका कार्य भी हो गया और तुम्हारे शरणागत भी मुक्त हो गये।२६-३६।

सहमभ्यर्थितापूर्वमेभिपातालसंश्रयैः।
तन्निमित्तमयभर्त्तायियात्रविनियोजितः।३७
तदेतदार्येनिवृत्तमुभयोरपिशोभनम्।
ममभर्तुश्चपुत्रस्यवत्वंपौत्रस्यातजस्यच।३८
ततः सजोवयामासुतान्विप्रांस्ते भुजंगमाः।
दिव्यैरोषधिजातैश्चविषसंहरणेन।३९
पित्रौर्ननागचरणौसततौजगतीपति।
मरुत्तश्सतंप्रीतयापरिन्वज्येदमब्रवीत्।४०
मानहाभव त्रणांचिरपालयमेदिनीम्।
पुत्र पौत्रैश्चमोवावमाचतेसन्तुविद्विषः।४१
ततोद्विजैरनुज्ञातौबीरयाचनरेश्वरौ।
समारूढौरथसाचभामिनीस्वपुरंगताः।४२

भामिनी बोली—पाताल में रहने वाले इन सभी सर्पों ने पहले मुझसे अभय याचना की थी, इसलिये मैंने अपने स्वामी से तद-विषयक अनुरोध किया था।३७। इस समय मेरे स्वामी और पुत्र एवं आपके पुत्र और पौत्र का यह कार्य श्रेष्ठरीति से पूर्ण हुआ है।१८। मार्कण्डेयजीने कहा—फिर सर्पों ने उस मरे हुए ब्राह्मणों का विष दिव्य औषधियों के द्वारा दूर करके उनको जीवित कर दिया। फिर मरुत ने भी माता पिता के चरणों में प्रणाम किया और अवीक्षित ने भी मरुत को आलिंगन करके यह आशीर्वाद दिया।३०। शत्रुओं के मानभंजक होओ, पृथिवी का सदा पालन करो और तुम्हारे रिपु नत हों।४१।

फिर ब्राह्मणों और वीरा की आज्ञा प्राप्त कर दोनों राजा और भामिनी रथारूढ होकर अपने नगर को चले गए ।४२।

वीराऽपिकृत्वासुमहत्तपोधर्मभृतांवरा ।
भर्तु: सलोकतांप्राप्तामहाभागापतिव्रता ।४३
मरुत्तोऽपिचकारोर्व्यांधर्मधर्मत: परिपालनम् ।
विनिर्जितारिषड्वर्गोभोगांश्चबुभुजेनृप: ।४४
तस्यपत्नीमहाभागाविदर्भतनयातथा ।
प्रभावतीसुवीरस्यसौवीरीचाभवत्सुता ।४५
सुकेशोकेतुवीर्य्यस्यमागधस्यात्मजाऽभवत् ।
सुतांचसिन्धुवीर्य्यस्यमद्रराजस्यकैकेयी ।४६
कैकेयस्यचसैरन्ध्रीसि धुमर्तु बैपुष्मती ।
चेदिराजसुताचाभद्भार्य्यातस्यसुशोभना ।४७
तामांपुत्रास्तस्यचासम्भूतोऽष्टादशद्विज ।
तेषांप्रधानौज्येष्ठाश्चनरिष्यन्त: सुतोऽभवत् ।४८
एवंवीर्य्योमरुत्तोऽभून्महाराजोमहाबल: ।
तस्याप्रतिहतंचक्रमासीद्द्वीपेषुसप्तसु ।४९
यस्यतुल्योऽपरोराजाननुतोनभविष्यति ।
सत्यविक्रमयुक्तस्यराषंरमितोजस: ।५०
तस्यैतच्चरितश्रु त्वामरुत यमहात्मन: ।
जन्मचाग्र् यद्विजश्रे ष्ठमुच्यतेसर्वकिल्विषै: ।५१

फिर धार्मिक श्रेष्ठ परम भाग्यवती पतिव्रता वीरा देवी घोर तपस्या का आचरण करके स्वामी के सालोक्य को प्राप्त हुई ।४३। राजा मरुत ने भी छ:हों शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके धर्म पूर्वक पृथ्वी का पालन और विभिन्न प्रकार के सुख भोग किये ।४४। विदुर्भसुता प्रभावती तथा सुवीर की पुत्री सौवीरी मगधेश्वर केतु-वीर्य की पुत्री सुकेश, मद्रराज सिन्धुव्रीर की पुत्री कैकेयी ध्रसि नरेश की पुत्री सेधुन्वी चेदिराज की पुत्री वपुष्मती, ये

सुन्दर स्वरूप वाली ललनायें उनकी पत्नियाँ थीं ।४५।४७। हे ब्रह्मन् ! इन सब पत्नियों के गर्भ से अठारह पुत्र जन्मे थे जिनमें नरिष्यन्त नामक पुत्र ही सबसे बड़ा था ।४८।महा पराक्रमी राजा मरुत ऐसे वीर्य वान् थे सप्तद्वीपोंमें उनका रथ-चक्र कहीं नहीं रुकता था ।४९। महाबली विक्रम सम्पन्न एवं अमिततेज वाले इन राजर्षि के समान अन्य कोई राजा उत्पन्न नहीं हुआ और न कोई भविष्य में होगा ।५०। हे द्विजवर ! उन महात्मा मरुत का यह चरित्र सुनने से सभी पापों से मुक्ति और मरणोपरांत श्रेष्ठ जन्म की प्राप्ति होती है ।५१।

———

११९—नरिष्यन्त चरित्र

मरुत्तचरितकृत्स्नंभगवन्कथितंत्वया ।
तत्सन्ततिमशेषेणश्रोतुमिच्छाप्रवर्तते ।१
तत्संततौक्षितीशायेराज्यार्हावीर्यशालिनः ।
तानहश्रोतुमिच्छामित्वयाख्यातान्महामुने ।२
नरिष्यतइतिख्यातौमरुत्तस्याभवत्सुतः ।
अष्टादशानांपुत्राणांसज्येष्ठः श्रेष्ठएवच ।३
वर्षाणांचसहस्राणिसप्ततिदपंचच ।
बुभूजेपृथिवीकृत्स्नांमरुत्तः क्षत्रियर्षभः ।४
कृत्वाराज्यंस्वधर्मेणईष्ट्वायज्ञानमुत्तमान् ।
नरिष्यंतसुतंज्येष्ठमभिषिच्ययग्रौवनम् ।५
एकाग्रचित्तः सनृपस्तप्त्वातत्रतपोमहत् ।
आरुरोहदिवंविप्रह्ययावृत्यचरोदसी ।६

क्रौष्टुकि बोले—हे भगवन् ! मरुत्त चरित्र का आपने विस्तार पूर्वक वर्णन किया । अब मेरी आकांक्षा उनकी संतानोंके विषयमें समस्त वृत्तांत श्रवण करनेकी है ।१। हे महर्षि सन्ततियोंमें जो महीपति शासन

योग्य एवं पराक्रमी वीर्यवान् थे उनका वृतांत आपके मुखारविन्दसे श्रवण करना चाहता हूँ ।२। मार्कण्डेयजी ने कहा—मरुत के अठारह पुत्र हुए, जिसमें नरिष्यन्त सबसे बड़ा और श्रेष्ठ पुत्र हुआ ।३। क्षत्रिय श्रेष्ठ मरुत ने सत्तर सहस्र पन्द्रह वर्ष पर्यन्त समस्त भूतल पर राज्य किया । धर्मके अनुसार शासन कर और सर्वश्रेष्ठ यज्ञ एवं अनुष्ठान करके वह अन्त में अपने ज्येष्ठ पुत्र नरिष्यन्त को राज्याभिषेक करके वनवास करने चले गये । हे द्विज ! तदुपरान्त दत्तचित्ता से वह तपस्या करते हुए पृथ्वी से राजा मरुत ने स्वर्ग प्राप्त किया ।४-६।

नरिष्यंतः सुतः सोस्यर्चितयामासबुद्धिमान् ।
पितुर्वृत्तंसमालोक्यतथान्येषांचभूभृताम् ।७
अत्रवंशेमहात्मानोराजनोममपूर्वजाः ।
यज्विनोधर्मतः पृथ्वीपालयामासुरूर्जिताः ।८
दातारश्चापिवित्तनांसंग्रामेष्वनिवर्तिनः ।
तेषाकश्चरितशक्तस्त्वनुयातु महात्मनाम् ।९
किंतुतैर्यत्कृतकमधर्म्यमाहवनादिभिः ।
तदहंकर्तु मिच्छामितच्चानास्तिकरोमिकिम् ।१०
धर्मात्पालयतः पृथ्वीकोगुणोत्रमहीपतेः ।
असम्यक्पालनात्पापीनरेन्द्रोनरकव्रजेत ।११
सतिर्वित्ते महायज्ञाः कर्तव्याएवभूभृता ।
दातव्यंचात्रकिंचित्रंसीदतामीश्वरोगतिः ।१२
आभिजात्यंतथालज्जाकोपश्चारिजनाश्रयः ।
कारयंतिस्वधर्मश्चसंग्रामादपलायनम् ।१३
एतत्सर्वंयथासम्यमत्पूर्वैःपुरुषकृतम् ।
पित्राचमेमरुत्तेनतथातत्केनशक्यते ।१४

परम विद्वान पुत्र नरिष्यन्तने अपने पिता व अन्य दूसरे अधिपतियों के व्यवहारको देखकर विचार किया।७।कि इस कुलमें मेरे समस्त पूर्वज महान आत्मा नृपगणयज्ञ व अनुष्ठान करने वाले महापराक्रमी, वीर्यवान्

धनदाता, संग्राममें कभी भी मुख न मोड़ने वाले थे उन महान आत्माओं के चरित्र का अनुकरण की सामर्थ्य किस में होगी ? ।८-९। आह्वनादि में उन्होंने जो धार्मिक कृत्य पूर्ण किये उन्हें करने की मेरी भी आकांक्षा है, इसलिए मैं कैसे करूँ ।१०। यदि नृप धर्म व न्यायपूर्वक भूतल का पालन न करे तो फिर उसमें नृप के क्या गुण हैं ? उसके गुण में वह कोई विशेषता नहीं है, क्योंकि न्यायिक प्रकार से पृथिवी का पालन न करने वाला राजा पाप का भागी बनकर नरक प्राप्त करता है। धन युक्त होने पर नृप को दान और यज्ञ करने चाहिए, इसमें भी कोई अद्‌भुत बात नहीं है, राजा के लिए तो ईश्वर ही एकमात्र गति है। अपने धर्म में स्थित रहने से ही राजा अपनी जाति में श्रेष्ठ है और शत्रु के कोप और संग्राम से पीछे नहीं मुड़ता है। यह सब कार्य मेरे पूर्व पुरुषों और मेरे पिता मरुत ने जिस प्रकार किये हैं वैसे कार्य कौन कर सकता है ? ।११-१४।

तवहंकिंकरिष्यामियत्तु तं पूर्वजेकृतम् ।
येयज्विनोवरादाताः संग्रामाच्चानिवर्तिन ।१५
महत्संग्रामदैवविसवादिपौरुषाः ।
क्रमेणाहयतिष्यामिकस्मैतानभिसंधितुम् ।१६
अथवातैः स्वयंयज्ञाः कृतापूर्वजनेश्वरैः ।
अविश्वतद्भिः नन्यैस्तुकारितास्तत्करोम्यहम् ।१७
इतिसंचित्ययज्ञंसचका ःकंनरेश्वरः ।
याहशनचकारान्योवितोत्सर्गोपशोभितम् ।१८
द्विजानांजोवनायालंदत्वातुसुमहाधनम् ।
ततः शतगुणंतेषांयज्ञार्थमददान्नृपः ।१९
गावोवस्त्राण्यलंकारंधान्यागारादिकंतथा ।
प्रत्येकमददात्तेषांसर्वपृथ्वीनिवासिनाम् ।२०

मेरे पूर्व पुरुप श्रेष्ठ यज्ञों का अनुष्ठान करने वाले दानशील, दमगुण युक्त तथा युद्ध से विमुख होने वाले न थे। वे युद्ध उपस्थित होने पर

शत्रुओं को अपना पराक्रम दिखाते थे, मैं उस समर्थ ऐसा कौन कार्य करूँ जिसे उन्होंने नहीं किया ? मैं कर्म द्वारा ही निष्काम कर्म को करूँगा अथवा जो यज्ञ मेरे पूर्व पुरुषों ने स्वयं किये थे, किसी अन्य को नहीं कराये, उन्हीं यज्ञों को करूँगा। राजा ने ऐसा विचार करके विपुल धन द्वारा एक ऐसे यज्ञ का अनुष्ठान किया जिसे पूर्व में कोई भी नहीं कर सका था। इस यज्ञ में उन्होंने ब्राह्मणों को अत्यधिक प्रदान किया और उससे भी सौ गुणा अन्नदान किया। पृथिवी पर जितने भी ब्राह्मण थे, उनमें से प्रत्येक को उन्होंने गौ, वस्त्र, अलंकार, घर, धान्य आदि प्रदान किया।१८-२०।

ततस्तेनयदायज्ञः प्रारब्धोभुभुजापनः।
प्रारब्धेसमखेयष्टुं ततोनालभतद्विजात्।२१।
यान्यान्वृणोतिसनृपोविप्रानार्त्विज्यकर्मणि ।
तेतेतमचर्यज्ञायवयमष्यत्रदीक्षिताः।२२
अन्यंवरययद्वित्तं त्वयास्माकविसर्जितम्।
तस्यांयोनास्तियज्ञेषुदद्यास्वंनृपतेकथम्।२३
नचापऋत्विजोविप्रांस्तदाशेषक्षितीश्वरः।
वहिर्वेद्यांतदादानसदातुमुपचक्रमे।२४
तथापिजगृहुर्नेवधनसंपूर्ण मन्दिराः।
द्विजायदातुं भूयोऽसोनिर्विण्णाइदमब्रवीत्।२५
अहोतिशोभनंपृथ्व्यांयद्विप्रोनाधनः क्वचित्।
अशोभनचयत्कापोविफलोमययज्विनः।२६
नार्त्विज्यकुरुतेकश्चिद्यजमानोंखिलोजनः।
द्विजानांनचनोदान्दद्रतांसंप्रतीच्छते।२७

जब राजा ने पुनः यज्ञानुष्ठान किया तब कोई भी ब्राह्मण यज्ञ के लिए उपलब्ध नहीं हुआ।२१। उन्होंने जिन जिन को भी ऋत्विक् के रूप वरण करने की इच्छा की, उसी उसी ने कहा कि मैं यज्ञ के लिए अन्यत्र वरण किया जा चुका हूँ।११। आप किसी अन्य को वरण कर

लें। हे राजन् ! आपने यज्ञ में हमें जितना धन दिया, वह अनेकानेकयज्ञों में भी समाप्त नहीं हो सका।२१। मार्कण्डेय ने कहा—सम्पूर्ण पृथिवी के राजा होकर भी जब उन्हें ऋत्विक् बनने के लिये कोई ब्राह्मण न मिला, तब वह बहिर्वेदी में दान करने को उद्यत हुए।२४। फिर भी धन से युक्त घर का दान ब्राह्मणों ने ग्रहण नहीं किया, जब राजा दान करने में सफल नहीं हुए और उसका श्रम व्यर्थ गया तब वे अत्यन्त दुःखित होकर सोचने लगे।२५। पृथिवी में कहीं कोई भी इस समय धनहीन ब्राह्मण नहीं है यह अत्यन्त सन्तोषकी बात है, परन्तु यज्ञानुष्ठान के बिना मेरे पास राजकोष का होना सार्थक नहीं है, यही कष्ट का कारण है।२६। सभी ब्राह्मण इस समय स्वयं ही यज्ञ कार्य में प्रवृत्त हैं, इसलिए ऋत्विक् होने में कोई ब्राह्मण सहमत नहीं हैं, इस समय वह स्वयं ही दान कर रहे हैं, इसलिये मेरा दान स्वीकार नहीं करते।२७।

ततत्कांश्चिदिजान्भक्त्याप्रणिपत्यपुनः पुनः।
स्वययेऋत्विजश्चक्रे तेप्रचक्रुर्महामखम्।२८
अत्यद्भुतमिदंचासीद्यदातस्यमहीपतेः।
सयज्ञोभूतदापृथ्व्यायजमानोऽखिलोजनः।२९
द्विजन्मनन्मभुन्नासीत्सदस्यस्यत्रकश्चन।
यजमानाद्विजाः केचित्केचित्तेषांतुयाजकाः।३०
नरिष्यतोनरपतिरियाजसायतायदा।
मत्प्रदातुर्धनैर्यागंकुर्युः पृथ्व्यामशेतः।३१
प्राच्यांकोटयस्तुयज्ञानामसन्नष्टादशाधिकाः।
प्रदीच्यांसप्तवैकोट्योदक्षिणस्यांचतुर्दशः।३२
उत्तरस्यांचपंचाशदेककालंतदाभवन्।
मुनेब्राह्मणयज्ञानांरिष्यंतोयदाऽयजत्।३३
एवसराजाधर्मात्मानरिष्यंतोऽभवत्पुरा।
मरुत्ततनयोविप्रविख्यातबलपौरुषः।३४

मार्कण्डेयजी ने कहा—फिर बारम्बार परम भक्ति और प्रणाम

पूर्वक उन्होंने ब्राह्मणों को अपने यज्ञ में ऋत्विक् होने को सहमत कर लिया है और तब उन ब्राह्मणों ने उसे महायज्ञ का सम्मानित किया ।२८। यह अत्यन्त विस्मय की बात थी कि राजा द्वारा सम्पादित उस महायज्ञ में सभी ब्राह्मण स्वयं ही यजमान हुए ।२९। उस यज्ञ में कोई सभासद नहीं हुआ था, ब्राह्मणों में से कोई स्वयं यजमान और कोई याचक हुआ ।३०। जब राजा नरिष्यन्त ने यज्ञ किया तब उन्हीं के धन से ब्राह्मणगण अनेक यज्ञों के अनुष्ठान में प्रवृत हुए थे । उस समय अट्ठारह करोड़ से भी अधिक यज्ञ किये, पश्चिम में सात करोड़, दक्षिण में चौदहकरोड।३१-३२। तथा उत्तरमें पचास करोड़, यज्ञ हुए। ब्राह्मणों के सभी यज्ञ एक ही अवसर में सम्पन्न हुए ।३३। हे ब्रह्मन् ! पुराकाल में विख्यात बली एवं पराक्रमी मरुत पुत्र नरिष्यन्त ऐसे धर्मज्ञ थे ।३४

१२१-दम चरित्र [२]

नरिष्यंतस्यतनयोष्टारिदमनोवम: ।
शक्रस्येववलंतस्यदयाशीलमुनेरिव ।१
बाभ्रव्यामिन्द्रसेनायाजज्ञे तस्यभूभृत: ।
नववर्षाणिजठरेस्थित्वामातुर्महायशा: ।२
यद्ग्राहयामासदमंमातरजठरेस्थित: ।
दमशीलश्चभवितायतश्चायंनृपपात्मज: ।३
ततंस्त्रिकालविज्ञान: सहितस्यपुरोहित ।
दददत्यकरोन्नामनरिष्यंतसुतस्यतु ।४
सदत्तोराजपुत्रस्तुधनुर्वेदमशेषत: ।
जगृहेसुरराजस्यसकाशाद्वृषपर्वण: ।५
दुन्दुभेर्दैत्यवर्ष्यस्यतपोदननिवासिन: ।
सकाशाज्जगृहेकृत्स्नमस्त्रग्रातञ्चतत्वत: ।६
शक्ते: सकाशाद्वेदांश्चवेदांगान्यखिलानिच ।
तथार्ष्टिषेणाद्राजर्षेर्जगृहेयोगतात्यवान् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—राजा नरिष्यन्त के पुत्र दम हुए वे इन्द्र के समान बली, मुनि के समान दयावान् और शीलवान् तथा शत्रुओंका दमन करने में समर्थ थे ।१। बभ्रु की पुत्री इन्द्र सेना के जठर से बभ्रु नरिष्यन्त के वीर्य से उत्पन्न हुए,यह नौ वर्ष पर्यन्त माता के गर्भ में ही रहे ।२। इसके गर्भ में स्थित रहने के समय माता को इन्द्रिय निग्रह पूर्वक रहना पड़ा था और यह राजकुमार भी दमनशील हुए ।३। यह देखकर तीनों काल के जानने वाले राज पुरोहितों ने उनका नाम दम रखा इस राजकुमार ने राजा वृषपूर्वा में सम्पूर्ण धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की ।४-५। तथा तपोवन में रहने वाले दैत्यवर दुन्दुभि से उन्होंने समस्त अस्त्र विद्या के प्रयोगों को संहार सहित प्राप्त किया ।६। शक्ति मुनि से सम्पूर्ण वेद-वेदांग और आर्ष्टिषेण से योग शिक्षा प्राप्त की ।७।

तंसुरूपमहात्मानगृहीतास्क्षमहाबलम् ।
स्वयंवरेफुतांपित्राजगहेसुमनापतिम् ।८
सुतापशार्शाधिपतेर्वलिनश्चारुवर्मण: ।
पश्यतांसर्वभूतानांयेतदर्थमुपागता: ।९
तस्यांचसानुरागोऽभन्मद्रराजस्यवैसुत: ।
सुमनायांमहानादोमहाबलपराक्रम: ।१०
तथाविदर्भाधिसते: पुत्र: सक्रन्दनस्यच ।
वपुष्मान्राजपुत्रश्चमहाधनुरुदारधी ।११
तेतदातंवृतंद्दष्ट वारिदमनंदतम् ।
मन्त्रयामासुरन्मोऽन्यंतत्रानंगविमोहिता: ।१२
एतामस्यबलात्कन्यांगृहीत्वारूपशालिनीम् ।
गृहप्रयामस्तस्येयमस्माकंयंग्रहीष्यति ।१३
भर्तृबुधयावरोहास्वयंवरविधानत: ।
तस्येच्छयानोभवित्रीभार्य्याधर्मोपपादिता ।१४
अथनेस्छतिसाकञ्चिदस्माकमदिरेक्षणा ।
ततस्तस्यभवित्रीसायोदमंघातयिष्यति ।१५

दशार्णाधिपति चारुवर्मा की कन्या सुमना ने अपने पिता के द्वारा स्वयंवर किए जाने पर महाबली महात्मा दमको ही अपना पति बनाया। भद्रराज के पुत्र महानन्द विदर्भ राज के पुत्र वपुष्मान् तथा महाधनु नामक राजपुत्र ने उस सुमना की कामना की थी। परन्तु शत्रुओं का दमन करने वाले 'दम' को राजकन्या ने वरण किया, देखकर वह राजकुमार परस्पर विचार करने लगे। हम इस रूपवती राजकुमारी को इससे छीनकर ले जायेंगे। राजकुमारी स्वयंवर की विधि से हममें से जिसे चाहे स्वेच्छापूर्वक वरण करे, तब यह उसी की उपलब्ध पत्नी मानी जायगी। यदि यह हममें से किसी को भी ग्रहण नहीं करेगी तो जो दम का बध कर देंगे, यह उसकी पत्नी होगी।८-५।

इतितेनिश्चयंकृत्वा त्रयः पार्थिवनन्दनाः।
जगृहुस्तांसुचार्व गीदतपाशर्वानिवर्त्तिनीम्।१६
ततः केचिन्नृपास्तेषांयेतत्पक्षाविचक्रुशुः।
चक्रुशुश्चापरेभूपाः केचिन्मध्यस्थतांगताः।१७
ततोदमस्तान्भूपालानवलोक्यसमन्ततः।
अमाकुलमनावाक्यमिदमाहमहामुने:।१८
भोभूपाधर्मकृत्येषुयद्वदन्तिस्वयंवरम्।
दशार्णपतिनांभूपाः कृतेधर्म्येस्वयंवरे।
अधर्मोवाऽथवाधर्मोयदेभिगृ ह्यतेबलात्।१९
यद्यधर्मोनमेकार्यमन्यभार्य्याभविष्यति।
धर्मोवातदलंप्राणैर्योरक्ष्यन्तेरिलंघने।२०
ततोदशार्णाधिपतिश्चारुवर्मानराधिपः।
निःशब्दंकारयित्वाततसदः प्राहमहामुने।२१

मार्कण्डयजी ने कहा—उन तीनों राजकुमारों ने ऐसा विचार करके दम के पार्श्व में बैठी हुई उस राजकुमारी का हरण कर लिया।१६। उस समय दम पक्षीय राजाओं ने उनकी निन्दा और भर्त्सना की बहुत से राजा अत्यन्त क्रोधित हुए और बहुत से तटस्थ रहे।१७। फिर

तब दशार्थ के राजा चरुधर्मा ने सब राजाओं से कहा अपने चारों ओर राजाओं को स्थित देखकर दम ने व्याकुलता पूर्वक कहा ।१८। दम बोले—हे राजाओ ! जिस स्वयंवर को धर्म कार्य समझा जाता है यह यथार्थ में धर्म है–अथवा अधर्म है ! उन्होंने स्वयंवर द्वारा प्राप्त हुई कन्या का जो हरण बलपूर्वक किया है ।१९। तो यदि स्वयंवर धर्म-कार्य नहीं है तो अवश्य ही यह अन्य की पत्नी बने, परन्तु यदि आज इसे धर्म कहते हो तो शत्रु से तिरस्कृत हुए इसे शरीर में प्राण रखने की क्या आवश्यकता है ।२०-२१।

दमेनयदिदप्रोक्तंधर्माधर्माश्रितनृपाः ।
तद्वदध्वयथाधर्मोमनास्यचनलुप्यते ।२२
ततः केचिन्महोपालास्तमूचुर्वसुधाधिपम् ।
परस्परानुरागेणगान्धर्वोविहितोविधिः ।२३
क्षत्रियाणांपरमयंनविट्शूद्रद्विजन्मनाम् ।
दममाश्रित्यनिष्पन्नः सचास्यादुहितुस्तव ।२४
इतिधर्माद्दमस्यैषादुहितातत्रपार्थिव ।
योऽन्यथावर्त्ततेमोहात्कामात्मासम्प्रवर्त्तते ।२५
तथाऽपरेतदाप्रोचुर्महात्मानोहिभूभृताम् ।
पक्षेयेभभृतोतिप्रदशार्णाधिपतिवचः ।२६
मोहात्किमाहुर्धर्मोऽयंगान्धर्वक्षत्रजन्मनः ।
नयेप्रशास्तानान्योहिराक्षसशस्त्रजीविनाम् ।२७
बलादिमायोहरतिहत्वातुपरिपन्थिनः ।
तस्यैषास्यादाक्षसेतविवाहेनावनीश्वराः ।२८

हे राजाओ ! दम ने धर्म-अधर्म विषयक बात कही है, उस पर आप अपनी सम्मति दीजिये,जिससे आप धर्मसे च्युत नहीं। मार्कण्डेयजी ने कहा—तब अनेक राजा उनसे बोले कि परस्पर की प्रीति से गांधर्व विवाह का विधान है। यह विवाह क्षत्रियों के लिए उत्तम है। गांधर्व वैश्य या शूद्र के लिए नहीं, आपकी इस कन्या का विवाह उक्त विधान से दम के साथ ही सम्पन्न हो गया है। इसीलिए हे राजन् ! आपकी

पुत्री दम की ही पत्नी हुई। परन्तु कामाशक्त मनुष्य ही मोह के वशीभूत होकर इसका विरोध करते हैं। विरोधपक्ष के राजाओं ने दशार्णाधिपपति से इस प्रकार कहा। मोह के वशीभूत हुए यह राजागण कैसी बात कर रहे हैं? क्षत्रियों के हित में यह गन्धर्व विवाह तो है ही नहीं, अन्य विवाह भी उनके लिए प्रशस्त नहीं है। शस्त्र जीवियों के लिए तो केवल राक्षस विवाह ही उचित माना गया है। हे राजन्! विपक्ष को नष्ट कर जो इस कन्या को बलपूर्वक ले लेगा राक्षस विधान के विवाह से यह उनकी भार्या ही होगी।२२-२८।

प्रधानतरषोऽत्रविवाहद्वितमेमतः।
क्षत्रियाणामतोधर्मोमहानन्दाभिः कृत।२९
अथप्रोचुः पुनर्भूपायैः पूर्वमुदितोनृपः।
परस्परानुरागेणजातिधर्माश्रितवचः।३०
सत्सशस्तोराक्षसोऽपिक्षत्रियाणांपरोविधिः।
किन्त्वसौजनकम्बाम्येकुमार्य्यानुमतोवरः।३१
हृत्वयातुपितृसम्वधंवलेनह्रिगतेह्रिया।
सराक्षसोविधिः प्रोक्तोनात्रभर्तृकरेस्थिता।३२
पश्यतांसर्वभूपानामनगायद्वृतोदमः।
गान्धर्वस्येहनिष्पत्तौविवाहोराक्षसोऽत्रकः।३३
विवाहितायाः कन्यायान्यात्वविद्यते।
कन्यायाश्चविवाहेनसम्बन्धः पृथिवीश्वराः।३४
इतमेयेबलादेनांदमादादातुमुद्यताः।
बलिनस्तेयदिततः कुर्वन्तुनतुसाधुतत्।३५

क्षत्रियों में जब राक्षस विवाह की ही प्रमुखता है, तब महानन्द आदि राजकुमारों ने धर्म का ही आचरण किया।२९। मार्कण्डेय जी ने कहा—जिन राजाओं ने पहले परम्परागत धर्म विषय में कहा था उन राजाओं ने पुनः कहा।३०। यह भी सत्य है कि क्षत्रियों में राक्षस विवाह को श्रेष्ठ माना गया है। परन्तु इस राजकुमारी ने तो

अपने पिता की आधीनता में 'दम' का वरण किया है ।३१। राक्षस विवाह वही है जिसमें कन्या पक्ष के पिता आदि को मारकर या घायल करके कन्या का हरण कर लिया जाय, परन्तु पति को प्राप्त हुई कन्या का हरण करने से उसे राक्षस विवाह नहीं माना जा सकता ।३२। सब नृपालों के सामने ही सुमना ने दम का वरण किया है, इसलिए यह विवाह गाँधर्व विवाह ही है इसमें राक्षस विवाह का विधान कौन हुआ है ।३३। विवाह होने पर कन्यात्व नहीं रहता इस लिये विवाह के होने तक ही कन्या समझना चाहिए ।३४। दम के हाथ से कन्या का बलपूर्वक हरण करने वाले लोग अपने बल के मद में ऐसा कह रहे हैं ।३५।

तच्छ्रुत्वाऽसौदम: कोपकषायीकृतलोचन: ।
आरोपयामासधनुर्वचनचेदमब्रीवीत् ।३६
ममापिभार्य्याबलिभि: पश्यतोह्रियतेयदि ।
तत्कुलेनभुजाभ्यांवाकोगुश: क्लीबजन्मन: ।३७
धिङ् ममास्त्राणिधिक्छौर्य्यधिक्छरान्धिक्छरासनम् ।
धिग्व्यर्थमेकलेजन्ममरुत्तस्यमहात्मन: ।३८
यदिभार्य्यामिमेमूढा: समादायबलान्विता: ।
प्रयान्तिजीवतोधिक्त्वांममव्यर्थमनुष्यताम् ।३९
इत्युक्त्वातान्महीपालान्महानन्दमुखान्बली ।
अथाब्रवीत्तदासवेन्मिहारिदमनोदम: ।४०
एशातिशोभनाबालाचार्व गीमदिरेक्षणा ।
किन्तस्यजन्मनाभार्य्यानियस्येयंकुलोद्भवा ।४१
इतिसञ्चिन्त्यभूपालास्तथायततसंयुगे ।
यथानिजित्यमामेतापन्नोकुरुतमानिन: ।४२

मार्कण्डेयजी ने कहा—यह बात सुनकर दम ने क्रोध से लाल नेत्र कर अपने धनुष पर ज्या चढ़ाते हुए कहा । यह मेरे सामने ही मेरी पत्नी का बलपूर्वक हरण करते हैं, इसलिए मैं क्लीब ही हुआ समझो । इस प्रकार मेरे वंश के गौरव और दोनों भुजाओं में कोई गुण ही नहीं

है। मेरे रहते हुए यह पत्नी का हरण कर ले जाये तो मेरे अस्त्रों वाणों और धनुष को धिक्कार है तथा महात्मा मरुत के वंश में उत्पन्न होने को भी धिक्कार है। शत्रुओं का दमन करने वाले महाबली दम ने ऐसा कहकर महानन्दादि के प्रति कहा—हे सम्मानित राजागण ! यह सत्कुल में उत्पन्न हुई सुन्दरी बालिका जिसकी पत्नी नहीं हुई, उसका जन्म ही वृथा हुआ है। यह सोचकर मुझे पराजित करके इसे अपनी पत्नी बना सको, वैसा ही प्रयत्न संग्राम भूमि में करो।३६-४२।

इत्याभाष्यततस्तत्रशरवर्षममु च्चत ।
छादयन्पृथिवीपालांस्तमसेवमहोरुहान् ।४३
तऽपिवीरामहीपालाः शरक्तयुष्टिमुद्गरान् ।
मुमुचुस्ततणयुक्तांश्चदमश्चिच्छेदलीलया ।४४
तेऽपितत्प्रहितान्बाणांस्तेचासौशरोत्करान् ।
चिच्छेदपृथिवीशानांनरिष्यतात्मसोमुने ।४५
वर्त्त मानेतदायुद्धे दमस्यक्षितिपात्मजैः ।
प्रविवेशमहानन्दः खंगपाणिर्यतोदमः ।४६
तमायान्तंदमोदृष्ट्वाखंगपाणिमहामृधे ।
मुमोचशरवर्षाणिवर्षाणीवपुरन्दरः ।४७
तदस्त्राथिततस्तानिशरजालनितत्क्षणात् ।
महानन्दः प्रचिच्छेदखगेनान्यानवंचयतत् ।४८
ततोराषात्समारुह्यतंदमस्यनदारथम् ।
महानन्दोमहावीर्योदमेनयुध्येसह ।४९

ऐसा कहकर दम ने उन राजाओं के आच्छादन पूर्वक बाणवृष्टि की ।४३। उन राजाओं ने भी, बाण, शक्ति मुगदर आदि इन पर चलाये, परन्तु इन्होंने उन सब शस्त्रास्त्रों को लीलापूर्वक ही नष्ट कर दिया।४४ हे मुने ! उस समय सब राजा दम के अस्त्रों को और दम भी उनके अस्त्रों को काटने लगे।४५। दम और उन राजपुत्रों के मध्य इस प्रकार संग्राम हो रहा था, तभी हाथ में खंग ग्रहण किए हुए महानन्द उनके

सामने हुआ ।४६। उसे हाथ में खंग लिये आता देखकर, इन्द्र द्वारा जल वृष्टि करने के समान, दम ने वाणों की वर्षा आरम्भ की ।४७। महानन्द ने उनके सब अस्त्रों और वाणों को अपने खंग से काट डाला, उसने यह कार्य इस चतुराई में किया कि अन्य राजागण उसे देख भी न सके ।४८। फिर वह महानन्द दम के साथ लड़ने लगा ।४६।

बहुधायुध्यमानस्यमहानन्दस्यलाघवात् ।
दमोमुमोचहृदयेशरंकालानलप्रभम् ।५०
तंलग्नमात्मनोत्कृष्यविभिन्नेमततोहृदा ।
दमंप्रतिविक्षेपमहानन्दोऽसिमुज्ज्वलम् ।५१
पतन्तचैनमुल्काभंशक्त्याचिक्षेपततंदभः ।
शिरोवेतसपत्रंणमहानन्दस्यचाच्चिनत् ।५२
तष्मिन्हयेमहानन्देप्रचूर्येणपरांमुखाः ।
बभूव पार्थिवास्तथौवपुष्मान्कुण्डिनाधिपः ।५३
दमेनयुनेचासौवलगर्वमदान्वितः ।
दक्षिणात्यमहीपालतनयोरणगोचरः ।५४
युध्यमानस्यतस्योग्रकरवालसवैंलघु ।
च्चिच्छेदसारथेश्चौवशिरः सख्येतथाध्वजम् ।५५
खिन्नखंगोगदांसोऽथजग्राहबहुकण्टकाम् ।
तामप्यस्तसचिच्छेदकरस्थाभेवमत्वरः ।५६

बहुत समय तक युद्ध करते हुए दम ने उनके हृदय में कालाग्नि के समान ज्वलंत बाण छोड़ा ।५०। महानन्द ने हृदय में लगे हुए उस बाण को स्वयं ही निकाला और दम पर अपने उज्ज्वल खंग का बार किया ।५१। दम न विद्युत के समान गिरते हुए उस खंग को शक्ति द्वारा काट कर तुरन्त ही वेतसपत्र वाणके द्वारा उस महानन्द का शीश काट डाला ।४२। महानन्द के समाप्त होते ही कुण्डिनाधिपति वपुष्मान् के अतिरिक्त अधिकतर नृप रण से विमुख हो गये ।५३। वह राजपुत्र दक्षिणाय एवं अपने पराक्रम के प्रति अभिमानपूर्ण वपुष्मान् रण क्षेत्र दम से युद्ध

करने लगा।४५। युद्धक्षेत्र में तुरन्त वपुष्मान् की तीव्र तलवार एवं उसके सारथी का सिर व रथ की ध्वजा काट डाली।५५। तलवार के नष्ट होने पर वपुष्मान ने अनेक काँटों से युक्त गदा धारण की दम ने यह गदा उसके हाथों में खण्ड खण्ड कर डाली।५६।

यावदन्यत्समादत्ते सवपुष्मान्वरायुधम् ।
तावच्छरेणतबिद्धादमोभमावपातयात् ।५७
सपातितस्ततोभूमौविह्वलांगः सवेपथुः ।
विनिवृत्तमतिर्युद्धाद्वभूवक्षितिपात्मजः ।५८
तमालोक्यतथाभूतमयुयुद्धमतिमात्मवान् ।
उत्सृम्यादायसुमनांसुमनाः प्रययौदमः ।५९
ततोदशार्णाधिपतिं प्रीतिभानकरोत्ययोः ।
दमस्यसुमनायाश्चतिवाहंविधिपूर्वकम् ।६०
कृतदारोदमस्तत्रदशार्णाधिपतेः पुरे ।
स्थित्वाऽल्पकालप्रययौसभार्योनिजमन्दिरम् ।६१
दशार्णाधिपतिश्शासौद त्वानागांस्तुरंगमान् ।
रथगोऽश्चखरोष्ट्रांश्चदासांस्तथावहन् ।६२
वस्त्रालंकारचापादिवरोपस्करमासनम् ।
अन्येस्तैश्चतथाभाण्डैः परिपूर्णव्यस्जेयद् ।६३

इसके पश्चात् वपुष्मान द्वारा सर्वोत्तम अस्तु ग्रहण करने पर भी दम ने उसे अपनी बाण वर्षा द्वारा टुकड़े कर पृथ्वी पर गिरा दिया व युद्ध की तत्परता त्याग दी।५८। दम ने उसकी ऐसी स्थिति एवं उसकी युद्ध के लिए तत्परता न देख उसे छोड़ दिया एवं आनन्द से हृदय से सुमना को लेकर चले गये।५९। इसके पश्चात् दशार्णाधिपति ने आनन्दित चित्त होकर सुमना व दम का विवाह विधि से सम्पन्न किया।६०। भार्या प्राप्त करके दम कुछ समय तक दशार्णाधिपति के महल में रहे। तदन्तर पत्नी के साथ अपने गृह को चले गये।६१। उसको विदा

करते समय दशार्णाधिपति ने उन्हें अनेकों हाथी, घोड़े, रथ, गौ, खर, ऊँट. दास, दासी, वस्त्र, आभूषण, धनुष आदि विभिन्न प्रकार की बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट स्वरूप एवं दानस्वरूप, धन, रत्न आदि प्रदान किए । ।६२-६३।

१२१-दम चरित्र [२]

सतांलुब्ध्वः तथापत्नींमुमनांसुमहामुने ।
प्रणम्यसपितुः पदौमातुश्चक्षितिपात्मजः ।१
साचतोश्चशुरौसुभ्रूर्नंनामसुमनातदा ।
ताभ्यांतौचतदाविप्रआशीभिरभिनन्दितौ ।२
महोत्सवश्चसंजज्ञे नरिष्यन्तस्यवैपुरे ।
कृतदारेचसंप्राप्तेदशार्णाधिपतेपुरात् ।३
सम्बन्धिनंदशार्णेशंजितांश्चपृथिवीश्वरान् ।
श्रुत्वापुत्रेणमुमुदेनरिष्यंतोमहीपति ।४
सोऽपिरेमेसुमनामहाराजसुतोदमः ।
करोद्यानवनोद्देशप्रसादगिरिसानुषु ।५
अथकालेनमहातामसमाणादमेनसा ।
अवापगर्भसुमनादशार्णाधिपतेः सुता ।६
सोऽपिराजानरिष्यन्तोभुक्तभोगोमहीपतिः ।
वयः परिणतिंप्राप्यदमंराज्येऽभिषिच्यचः ।७
ततंगजामेद्रसेनापस्नींचास्यतपस्विनो ।
वानप्रस्थविधानेसतत्रसमतिष्ठतः ।८

मार्कण्डेयजी ने कहा—हे महर्षि ! दम ने अपनी भार्या सुमना सहित जाकर अपने माता-पिता के चरणों में प्रणाम किया ।१। एवं इसी प्रकार सुमना ने भी उन्हें प्रणाम किया। हे द्विज ! उन दोनोंमाता पिता ने भी आशीर्वाद प्रदान करते हुए उनका अभिनन्दन किया ।२। सुमना को भार्या के रूप में ग्रहण करके दम दशार्णाधिपति के महल से

आये, तो नरिष्यन्त के महल में आनन्दोत्सव प्रारम्भ हो गया ।३। नाराधिपदि नरिष्यन्त को दशार्णराज के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होने एवं अपने पुत्र द्वारा अन्य राजाओं को हराने का वृतांत सुनकर अत्यन्त सन्तोष हुआ ।४। इसके पश्चात् राजकुमार दम अनुपम उद्यानों, वनों, महलों एवं पर्वत आदि स्थलों पर भार्या सुमना के साथ विहार करने लगे ।५। इस प्रकार विहार करते हुए कुछ समय पश्चात् दशार्ण सुता ने गर्भ धारण किया ।६। उसी काल नृपेन्द्र नरिष्यन्त ने वैभव का उपयोग कर अपनी वृद्धावस्था को देखकर दम को राज्याभिषेक कर दिया ।७। अपनी भार्या रानी इन्द्रसेना को साथ लेकर वन में प्रस्थान कर गए एवं विधिपूर्वक वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करने लगे ।८।

दाक्षिणात्यः सुदुर्वृत्तः संक्रदनसुतोवने ।
वपुष्मान्समृगान्हन्तुयथावल्पपदानुनुगः ।९
सतंदृष्ट्वानरिष्यन्ततापससमलपांकिनम् ।
इन्द्रसेनाचतत्पनींतपसातिसुदुर्ललाम् ।१०
पप्रच्छकस्त्वंभोविप्रः क्षत्रियोपात्रनेचरः ।
वानप्रस्थमनुप्राप्त वैश्वोवाममकथ्यताम् ।११
ततोमौव्रतोभूपोनहितस्योत्तरंददौ ।
इन्द्रसेनाचतत्सर्वमाचख्यास्मैयथातथम् ।१२
ज्ञात्वायचनारिष्यन्तंवपुष्मापितररिपोः ।
प्रान्तोऽसीतिवदन्कोपाज्जटासुपरिगृह्यच ।१३
हाहेतिइन्द्रसेनायांरुदयांवाष्पगद्गदम् ।
चकर्षकोपात्खंगचवाक्येचेदमुवाचह ।१४

एक बार दक्षिणात्य नृप सकन्दन का दुराचारी पुत्र वपुष्मान् अपने कुछ अनुचरों के साथ वन में आखेट के लिए आया ।९। वहाँ वानप्रस्थी नरिष्यन्त की मलिन देह व विकलांगी इन्द्रसेना को देखा।१०। वपुष्मानने उनसे पूछा तुम कौनहो? ब्राह्मण,क्षत्रिय अथवा वैश्यमें से किस जातिके जो वानप्रस्थी होकर वनवासी हुए हो, यह मुझे बताओ।११। राजामौन

व्रत में थे, इसलिये इनका उत्तर नहीं दे सके परन्तु इन्द्रसेनाने सब बात यथावत् बतादी ।१२। मार्कण्डेयजी ने कहा—वपुष्मान् ने उन्हें शत्रु का पिता नरिष्यन्त जान कर पा गया कहते हुए क्रोधपूर्वक उनकी जटा पकड़ली ।१३। उस समय इन्द्रसेना हा हा कर रोने लगी, तभी दुराचारी ने म्यान से तलवार निकालकर कहा ।१४।

निर्जितः समरेयेनमेसुमनाहृता ।
दमस्यतस्यपितरंहनिष्येऽवततन्दमः ।१५
येनाखिलमहीमालपुत्राः कन्यार्थमागत ।
अवधताहनिष्येऽहपितरं तस्यदुर्मतेः ।१६
यौवनास्त्रस्वरूपेपुमदोयस्यदुरात्मनः ।
सदवामारयत्वेषहन्मितस्यरिपोर्गुरुम ।१७
इत्युक्त्वादुराचारोवपपुष्मानवनीपतिः ।
क्रदन्त्यामिन्द्रसेनायांशिरश्चि्दतस्यच ।१८
ततोधिग्धिङमुनिजनाअन्येचवनवासिनः ।
तमूचुःसचतंहत्वाजगामस्वपुरंवनात् ।१९
गतेतस्मिन्विनिश्वस्यसेन्द्रनावपुष्मति ।
प्रेषयामासपुत्रस्यसमोपशूद्रतापमम् ।२०

जिसने मुझे युद्ध में हरा दिया था और जो मेरी सुमनाका हरणकर ले गया है उस दम के पिता का मैं वध करता हूँ, वह दम यहाँ आकर इनकी रक्षा करे ।१५। कन्या की कामना से सब राजकुमारों को जिसने अपमानित किया, उस दम के पिता को आज मैं मार रहा हूँ ।१६। जो योद्धाओं के दमनकारी स्वभाव वाला है मैं आज उस दुरात्मा शत्रु के पिता को विनष्ट करता हूँ, दम आकर इसको बचावे ।१७। मार्कण्डेयजी ने कहा-इतना कहकर दुरात्मा राजा वपुष्मान् ने रुदन करती हुई इन्द्रसेना के समक्ष नरिष्यन्त का मस्तक छिन्न कर दिया ।१८। यह देखकर मुनिगण और अन्य सब वनवासी उसे धिक्कार देने लगे और वह भी नरिष्यन्त को इस दशा में छोड़कर अपने नगर को चला गया ।१९।

जब वपुष्मान चला गया, तब इन्द्रसेना ने दीर्घ निश्वास लेकर एक शूद्र तपस्वी को अपने पुत्र के पास भेजा ।२०।

गच्छ्थाआशुमेपुत्रं दमं ब्रूहिवचोमम ।
अभिज्ञोह्यसिमद्भर्तृ वृत्तान्तं प्रोच्यतेऽत्रकिम् ।२१
तथापिवाच्यः पुत्रोमेयदूब्रवीम्यतिदुःखिता ।
लंघनामीदृशींप्राप्तांवियोक्यैतांमहीपते ।२२
मद्भर्त्राधिक्रतोराचतुर्णापरिपालकः ।
त्वमाश्रमाणांकियुक्तंतापसान्यन्नरक्षसि ।२३
भर्तामिमनरिष्यन्तस्तासस्तपस्थितः ।
विलपन्त्यास्तथानाथोयथानासितथात्वयि ।२४
आकृष्यकेशेषुवलादसराधविनातत ।
हतोवपुष्मानाख्यातिमितितेभपतिर्ग्रता ।२५
एवंस्थितेतत्क्रियतांयथांधर्मोनलुप्यते ।
तथाचनैनवक्तव्यंमाताहं तापसीयतः ।२६
पितवृद्धस्तपस्वीचनापराधनेदूषितः ।
निहतोयनत्तस्यकर्तव्यंतद्विचिन्त्यताम् ।२७
सन्तितेमन्त्रिणोवीराः सर्वशास्त्रार्थवेदिनः ।
तैः सहालोच्ययत्कार्यमेवं भूतेकुरुष्वतत् ।२८

इन्द्रसेना ने उससे कहा कि तुम शीघ्र ही हमारे पुत्र दम के साथ जाकर इधर का समाचार कहो, तुम सब वृतांत्त को भले प्रकार जानते हो, इसलिए तुम्हें बताने की कोई आवश्यकता नहीं है ।२१। फिर भी राजा का ऐसा अपमान उपस्थित देखकर और अत्यन्त दुःखित होकर मैं कह रही हूँ, वह सब मेरे पुत्र से कहना ।२२। तुम राजा हो, चारों आश्रमके पालन कर्त्ता एवं स्वामी नियुक्त हुए हो फिर भी तुम तपस्वियों की रक्षा न करो, क्या यह उचित है ? ।२३। मेरे पति नष्यन्ति यहाँ तप करते थे, परन्तु, तुम रक्षा करने वालेके होते हुए भी मेरे द्वारा विलाप करते-करते वपुष्मान ने उनका निरपराध ही बध कर दिया है। तुमने

राजा होकर प्रसिद्धि उपलब्ध की है ।२४-२५। इस दशा में जिससे धर्म लुप्त न हो वैसा ही कार्य करो इससे अधिक कहना उचित नहीं समझती ।२६। तुम्हारे पिता प्रथम तो वृद्ध थे इस पर भी तपस्वी और सर्वथा निरपराधी थे, ऐसी अवस्था में उनकी हत्या की गई है । इस विषय में अपने कर्तव्य का भली-भाँति निश्चय करो ।२७। तुम्हारे वीर मन्त्री शास्त्र ज्ञाता हैं उनसे परामर्श पूर्वक जो कर्तव्य हो वही करना चाहिए ।२८।

नास्माकमधिकारोऽत्रतापसानांनराधिप ।
कुरुष्वैतदितीत्यत्वमेवभूपतिभाषितम् ।२९
विदूरथस्यजनकीयवनेनयथाहतः ।
तथायतवपुत्रस्यकुलतेनविनाशितम् ।३०
जृम्भम्यासुरराज्यस्यपितादष्टोभुजङ्गमैः ।
तेनाप्यखिलपातालवासिन पन्नागाहताः ।३१
पराशरेणपितरशक्तितंरक्षसात्वहतम् ।
श्रुत्वाऽग्नोपातितकृत्स्न रक्षसाम भवेत्कुलम् ।३२
अन्यस्यापिस्ववंशस्यलघनाकियतेहिंसा ।
तानालं क्षत्रिय सौढूकिपुनः पितृमारणम् ।३३
नायंपितातेनिहतीनास्मिञ्छस्त्र निपातितम् ।
त्वामत्रनिहतंमन्येत्वयिशस्त्रं निपातितम् ।३४

हे राजन्! तुम्हारे पिता ने मरते समय कहा है कि मैं तपस्वी हूँ इस विषय में अधिकारी हूँ इसलिए तुम्हें ही इसका प्रतिकार करना है ।२९। हे पुत्र ! जिस प्रकार विदुरथ के पिता का यजन ने वध किया था वैसे वपुष्मान् ने तुम्हारे पिता का वध करके कुल को नष्ट किया है ।३०। जब दैत्यराज जंभ के पिता को सर्पों ने काट लिया था, उस जंभ ने पातालवासी सभी नागों को निहित किया था ।३१। और उस असुर के द्वारा पिता की मृत्यु हुई सुनकर पराशर जी ने सम्पूर्ण असुर-वंश को अग्नि में दग्ध कर दिया था ।३२। जब क्षत्रियगण अपने कुल के

किसी व्यक्ति का अपमान सहन नहीं कर पाते तो पिताके वध की बात का तो कहना ही क्या है।३३। मैं समझती हूँ कि तुम्हारे पिता का वध नहीं हुआ,है उन पर शस्त्र नहीं चलाया गया अपितु इस प्रकार तुम्हारा ही वध हुआ है ।३५।

विभेत्यस्यहिकः शस्त्रन्यस्तयेवनौकसाम् ।
तत्रभूपस्यपुत्रस्यवाविभेतुविभेतुवा ।३५
तवेयलघनायुक्तायस्मित्तत्समाचराः ।
वपुष्मतिमहाराजसभृत्यज्ञातिबांधवे ।३६
इतिसंक्रान्तसन्देशमिन्द्रसेनाविसृजातम् ।
पतिदेहमुपाश्लिष्यविवेसाग्निमनस्विनी ।३७

वन वासियों की रक्षार्थजो हथियार नहीं उठाता है । उसकाभयकौन करेगा ? अथवा पौरुषही क्या होगा ? तुम इनके पुत्र तथा पृथ्वीके पालन हो, यदि शत्रुको नष्ट करेंगे तो तुम्हारा भय सभी मानेंगे अन्यथा तुम्हारे शासनमें भी विघ्न उपस्थित हो जायगा ।३५। हे राजन् ! ये तिरस्कार हुआ है, इसलिए भृत्यों व वपुष्मान के प्रति तुम्हें जो करना चाहिए, वही, करो ।३६। मार्कण्डेयजी ने कहा—इन्द्रसेना ने उस तापस से यह सन्देश कहकर उसे विदा किया और पति के शरीर का आलिंगन करके अग्नि में प्रवेश किया ।३७।

१२२—दम चरित्र [३]

इन्द्रसेनासमाज्ञप्त सगत्वाशूद्रकतापसः ।
समाचचष्टयथापूर्वदयायनिर्धनपितु ।१
तापसेनमाख्यातेदमस्तनपितुर्वधे ।
क्रोधेनातीवजज्तालहविषेवाग्निरुद्धत् ।२
सतुक्रोधाग्निनाधीरोदह्यमानौमहामुने ।
करंकरेणनिष्ठिष्यवाद्रयमेतदुवाचह ।३

अनाथइवमेतातामतिपुत्रतुजीवति ।
घाति सुनृशसेनपरिकुलंमम ।४
तापंकरोम्यहंक्विाप्येषक्लेव्यात्क्षमाग्यहम् ।
दुर्वुत्तशाँतोशिष्टानांपालनेऽधिकृतावयम् ।५
पितरंचापिनिहयदृष्ट्वाजीवन्तिशत्रवः ।
नत्किमेतेनवहुनाहातातेतिचक्रिपुनः ।६
विलापेनात्रयत्कृत्यंहेदेहोऽकरोऽग्यहम् ।
यद्यहतस्यरक्तेनदेहोस्थेवपुष्मतः ।
नकरोमिगुरोस्तृप्तितत्प्रवेक्ष्येहुताशनम् ।७
तच्छोणितेनोदकमंतस्यामांसनसम्यांन्द्विजभोजनंच ।
कार्यापितुस्तस्यचपिडदानंनचेत्प्रवेक्ष्यासिहुताशनतय ।८

मार्कंण्डेयजी ने कहा-इन्द्रसेना की आज्ञा से शूद्र तापस ने दम के निकट जाकर उनके पिता की मृत्यु का समाचार और रानी इन्द्र सेना ने जो कहा था, वह सब कह सुनाया ।१। पिताकी मृत्यु का पूर्ण सवाद सुनकर अग्नि के समान राजा दम क्रोध से लाल हो गये ।२। यद्यपि वह स्वभाव से धीर थे, परन्तु उस समय क्रोधाग्नि में प्रज्वलित होकर हाथ मलते हुए बोले ।३। मुझ पुत्र के जीवित रहते हुए उस नृशंस ने मेरे कुल अपमानपूर्वक पिता की अनाथ के समान हत्या की है ।४। मैं क्रोध करूँगा क्लीवता से क्षमा कर दूँ, परन्तु मैं दुष्टों का दमन करने और शिष्ट जनों का पालन करने के लिए नियुक्त हुआ हूँ ।५। पिता के वध करने पर भी मेरे शत्रु जीवित हैं, परन्तु, वार्ता से क्या लाभ है ।६ अब मुझे जो कर्तव्य है वही करता हूँ यदि वपुष्मान के देह से निकले हुए रुधिर से अपने पिताका तर्पण न करूँ तो अग्निमें प्रवेश कर जाऊँगा ।७। यदि उसे मारकर पिता का तर्पण न करूँ, पितरों को पिंडदान न करूँ तो मैं अग्नि में प्रविष्ट होऊँगा ।८।

साहायस्यासुरदेवयक्षगन्धर्वविद्याधरसिद्धसंघाः ।
कुर्वन्तिचेतानपिचास्त्रपूर्गभस्मीकरोभ्यपरुषासमेतः ।९

नीशूरमाधार्मिकप्रशस्ततदाक्षिणात्यंसमरेविहत्य ।१०
भोक्ष्येततोऽहपृथ्वीचकृस्नांवह्निप्रवेक्ष्याभ्यनिहत्यतंवा ।
सुदुर्मतितापसबृद्धघातिनवनस्यगंसाधुविधिदग्धगम् ।
हन्तामहमद्याखिलवन्धुमित्रपदातिहस्त्यश्वबलैः समेतम् ।११
एषोऽहमादायधनुः सखङ्गोरथीतथैवारिबलंसमेत्य ।
करोमिवैयत्कदनस स्ता पश्यन्तुमेदेवगणा समेताः ।१२
योयः सहायोभविताद्यतस्यमयासमतस्यरणासंभूयः ।
तस्यैवनिः मेषकुत्रयायसमुद्यदोऽहंनिजबाहुसैन्यः ।१३
यदिकुलशिखरोऽस्मिन्यंयूगदेवराजः ।
पितृपतिरथचोग्रदंडमुद्यभ्यकोपात् ।
धनपतिवरुणार्कारक्षितुन्तंयतन्ते ।
निशि शरवरोघैर्घातियिष्येतथापि ।१४
वियतमतिरदोषः काननाखंडलोका,
निपतितफभक्षासर्वभूतेषुमैत्रः ।
दभवतिमयिपुत्रेर्हिसिततोयेनततः,
पिशितरुधिरतृप्तास्यसन्त्यगृध्रा ।१५

असुर, देव, यक्ष, गन्धर्व विद्याधर अथवा सिद्धगण जो भी उसकी सहायता करेगा, उसे भी अपने अस्त्रानल से भस्म कर डालूँगा ।९। उस अशौर्य, अधार्मिक, निन्दित, दक्षिणात्य को युद्ध में मारकर ही सम्पूर्ण पृथ्वी को भोगूँगा अथवा उसके वध में असमर्थ होने पर अग्निमें प्रविष्ट हो जाऊँगा ।१०। जिस दुर्मति ने मेरे तपोनिरत वनवासी मौन व्रती वृद्ध पिताके शांत वचनोंके उपरान्तभी उनकी हत्या की है । उसे मैं अभी उसके सब बन्धुओं, मित्रों तथा पैदल और सवार के सहित मार डालूँगा ।११। मैं अब असि और धनुष को ग्रहण करता हुआ रथारूढ़ होकर शत्रु-सेना के मध्य उपस्थित होकर उसके संहार-कार्य में लगता हूँ । मेरा वह कृत्य सब देवगण देखें ।१२। युद्ध में मेरे साथ भिड़ने पर उसका जो भी सहायक होगा उसको अपनी बाहु और सेना द्वारा कुल

सहित नाश करने के लिये मैं आप तत्पर हुआ हूँ। इस संग्राम में वज्र-धारी इन्द्र, उग्र दण्ड देने वाले यम अथवा कुवेर वरुण और सूर्यभी यदि उसकी रक्षा का प्रयत्न करेंगे तो मैं अपने श्रेष्ठ वाणोंसे उनको भी नष्ट कर डालूँगा। मुझ प्रभावशाली पुत्र के सहित हुए भी जिसने मेरे संयम चेता, दोष सहित वनवासी, केवल गिरे हुए फल से जीवन-निर्वाह करने वाले एवं सब प्राणियों के प्रति मैत्री भाव रखने वाले पिता की हत्या की है, आज उसके रक्त और मांस से गृध्र-गण! तृप्ति को प्राप्त होंगे ।१३-१५।

१२३-वपुष्मान वध

इतीप्रतिज्ञानयदानरिष्नन्तसुतोदमः।
कोपामर्वविवृत्ताक्षः श्मश्रुमानृत्यपाणिना ।१
हाहत ऽस्मीतिपितरंध्यात्वावैवंविनिद्यचः।
प्रोवाचमत्रिणः सर्वानानिनायपुरोहितम् ।२
यदतकृत्यंतब्रततातेप्राप्तेसुरालयम्।
श्रुतंभवद्भिर्यत्प्रोक्ततेनशूद्रतपस्विना ।३
वृद्धस्तपस्वीसनृपोवानप्रस्थव्रतेस्थिता।
मौनवृतधरोऽशस्त्रोमत्माताचेन्द्रसेनया ।४
प्रोक्तंससृष्टयास्वात्म्याद्याथातथ्यंवतुष्मते।
तेनापिखगमाकृष्यजटासव्येनपाणिना ।५
धृत्वाजधानदुष्टात्मलोकनाथमनाथवत्।
माताचसंदिश्यमांधिक्छब्दंब्रुवतीसती ।६
मंदभाग्यंचनिः श्रीकप्रविष्टाहव्यवाहनम्।
तमालिंग्यनरिष्यंतप्रयातात्रिदशालयम् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—इस प्रकार प्रण करके क्रोध से भरे हुए दम ने घूणित नेत्रों से मूछों पर हाथ फेरकर उन्हें ऊँची किया ।१। और अपने पिता का चिन्तन तथा देव की निन्दा करने वाले। फिर पुरोहितों

को बुलाया अमात्यों के समक्ष उनसे बोले ।२। दम ने कहा-पिता जी स्वर्गवासी हो गए, शूद्र तापस के द्वारा यह बात आप सबको ज्ञात हो चुकीहै, अब क्या कर्तव्य वह मुझे बताइये ।३। सब पर शासन करने वाले वह महाराज वृद्धावस्था में वानप्रस्थी होकर मौन व्रतका अवलंघन कर रहे थे, वपुष्मान् द्वारा परिचय पूछनेपर मेरी माता इन्द्र उसे अपना सम्पूर्ण परिचय यथार्थ रूपसे दिया, तभी उस दुष्टने तलवार निकालकर अपने वामहस्त से ।५। मेरे पिताको अनाथ के समान पकड़ लिया और उनकी हत्या कर दी । तब मेरी सती माता ने मुझे मन्द भाग्य और निःश्रीक को धिक्कारा और मेरे पिता का आलिंगन करके अग्निमें प्रविष्ट हो गई ।६-७।

सोऽहमद्यकरिष्यामियन्मेमातेरुदीरितम् ।
हस्त्यश्वरथपादातिसैन्यंन्यंचपरिल्प्यताम् ।८
अनिर्यापितुर्वैरमहत्वापितघातकम् ।
अक्रन्वाचवचोमातुर्जीवितुं किमिहोत्सहे ।९
मंत्रिणस्तद्वचश्रुत्वाताहे युक्त्वातथाचतसत् ।
कृतबन्तोविमनसः जभृत्यबलबाहनाः ।१०
निर्ययुःसपरीवाराःपरस्कृत्यदम नृपम् ।
गृहीत्वावाचाशिषोविप्रास्त्रिकालज्ञात्पुरोधसः ।११
अहिराडिवनिःश्वस्यदमःप्रायाद्वपुष्पतम् ।
सीमापालाविसामंताग्निघ्नन्यास्म्यांदिशंत्वरा ।१२
निरोक्ष्यतंसमायांतंवपुष्मान्मर्षपूरितः ।
संक्रंदनसुतेनापिदमोज्ञातोवपुष्मता ।
आयात.सपरीवारःसन्त्यःसपरिच्छदः ।१३
अकंपितेनयसासससैन्यानिदिदेशह ।
दूतंचप्रषयामांसनिर्गम्यनगराद्बहिः ।१४

माताने जो आज्ञा मुझे भेजी है अब मुझे तदनानुसार कार्य करनाहै। रथ, अश्व पैदल आदि से युक्त यह चतुरंगिनी सेना सुसज्जित की जाय

।८। पितृ-द्वेषी और पितृ घातक को मारे बिना और माता की आज्ञा का पालन किये बिना जीवित रहने पर मुझमें उत्साह नहीं कर सकता ।६। मार्कण्डेयजी ने कहा—उनके वचन सुनकर मन्त्रिगण ने शोक व्याप्त कर राजाज्ञा का पालन किया और वे भृत्य, सेना, वाहनादि के सहित ।१०। सपरिवार चल पड़े और त्रिकालज्ञ पुरोहितों का आशीर्वाद लेकर दम भी ।११। नागराज के समान श्वासोच्छ्वास छोड़ते हुए सीमापालक सामन्तों को मारते हुए दक्षिण दिशा में गए ।१२। सपरिवार और मन्त्रिगण के साथ वीर वेश में दम का आगमन सुनकर संक्रन्दन-पुत्र वपुष्मान् ने क्रोधपूर्वक ।१३। दृढचित्त से अपनी सेना को युद्ध करने का आदेश दिया और नगर से निकलकर दूत के द्वारा यह सन्देश भेजा ।१४।

त्वंशीघ्रतरमागच्छनरिष्यंतः प्रतीक्षते ।
सभार्यक्षत्रबन्धोत्वसभायाहिममांतिकम् ।१५
इमेमद्बाहुर्मुक्ताःणिंतावाणाःपिपासिताः ।
भित्वाक्षरीरसंग्रामेपास्यंतिरुधिरंतव ।१६
श्रुत्वादमस्तुतत्सव दूतप्रोक्तंयथौत्वरम् ।
स्मृत्वाप्रतिज्ञापूर्वोक्तांननिःश्वसन्नुरगोयथा ।१७
आहूतसमरेचवपुरमांस्सेनापिकत्थनः ।
ततोयुद्धमतीवसीदमस्यचवपुष्मयः ।१८
रथौचरथिनानागीनागिनाहांयनाहयो ।
अयुध्वतचविप्रर्षेततद्युद्धतुमुलह्यभूत् ।१९
पश्यतांसर्वदेवांसिद्धगंधर्वरक्षसाम् ।
चकंपेवसुधाब्रह्मन्युध्यमानेदमेयुधि ।२०
नगजोनरथीनाश्वस्तस्यबाणसंहस्तुयः ।
ततोदमेनयुयुधेनाध्यध्यक्षीवपुष्मतः ।२१

अरे क्षत्रियाधम! शीघ्र ही सामने आ, नरिष्यन्त भी पत्नी के सहित तेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं, इसलिए तुरन्त ही मेरे पास आ ।१५। यह रक्त

पिपासु बाण शिला पर पैनाये गये हैं और अब मेरी भुजाओं द्वारा चलाये जाकर तेरे देह को विदीर्णकर रक्तपान करेंगे ।१६। दूत की बात सुनकर और पूर्व प्रतिभा का स्मरण का सर्प के समान श्वास त्याग करते हुए द्रुतगति से दम वहाँ पहुँचे ।१७। तथा युद्ध के लिये ललकारते हुए कहा-प्रकृति पुरुष आत्मश्लाघा कभी नहीं करते, इसके पश्चात् वपुष्मान के साथ दम का अत्यन्त घोर संग्राम हुआ ।१८। रथी से रथी, हाथी सवार से हाथी सवार अश्वारोही से अश्वारोही भिड़ गये और युद्ध होने लगा ।१९। हे ब्रह्मर्षे ! उस युद्ध को अपने सामने ही सब देवता, सिद्ध गन्धर्वादि देख रहे थे,जब अत्यन्त क्रोध सहित दम युद्ध में प्रवृत्त हुए,तब पृथिवी कम्पायमान हो उठी ।२०। उनके बाणों को सभी हाथी, अश्व या रथारोही सहन करते थे दम के साथ वपुष्मान् का सेनापति भिड़ रहा था ।२१।

हृदिविव्याधचदमइपुणाद्यमांतिकम् ।
तस्मिन्निपतितेसैन्यपलायनपरंह्यभूत् ।२२
सस्वामिनततःप्राहदमःत्रुदमस्तथा ।
क्वयासिदुष्टपितरं घातयित्वातपस्विनम् ।२३
अशस्त्रंच तस्यतंक्षत्रियोसनिवर्तताम् ।
ततोनिवृत्यसदमंयोधयामाससांनुजः ।२४
सपुत्रःसहसंवंधिबांर्युयुधेरथी ।
ततः शतासनान्मुवाणैर्व्याप्तास्ततोदिदशः ।२५
दमंचसरथचाशुशरजालैरपूरयत् ।
ततः पितृवधोत्थेनकोपेनसदमस्तथा ।२६
चिच्छेदताच्छरांस्तेषांविव्याधान्यंश्चानापि ।
एकेनैकेनबाणेनसप्तपुत्रांस्तथाद्विज ।२७
सबधिवांधवान्मित्रान्निनायतसादनम् ।
वपुष्मान्सरथक्रोधान्निहतात्मजवांधवः ।२८
युयुधेचसनातेजोशरैराशोविषोपमैः ।

चिच्छेदतस्यताम्बाणान्सद्मश्चमहामुने ।२९

उसके हृदय को दम ने बींध दिया,उसकेगिरते वपुष्मान के सहित समस्त सेना भागने लगी ।२२। तब शत्रुनाशक दम बोले—अरे दुष्ट मेरे पिताकी हत्या करके तू किधर जा रहाहै ।२३। तूने शस्त्र रहित तपस्वी का वध किया है,भाग मत । यह सुनकर वपुष्मान् अपने अनुज, पुत्र एवं बांधवादि के सहित रथ पर चढ़ा डटकर युद्ध करने लगा और उसने अपने धनुष के द्वारा वाण वर्षा करके सभी दिशाओं को ढक लिया ।२४-२५। उसने अपने बाणों के जालसे रथ अश्व सहित दम को आवृत कर दिया और दम ने भी अपने पिता की हत्या सें उत्पन्न हुए क्रोधसे उत्ते-जित होकर ।२६। सबके सब बाणों को काटकर, शत्रुओं की देह बाणोंसे बींध कर, एक-एक बाण से उसके सात पुत्र ।७। अनुज, सम्बन्धी आदि का वध कर दिया, जब वपुष्मान ने अपने आत्मज तथा बन्धु आदि का मरण देखा, तब भी अत्यन्त क्रोध में भरकर ।२८। नानों के समान बाणों के द्वारा दम से युद्ध करने लगा, परन्तु दम ने वे सभी काट दिए ।२९।

युतुधातेचसंरब्धौपरस्परजयैषिणौ ।
परस्परशराघातविच्छिन्नधनुषौत्वरा ।३०
गृहीतखड्गाबुतौर्यंचिक्रीडातेमहावलौ ।
दमक्षणंनृपध्यात्वापितरंनिहितवने ।३१
केशेष्वाकृष्यचक्रम्यनिपायधरणीतले ।
शिरोधारायांपादेभुजमद्यभ्यचाब्रवीत् ।३२
पश्यतुदेवतासर्वामानुषापन्नगाःखगाः ।
पाठ्यमानंचहृदयक्षत्रवंधोर्वपष्मतः ।३३
एवमुक्त्वाचसदमोहृदयंचव्यदारयत् ।
पातुकामश्चससुरैक्षतजेननिवारतः ।३४
ततश्चकारतातस्यारक्तेनैवोदकक्रियाम् ।
आनृण्यमुप्यासपितुः पुनः प्रयात्स्वमन्दिरम् ।३५

वपुष्मतश्चमासेनपिण्डादानंचकारह ।
ब्राह्मणान्भोजयामासरक्षःकुलसमुद्भवान् ।३६
एवंविधाहिराजानोववुसूर्यवंशजाः ।
अन्येपिसुधियःशूरायज्विनोधर्मकोविदाः ।३७
वेदांतपारगोस्ताश्चनसंख्यातुमिहोत्सहे ।
एतेषांचरितश्रुत्वाकरःपापैःमुच्यते ।३८

इस प्रकार क्रोध पूर्वक एक दूसरे को मारनेकी इच्छासे घोर संगाम करने लगे, दोनों ही महाबली थे दोनों के ही धनुष टूट गये थे,तब दोनों ही तलवार से युद्ध करने लगे, वन में मारे गए, पिता की क्षण भर याद करके दम ने वपुष्मान के ।३०-३१। केश खींच कर पृथिवी में डाल दिया और उसकी ग्रीवा को पाँवसे दबाकर भुजा उठाकर दम ने इस प्रकार कहा ।३२। मैं इस क्षत्रियाधम के हृदय को विदीर्ण करता हूँ, इसे सभी देवता, मनुष्य सिद्ध और नागगण देखें ।३३। ऐसा कहकर दम ने तलवार से उनका-हृदय चीर डाला और उसका रक्त पीने को उद्यत हुए, तब देवताओं ने उन्हें रोका ।३४। उसके रक्त से दम ने अपने पिता को उदक दान और मांससे पिण्डदान किया, इस प्रकार पितृ ऋण से मुक्त हुए दम अपनी राजधानी में लौट आये ।३५-३६। सूर्यवंश में ऐसे पराक्रमी राजा हुए तथा अन्य अनेक राजा यज्ञवान्, धर्मात्मा,ज्ञानी एवं वीर हुए हैं ।३७। ऐसे-ऐसे वेदान्त पारंगत हुए इनके चरित्र को सुनने वाला मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है ।३८।

१२४—पुराण श्रवण-पठन फल

एवमुक्त्वाजैमिनेयमार्कण्डेयामहामुनिः ।
विसृज्यक्रोष्टुकिमुनिंचक्रे ताध्याह्निकीक्रियाम् ।१
अस्माभिश्चश्रुतंतस्माक्तत्ते प्रोक्तमहामुने ।
अनादिसिद्धमेतद्धिपुराप्रक्तं स्वयंभुवा ।२

मार्कण्डेयायतमुनयेयत्तेस्माभिरुदाहृतम् ।
पुण्यंपवित्रमायुष्यंधर्मकामर्थसिद्धिम् ।३
पठतांश्रृण्वतांसद्यः सर्वपापप्रमोचनम् ।
आदावेवकृतायेच्चप्रश्नाश्चत्वारएवाह ।४
पितुपुत्रस्यसवादस्मथासृष्टिःस्वयंभुवः ।
तथामनूनांस्थितयोराज्ञांचचरितमुने ।५
अस्माभिरेतत्तेंप्रोक्तंकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।
एतान्सर्वान्निरंध्रुत्वापठेतवासभासुच ।६
विधुयसर्वपापानिब्रह्मणोह्यलयंव्रजेत् ।
अष्टादशपुराणनियानिप्राहपितामहः ।७

पक्षियोंने कहा—हे जैमिने ! महामुनि मार्कण्डेयजी ने इस प्रकार कहकर क्रोष्टुकि मुनि को विदा किया और मध्याह्न क्रिया सम्पन्न की ।१। हे महामुने ! जो हमने आपसे कहा है यह सब स्वयं भगवान् मार्कण्डयजी ने कहा था, हमने भी उन्हीं से सुना है ।२। आपसे कहा गया यह मनोहर पुराण मार्कण्डयजी के द्वारा कहा गया एवं अत्यन्त पवित्र है, इसके पढने या सुनने से आयु की वृद्धि और सभी कामनाओं की सिद्धि होती है ।३। और इसके पाठ करने से सभी पापों से मुक्ति होती है पहिले जो आपने चार प्रश्न किये थे, उन सबका उत्तर ।४। पिता-पुत्र सम्वाद स्वायंभुव की सृष्टि, मनुष्यों की उत्पत्ति और राजागण का चरित्र भी ।५। आपके प्रति कहे गये हैं, अब आप और क्या सुनना चाहते हैं ? इस सबको सुनने और सभास्थल में वाचन कराने वाला मनुष्य ।६। सभी पापों से छूट कर ब्रह्म में लीन हो जाता है ।७।

तेषांतुसप्तमज्ञेयं मार्कण्डेयंसुविश्रुतम् ।
ब्राह्मंपद्मंवैष्णवंचशैवभागवतंतथा ।८
तथान्यन्नारदीयंचमार्कण्डेयसप्तमम् ।
आग्नेयमष्टमंप्रोक्तंभविष्यंनवमंतथा ।९

दशमंब्रह्मवैवर्त्तं लैंगमेकादशस्मृतम् ।
वाराहद्वादप्रोक्तं स्कांदमत्रत्रयोदशम् ।१०
चतुर्दशंवामनंचकौर्मंपंचदशंतथा ।
मात्स्यचगारुडचैवब्रह्मांडचततःपरम् ।११
अष्टादशपुराणानांनामधेयानियः पठेत् ।
त्रिसंध्यंजपतेनित्यास ऽश्वमेधफलंलभेत् ।१२
सर्गश्चप्रतिसर्गश्चवंशोमन्वंतराणि च ।
वंशानुचरितंचैवपुराणपंचलक्षणम् ।१३
चतुःप्रश्नसमोपेवपुराणंह्य तदुत्तमम् ।
श्रुत्वापुनश्चतेपापकल्पकोटिशतैं कृतम् ।१४
ब्रह्महत्यादिपापनियान्यन्वाशुभानि च ।
तानिसर्वाणिनश्यंतितृणंवातहतंयथा ।१५

पितामह ब्रह्मा जी ने अठारह पुराण कहे थे उनमें यह मार्कण्डेय पुराण सातवां है, प्रथम पुराण ब्रह्म, द्वितीय पद्म, फिर वैष्णव, शैव, भागवत ।८। नारदीय, मार्कण्डेय, आग्नेय, भविष्य, ।९। ब्रह्मवैवर्त्त लिङ्ग वाराह, स्कन्द ।१०। वामन, कौर्म मत्स्य,गरुण और फिर अठारहवां ब्रह्माण्ड पुराण है ।११। इन अठारह पुराणों के नाम का ही पाठ करने वाले तथा तीनों संध्या में जप करने वाला मनुष्य अश्वमेध यज्ञके समान फल प्राप्त करता है ।१२। सर्ग, प्रति सर्ग वंश,मन्वन्तर, वंशानुचरित यह पाँच लक्षण पुराणोंके होते हैं ।१३। चार प्रश्न वाले इस मार्कण्डेय पुराण के सुनने से सौ करोड़ कल्प के भी पापों का क्षय होता है ।१४। तथा ब्रह्महत्या आदि सब महापाप प्रचण्ड वायु से टूटे हुए तृण के समान ही इसके पाठ करने से नष्ट हो जाते हैं ।१५।

पुष्करेदानजपुण्यश्रवणादस्यजापते ।
सर्ववेदाधिकफलसमाप्त्याचाधिगच्छति ।१६
यः श्रावयेत्पूजयेत्तं यथादेवपितामहम् ।
गन्धपुष्पैस्तथात्रस्वैर्ब्राह्मणां च तर्पणैः ।१७

यथाशक्त्याचदातव्यंनृपैर्ग्रामाकिमाह्नम् ।
एतत्पुसाणमखिलेवेदार्थैरुपबृंहिम् ।
धर्मशास्त्रैकनिलयंश्रुत्वासवार्थिमाप्नुयात् ।१८
श्रुत्वापुरांणमखिलंव्यासंपूजयेद्वृधः ।
धर्मार्थिकाममौक्षाणांयथोक्तधलहेतवे ।१९
दद्याद्नांगुरवेस्वस्त्रालंकारसंयुताम् ।
श्रवणस्यफलावाप्त्यंदानैः सतौषसेद्गुरुम् ।२०
अपूज्यपाठकर्तारंश्लोकमेकश्रृणोतियः ।
नासौयुण्यमवाप्नोतिशास्घचोरस्मृतोपिसः ।२१

इसके श्रवण करने से वैसा ही पुण्य मिलता है, जैसा पुष्कर में दान करने से मिलता है, इसकी सम्पूर्णता में वेदपाठ की सम्पूर्णता के समान फल की उपलब्धि होती है ।१६। इस पुराण को सुनाने वाले पण्डित ब्रह्मा के समान पूजन करे, गन्ध, पुष्प वस्त्रादि से पुराण का पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावे ।१७। राजा यथाशक्ति ग्राम तथा वाहनादि प्रदान करे, यह पुराण सम्पूर्ण वेदार्थ से युक्त तथा धर्म का स्थान रूप है, इसके श्रवण करने से सर्वार्थ सिद्धि होती है ।१८। इस सम्पूर्ण पुराणको सुनकर व्यास पूजन करे तो धर्म, अर्थकाम, मोक्ष चारों पदार्थों की प्राप्ति होतीहै ।१९। स्वर्ण, वस्त्र तथा अलंकारादि से युक्त गौ गुरु को दे और सुननेका फल प्राप्त करने के लिये दान द्वारा गुरु को संतुष्टकरे ।२०। वाचक की पूजा किये विना जो पुरुष इसको सुनते हैं, उन्हें कुछ भी पुण्यलाभ नहीं होता, ज्ञानीजन उन्हें शास्त्र चोर कहते हैं ।२१।

नतस्यदेवाःप्रीणांतिपितरौनैवपुत्रकान् ।
दत्तंश्राद्धंतदेच्चतितीर्थस्नानफलेनच ।२२
लभसेशास्त्रचोरश्निदासज्जनसंसदि ।
अवयज्ञानश्रोतव्यंशास्त्रमेताद्विचक्षणैः ।२३
पठयमानेत्वज्ञातेसाधुभिःशास्त्रकोत्तमे ।
मूकोभवतिजग्मानिसप्तमूख प्रजायते ।२४

श्रुत्वातत्पूजयेद्यस्तुपुराणंसप्तमंपुनः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः पुनात्येवनिजकुलम ।२५
पतोयातिनसंदेहोविष्णुलोकअतातनम् ।
च्युतस्नतपुनर्न वराभविष्यतिमानवः ।२६
पुराणश्रवणादेवपर्यंयोगमवाप्नुयात् ।
नास्तिकायनदाव्यवृषलेवेदनिंदके ।२७
गुरुद्विजातिनिंदायतथाभग्नव्रताय च ।
मायापित्रोर्निंदकायवेदशास्त्रानिंदने ।२८

देवता उनसे रुष्ट हो जाते हैं, पितरगण भी अप्रसन्न होकर उनके द्वारा दिया गया श्राद्ध ग्रहण नहीं करते और उन्हें तीर्थ स्नान के फल से भी वंचित होना पड़ता है ।२२। सज्जनों के समाज में उनकी निन्दा होती है, इसलिये विद्वानों को अवज्ञापूर्वक श्रवण नहीं करना चाहिए ।२३। जो मनुष्य साधुओं द्वारा शास्त्र पढ़ते समय अवज्ञा करते हैं वह पुराण का पूजन करने वाले मनुष्य सब पापों से मुक्त होते और अपने कुल को पवित्र करते हैं ।२५। वे पवित्र होकर अवश्य ही विष्णु लोक को प्राप्त होते हैं, वहाँ से पुनः संसार में नहीं लौटते ।२६। केवल इस पुराण के ही सुनने मात्र से उत्कृष्ट योग की प्राप्ति होती है, परन्तु वह पुराण नास्तिक, शूद्र, वेदनिन्दक, गुरुद्वेषी, व्रतत्यागी, माता-पिता के निन्दक और शस्त्रादि के निन्दक को प्रदान न करे ।२७-२८।

भिन्नमर्यादिनेचैवतथावैश्यातिकोपिने ।
एतेषाँनवदातव्य प्राणैः कंठगतैरपि ।२९
लोभाद्वायदिवामाहाद्भयाद्वापिविवेषतः ।
पठेद्वापाठयेद्वापिसगच्छेन्नरकन्ध्रुवम् ।३०
एतत्सर्वभुपाख्यानंधर्म्यंस्वगर्पावगदम् ।
यः शृणोतिपठेदापिसिद्धं तस्यसभीहितम् ।३१
आधिव्याधिजदुःखेनकदाचिन्नाभियुज्यते ।
ब्रह्महत्यादिपापेभ्योमुच्चतेनात्रसंशयः ।३२

सत स्वजनमित्राणिभिवतिहितबृद्धयः ।
नारायःसंभाविष्यतिदस्यबोबाकदाचन् ।३३
सदर्थोमिष्ठभोगीचदुर्भिक्षेनवसीदति ।
परदापरद्रव्यहिंस दिकिल्बिषः ।३४
मुच्यतेनेकदुःभभ्योनित्यंचैवद्विजोत्तम् ।
ऋषिवृद्धिस्मृतिशांतिःश्रीःपुष्टितुष्टिरेवच ।
नित्यंतस्यभवेदिप्रय शृणोतिकथामिमाम् ।३५

मर्यादाके तोड़ने वाले और जाति को दूषित करने वाले मनुष्य को भी न दे तथा प्राण कंठगत होने पर भी इस पुराण को प्रदान न करे ।२९। यदि लोभ मोह या भय के कारण इनमें से जो कोई पुराण का पाठ करता है या पाठ कराकर श्रवण करता है तो वह अवश्य ही नरकगामी होता है ।३०। मार्कण्डेयजी ने कहा यह समस्त उपाख्यान धर्म, स्वर्ग और मोक्ष का दाता है । इसे जो पढ़ता है, उसकी सम्पूर्ण कामनाऐं सिद्ध होती हैं ।३१। उसे कभी रोगादि से कष्ट नहीं होता और वह ब्रह्महत्या आदि के पापों से मुक्त हो जाता है ।३२। उसके स्वजन और मित्र उसका हित करने वाले हो जाते हैं, उसका कोई भी शत्रु नहीं होता और न चौरी की बाधा उपस्थित होती है ।३३। उसके यहाँ श्रेष्ठ धन विद्यमान रहता है, वह मिष्ठान्न का भोजन करता और दुर्भिक्ष से कभी भी पीड़ित नहीं होता । नरनारी परधन और नरसिंह के पापों से ।३४। अथवा अन्य अनेक दुखों से मुक्त हो जाता है, इस कथा को जो सुनता है, ऋषि बुद्धि, स्मृति, शांति, श्री, पुष्टि तुष्टि उसके साथ रहती है ।३५।

मार्कण्डेयपुराणमेतखिलश्रृण्वन्नशो-
च्यःप्रमान्योवांसम्यगुदोरयेद्रमयंभोच्यीनसोपिद्विज ।
योगज्ञानविशुद्धसिद्धिहितः स्वर्गादिलोकेष्यसौ-
शक्राद्यैश्वरादिभिः परिवृतःस्वर्गेसदापूज्यते ।३६
शक्राद्यैश्वरादिभिः परिवृः स्वर्गेसदापूज्यते ।३६
पुराण मेतच्चक्रुरुत्वचज्ञानाविज्ञान संयुतमः ।

विमानवरमारुह्यस्वर्ग्ंलोकेमहीयते ।३७
पुराणाक्षरसख्याचप्रस्याताव्रत्ववुद्धिना ।
श्लोकानाषक्सहस्राणितथाचाष्टशतानिच ।३८
श्लोकास्तत्रत्रनाशीतिरेकादशमाहिताः ।
कथिनामुनिनतूर्वमार्कण्डयेनधीम् ।३९
भारतेनाभतद्यन्मेसशयस्कोटर्नद्विजाः ।
तद्भवद्भिःकृतयन्नकश्चिदद्यकरिष्यति ।४०
यूयदीर्चायूषःस्यातप्रज्ञाबुद्धिविशारदाः ।
सांख्ययोगेतथाचःस्तुदुद्धिरव्यभिचारिणी ।४१
पितृशापकृतदद्दु खादूदौर्मनस्यध्यपेतुवः ।
एतावदुक्त्वाचन जागस्वाश्रममुनिः ।
चिंतयन्परमोदारंपक्षिणावाक्यमीरितम् ।४२

इस सम्पूर्ण मार्कण्डेय पुराण का श्रवण करने वाला कभी शोचनीय स्थिति में नहीं रहता इसके कहने वाले विप्रगणभी सोचनीय नहीं रहते, वे योग, ज्ञान और सिद्धि के सहित स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होते हैं तथा इन्द्रादि देवताओं के साथ रहकर सदा पूजे जाते हैं।३६। इस ज्ञान-विज्ञान से युक्त पुराण का श्रवण करने वाले मनुष्य श्रेष्ठ विमानमें चढ़ कर स्वर्ग को गमन करते हैं ।३७। पहिले सूक्ष्मदर्शी श्री मार्कण्डेयजीने इस पुराण में छः हजार नौ सौ श्लोक कहे थे ।३८-३९। जैमिनी ने कहा हे खगगण ! महाभारत में जो सन्देश था, वह सब तुमनेमिश्रभाव से दूर कर दिया, इस प्रकार अन्य कौन कर सकता था ? ।४०। तुम अत्यन्त दीर्घायुष्य, निरोग और बुद्धि विशारद हो, तुम्हारी बुद्धि सांख्य योग में श्रेष्ठ गति वाली हो ।४१। तुम पिता के वचन से ही दुःखों को प्राप्त नहीं हुए हो, ऐसा कहकर और उन खगों के वचनों का स्मरण करते हुए मुनि अपने आश्रम में लौटे ।४२।

मार्कण्डेय पुराण का नैतिक व सांस्कृतिक अध्ययन

पुराण रचना की पात्रता और मार्कण्डेय की दूरदर्शिता

इस पुराण के प्रणेता अथवा वक्ता महर्षि मार्कण्डेय है। उन्हीं के नाम से यह पुराण अभिहित हुआ है। मार्कण्डेय उच्चकोकि के साधक और आत्मानुसंधान के प्रवीण पात्र थे। वे आत्मासाक्षात्कारकी अन्तिम सीढ़ी तक पहुंच चुके थे। नारायण उनके इष्टदेव थे। उनके साक्षात् दर्शन होने के सम्बन्ध में स्वयं नारायण ने प्रकट होकर महाभारत में मार्कण्डेय को सम्बोधित करते हुए कहा 'हे मार्कण्डेय! तुम्हारे ब्रह्मचर्य की महानता अवर्णनीय है। मेरे जिस रूप को देवता भी तत्व रूप से नहीं समझ सकते, उसे तुम अपने प्रत्यक्ष नेत्रों से देख रहे हो। मैं नारायण हूँ, विश्व का शाश्वत और अव्य प्रसव स्थान हूं। इन्द्र प्रजा पति, कुबेर, शिव, ब्रह्मा, विष्णु, यम, सोम सब मैं ही हूँ। चारों वेद मुझ से ही आविर्भूत होते हैं और मुझमें ही समा जाते हैं। जो कुछ भी स्थावर और जंगम वस्तुओं को तुमने देखा है, उन्हें मेरी ही आत्मा समझो, मैं नारायण हूं।

मार्कण्डेय ने महाभारत में युधिष्ठर के एक प्रश्न के उत्तर में कहा है 'एकार्णवीभूत स्थिति में एक वटवृक्ष की शाखा पर मैंने एक बालक के दर्शन किए जो स्वयं नारायण थे। उन्होंने स्वयं कहा—मार्कण्डेय! मैं तुमसे सन्तुष्ट हूँ, तुम थक गये होंगे, मेरे शरीर में विश्राम लो' कथा के अनुसार मार्कण्डेय उस नारायण रूपी बालक के मुख में चले गये, वहाँ उन्होंने भारतवर्ष के दिव्य दर्शन किए उसके जनपद, नगर, नदियाँ और पर्वत। जिस तरह से भगवान कृष्ण ने अर्जुन को पात्र समझ कर विराट् रूप के दर्शन दिये थे, उसी तरह से नारायण ने

मार्कण्डेय को उत्तम पात्र जानकर उन्हें अपना साक्षात् दर्शन दिया और भारतवर्ष का रूप दिया। दूसरे शब्दों में उन्होंने मार्कण्डेय को भारतवर्ष की औद्योगिक समीक्षा और उसके निवासियों का नैतिक सामाजिक, सांस्कृतिक और आत्मिक विश्लेषण करके मार्ग दर्शन करने का अधिकार दे दिया। नारायण को मार्कण्डेय उत्तम पात्र दिखाई दिये। ऐसा लगता है कि मार्कंडेय पुराण की रचना का भार स्वयं नारायण ने मार्कण्डेय को सौंपा हो। इसमे स्पष्ट हैकि मार्कण्डेय पुराण के प्रणयन पृष्ठभूमि में स्वयं नारायण उपस्थित हैं। प्रस्तुत पुराण में जो भी दिशाएं और प्रेरणायें दीगई हैं वे मार्कण्डेय के मस्तिष्क में नारायण के प्रकाश से ही आई हैं। पुराणों को वैसे भी वेदों की सरल व्याख्या माना जाता है। वेदों में जो सिद्धान्त गहन रूप में प्रतिपादित किये गये हैं उन्हें कथाओं, कहानियों और रूपकों के माध्यम से पुराणों में वर्णित किया गया है ताकि वे सर्वसाधारण की समझ में आ सकें। वेदों को ईश्वरीय रचना मानने में किसी को सन्देह हो ही नहीं सकता। अतः यदि मार्कण्डेय पुराण की रचना के लिए मार्कण्डेय को पात्र समझकर आदेश दिया हो तो इसमें कुछ अतिशयोक्ति नहीं है।

पुराण की रचना से मार्कण्डेय ने अपनी पात्रता सिद्ध कर दी। उन्होंने युगानुरूप सामग्री का चयन किया, पुराणोंको संस्कारित किया। जो दोष अन्य पुराणों में थे उन्हे दूर किया, साम्प्रदायिक विद्वेष से दूर रहे। किसी भी सम्प्रदाय के देवी-देवता का उन्होंने खण्डन नहीं किया। उनके लिए सभी देवी देवता समान हैं। वे तो सभी को नारायण रूप में देखते थे। जिसे भगवान् नारायण का स्वयं साक्षात्कार हो गया हो उसके मन में भेदभाव की उत्पत्ति कैसे हो सकती हैतोसब प्राणियों में अपने ही रूप के दर्शन करके उनके कल्याण की योजना में मग्न रहते होंगे और महर्षि मार्कण्डेय ने किया भी ऐसा ही।

मार्कण्डेय दूरदर्शी थे, उन्होंने मानव मन का गहन अध्ययन किया था। वे स्वयं साधकथे और क्रियात्मक रूप से देखा कि किस तरह से

क्षुद्र महान अथवा नीचे से ऊपर बढ़ने की क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। वे ऋषि थे। आत्मसाक्षात्कार किये हुए थे. उन्हें आत्मा के अतिरिक्त संसार में कुछ सूझता ही न होगा। वे इस जगत् की अनित्यता को भली-भाँति अपने खुले नेत्रों से देखते होंगे परन्तु जगत से उन्होंने मुख नहीं मोड़ा। जानते थे कि स्थूल शरीर की सुरक्षा के लिए हर प्रकार की भौमिक सामग्री की अपेक्षा रहती है। इससे घृणा करना अपनेमार्ग को अवरुद्ध करना होगा। आत्मोत्थान के लिये दोनों का समन्वय अभीष्ट है। मार्कण्डेय पुराण में यही प्रतिपादित है। भौतिक, नैतिक सामाजिक और आत्मिक सभी विषयों पर विचार किया गया है।

भौतिक विद्याओं के विकास का समर्थन

महर्षिने भारतवर्ष के भूगोल का विस्तृत विवेचन कियाहै। जिससे प्राचीन सीमाओं का दिग्दर्शन होता है। पर्वत और नदियों का भी दर्शन है। सम्पूर्ण जनपद की सूची भी दे दी गई है। मार्कण्डेय राष्ट्र-वादी सन्त थे। आज तो पढ़े लिखे लोग अपने देश की उपेक्षा करतेहैं और इंगलैण्ड-अमेरिका की प्रशंसा के पुल बाँधते नहीं थकते परन्तु मार्कण्डेय ने भारत को कर्मभूमि और योगभूमि घोषित किया है। ब्रह्मपुराण २७-७२ ६८ में भी कहा है कि भारत में जन्म लेने वाले धन्य है। यहाँ सब पुण्यों के फल प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। स्वर्ग के देवता यहाँ जन्म लेने में गौरव का अनुभव करते हैं, जो कार्य यहां के लोग कर सकते हैं वे देवता और असुरों में किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। प्राचीन काल का गौरव ऐसा ही था कि जिसकी ख्याति चारों ओर फैली हुई थी। आज भी ऋषियों के पदचिन्हों पर चलकर खोये गौरव को पुनः प्राप्त कर सकते हैं।

महर्षि ने भौतिक विद्याओं की अपेक्षा नहीं की। वह जीवन केपूर्व विकास को भी आवश्यक मानते हैं। तभी उन्होंने धन संग्रह करने के सभी उपायों का वर्णन कियाहै जिसे पद्मिनी विद्या का नाम दियागया

है। व्यापार द्वारा धन कमाने के जितने भी साधन हो सकते हैं, उन सबका ब्यौरा पुराण में दिया गया हैं। आशय है कि व्यक्ति को घोर परिश्रम करके भौतिक जीवन को सुखी बनाने के लिए धन का संचय करना चाहिए परन्तु अनैतिक उपायों से नहीं। वे धन को व्यक्तिगत सम्पत्ति भी नहीं मानते। जब राष्ट्र को उसकी आवश्यकता पड़े तोमोह न करके राष्ट्रहित में सम्पत्ति का दान कर देना चाहिए। हरिश्चन्द्रका लम्बा आख्यान इसी उद्देश्य से लिखा है कि धनवानों को अपने धनसे मोह नहीं करना चाहिए। यह ईश्वर द्वारा सत्कार्यों के लिए उन्हें दिया है। यदि वह इसका दुरुपयोग करेंगे तो उनसे छीन लिया जायेगा। मार्कण्डेय धन कमाने के पक्ष में तोहैं पर हरिश्चन्द्र को आदर्शमानकर। समय आने पर सर्वस्व लुटाने के लिये तैयार रहने की प्रेरणाभी देतेहैं।

महर्षि जगत को अनित्य, क्षणभंगुर मानते हैं परन्तु आत्मा के इस मन्दिर शरीर की सुरक्षा पर भी पूरा ध्यान देते हैं पुराण में शरीर विज्ञान का प्रतिपादन किया गया है, जो आधुनिक विज्ञान से मिलता हैं। इस सम्बन्ध में लिखा है कि रज और वीर्य के मिलने से किसतरह नये शरीर की रचना आरम्भ होती है और किस तरह उसका क्रमिक विकास होता है। गर्भ में शरीर का पोषण किस प्रकार से होता है, आयुर्वेद चिकित्सा का भी वर्णन है जिससे शरीर को असाध्य रोगहोने पर भी स्वस्थ बनाया जा सके। आयु बुद्धि के उपायों पर भी प्रकाश डाला गया है। दम के पुत्र राज्यवर्धन की रानी ने उसके सर पर सफेद बाल देखा तो दुखी हुई। राजा ने समझा कि अब मृत्यु निकट है और वानप्रस्थ में प्रवेश कर वन में तप करना चाहिए। प्रजा चाहती थीकि नहीं राजा राज्य शासन को बागडोर संभालते रहें। प्रजा ने राजाकी आयुवृद्धि के लिये सूर्य देव की सामूहिक आराधना का निश्चय किया और कामरूप पर्वत पर अनुष्ठान में लग गई। तीन मास की उपासना के बाद सूर्यदेव प्रसन्न हुए और राजा की आयु दस हजार वर्ष करने

का वरदान दिया। अतिशयोक्ति शैली में वर्जित यह कथा आयुवृद्धिके लिए सूर्य की शरण में जाने को इंगित करती। आधुनिक विज्ञान ने भी सिद्ध किया है कि सूर्य ही उन समस्त भौतिक शक्तियों का स्रोत है, जो शरीर के विकास, सुरक्षा सुदृढ़ता और चिकित्सा के लिएआवश्यक मानी जाती है। जो लोग सूर्यदेव से विमुख रहते हैं, उन पर ही रोग आक्रमण करने का साहस करते हैं। सूर्य किरणों से रोग मुक्ति कीएक नवीन चिकित्सा पद्धति का भी आविष्कार हो चुका है सूर्य के बिना पृथ्वी पर मानव का जीवन असम्भव है। सूर्य के अभाव में जीवधारी अपने प्राणों की रक्षा नहीं कर सकते। जहाँ सूर्य के यदाकदा दर्शनहोते हैं, वहाँ पर जब सूर्य निकलता है तो उत्सव मनाये जाते हैं। तभीभारत में सूर्य को देवता की संज्ञा दी गई है और मार्कण्डेय ने भी भव्य स्तवन किया है।

पुराणकार मनोरंरजन के साधनों को आवश्यक मानते हैं औरकला की प्रशंसा करते हैं। "जिससे गुण रूप नहीं होता, उसे नाटक में सफलता प्राप्त नहीं होती। नृत्य का अधिष्ठान आवश्यक है। उनके बिना नृत्य एक बिडम्बना ही रह जाती है।"

ऐसा लगता है कि प्राचीनकाल में सब प्राणियों की बोली समझने की विद्या का विकास हो चुकाथा तभी विभावरी ने जब स्वरोचिषका आत्मा-समर्पण किया तो विभावरों ने सब प्राणियों का बोली समझने की विद्या को शुक्ल रूप में प्रदान किया है।

जिस समय पुराण की रचना हुई, उस समय. मन्त्र विज्ञान की प्रक्रिया उच्चशिखर पर थी। मन्त्र-विज्ञान की एक शाखा दृष्टि क्रिया का उल्लेख किया गया है। एक राजा की पत्नी किसी कारण से राजा को छोड़कर चली गई। एक ब्राह्मण ने राजा से मित्रनिन्दा नाम की दृष्टि करादी और वह साधना पूरी हो गई तो ब्राह्मण ने राजा से कहा "अब आपकी पत्नी आप से पूर्ण अनुकूल रहेगी, अतः आप उसे प्राप्त कीजिये।

कर्त्तव्य परायण का निर्देश--

पुराणों में क्षत्रिय राजाओं के शौर्य, साहस और जीवन चरित्रोंका विस्तृत उल्लेख मिलता है। उनमें क्षत्रियों क्षत्रियत्व का पूर्ण परिचय मिलता है। वे अपने शरीर की आहुति देकर भी कर्तव्य पालन करते हैं और प्रजा की सुरक्षा को अपना आवश्यक धर्म मानते हैं। तभी कहा है "हम बलवान क्षत्रियों के सामने यदि इस कन्या का अपहरण हो जाये तो हमारे जीवन को धिक्कार है जो दुष्ट लोगोंसे दुःखी व्यक्ति की सुरक्षा करता है, वही सच्चा क्षत्रिय है।"

अलर्क के पूछने पर मदालसा ने ब्राह्मण के धर्म का विवेचन करते हुए कहा 'दान अध्ययन और यज्ञ ब्राह्मण के निरपेक्ष धर्म हैं।" चारों वर्णों और आश्रमों के कर्तव्यों का भी उल्लेख है।

राजा के कर्तव्य तो विस्तार से वर्णित किये गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि आजकल की तरह उस समय भी शासक वर्गमें स्वार्थपरता का अवगुण आ चुका था। तभी वह कड़े शब्दों में शासकों कोचेतावनी देते हैं वैश्य अपनी आयु का १२ वां भाग राजा को इसलिये देता है कि उसके जान-माल की सुरक्षा हो सके। ग्वाले, घी, तक्र आदि का तथा किसान अनाज का छटा भाग भी इसलिये देते हैं। राजा व्यापारियों से उसकी आय का छठवां भाग लेते हैं, वह चोर हैं। यदि कर लेकर भी राजा प्रजा की सुरक्षा में असमर्थ रहते है और प्रजा को अन्य उपायों का सहारा लेना पड़ता है,तो राजा निश्चय ही नरक में जाताहै। यदि चोरों से रक्षा नहीं कर सकता तो वह पापी कहलाता है।"

इस तरह से मार्कण्डेय तक स्वतन्त्र और निर्भीक विचारककी तरह अपने विचार व्यक्त करते हैं। उनका उद्देश्य जनता की भलाई है। उन्हें कष्ट भी सहना पड़े तो वे तैयार हैं। शासक वर्ग का कड़ा विरोध करने पर क्या परिणाम निकलते हैं, इससे सभी परिचित हैं। अपनी आत्मा की आवाज को बन्द नहीं करते वरन् निर्भय रूप से उसका प्रचार करते हैं। वास्तव में ऐसे विचारक ही जनहित में सफल होतेहैं।

मार्कण्डेय अध्यात्मवादी है, आत्म-साक्षात्कार कर चुके हैं, परन्तु भौतिकवाद की ओर से आँख मूंदना उन्हें अभीष्ट नहीं है। इसीलिए अनेकों प्रकार की भौतिक विद्याओं की ओर उन्होंने अपने पाठकों को आकृष्ट किया है। वे चेतावनी भी देते हैं कि इनमें लिप्त रहना निरी मूर्खता होगी, केवल भौतिक विकास पर ही संतुष्ट न हों, वरन् मानव का चहुंमुखी विकास होना आवश्यक है। पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक और आत्मिक सभी धाराओं में प्रवेश होना चाहिए और विना विश्राम के प्रगति पथ पर निरन्तर आगे बढ़ते चले जाना चाहिए। केवल भौतिक या आध्यात्मिक—दोनों एकांगी हैं। दोनों का विकास ही पूर्ण विकास माना जाता है।

पारिवारिक व सामाजिक समस्याओं का समाधान—

मार्कण्डेय योग्य चिकित्सक थे। वे उलझी गुत्थियों को सुलझाना जानते थे और हवा का रुख देखकर उसी के अनुसार अपनी नीति का निर्धारण करते थे। उनके सामने बौद्ध धर्म का व्यापक प्रचार हो रहा था। जनता का झुकाव प्रवृत्ति मार्ग की अपेक्षा निवृत्ति मार्ग की ओर अधिक होने लगा था। परिणामतः गृहस्थ में प्रवेश की अपेक्षा लोग संन्यास ग्रहण करना अधिक पसन्द करते थे। गृहस्थ में प्रत्यक्ष रूप से लौकिक सुख की उपलब्धि थी परन्तु सन्यास में पारलौकिककल्याण का लोभ निहित था। इससे अनीश्वरवादी धारा का प्रवाह वह चला। समाज में एक अजीब पागलपन आ गया। भारतीय ऋषियों ने चार आश्रम बड़ी सूझ-बूझ से बनाये थे। उसमें भी सन्यास का विधान है, परन्तु गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम के बाद जब साधक उसकी पात्रता प्राप्त कर लेता। जब तक मन-स्थिति में सन्यास का संग न आए, तब तक उससे अपेक्षित लाभ की आशा करना व्यर्थहै, भले ही घरबार छोड़ने और त्यागमय जीवन व्यतीत करनेका ढोंग रचा जाये। मार्कण्डेय ने इस व्यवहारिक प्रवृत्ति का विरोध किया अपने पक्ष में व्यापारिक समाधान प्रस्तुत किया, गृहस्थ के आदर्श कर्तव्य का निरूपण किया।

उन्होंने बताया कि किस प्रकार से गृहस्थ आश्रम में रहकर ऐहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती है। इनके सभी पक्षों का प्रतिपादन किया। मदालसा के माध्यमसे उन्होंने अपनी विचारधारा प्रकट करते हुए कहा कि जिसने गृहस्थ आश्रम ग्रहण किया, यह समझना चाहिये कि उसने विश्व के पालन का भार अपने कन्धों पर ले लिया है। देव, पितर, मुनि, भूत, मनुष्य, कृति, कीट, पतंग, पशु और पक्षी सभी गृहस्थ आश्रम से जीवित रहते हैं और उसी से तृप्त होते हैं। तेरहवें दिन रौच्य की जन्म कथा में प्रजापति रुचि और पितरों के सम्वाद में भी यह चर्चा है। पितरों ने रुचि को सम्बोधित करते हुए कहा 'वत्स ! तुमने गृहस्थ को छोड़कर अच्छा नहीं किया। गृहस्थाश्रम स्वर्ग और मोक्ष दोनों का साधन है।

सन्यास मार्गियोंकी दृष्टि तो एक ओर थी परन्तु मार्कण्डेयने चारों ओर घूमकर देखा तभी एक सुनिश्चित नीति को अपनाया। युवक सन्यासी हो जायें तो लोक की युवतियों का क्या होगा। यौवन प्रवेश पर काम भावों का उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। यदि उसकी पूर्ति की सामाजिक व्यवस्था न हो पाये तो अनर्गल उपायों और मन का दौड़ना कौन रोक सकता है। हर एक में संयम की साधना कहाँ से आये ? इसका कुप्रभाव चरित्र पर पड़ेगा और जल में कीचड़के छींटे पड़ जायेंगे। इस कुप्रवृत्ति का विरोध करते हुए मार्कण्डेय ने व्यवस्था दी कि सन्यास श्रेष्ठहै परन्तु गृहस्थ उससेभी श्रेष्ठ है क्योंकि सन्यासी गृहस्थ पर निर्भर करके अपनी साधना का संचालन करता है। आदर्श और त्याग समय पर ही शोभा देते हैं। मनको इसके अनुरूप परिपक्व करने पर ही यह अच्छे लगते हैं। विवेकहीन त्याग का कोई मूल्य नहीं होता। जब मन मे प्रेरणा उत्पन्न होती है और उसे सिखा सकने की सामर्थ्य रखता हो तभी त्याग को व्याहारिक रूप देना चाहिए।

दूसरा मार्ग यह है कि जब युवक सन्यासी होरहे हैं तो युवतियाँभी उसी मार्ग पर चलने लगे। सन्यास ग्रहण करने पर भी जब युवकऔर

युवतियाँ साथ-साथ रहेंगे तो वहाँ पर भी वही प्राकृतिक प्रतिक्रियाएं उत्पन्न होगी, जिन्हें दोष, व्यभिचार और चरित्रहीन की संज्ञा दी जाती है। मठों में जो स्त्री और पुरुष दोनों निवास करते हैं वहाँ ऐसी घटनाओं की चर्चा प्राय, सुनी जाती हैं। युवा सन्यासियों के पास जहाँ स्त्रियों का आना जाना बना रहता है, वहां भी दबा हुआ काम उभर पड़ता है और अपने बाह्यभेष को लज्जित करने में संकोच नहींकरता। सम्भव है उस समय भी ऐसी घटनायें हों और दूरदर्शी ऋषि ने समाज को नया मोड़ देना चाहा हो।' कुछ भी हो, वे विवाह के पक्ष में थे। तभी उन्होंने कहा कि स्त्रियों का बहुत दिन तक पिता के घर बन्धु बांधवों के बीच रहना यशस्कर नहीं होता हैं। उनका अपने पति के घर रहना ही बन्धु बाँधवों को अभीष्ट होता हैं। विवाह होने पर भी स्त्री का अधिक दिन तक बन्धु बाँधवों के बीच रहना ठीक नहीं माना गया है। सातवें मनु की कथा में इसका विवेचन है। त्वष्ट्रा की पुत्री संज्ञा का पाणिग्रहण संस्कार सूर्य से हुआ था। एक बार संज्ञा को पिता के घर अधिक दिन हो गये तो पिता ने पुत्री से कहा—इस तरह से तुम्हारे धर्म का लोप हो रहा है। बन्धु बांधवों के बीच स्त्री का अधिक दिन तक रहना ठीक नहीं है। मैं तुम्हारा पूज्य पिता हूँ और मैं तुम से प्रसन्न भी हूँ पर तुम्हारा पतिग्रह में जाना ही ठीक है।

विवाह के नियमों का विस्तृत विवेचन है। पिता के अभाव में स्त्रियों को अपने पति के चुनाव की स्वतन्त्रिता दी गई है। कैसीकन्या से विवाह करना चाहिए, उनके लक्षणों का भी वर्णन किया गया है। पुत्र प्राप्ति के वैज्ञानिक उपायों का भी उल्लेख है कि 'जो पुरुष कन्या जन्म नहीं चाहता; यह पांचवीं रात छोड़कर छठवीं रात में स्त्री संग करे क्योंकि इनके लिए युग्म रात्रि ही श्रेष्ठ मानी गई है। ऋतु काल के दिन चौदस, अमावस्या, अष्टमी अथवा संक्रान्ति काल में नारी समागम का निषेध किया गया है।

विवाह एक पवित्र आयोजन है, सामाजिक सुव्यवस्था का साधनहै

सृष्टि संचालन की एक व्यवस्थित प्रक्रिया है, ऋषियों ने इसे पूर्णता प्राप्ति का साधन बताया है, भोग का नहीं। भोग की सीमा स्त्री के ऋतुमती होने पर ही हैं, अन्यथा नहीं। नारी को भोग की सामग्री मात्र मान लेना, उसका अपमान है। नारी को केवल अपनी वासना की तृप्ति का साधन मानने वाली दूषित विचार धारा ने बहुपत्नी प्रथा को जन्म दिया राजाओं में इसका अधिक प्रचलन था। इससे पारिवारिक क्लेश की वृद्धि होती है। सभी पत्नियाँ द्वेष की अग्नि मेंजलती रहती हैं। उनकी सन्तान भी इसी महारोग की शिकार होती हैं। यह छूत का रोग पीढ़ियों तक चलता है। राम वनवास की पृष्ठ भूमि में इसी कुप्रथा का दोष झलकता है कैकेयी के द्वेष ने ही राम को राज-तिलक की बजाय वन जाने को बाध्य किया ऋषि ने स्वरोचित के सम्बन्ध में कहा है कि यह पुरुष धन्य नहीं कहा जा सकता क्योंकि एक स्त्री के समक्ष दूसरी स्त्री से सम्पर्क करने में इसे लज्जा नहीं आती यह अन्य स्त्री से भी सम्पर्क रखता है। इसका चित्त किसी में अनुरक्त नहीं है—किसी एक आलम्बन में अनुराग होना चित्त का स्वभाव है, अतः अनेक भार्याओं में इसकी प्रीति कैसे हो सकती है। वह निश्चय जानो कि न इन स्त्रियों में उसका प्रेम है और न इसमें इन स्त्रियों का प्रेम है। इनका परस्पर प्रेम व्यवहार एक विनोद मात्र है। स्वरोचित ने अपनी पत्नी मनोरमा के अतिरिक्त विभावरी और कलावती से भी विवाह कर लिया था। पति पत्नी में हार्दिक प्रेम न होने पर पारिवारिक सुख शान्ति की उपलब्धि सम्भव नहीं है।

पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने के लिए दोनों को अपने कर्तव्य पर ध्यान देना चाहिए। पुराणकार ने कहा, "वेद की आज्ञा है कि पति को अपनी पत्नी की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि पत्नी की रक्षा से सन्तान की रक्षा होती है। पत्नी में व्यक्ति तनय के रूप में स्वयं जन्म लेता है। अतः पत्नी की रक्षा से स्वयं अपनी रक्षा होती है।' एक और स्थान पर कहा है।"पति को सदैव अपनी पत्नीका भरणऔर रक्षा करनी चाहिए क्योंकि धर्म अर्थ और काम की प्राप्तिमेंपत्नीपतिकी

सहायिका होती है। जब पत्नी और पति प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं, तभी धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि होती है। पत्नी को त्यागने से धर्म का त्याग हो जाता है। व्यक्ति किसी भी वर्ण का क्यों न हो, वह पत्नी के अभाव में किसी भी कर्म के योग्य नहीं रह जाता।

आदर्श पत्नी के कर्त्तव्य याद कराते हुए ऋषि ने अनुसूयाजी से कहलवाया है "पुरुष महान् कष्ट उठाकर जो पुण्य प्राप्त करते हैं, स्त्रियाँ केवल रति सेवा से ही उसका आधा भाग प्राप्त कर लेती हैं। स्त्रियों के लिए नेज्ञ श्राद्ध और उपवास के लिए पृथक् विधान नहीं, वे पति की सेवा से ही इहलोकों को प्राप्त कर लेती हैं। पति नारी की श्रेष्ठ गति है।" एक कौशिक नाम के कोढ़ी ब्राह्मण की कथा दी गई जिसकी पतिव्रता पत्नी ने सूर्य का उदय रोक दिया था क्योंकि शूली पर चढ़े एक अन्य ब्राह्मण ने उनके पति को शाप दिया था कि सूर्य उदय होते ही उसकी मृत्यु हो जायेगी। ऐसी पतिव्रता नारियों की कथाएँ अन्य पुराणों में भी वर्णित हैं। पत्नी पति की सच्ची मित्र और सलाहकार होती है। हरिश्चन्द्र के अख्यान में जब विश्वामित्र को दक्षिणा देने का कोई साधन दिखाई नहीं देता है और वह चिता-ग्रस्त हो जाता है; तो पत्नी उनसे कहती हैं—महाराज ! चिन्ता को छोड़ दो, सत्य का पालन करो, सत्य से च्युत मनुष्य श्मशान के समान त्याज्य होता है। पुरुषों के लिए सत्यता से बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है। जिसका वचन असत्य होता है, उसके अग्निहोत्र, वेदाध्ययन, दान आदि समस्त पुण्य कर्म व्यर्थ हो जाते हैं। धर्मशास्त्रों में सत्य से उत्थान और असत्य से पतन होना बताया है।' आदर्श पत्नी के यह विविध रूप दिखाये गये।

पत्नी का एक और महत्वपूर्ण रूप माता है। मदालसा की प्रसिद्ध कथा इसका माध्यम चुना गया है। मदालसा अपनी सन्तान को इच्छानुसार बनाती है। स्तनय की पवित्र धारा के साथ अपने उद्देश्य के अनुरूप बच्चे को लोरियाँ देती हैं। परिणाम स्वरूप बच्चे में वैसे ही संस्कार उत्पन्न होते हैं। मनोविज्ञान के पाश्चात्य पण्डितों ने तो आज

इस तथ्य की खोज की है परन्तु हमारे ऋषियों ने हजारों वर्षों पूर्व इसे प्रकट कर दिया था। मदालसा ने अपने तीन पुत्रों को लोरियों और उपदेशों से आध्यात्मवादी बनाया तो राजा को चिन्ता होने लगी कि हमारे सभी पुत्र विरक्त होते गये तो हमारे बाद राज्य का संचालन कौन करेगा ? राजा के अनुरोध पर मदालसा ने चौथे पुत्र को धर्म की शिक्षा दी। वह पुत्र आदर्श शासक निकला।

परिवार में माता-पिता के साथ पुत्र का भी अपना स्थान है। सभी को मिलाकर एक परिवार बनता है। अतः सभी को अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। ऋषि ने कहा है "पिता द्वारा अर्जित यश-धन और वीर्य को कम नहीं होने देता, वह मध्यम कोटि का पुत्र हैं। अपनी शक्ति से पिता के वीर्य आदि से अधिक वीर्य आदि का सम्पादन कर लेता है, वह उत्तम कोटि का पुत्र है और जो अकर्मण्यता से पिता के यश, धन को कम कर देता है, वह अधम कोटि का पुत्र है।" कुपुत्रों की अनेक स्थानों पर भर्त्सना की गई है। मनुष्य का पुत्रहीन होना अच्छा पर कुपुत्रवान होना अच्छा नहीं क्योंकिकुपुत्र माता-पिता के हृदय को सदा सन्तप्त करता रहता है और स्वर्गस्थ पितरों को नीचे गिरा देता है। उन कुकर्मी का जन्म माता के लिए दुःखदायक होता है। वह माता को चिन्ता से असमय में ही वृद्ध बना देता है।" सुकृष नाम के ब्राह्मण के पास एक इन्द्र पक्षी के रूप में आये और अपने आतिथ्य के लिए मनुष्य का मांस अथवा रक्त माँगा। ब्राह्मण ने अपने पुत्रों से पक्षी का आतिथ्य करना चाहा परन्तु शरीर के मोह में पड़कर उन्होंने अपनी असमर्थता प्रकट की। इस पर उन ब्राह्मण ने अपने पुत्रों को पक्षी होने का शाप दिया।

परिवार को स्वर्गीय बनाने के लिए जहाँ पति-पत्नी का प्रेममय व्यवहार आवश्यक है, वहाँ सन्तान को भी आज्ञाकारी होना चाहिए। शरीर के सभी अङ्ग पुष्ट होने पर ही शरीर स्वस्थ रह सकता है। एक छोटा सा फोड़ा भी सारे शरीर के लिए दुःखदायी हो जाता है।

परिवार में जब एक भी सदस्य अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना करता है तो स्वर्ग को नरक बनाने में देर नहीं लगती।

उत्थान के व्यक्तिगत व सामाजिक नियमों का विवेचन

परिवार की शांति सदस्यों के आपसी नम्र व्यवहार पर निर्भर करती है सुख वृद्धि के लिए उनके शरीर हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ होने चाहिए। स्वस्थता के नियमों की जानकारी होनी चाहिए। सभी को सदाचारी, चरित्रवान और शिष्ट होना चाहिए तभी समाज में उनका सम्मान स्थिर रह सकता है। चरित्र को सम्पत्ति माना गया है। यही परिवार की शोभा है। जहाँ इसका अभाव रहता है, वह निर्धन परिवार कहलाता है। आस्तिकता का सदाचार से घनिष्ट सम्बन्ध है, क्योंकि ईश्वर को सर्वत्रव्यापक मानने वाला दुराचारों से भय खाकर दूर रहता है।

स्वास्थ्य और सभ्य नागरिक बनने के लिए महर्षि मार्कण्डेय ने विस्तृत नियमों का प्रतिपादन किया है और जो विज्ञान और अनुभव की कसौटी पर खरें उतरते हैं। प्रातःकाल उठकर मल-मूत्र-त्याग, दन्त धावन, तेज मर्दन और स्नान के नियम बताये गये हैं। स्नान करने पर विशेष बल दिया है। स्वच्छता को स्वास्थ्य का एक आवश्यक नियम बताया गया है। यहाँ तक कि दूसरे के पहने हुए जनेऊ, विभूषण और कमण्डल को ग्रहण करने की भी मनाही की गई है।

ब्रह्ममुहूर्त में उठने का आदेश देकर स्नान आदि नित्य कर्मों से निवृत होकर पूर्वाभिमुख बैठकर नक्षत्र के स्थित रहते हुए ही संध्या करने का उपदेश दिया गया है। सायंकालीन सन्ध्या भी सूर्य के स्थित रहते बताई गई। प्रातः साँय हवन करने को भी कहा गया है। पाँच महायज्ञों और पितृ तर्पण करने की भी शिक्षा दी गई है। आत्म-तत्व का चिन्तन भी आवश्यक बताया गया है। पूजा उपासना करने के बाद ही भोजन की आज्ञा दी गई। अधिक नमक, अत्यन्त गरम अन्न का और बहुत दिनों तक रखा हुआ अथवा बासी भोजन का निषेध किया गया है।

सद्‌विचार का स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। बुरे विचारों वाला

व्यक्ति कभी पूर्ण स्वस्थ नहीं रह सकता। स्थान-स्थान पर कहा है कि गृहस्थ को सदाचार परायण होना चाहिए, परनारी को बुरी दृष्टि से न देखे, सबसे शिष्ट व्यवहार करे, अहंकार उद्दंडता की गन्ध न हो, वाणी से प्रेम झलकता हो ऋषि ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि आचार का पालन गृहस्थ का नित्य कर्तव्य है। जिसमें आचार नहीं, उसे न यहाँ सुख मिलता है न वहाँ। सदाचार के बिना यज्ञ, दान, तप कोई करे भी तो भी क्या लाभ? जिस पुरुष ने आचार के नियम का पालन नहीं किया उसे आयु नहीं मिलती।"

अतिथि सत्कार को भी आचार का एक अंग माना गया है। आतिथ्य का अभिप्राय केवल भोजन कराना ही नहीं है, वरन् अभावग्रस्त के अभाव को दूर करना, संकटग्रस्त के संकट को दूर करना और दुःखी प्राणी की हर प्रकार से सहायता करना है। जो सामर्थ्य रखते हुए ऐसा नहीं करता, वह निंदा का पात्र माना गया है। ऋषि के अतिथिसत्कार में समाजवाद के आदर्श होते हैं। वह अपने मन का स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं 'समाज में धनवान व्यक्तियों के रहते अन्य लोगों को धनाभाव के कारण जो कुकर्म करने पडते हैं, उनका उत्तरदायित्व धनी व्यक्तियों पर आता है।" परिश्रमपूर्वक धन कमाने की सलाह भी दी गई है परन्तु उनका कुप्रभाव किसी अन्य पर न पड़े इसकी चेतावनी भी दी गई है अन्यथा समाज में परस्पर असंतोष और द्वेष की भावनाओं को जन्म मिलेगा।

महर्षि मार्कण्डेय अपने पाठक को आध्यात्मकी साधना आरंभ करने के पूर्व उत्तम नागरिक बनाना चाहते हैं। उनके मतानुसार नागरिकता के नियमों की उपेक्षा करके आध्यात्म पथ पर बढ़ना असंभव है क्योंकि यह तो उसकी पहली सीढ़ी है। उत्तम स्वास्थ तो उसकी नींव है ही।

अवगुणों के प्रति चेतावनी—

मनुष्य श्रेष्ठ सामाजिक प्राणी है क्योंकि उसे बुद्धि जैसी महान सम्पत्ति से विभूषित किया है। अपने इस गौरव की स्थिरता के लिए

आवश्यक है कि वह बुद्धिमानों जैसे कार्य करे। बुद्धिमान वही है जो अपने विचारों को स्वस्थ और पवित्र रखता है क्योंकि मानव-जीवन की समस्त सुख शान्ति उसके विचारों पर ही निर्भर करती है, इन्हीं से वह अपने भविष्य की, अपने भाग्य की रेखाओं का निर्माण करता है। विचारों को जो तत्व गदला बनाते हैं, उन्हें दूर करना आवश्यक हैं। बुरे विचारों को आसुरी शक्तियों की संज्ञा दी जाती हैं। सिद्धार्थ का गौतम बुद्ध बनने के लिये भी यही करना पड़ा था।

अध्यात्म पथ के पथिकों को आत्म-निरीक्षण की शिक्षा दी जाती है ताकि मन के काम करने में बाधक दुर्गुणों की छांट कर बाहर निकाला जा सके। यह ऐसे शत्रु हैं जो निरन्तर अपने साथ रहते हैं और पग-पग पर चोट पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं। दुर्गुणी व्यक्ति अपनी आत्मिक शान्ति को खो बैठता है क्योंकि उसे बाह्य जीवन में सब ओर लांछना, असफलता और तिरस्कार ही मिलता है। जैसे गन्दे, गलीज, घिनोने और छूत के रोगी से बचने का हर कोई प्रयत्न करता है, वैसा ही दुर्गुणी व्यक्ति जहाँ जाता है वही दुत्कारा जाता है। शरीर में घुसे हुए रोगों को दूर करने की हम चेष्टा करते हैं, परन्तु अन्तः क्षेत्र को अस्त-व्यस्त कर डालने वाले दुर्गुणों की ओर कोई भी ध्यान नहीं देता। वास्तविकता यह है कि शारीरिक रोगों की अपेक्षा मानसिक दोष दुर्गुणों से अधिक हानि की सम्भावना होती है।

समाज में सर ऊँचा उठाकर चलने के लिये दुर्गुणों से रक्षा आवश्यक है। मार्कण्डेय ने बार-बार चेतावनी दी है, दुर्गुणों के दुष्परिणामों के भयंकर चित्र खीचे हैं, सम्भव है उन्हें असम्भव संज्ञा दी जाने लगे। परन्तु ऋषि का उद्देश्य केवल उन दुर्गुणों के प्रति सजग रहने की प्रेरणा मात्र है कि इनसे यह परिणाम भी निकल सकते हैं। उदाहरण लिये मद्यपान से बचने के लिये बलराम की कथा दी गई कि जब महाभारत युद्ध में उन्होंने पाण्डवों और कौरवों में से किसी का भी पक्ष लेना उचित नहीं समझा तो वह तीर्थ यात्रा को चल पड़े। एक दिन

उन्होंने अधिक मद्यपान कर लिया और रैवत वन में प्रवेश किया जहाँ पर ऋषियों के समक्ष सूतजी की कथा हो रही थी। ऋषि बलराम जी के सम्मान में उठ खड़े हुए परन्तु सूतजी ने व्यास जी की मर्यादा का पालन किया और आसन पर बैठे रहे। इससे बलराम जी को क्रोध आ गया और उन्होंने सूत जी का वध कर दिया। थोड़ी देर के बाद उन्हें होश आया तो इस कुकृत्य पर लज्जित हुए और प्रायश्चित के रूप में नये सिरे से तीर्थाटन आरम्भ किया।

शराब को जो पीते हैं, वह गाली-गलौज और लड़ाई-झगड़ा तो करते देखे जाते हैं, परन्तु कभी ऐसा नहीं सुना कि किसी शराबी ने नशे में चूर होकर किसी का वध कर दिया हो। यदि दो चार हत्यायें इस तरह की हो जायें तो इसे कानूनन बन्द करना पड़े क्योंकि इससे लोगों के जानमाल की सुरक्षा का खतरा उत्पन्न हो जायेगा। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। महर्षि मार्कण्डेय भी इस तथ्य से अवश्य परिचित होंगे परन्तु उन्होंने अतिशयोक्ति शैली में अपरोक्ष में मद्यपान के दोष का ही वर्णन किया है कि नशे में जब ज्ञान तन्तु संज्ञा शून्य हो जाते हैं तो उस क्षणिक पागलपन का प्रवाह किसी भी ओर वह सकता है और वह व्यक्ति मारपीट से लेकर हत्या तक कर सकता है।

काम भी एक नशा है जो मनुष्य को अन्धा बना देता है। इसकी उत्तेजना इतनी तीव्र होती है कि कभी व्यक्ति सामाजिक मर्यादाओं का उल्लंघन कर बड़े दुःसाहस कर बैठता है। आजकल युवतियों से छेड़ छाड़ तो साधारण बात हो गई है। सड़क पर जाती हुई युवतियों का अपहरण और मनमाने कुकृत्य किये जाते हैं। वह युवती अपने दुर्भाग्य और भगवान को कोसती होगी कि उसने यह पशुरूप में कैसे मानव बना दिया है। वह इस समाज से भी घृणा करने लगती है जो पतन की पराकाष्ट में पहुँच गया है, फिर शासन को दोष देती है जहाँ नारी की लाज सुरक्षित नहीं है। इन घटनाओं पर सभी विचारक खेद प्रकट करते हैं, परन्तु यह वातावरण उत्पन्न करने वाले माध्यमों की ओर

किसी का ध्यान नहीं जाता। अश्लील फिल्में और उपन्यास, पत्रिकायें जिनसे इस विषय की उत्पत्ति होती है, उनमें अत्यन्त सुधार की आवश्यकता हैं ताकि युवकों में यह सद्विचार उत्पन्न हों कि समाज की हर युवती उनकी बहिन है। यही सभ्य समाज की निशानी है, अन्यथा तथा कथित विकसित युग की दुहाई देने से कोई लाभ नहीं है।

इतिहास साक्षी है कि काम भावना से प्रेरित होकर रावण ने सीता का हरण किया और एक महान युद्ध को निमन्त्रण दिया। काम के कारण हत्याओं के समाचार आज भी प्राप्त होते रहते हैं। इसी ओर महर्षि ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है। एक कथा इस प्रकार से दी गई है कि नारिष्यन्त के पुत्र दम को दर्शाण के राजा चारुवर्मा की पुत्री राजकुमारी सुमना ने स्वयंर में अपना पति चुना परन्तु भद्रप्रदेश के राजकुमार महानन्द, विदर्भ के राजकुमार वपुष्मान व महाधनु को यह सहन नहीं हुआ। उन्होंने एक षडयन्त्र रचा जिसके अनुसार सुमना को बलपूर्वक छीन लेना था और यह निश्चित किया गया कि वह हम तीनों में से जिसको भी चुन लेगी, उसकी पत्नी हो जायगी। यदि वह हममें से किसी को चुनेगी तो उसका वध करने वाला ही उसका पति माना जायेगा। एक सुन्दर स्त्री को अपनी पत्नी बनाने के लिये वह घोर अन्याय और अधर्म पर उतारू हो गये। जब सुमना ने स्वयंवर में अपना पति चुन लिया तो इस दिशा में कोई भी पग जिसकी लाठी उसकी भैंस की संज्ञा में आ जाता है। दम और उसके शत्रुओं में घोर युद्ध हुआ। दम ने महानन्द का मस्तक काट दिया और वपुष्मान को बाणों से बाँध दिया और सुमना को अपने घर ले गया। यदि कथा का मोड़ इस प्रकार से होता कि वह तीनों को कैदी बना लेते, या उसका वध कर देते और सुमना को भगाकर ले जाते और तीनों में कोई समझौता नहीं होता तो वह भी परस्पर युद्ध की लपेट में आकर नष्ट हो जाते तो और भी सुन्दर होता, क्योंकि काम वासना के अन्तिम परिणामों तक कथा पहुँच जाती।

पर स्त्री को बुरी दृष्टि से देखने वाले को परलौकिक भय भी दिखाया गया है। कहा है कि ऐसे कामी व्यक्ति को नरक में तो जाना पड़ता है परन्तु वहाँ पर वज्र की चोंच वाले पक्षी उसकी आँख नोचते हैं। यह यातना बार-बार दी जाती है और लम्बे समय तक चलती है। जितने क्षणों तक पाप किया जाय, उतने वर्षों तक इसका फल भुगतना पड़ता है। नेत्रों के दोष करने वालों को नेत्रों की ही यातना दी जाती हैं। नियम यही है जिस अङ्ग से दोष किया जाता है, उसके सुधार के लिये उस अङ्ग को ही प्रताड़ना दी जाती है ताकि उसे अपने किये पर पछताना हो फिर उसकी पुनरावृत्ति न करने का संकल्प ले।

महर्षिने यह भी दिखाने का प्रयत्न किया हैं कि भले व्यक्तियों की कभी परीक्षा की घड़ी भी आती है जब उनकी काम वासना की ओर घसीटा जाता है परन्तु इस समय विवेक से काम लेना चाहिए। महर्षि दुर्वासा को पतित करने के लिये वपु नाम की अप्सरा ने सब तरह की काम चेष्टायें कीं ऋषि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा परन्तु जब वह फिर भी अपने हाव-भाव प्रदर्शित करने में लगी रही तो दुर्वासा ने उसे शाप दिया कि तुम सुवर्ण गोत्र में पक्षिणी बनो। मार्कण्डेय ने काम वाणों से सुरक्षा के लिये सजग रहने की प्रेरणा दी है, क्योंकि किसी समय भी आक्रमण होने का अवसर आ सकता है।

क्रोध मानव का दुर्जय शत्रु है। सब जानते हैं कि इससे मस्तिक की नसों में उत्तेजना उत्पन्न होती है। वह आग जलती है जिनका कुप्रभाव सारे शरीर के स्वास्थ्य पर पड़ता है। मन व इन्द्रियाँ भी इस अग्नि की लपेट में आतीं है, बुद्धि भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकती गांधी जी ने उसे शराव और अफीम के नशे की संज्ञा दी है, क्योंकि इनके लक्षण मिलते जुलते हैं। कवियों ने भी कहा है कि पाप का मूल क्रोध से मिटे बिना जीव का सन्ताप नहीं मिट सकता। गीता में क्रोध से अविवेक की उत्पत्ति कही है क्योंकि क्रोधी को उस दौरे के वाद ही वास्तविकता से परिचय होता है इसे नरक द्वार भी बताया गया है।

यह अध्यात्म साधना को तो नष्ट करने वाला है। इन दुष्परिणामों के कारण ही महर्षि मार्कण्डेय ने इस महारोग के प्रति सावधान किया है इसके लिए उन्हें अनेकों कथाओं का सहारा लेना पड़ा।

वैवस्तु मनु के पुत्र के पुत्र पृषध्र एक बार मृगया के लिये गये। एक ब्राह्मण की गौ को भूल से मार दिया। ब्राह्मण ने पृषध्र को शूद्र हो जाने का शाप दिया। क्रोध से क्रोध की वृद्धि होती है। राजा को भी क्रोध आ गया। राजा भी ब्राह्मण को शाप देने लगा। इस पर ब्राह्मण राजा को नष्ट करने के लिए दूसरा शाप देने को प्रस्तुत हुआ। तभी उसका पिता वहाँ पहुँच गया और उसे समझाया कि ब्राह्मण का भूषण क्रोध नहीं, क्षमा है। क्रोध से तो धर्म अर्थ और काम तीनों का नाश होता है। यह ब्राह्मण का पिता बीच में न आजाता तो दोनों को उत्तेजना बढ़ती जाती और एक दूसरे को शाप देते ही जाते, जब तक कि उन दोनों में से कोई एक नष्ट न हो जाता।

विश्वामित्र और वशिष्ठ का द्वेष और संघर्ष पुराण प्रसिद्ध हैं। पुराण में भी उसे दिया गया है परन्तु बदले हुए रूप में। वशिष्ठ हरिश्चन्द्र के पुरोहित थे। जब विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र से राज्य लिया तो वह जल में तपस्या कर रहे थे। जब वह बारह वर्षों के बाद तप करके आए तो उन्हें हरिश्चन्द्र के भीषण कष्टों से परिचय कराया गया। उन्हें क्रोध का आवेश आया और विश्वामित्र को बक पक्षी होने का शाप दिया। विश्वामित्र तो क्रोध के लिए प्रसिद्ध हैं ही। उन्होंने वशिष्ठ को सारस हो जाने का शाप दे डाला। मनुष्य से पक्षियों की योनि प्राप्त होने पर भी दोनों को शान्ति न मिली और युद्ध पर उतारू हो गये। इससे सारे विश्व में हाहाकार मच गया और ब्रह्म द्वारा बीच-बचाव के लिए आना पड़ा, तब कहीं वह शान्त हो पाए। इसमें क्रोध को पापियों के अज्ञान से तुलना की गई है और बताया है कि क्रोध से मानव कितना गिर जाता है। वह इसके आवेश में आकर घोर से घोर अपराध कर सकता है।

एक अन्त कथा में विश्वामित्र के क्रोध से विद्याओं का नाश कहा हैं। विद्या का अभिप्राय ज्ञान और विवेक है। क्रोध की उत्पत्ति ही अज्ञान और अविवेक की नींव पर होती है। अत. शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक स्वास्थ्य के इच्छुक व्यक्ति को इससे बचना चाहिए, तभी आध्यात्म साधना में कुछ प्रगति की आशा की जा सकती है।

क्रोध का आधार अहंकार होता है जब अहंकार को ठेस पहुँचती है तो क्रोध से उसको शान्त करने का प्रयत्न किया जाता है, परन्तु उसका परिणाम अशान्ति ही होता है। जो व्यक्ति इन दोनों के पंजे में फँस जाता है, उससे बड़े-बड़े अपराध हो जाते हैं। बलराम जैसे बुद्धिमान व्यक्ति भी उससे नहीं बच पाए। सूतजी जैसे कथावाचक उनके आगमन पर सम्मान के प्रदर्शन के लिए खड़े नहीं होते तो उनके अहङ्कार को ठोकर लगती है। जैसे दुःखी और चिन्तित व्यक्ति अपने दुःख को कुछ क्षणों के लिए भुलाने के लिए शराब पीता है, उसी तरह से अहङ्कार की पुष्टि न होने का जो दुःख होता हैं, उसकी निवृत्ति के लिए क्रोध के नशे की आवश्यकता आ पड़ती है। क्रोध का परिणाम कुछ भी हो, उससे अहंङ्कार का रोग तो दूर हो ही जाता है। एलोपैथिक दवाओं का भी यही प्रभाव पड़ता है। प्रत्यक्ष दिखाई देने वाले रोग को वह शीघ्र ही दबा देती हैं परन्तु निश्चित रूप से अन्य भयंकर रोगों की उत्पत्ति होती है, उसका परिणाम कुछ भी हो परन्तु रोगी व अभिभावक को यह प्रत्यक्ष दिखई देता है कि रोगी जिस रोग से पीड़ित हो रहा था, वह ठीक हो गया। अहंङ्कार की औषधि क्रोध है परन्तु क्रोध तो मार-पीट गाली गलौज, युद्ध संघर्ष और हत्या आदि से ही शान्त होता है, उसका आहार बहुत ही भयंकर राक्षसों-सा है। इसका कारण तो अहंकार ही है। यदि अहंङ्कार की उत्पत्ति न हो तो क्रोध का जन्म लेना भी सम्भव नहीं है। अतः अहंङ्कार रूपी शत्रु जड़ को तो काट देना चाहिए जिससे अन्य दोषों की वृद्धि न होने पाए।'

पुराणकार ने लोभ के भीषण रूप को भी प्रस्तुत किया है। एक राजा बिना कारण दूसरे के राज्य पर अपना अधिकार ज़माना चाहता हैं। उस पर आक्रमण करता है, घोर युद्ध और नर-संहार होते हैं और शक्तिशाली राजा कमजोर को दवा देता हैं—। अनेकों वार राजाओं के मन में सारी पृथ्वी का सम्राट वनने की लालसाएं उत्पन्न की गई हैं। लाभ के भयंकर परिणामों को भी प्रस्तुत किया है।

भोग से पुण्य क्षय बताया गया है। एक कथा में इससे शक्तिका नाश होना भी व्यक्त किया गया हैं। सुव्रत तपस्वी ने राजा विदूरथ को कुजृम्भ नाम के एक राक्षस के बारे में जानकारी देते हुए कहा कि जिस जिस दिन उसके अस्त्र को कोई स्त्री छू देती है उसकी शक्ति कम हो जाती हैं दूसरे दिन पुन: वढ़ जाती है। इससे स्पष्ट है स्त्री संसर्ग से शक्ति का व्यय होता है। भोग मानव पर अपना चहुँमुखी प्रभाव डालते हैं। इसीलिए प्राचीन काल में वानप्रस्थ और सन्यास की व्यवस्था वनाई गई थी ताकि भोगों से निवृत होकर आत्मकल्याण की साधन में अपना पूरा समय लगाया जा सके यह तभी सम्भव है जव शक्ति के व्यय को रोका जाए। राजा राज्य वर्धन का जब एक बाल पक गया तो उसने समझा कि यह यमराज का दूत हैं और मृत्यु का संदेश लेकर आया हैं। अत: मुझे अपने राज्य का भार अपने पुत्रों को सौंपकर विषय-भोग से निवृत्त होकर वन में जाकर तप करना चाहिए। गृहस्थ में रहकर इस साधना को किया जा सके तो अत्यन्त उत्तम है।

मानव दोषों का पुतला है। अपने प्रबल संस्कारों व बुरे संग के कारण वह बुरे काम करता है। परन्तु जब रोग उत्पन्न होते हैं, तो उनको दूर करने के लिये दबाओं की भी खोज करली गयी हैं। शारीरिक रोगों की तरह मानसिक रोगों के भी उपचार है। भारतीय मनीषियों ने मानसिक विकारों की निवृत्ति का अमोघ उपाय यह बताया है कि पापी अपने पाप की घोषणा सार्वजनिक रूप से कर दे। यदि वह अपने

मन में उसे दबाये रखता हैं तो उसकी ग्रन्थि बन जाती है जो जन्म-जन्मान्तरों तक कष्ट का कारण बनती है तभी विधान बन गया है कि जब किसी से गौ हत्या हो जाय तो ग्राम में घूमकर और उस गाय की पूँछ पकड़ कर चिल्ला २ कर कहे कि मैंने इस गाय का बध किया है। यह उस पापका प्रायश्चित मान लिया जाता हैं। दण्ड से पाप नहीं धुलता है और न पापी को फिर पाप करने से बचाया जा सकता है। पाप एक मानसिक रोग हैं, उसका भी उपचार उसके अनुरूप ही होना चाहिए। मार्कण्डेय ने भी यही दवा बताई है। जब बलरामजी से मद्य-पान के नशे में सूतजी का बध हो गया तो नशा उतरने पर वह अपने कुकर्म पर लज्जित हुए। उन्होंने निश्चय किया कि इस पाप का क्षय करने के लिये अपने कुकुर्म का बखान करता हुआ बारह वर्ष का व्रत करूँगा। वही मेरे पाप का सर्वोत्तम प्रायश्चित होगा। आधुनिक मनो-विज्ञान ने भी इस सिद्धान्त को अपनी स्वीकृति प्रदान की है।

सद्गुणों के विकास पर बल

अवगुणों के प्रति सावधान रहने के साथ-साथ सद्गुणों का विकास भी आवश्यक है। सद्गुणों को बहुमूल्य सम्पत्ति, मानव-जीवन की सबसे बड़ी विभत्ति मानी गई है। क्योंकि उन्हीं के आधार पर समस्त प्रकार की प्रगति कर सकना सम्भव होता है। दूसरों की सहानुभूति, श्रद्धा एवं सद्भावना केवल उन्हें मिल सकती है जो सद्गुणी है स्वास्थ्य, शिक्षा कौशल आदि के आधार पर आमतौर पर कुछ कमाया जाता है, पर सच्ची शिक्षा और चिरस्थायी समृद्धि केवल सद्गुणों के आधार पर ही सम्भव है। ऐसी ही समृद्धि से मनुष्य का लौकिक और पारलौकिक जीवन सुख शन्तिमय बनता है।

पुराणकार ने इसकी ओर विशेष ध्यान दिया है। वह अपने पाठक को सत्यवादी, सदाचारी, चरित्रवान् श्रेष्ठ, परिश्रमी और स्वावलम्बी देखना चाहते है। मार्कण्डेय का भिन्न-भिन्न स्थानों पर आदेश है कि-

'गृहस्थ को सदाचार परायण होकर हव्य काव्य और अन्नदान करते हुए पितर, देवता, अतिथि और बांधवों का पूजन करने वाला होना चाहिये। इनके अतिरिक्त भूत भृत्य पशु पक्षी पिपीलिका, भिक्षुक, याचक या पर-अपर जो कोई भी जैसी प्रार्थना करे उसे यथाशक्ति पूरी करे। गृहस्थी यदि नित्य नैमित्तिक क्रिया उल्लंघन करे तो उसे पाप का भागी होना पड़ता हैं।····गृहस्थ को सदैव सदाचार का पालन करना चाहिये, आचार हीन पुरुष को लोक में कभी सुख नहीं मिल सकता। जो पुरुष सदाचार को छोड़कर संसार मार्ग में प्रवृत्त होता है, उसके द्वारा किये यज्ञ, दान और तपस्या आदि सभी अमंगलजनक होते हैं।····दुराचार में प्रवृत्त मनुष्य दीर्घजीवी कदापि नहीं हो सकता, इसलिये सदाचार में ही प्रवृत्त होवे सदाचार से बुरे लक्षण नष्ट हो जाते हैं। गृहस्थ को उपार्जित किये हुए धन का चतुर्थ भाग धर्म के लिये संचित करना चाहिए, आधे भाग से अपना पोषण और नित्य नैमित्तिक कार्य करे और शेष भाग की मूलधन के रूप में वृद्धि करे····गुरु को देखकर उठकर खड़े होने इत्यादि से सत्कार पूर्वक आसन दे और प्रणाम करके अनुकूल वार्तालाप करे। उनके गमन समय उनके पीछे चले, प्रतिकूल वचन न कहे।···· किसी के मर्म को व्यथित न करे, किसी की किसी से चुगली न करे, दंभ, अभिमान औरतों से व्यवहार को छोड़ दे। मूर्ख, उन्मत्त दुःखी आपदग्रस्त, विरुप मायावी, अंगहीन अथवा अधिकांश की हँसी उड़ाकर न छेड़े।····परनारीगमन न करे क्योंकि परनारीगमन से इष्टापूर्त्त नष्ट होता है और दीर्घायु का ह्रास होता है। इह लोक में इस पाप के समान अन्य कोई पाप नहीं है। देव-पूजन, अग्नि कार्य और गुरुजनों को प्रणाम सदा कर्त्तव्य है। पूर्वान्ह में देवताओं का, मध्यान्ह में मनुष्यों एवं अपराह्न में पितरों का पूजन करें। देवता, वेद, ब्राह्मण सत्यनिष्ठ महात्मा, गुरुजन प्रतिव्रता यक्ष और तप परायण पुरुष-इनकी हँसी न उड़ावे। यदि कोई अविनय वाला पुरुष इसकी निन्दा करे तो उधर ध्यान न दे। देवता पितर और अतिथि का पूजन सदा करे। सावधान् चित्त से

करे, अपने से श्रेष्ठ या निम्न मनुष्य की शय्या अथवा आसन पर न बैठे। अमंगल वेश न धारे, अमंगल बचन न कहे। गुरु या देवता के सामने पैर न फैलाये।

दुर्वासा की तरह अपने चरित्र की सुरक्षा के लिये किस प्रकार सजग रहना चाहिए इसे ऋषि एक ब्राह्मण की कथा के माध्यम से स्पष्ट करते हैं। लोग यह समझ सकते हैं कि दुर्वासा तो ऋषि थे, वह तो हर प्रकार की सामर्थ्य रखते थे परन्तु एक साधारण गृहस्थ कैसे पतन के मार्ग पर चलने से बच सकता है। एक ब्राह्मण के रूप लावण्य पर मुग्ध होकर वरूथिनी नाम की अप्सरा प्राण या-प्रार्थना करती है। निर्जन पर्वतीय स्थान और युवती का प्राप्य प्रस्ताव स्वीकृति के लिए कोई बाधा नहीं, समाज का कोई बन्धन नहीं, अपमान का कोई अवसर नहीं। फिर भी जो विवेकी और उच्च भावनाओं से ओत प्रोत रहते हैं, वह कोई देवता हो या नहीं कदापि दुष्कर्म नहीं कर सकते। क्योंकि वह ईश्वर को सर्वव्यापक मानते है और उसके सहस्र नेत्रों का अनुभव करते है। ब्राह्मण कुमार ने बाह्य का रूप मूल्यांकन न किया और प्रस्ताव को तत्काल ठुकरा दिया। ब्राह्मण के शब्द ध्यान देने योग्य हैं—

"यदि मैंने कभी भी ठीक समय पर वैदिक कर्म का त्याग न किया हो और कभी भी मेरे मन में पराये धन और परायी स्त्री की इच्छा न हुई हो तो मेरा मनोरथ पूर्ण हो चरित्रवान् स्त्री पुरुष का मन सबल और आत्मा शक्तिशाली होती है, उसका कोई भी कठिन से कठिन कार्य रुका नहीं रहता। जीवन के हर पग पर सफलता उसका स्वागत करती हैं।

सद्गुणों के विकास और चरित्र के उत्थान व स्थिरता के लिए अच्छे सङ्ग की अपेक्षा रहती है। सङ्ग का प्रभाव अपरिहार्य हैं। अच्छा संग भावनाओं को ही प्राप्त होता है ऋषि ने भी शिक्षा दी हे कि "सदाचारी साधु मनुष्यों के साथ ही मित्रता करे। बुद्धिमान उद्योगी को मित्र बनावे। वेदज्ञान से युक्त विद्वान, व्रत परायण और स्नातक

का संग करे।" बुद्धिमान मदालसा ने भी कष्ट आने पर सत्पुरुषों का संग करने की शिक्षा दी हैं। मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क को एक अँगूठी दी जब संकट आए तो इसमें लिपटे कागज पर लिखी शिक्षा का सहारा लेना। जब अलर्क के बड़े भाई सुबाहु ने काशीश्वर की सहायता से अलर्क के राज्य पर आक्रमण करके उसे राज्यच्युत कर दिया तो उसने माता की अँगूठी में लिपटी शिक्षा खोली। उम्में लिखा था प्रत्येक की सङ्ग का त्याग करना चाहिए। ऐसा सम्भव न हो तो साधु का ही सङ्ग करना चाहिए। सज्जन पुरुषों का संग औषधि है।" इस शिक्षा को शिरोधार्य कर अलर्क दत्तात्रेय जी के पास गए। वहाँ से उनके दु:ख का समाधान हुआ।

सत्संग का प्रभाव यदि मनुष्य व्यवहार पर अनुकूल नहीं पड़ता तो उस संग से क्या लाभ? मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में उच्च सम्मान का इच्छुक रहता है परन्तु झूँठ, कपट से वह मान मिट्टी में मिल जाता है, और सरल सत्य व्यवहार से विश्वास और सम्मान की वृद्धि होती है। कपटी व छली व्यक्ति पर अपने बन्धु-बांधव, भी विश्वास नहीं करते और उसके हर व्यवहार को संदेश की दृष्टि से देखते हैं। इसलिए पुराणकार ने घोर संकट में भी सत्य का परित्याग न करने की शिक्षा दी हैं। राजा हरिश्चन्द्र के आख्यान में रानी के मुख से ही सत्य पालन के प्रति दृढ़ निष्ठा की प्रेरणा दिलाई गई। 'राजन्! चिन्ता का त्याग करो, सत्यका पालन करो। सत्य से च्युत व्यक्ति श्मशान की तरह त्याग देने योग्य होता है। व्यक्ति के लिये सत्य पालन से बड़ा कोई कर्म नहीं है। सत्य पालन न करने वाले के अग्निहोत्र, वेदाध्यान दान और समस्त पुण्य कर्म नष्ट हो जाते हैं। धर्म शास्त्र कहते हैं कि सत्य से उत्थान और असत्य से पतन होता है। सत्य से ही सूर्य तपता है। सत्य पर ही पृथ्वी टिकी है। सत्य सर्वश्रेष्ठ धर्म है। स्वर्ग का अधिष्ठान भी सत्य ही है। एक पलड़े पर सत्य और दूसरे पर एक

हज़ार अश्वमेध यज्ञों का फल रख दें तो सत्य का पलड़ा ही भारी रहेगा।" ब्राह्मण का तो यह विशेष गुण कहा गया है–"ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व इसी में हैं कि वह पक्षी के सामने भी सत्य का पालन करे। ब्राह्मण को जो पुण्य सत्य व्यवहार से होता है, वह अच्छी दक्षिणा वाले यज्ञों से अथवा किसी उत्तम कार्य में प्राप्त नहीं हो सकता।'

सत्यवादी ही सच्चा मित्र और विश्वनीय हो सकता है। उसके सामाजिक सम्बन्ध विस्तृत हो जाते हैं। जन नेतृत्व के योग्य भी वही होता है। मित्रता की कसौटी उपकार बताई गई हैं। ऋषि ने इस सिद्धांत को प्रतिपादन करते हुए कहा–"मित्रता का स्वार्थ जिससे अपूर्ण नहीं रहता, वह मनुष्य धन्य हैं, उसका जन्म और जीवन धन्य है, मित्रों के उपकार का बदला चुकाए बिना जो अपने को जीवित समझता है, उसके जीवन को धिक्कार है।" उसकी पुष्टि के लिये एक रोचक कथा का सहारा लिया गया है। मदालसा ने जब अपने पति राजा ऋतुध्वज की मृत्यु का समाचार सुना तो वह उसी क्षण मूर्छित होकर यमपुर पहुँच गई। यह समाचार गलत था। जब ऋतुध्वज आए तो उन्हें बहुत दुख हुआ और जीवन भर विवाह न करने का निश्चय किया। नागराज अश्वतर के पुत्र इनके मित्र थे। उन्होंने यह घटना अपने पिता को सुनाई। पिता अपने पुत्रों को अपने मित्र का स्वागत सत्कार व उपकार करने की शिक्षा देते थे परन्तु पुत्रों की दलील थी कि संसार की हर वस्तु उसको उपलब्ध है, केवल पत्नी का उसे अभाव है जो पूरा होना सर्वथा असम्भव है। पिता ने सीख दी कि पुरुषार्थ करने पर हर असम्भव वस्तु भी सम्भव हो जाती है पिता के प्रयत्न से यह भी सम्भव हो गया। मित्रता मानवता का एक आवश्यक लक्षण है।

पुरुषार्थ की महिमा का गान भी स्थान-स्थान पर किया गया है। लक्ष्मी की प्राप्ति का अधिकारी भी उसे ही बताया गया है।

पराजय से लज्जित हुए एक राजकुमार से पुरुषार्थमय जीवन की

कामना की है। राजकुमार अवीक्षित एक स्वयम्बर में गया। राजकुमारी को बलात् अपने वंश में कर लिया।-यह अन्य राजकुमारी को बुरा लगा। संघर्ष होने पर अवीक्षित बन्दी बना लिया गया। फिर उसके पिता ने अपनी सेनाओं की सहायता से उसे छुड़ाया। जब राजा वन जाने लगे तो राज्य का भार उसको सौंपना चाहा। तब पुत्र ने कहा—"मैं इस योग्य नहीं हूँ। मैं अपनी पराजय से लज्जित हूं। मुझ बन्दी को आपने मुक्त कराया था, मैं स्वयं मुक्त न हो सका। फिर मुझ में क्या पुरुषत्व है ! पौरुष से युक्त व्यक्ति ही शासक होने योग्य है। जो पिता की अर्जित सम्पत्ति का भोग करे, या पिता द्वारा संकट से उबारा जाय कुल में ऐसा व्यक्ति नहीं होना चाहिए। जो अपने बल, पौरुष से सम्पत्ति और ख्याति का अर्जन करते तथा अपने पौरुष से संकटों को पार करते हैं. मैं उन जैसे लोगों की गति चाहता हूँ।' ऐसे विचार वाला व्यक्ति ही गौरव के साथ नेपोलियन की तरह सर ऊँचा करके कह सकता है। कि असम्भव शब्द को मेरे कोष से निकाल दो। बाहर की सत्प्रवृत्ति से ही मानव का उत्थान सम्भव है।

परमार्थ तत्व का निरूपण

दान के कुछ अनोखे उदाहरण पुराण में वर्णित हैं साधारण बुद्धि उसकी कल्पना भी नहीं कर सकती। हरिश्चन्द्र का विश्वामित्र को अपना सारा राज्य दान में दे देना एक कल्पनातीत घटना है, देने वाला अनुमान लगा सकता है कि उसे जीवन में कितनी ठोकरे खानी पड़ेंगी ? निर्धन व्यक्ति पर यदि कोई कष्ट आता है उसका सहन करना सरल होता है क्योंकि अभावों का देखना उसका स्वभाव बन चुका है। परन्तु जो ऐश-आराम से ओत-प्रोत हैं, उन पर मुसीबतों के पहाड़ टूट पड़े, तो उसकी आत्म-हत्या जैसी निराशाजनक बातों के सोचने

के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं दिखाई देता। किसी करोड़पति को एक दिन में कंगाल कर दिया जाय तो उसके हृदय की गति बन्द हो जायेगी परन्तु हरिश्चन्द्र ने सब कुछ प्रसन्नतापूर्वक झेला कारण स्पष्ट है कि मन में दिव्यता छाई हुई थी, उसकी प्रवृत्ति देने की थी। यदि वह स्वार्थी स्वभाव का होता, तो वह अवश्य जीवन से निराश हो जाता। ऋषि प्रेरित करते हैं कि यदि समाजहित के लिये घोर कष्टों का सामना करना पड़े तो भी उसका स्वागत करना चाहिए।

दान से परमार्थ की सद्प्रवृत्ति का उदय होता है। मनोस्थिति में उदारता आती है, स्वार्थपरता का नाश होता है तब मनुष्य दूसरों के बारे में भी सोचता है। उनके हित को अपना हित मानने लगता है। पुराणकार ने लिखा हैं कि जो दूसरों के अहित की योजना बनाता हैं उसका स्वयं ही अहित होना है। एक कथा में राजा खनिज के मन्त्री विश्ववेमो ने उसके विरुद्ध षडयन्त्र रचकर चार पुरोहितों से अभिचारक प्रयोग करवाये जिससे चार कृत्यायें उत्पन्न हुई। परन्तु वह खनिज का कुछ भी न बिगाड़ सकीं। परिणाम स्वरूप उन्होंने लौटकर चार पुरोहितों और विश्वेदी पर आक्रमण किया और उन्हें मार डाला।

पुराणकार ने इस बुरी भावना से बचने और परमार्थ भावना को मन में स्थिर रखने पर बल दिया है हरिश्चन्द्र के कष्टों के नाटक का जब अन्त हुआ तो देवता उन्हें स्वर्ग में लेने के लिए आये, परन्तु राजा ने अस्वीकार कर दिया और कहा कि 'मैं अयोध्या की प्यारी प्रजा को व्यथित छोड़कर अकेला नहीं जा सकता। वह अपनी पुण्य राशि का उपयोग अपनी प्रजा के साथ करना चाहते हैं। यदि वह सब के सब मेरे साथ स्वर्ग जा सकें, तभी मैं वहाँ जाऊँगा अन्यथा उनके साथ मुझे नरक जाना ही पसन्द होगा।"

एक बार किसी कारण से विदेहराज को थोड़े समय के लिए नरक जाना पड़ा। उसके पहुँचते ही नरकवासियों को बहुत सुखद प्रतीत हुआ। राजा ने उसका कारण पूछा तो यमदूत ने कहा—'आपके पुण्य

अनगिनत हैं, आपने बहुत से अश्वमेध यज्ञ किये हैं। समुद्र में जल की बूँदों, अकाश में तारों, मेघ में जल की बरसाती हुई जलधाराओं और गंगा में बालू के कणों की तरह आपके असंख्य पुण्य हैं। उसके कारण आपको स्पर्श करके जो वायु चल रह है, उससे नरकवासियों को अपने कष्टों में कमी अनुभव हो रही हैं। यह सुनकर विदेहराज ने नरक से हटने को मना कर दिया और स्पष्ट कहा कि जब तक यह लोग नरक में पड़े हैं मैं भी यहीं रहूंगा। "यह कहना सरल है करना कठिन है जिसने जीवन भर सुख ही देखे हों उसके लिए दुःख की एक घड़ी भी युग के बराबर होती है परन्तु जिसके मन में ऐसी उच्च भावनायें उठती हैं, वह मानव नहीं महामानव है। मार्कण्डेय ऐसा ही महामानव अपने पाठकों को देखना चाहते हैं तभी भिन्न-भिन्न कथाओं द्वारा इस प्रकार को दुहराया गया है।

राजा राज्यवर्धन की आयु बढ़ाने के लिये प्रजा व सूर्यदेव की सामूहिक प्रार्थना की। इससे राजा की आयु दस हजार वर्ष बढ़ गई राजा चिन्तित हुए कि "मैं तो दस हजार वर्ष तक जीवित रहूँग मेरे प्रजाजन यमराज के शिखर होते रहेंगे। मुझे यह आयु तभी ग्राह्य है जब मेरी प्रजा की यही आयु हो।, इस परमार्थ भावना से ओत-प्रोत हो राजा ने सूर्यदेव की एक वर्ष तक आराधन की और सारी प्रजा की आयु भी दस हजार वर्ष की हो गई तभी वे सन्तुष्ट हुए।

ऋषि ने इस मत का प्रतिपादन किया है कि स्वर्ग आसुरी वृत्ति है, परमार्थ दैवी गुण है। इस गुण के विकास के लिये सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। इससे मानसिक शांति मिलती है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इस शांति को हीरे-पन्नों से नहीं खरीदा जा सकता, तो अपनी भावनाओं को उदार बनाकर सारे ब्रह्माण्ड में बिखेर देने से आकर्षित किया जा सकता हैं। इस भावना की तुष्टि व सम्बर्धन के लिये विश्व कल्याण की प्रार्थना को बड़े ढ़ंग से संजोया गया है "सब प्राणी सुखी हो अन्यों में स्नेह रखे, समस्त प्राणियों का कल्याण हो,

उन्हें किसी प्रकार का शारीरिक व मानसिक रोग न हों, सब लोग सबके मित्र हों-तुम्हारी बुद्धि में सब प्राणियों के कल्याण की भावना हो। जिस प्रकार अपना और अपनी सन्तान का हित चाहते हो, उसी तरह प्राणियों के कल्याण की बात सोचो जो मुझसे प्रेम करता है। उसका सदैव हित साधन हो, मुझसे द्वेष करने वाले का भी सदैव कल्याण हो।" इन पवित्र भावनाओं को अपने जीवन का अङ्ग बनाने वाले ही विश्व हितैषी महामानव बन पाते हैं।

इस भावना के विकास के लिये ऋषि के एक अनुभव सिद्धि साधना का भी निर्देश किया है यह है यज्ञ। यज्ञ का अर्थ है त्याग, बलदान, परमार्थ, निः स्वार्थता। यज्ञ का लाभ शत्रु और मित्र सभी को एक समान पहुँचता है। यह समस्त प्राणी जगत् के हित साधन की साधना है। यश करने वाले का कोई शत्रु नहीं रह जाता उसे सब ओर अपना ही रूप दिखाई देता है तभी तो वह अपने गाढ़े पसीने की कमाई को वायु में विखेरने के लिये प्रस्तुत हो जाता है। वह जानता है कि अपने द्वेषियों को लाभ पहुँचाने से वह रोक नहीं सकता। अतः वह शत्रु को शत्रु मानना ही छोड़ देता है। यज्ञ से वह सारे ब्रह्माण्ड से अपना नाता जोड़ता है। वह केवल अपने परिवार तक ही सीमित था परन्तु यज्ञ का प्रभाव तो ईश्वर तत्व के माध्यम से सारे विश्व में फैल जाता है, वह अपने शरीर को ब्रह्माण्ड शरीर मानने लगता है।

जात-पांत, रंगभेद और सम्प्रदाय की संकीर्णता से ऊपर उठकर विश्व मैत्री की उच्चभावना को जागृत करने के लिए यज्ञ सरल व श्रेष्ठ साधन हैं। प्राचीन काल में इसी माध्यम से जतना के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाया जाता था। दुष्यन्त ने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप जनता ने असंख्यों यज्ञ किये। पूर्व में १८ करोड़ पश्चिम में ७ करोड़, दक्षिण में १४ करोड़ और उत्तर में १५ करोड़ यज्ञ संपन्न हुए। इन महान योजनाओं के फलस्वरूप ही रामराज्य का साकार रूप देखने को मिला जहाँ पाप, ताप चोरी, डकैती, छल-कपट आदि का नाम

निशान न था। लोग इस लोक की अपेक्षा परलोक का अधिक ध्यान रखते थे। आज उसके विपरीत हो रहा है। वह युग पुनः आ सकता है, यदि हम ऋषियों की योजनाओं के अनुसार अपने जीवन को मोड़ दें तो।

जीवन निर्माण के सिद्धान्तों का प्रतिपादन

मार्कण्डेय पुराण में विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों का उल्लेख है, जिनका प्रगति पथ पर आरूढ़ होने वाले हर मानव के लिए समझना आवश्यक है।

भौतिकवादी स्थूल नेत्रों से दिखाई देने वाले इस पंचभौतिक शरीर को ही सर्वस्व मानते हैं उससे आगे की वे कल्पना भी नहीं कर सकते। वे उस सूक्ष्म, चेतन तत्व से अपरिचित हैं जिसके आधार पर समस्त क्रियाओं का संचालन होता है भारतीयों न उस जीवन तत्व का नाम आत्मा रखा। जो इसे समझता नहीं, वह दुःखी रहता है क्योंकि शरीर अनित्य व नष्ट होने वाला है, उस पर भविष्य को निर्भर करने वाला कभी शाश्वत सुख की आशा नहीं रख सकता। शान्ति के लिए मूल तत्व को जानना होगा। उनके लिए प्रयत्न करने होंगे। आत्मा को जानकर उसके उत्थान की योजनाओं को क्रियान्वित करना होगा। जो विघ्न बाधाएं इसके मार्ग में आती है, उन्हें हटाना होगा, अपनी विचारधारा और जीवन पद्धति को परिष्कृत करना होगा।

पुराणकार ने दुःख की निवृति के लिए शरीर भावना के त्याग का परामर्श दिया। जब मदालसा पुत्र अलर्क के राज्य पर सुवाहु और कालिराज ने आक्रमण करके उसके राज्य को छीन लिया तो उसे अपनी माँ की उस शिक्षा का स्मरण हो आया कि संकट के समय इस अंगूठी में लिपटी शिक्षा के मार्गदर्शन में चलना। उसमें सत्पुरुषों के संग की प्रेरणा दी गई थी। अलर्क योगी दत्तात्रेय के पास गया। दत्तात्रेय ने कहा कि तुम अपने दुःख का कारण बताओ, मैं आज ही उसे नष्ट कर

दूँगा। जब अलर्क ने उस पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया तो लगा कि उसने भारी भूल की, दुःख तो शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रियों से सम्बन्ध रखता है और वास्तव में मैं इनसे भिन्न हूँ। दुःख तो मेरे बाह्य उपकरणों को था, मुझे नहीं, मैं तो इनसे सर्वथा भिन्न हूं। मुझे तो दुःख छू भी नहीं सकता। मेरे अज्ञान के कारण उसने मुझे दबाये रखा। अब मैं शरीर से सम्बन्धित नहीं हूं। इसलिए दुःख से परेशान नहीं हूँ।

जब तक मनुष्य शरीर भावना से लिप्त रहता है, तब तक वह शारीरिक परिवर्तनों से प्रभावित होता रहता है। इससे ऊपर उठकर जब आत्म भावना में स्थित होता है तभी उसे आनन्द का मार्ग मिलता हैं इसी मार्ग पर चलने की प्रेरणा ऋषि देते हैं।

इस सम्बन्ध में साधन का भी पथ प्रदर्शन किया है। आत्मा को जीतने के लिए लिखा है "प्राणायाम से दोषों को, धारणा से पापों को, प्रत्याहार से विषयों को और ध्यान से अनीश्वरता को भस्म करे। जैसे अग्नि में पड़कर सब धातु दोष रहित होती हैं, वैसे ही प्राण वायु के निग्रह से इन्द्रियों के सब दोष नष्ट होते हैं।" यह आत्म दर्शन में बाधक तत्व हैं, इन्हें दूर करना आवश्यक है।

जिसे आत्म दर्शन हो जाते हैं, वह सांसारिक दुःखों से अलिप्त रहता है। मृत्यु उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती। वे मृत्यु का प्रसन्नतापूर्वक आलिंगन करते हैं, अपने सम्बन्धियों की मृत्यु पर शोक नहीं मानते हैं। मृत्यु को तो वे केवल वस्त्रों का बदलना, मात्र मानते हैं। जीवन तो एक अखण्ड तत्व है। शरीर नाश से उसका नाश असम्भव है। एक शरीर के नाश के बाद आत्मा दूसरा शरीर धारण करेगी, उसके भी नष्ट होने पर तीसरा धारण करेगी, तब तक जीवन का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो जाता, यह यात्रा चलती ही रहेगी। यह तो यात्रा के भिन्न-भिन्न पड़ाव हैं, इनकी वास्तविकता से आँखें मूँदकर रोना पीटना अज्ञानता है। मदालसा ने अपने पति की मृत्यु का समाचार सुनकर शरीर त्याग दिया

तो राजा ने कहा कि "सब प्रकार के सम्बन्धों की अनित्यता पर विचार करने पर ऐसा लगता है कि क्या पुत्र के लिए रोऊँ और क्या पुत्र वधु के लिए रोऊँ? अर्थात् दोनों में किसी के लिए रोने का कारण नहीं हैं।

इन विचारों की पुष्टि के लिए पुनर्जन्म के सिद्धान्त को उभारा गया है। सुमति नाम के ब्राह्मण कुमार की कथा दी गई है कि जब उसका उपनयन संस्कार किया गया तो उसे उपदेश दिया गया है कि उसे क्रमशः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास चार आश्रमों में प्रवेश करना होगा। इनके कर्तव्यों का दृढ़ता पूर्वक पालन करने पर ही उसे ब्रह्म प्राप्ति होगी। इस पर सुमति ने अपने अनेकों जन्मों का वृतान्त सुनाया। उन जन्मों में वेदाध्ययन और आश्रम धर्मों के पालन की बात कही, कैसे एक बार नरक की यातना भोगनी पड़ी, उसका भी वृतान्त है। पुनर्जन्म का सिद्धान्त बताता है कि शरीर के नाश से हमारी प्रगति अवरुद्ध नहीं हो जाती जितना विकास हमने इस शरीर के माध्यम से कर लिया है, वह भी नष्ट नहीं होता, उसके संस्कार हम सूक्ष्म शरीर के के साथ ले जाते हैं और आगामी जीवन में हम इस विकास का उपयोग करते हैं। कई व्यक्तियों में जन्मजात विलक्षण प्रतिभा बाल्यकाल से ही प्रस्फुटित होने लगती है वह उनके इस जन्म के कारण नहीं, वरन् पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण होता है।

इसीलिए मार्कण्डेय ने जीवन निर्माण के प्रमुख सूत्र कर्म को प्रमुखता दी है। कर्म को ही समस्त सफलताओं का श्रेय दिया हैं। कहा है "कर्म का बल पृथ्वी के मानव की श्रेष्ठतम शक्ति है। यही उसकी विजय का रहस्य है। यही कारण है कि स्वर्ग में देवता भी पृथ्वी पर जन्म लेने को उत्सुक रहते हैं। जिनके पास कर्म का हथियार होता है, वह उसकी सहायता से देवत्व, और ब्रह्मत्व सभी को प्राप्त करने की क्षमता रखते हैं। जिन व्यक्तियों का चित्त, इन्द्रियाँ और आत्मा अपने वश में हैं और जो कर्म करने के लिए उद्यत है, उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं होता। चलती हुई चींटी हजारों योजन जाती है, बिना चले वरुण भी एक पग नहीं जा पाता।"

इन सशक्त शब्दों से ऋषि आशा की जीवन ज्योति जलाते हैं और आश्वासन देते हैं कि जैसी भी परिस्थितियाँ इस जीवन में उपलब्ध हुई है, उनसे निराश न होना चाहिए। उनके लिए भाग्य और भगवान को कोसना कायरता और निर्बलता की निशानी है कर्म का विस्तृत क्षेत्र मानव के लिए खुला पड़ा है, वह स्वतन्त्रता पूर्वक अपने कर्मों का जाल बिछा सकता है। उन्हें नष्ट करने का अधिकार किसी भी मानव को नहीं दिया गया। यह अलग बात है कि उनमें विघ्न बाधायें उपस्थित हों जिन्हें दूर करने के लिए कुछ अतिरिक्त पुरुषार्थ करना पड़े, परन्तु उस दयालु परमात्मा ने उन्नति का मार्ग हमारे लिए खुला छोड़ दिया है। हम अपने कर्मों के द्वारा उच्चतम आसन पर स्थित हो सकते हैं। यदि हम आगे नहीं बढ़ रहे तो इसका कारण हम स्वयं हैं न कि भाग्य और भगवान्! किसी को हमारे लिए कुछ नहीं करना है। करने वाले हम स्वयं हैं। अपने भाग्य को हमें स्वयं लिखना है बताना है। इसी पर ऋषि ने विशेष बल दिया है।

जब राजा शत्रुजित के पुत्र अपने मित्र ऋतध्वज के दुःख निवारण के लिए कुछ नहीं कर सके तो पिता ने कहा "पुत्र! तुम्हारी यह धारणा ठीक नहीं है। बुद्धिमानों के लिए कोई कार्य असाध्य नहीं होता, पुरुषार्थ से सब कुछ उपलब्ध किया जा सकता है—उद्योगी व्यक्ति के लिए कोई भी स्थान गम्य और कोई स्थान अगम्य नहीं होता। कहाँ भूतल और कहाँ ध्रुव का पद? फिर भी इस भूतल पर विकास करने वाले ध्रुव ने उद्योग द्वारा ध्रुव का पद पा ही लिया।"

एक राजकुमार ने कामना की है कि 'जो अपने बल पौरुष से सम्पत्ति और ख्याति अर्जित करते हैं और अपने पौरुष से ही संकटों को पार करते हैं मैं उन जैसे लोगों की गति चाहता हूं।" पुरुषार्थ ऐसा अस्त्र है जिससे साँसारिक विघ्न बाधाओं, कठिनाईयों व रुकावट को दूर करके मानव लौकिक और पारलौकिक सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त कर सकता है। उसी की ओर ऋषि ने हमें आकृष्ट किया है।

मानव को कुमार्ग से बचने और सद्मार्ग की ओर प्रेरित करने के लिए अनेकों प्रकार के उपाय अपनाये जाते हैं। उनमें एक नरकों के भय दिखाना भी है। कर्मफल के सिद्धान्त को तो हर भारतीय स्वीकार करता ही है। वर्तमान बुरी या अच्छी परिस्थितियों का श्रेय भी पिछले जन्म के बुरे या अच्छे कर्मों को ही होता है। नरक अथवा स्वर्ग का भोग तो वह यहाँ भी कर लेता है। यदि इन्हीं तथ्यों को भीषण रूप से वर्णित करके नरक और स्वर्ग पृथिवी से दूर किसी दूरस्थ लोक में बताये जाते हैं तो उन पर साधारणजन विश्वास कर लेते हैं और उनमें दी जाने वाली यातनाओं की भयंकरता को सुनकर वह भयभीत हो जाते हैं और बुरे कर्मों से बचते हैं। इसी उद्देश्य से मार्कण्डेय पुराण में नरकों का विस्तृत वर्णन है जिनमें लाखों करोड़ों जीव अपने दुष्कर्मों के भोग भोगते दिखाये गये हैं। वहाँ की लोमहर्षक यातनाओं को सुनकर हृदय काँप उठता है। उदाहरण के लिए "जिन नराधम मनुष्यों ने पर-नारी को दूषित नेत्रों से देखा है अथवा पराये धन को हड़पने की इच्छा वाले नेत्रों से देखा है, उनके दोनों नेत्रों को यह वज्रतुण्डी पक्षी हरण करते हैं तथा वही नेत्र बारम्बार उत्पन्न हो जाते हैं, इन मनुष्यों ने जितने पलक लगने तक यह पाप किये हैं, उतने ही सहस्र वर्ष यह इस नेत्र पीड़ा को प्राप्त करते रहेंगे। जिन्होंने शत्रु की भी ज्ञान की दृष्टि का हरण करने के लिए अन्याय पूर्वक विपरीत शास्त्रोपदेश अथवा भ्रमात्मक परामर्श दिया है या मिथ्या भाषण किया है। जिन्होंने वेद, देवता, ब्राह्मण और गुरुजनों की निन्दा की है, यह वज्रतुण्डी पक्षी उनकी जीभ को काटते हैं। जितनी बार यह पाप किया है, उतने ही वर्ष उन्हें ऐसी यन्त्रणा मिलती है। जिन्होंने मित्रों में या पिता पुत्र में भेद डलवाया है अथवा याज्ञिक-यजमान से, माता-पुत्र में या पति पत्नी में मनमुटाव कर दिया है, वे इस कर पत्र से आहत होते हैं। अथवा जो किसी को क्रोध दिलाते या किसी की प्रसन्नता नष्ट करते हैं, जो ताड या पंखा या खस

या चन्दन का हरण करते अथवा साधुओं को प्राणान्तक पीड़ा देते हैं, वे पापी तप्त रंत में गिर कर पाप का फल पाता है श्राद्ध में नियंत्रित होकर अथवा जो एक दूसरे के यहाँ भोजन करते हैं उनको यह पक्षीगण व्यथित करते हैं।"

पुनर्जन्म का सिद्धान्त सर्वमान्य है। यह निश्चित है कि हजारों प्रकार के पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि की नीच योनियों से होकर मानव को यह योनि प्राप्त होती है। इस योनि में आकर भी यदि वह पतित कार्य करता है तो पुनः उन योनियों में उसे जाना पड़ता है। कैसे कर्म से किस योनि में जाना पड़ता है, इसकी विस्तृत सूची पुराणकार ने दी है। उदाहरण के लिए पतित मनुष्य से धन लेने वाला ब्राह्मण गधे की योनि को प्राप्त होता है तथा पतित मनुष्य को यज्ञ कराने पर नरक से मुक्त होकर कृमि-योनि पाता है। उपाध्याय के प्रति छल करने, उसकी स्त्री या अन्य वस्तु की इच्छा करने से श्वान-योनि मिलती है। माता-पिता का अपमान करने वाला गधा और उन्हें गाली देने वाला भैंसा होता है। भाई की पत्नी का अपमान वाला कबूतर होता है, उसे पीड़ित करने से कछुआ होता है। स्वामी का पिण्ड भोजन करके जो उसका अभिलषित नहीं करता, वह मोह में भरकर मरणान्तर बन्दर बनता है। किसी को धरोहर हड़पने वाला नरक से मुक्त होने पर कृमि होता है, असूया करने वाला नरकान्त में राक्षस होता है।

नरकों, उनमें दी जाने वाली यातनाओं और विभिन्न प्रकार की योनियों के वर्णन का उद्देश्य यह है कि मानव दुष्कर्मों से बचे और सत्कार्यों का सम्पादन करे ताकि उसे श्रेष्ठतम योनि में आकर पुनः क्षुद्र योनियों में न जाना पड़े। यह मानव की पतित अवस्था का ही परिणाम हो सकता है। पतन से बचने के लिए ही मार्कण्डेय ने यह सत्प्रयास किया है।

साधनात्मक प्रक्रियाएँ

इस सिद्धान्त से हर व्यक्ति परिचित है कि इस जीवन की सुख-सुविधाएँ पिछले उदार कार्यों के कारण प्राप्त हुई हैं और कठिन परिस्थितियों का कारण संकीर्ण और क्षुद्र भावनाएँ रही हैं। स्वर्गीय सुखों का भोग करना तो हर कोई चाहता है। परन्तु उसके अनुरूप सद्कार्यों का करना हर किसी के बस की बात नहीं है। मनुष्य न चाहते हुए भी पाप करता है। बुरे कार्यो को बुरा समझते हुए भी उनमें फँसता है। इसका कारण उसका अपवित्र और निर्बल मन है। पवित्र और सबल मन में ही सद्‌विचार उठते हैं। परन्तु मन को अपनी इच्छानुसार चलाना सरल नहीं है। उसकी गति वायु से भी तीव्र है। इसकी चंचलता तो प्रसिद्ध है ही। इसे पवित्र, शक्तिशाली और अपने नियन्त्रण में रखने के लिए अनेकों प्रकार की आध्यात्मिक साधनाओं का आविष्कार किया गया है जिन्हें अपनाकर हितसाधन किया जा सकता है। जप, तप, योग और विचार-साधना के अनेकों मार्ग हैं जिनमें से कुछ का मार्ग दर्शन किया गया है।

मार्कण्डेय ने प्रणव की साधना की ओर साधकों का ध्यान आकृष्ट किया है। योगियों ने समाधि अवस्था में देखा कि सूक्ष्म प्रकृति के अन्तराल में जो ध्वनि होती है वह ॐ से मिलती-जुलती है। अतः उस ध्वनि को श्रवण करके उन्होंने मानव के हितार्थ साधना का रूप दे दिया ताकि मानव उसके अनुरूप अपने को बना सके। अनुकूलता में शक्ति का विकास और प्रतिकूलता में ह्रास है इसलिए प्रणव को श्रेष्ठतम माना गया है जिसकी महिमा का गान स्वयं पुराणकार ने किया है—'जो विश्व स्वरूप, विश्वेश्वर और विश्वभावन हैं तथा विश्व ही जिनके पाद ग्रीवा और मस्तक हैं, उन्हीं परब्रह्म को प्रत्यक्ष करके योगी उनको पाने के लिए 'ॐ' इस एकाक्षर मन्त्र का जप करें। यही उनका स्वाध्याय है, इसी ओंकार का श्रवण करना चाहिए। योगी अक्षर अक्षर में ओंकार युक्त होता है, प्राण को धनुष रूप, आत्मा को बाण रूप और ब्रह्म को लक्ष्यरूप

जाने....ओंकार ही त्रिवेद, त्रैलोक्य और तीनों अग्नि, ब्रह्म, विष्णु शिव तथा ऋक् यजु, साम स्वरूप हैं....केवल 'ॐ' का उच्चारण करके ही सदैव सत्-असत् का ग्रहण हो जाता है। जो योगी ओंकार स्वरूप जानकर उनका 'ध्यान करते हैं वह संसार चक्र का अतिक्रमण करते हुए तीनों बन्धनों को छोड़कर उस परब्रह्म में ही लीन हो जाते हैं। यदि उनके कर्म बन्धन क्षीण न हों तो वह अनिष्ट द्वारा मृत्यु जानकर उस समय स्मृति लाभ पूर्वक योगित्व को पुन प्राप्त होते हैं।" वेद शास्त्रों से इन तथ्यों की पुष्टि होती है।

योग साधना की विस्तृत शिक्षा पुराणकार ने दी हैं। अस्तेय, ब्रह्मचर्य, त्याग, अलोभ, अहिंसा के पाँच यमों और अक्रोध, गुरुसेवा, शौच लघु आहार और नित्य स्वाध्याय के पाँच नियमों के पालन को आवश्यक माना गया हैं। इसी स्थिति पर आगामी क्रियाओं का सफल संचालन सम्भव है योग की नींव को दृढ़ करने के लिए इन नैतिक नियमों का पालन आवश्यक है। प्राणायाम से दोषों को, धारण से पापों को, प्रत्याहार से विषयों को और ध्यान से अनीश्वरता को भस्म करने की प्रेरणा दी है। प्राण वायु के निग्रह से इन्द्रियों के समस्त दोषों का नष्ट होना बताया गया है। आत्मा पर विजय प्राप्त करने का साधन योग की इन साधनाओं को माना गया है। इन सभी क्रियाओं को खोल कर समझाया गया है। इनसे प्राप्त होने वाली सिद्धियों का भी वर्णन है। अष्ट सिद्धि की प्राप्ति का आश्वासन दिया गया है और इन्हें अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचाने वाली कहा गया है। ध्यान के सम्बन्ध में कहा है— "निखिल वेद और सब प्रकार की यज्ञ क्रिया उत्कृष्ट हैं, उस यज्ञ से जप श्रेष्ठ है जप से ज्ञानमार्ग और ज्ञान मार्ग से निःसर्ग और रागहीन ध्यान श्रेष्ठ है, क्योंकि इस ध्यान के दारा ही शाश्वत ब्रह्म की प्राप्ति होती हैं। जो सावधानी से ब्रह्मपरायण, प्रमाद रहित एकान्तवासी और जितेन्द्रिय होकर योग साधन करते हैं, वे आत्मा से आत्मा के संयोग को पाकर मोक्ष लाभ करते हैं" इन साधनाओं को क्रियारूप देकर निश्चित रूप से आत्मा और परमात्मा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता हैं।

तप की प्रेरणा तो पग-पग पर दी गई है। जितने भी राजाओं के जीवन-चरित्रों अथवा कथाओं का पुराण में वर्णन हैं, लगभग सभी ने बृद्धावस्था आने पर राज्य का भार अपने पुत्रों को सौंपकर तपश्चर्या के लिए वन के लिए प्रस्थान किया। तपस्वी का वेष धारण करके वे क्रोध, हिंसा, बदले की भावना से बचे रहते हैं। कई बार जब वन में मुनियों को नागों राक्षसों व अन्य आसुरी शक्तियों ने परेशान किया तो उन्हें शाप द्वारा स्वयं भस्म करने की शक्ति-सामर्थ्य रखते हुए भी वे राजा के पास रक्षा की प्रार्थना के लिए जाते हैं क्योंकि क्रोध से उनकी आध्यात्मिक शक्ति के क्षय होने की सम्भावना थी। तप द्वारा शक्तियों और सिद्धियों की प्राप्ति का वर्णन है।

आत्मोत्थान के लिए चिन्तन-मनन एक उच्चकोटि की साधना है। इसमें दोनों पक्षों की ओर ध्यान रखरा आवश्यक होता हैं। एक तो अपनी भावनाओं में सात्विकता लानी चाहिए। नागराज ने जब ऋत-ध्वज से वर मांगने के लिए कहा तो उसने उत्तर दिया—"यदि आप कुछ देना ही चाहते हैं तो मुझे यह वर दें कि मेरे हृदय में धर्म की भावना कभी दूर न हो।" वास्तविकता के कारण कर्म को धर्म कहते हैं। कर्तव्य पालन ही सच्चा धर्म है। धर्म भावना तो आत्म विकास की नींव है। इसका पुष्पित-पल्लवित होना आवश्यक है।

आत्म-दर्शन के लिए शरीर-भावना से ऊपर उठकर आत्म-भावना के क्षेत्र में प्रवेश करना पड़ता है तभी मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। जब साधक आत्मभावना में दक्ष हो जाता है तो उसका कोई शत्रु-मित्र नहीं रह जाता, सबको समान दृष्टि से देखता है, किसी से घृणा द्वेष नहीं करता। जगत के कल्याण के लिए अपनी समस्त शक्तियों के व्यय के लिए तत्पर रहता है। अलर्क को दत्तात्रेय से आत्मज्ञान हुआ तो उसकी भी यही स्थिति हो गई। वह चारों ओर अपनी आत्मा के दर्शन करने लगा। यह आत्म-साधना की उच्च स्थिति है।

इस स्थिति तक पहुँचने के लिए आत्म-संयम की साधना एक महत्व

पूर्ण अंग है जिसकी प्रेरणा पुराणकार ने दी है। इसे मोक्ष का साधन माना गया है। संयम से शक्तियों की सुरक्षा होती है। शक्ति की साधना का मूल है उसकी सुरक्षा के लिए विरोधी साँसारिक भावनाओं के प्रति सावधान रहना पड़ता है। इनमें अनित्यता असंग और क्षमता के त्याग पर ऋषि ने विशेष बल दिया है। अनित्यता की भावना से साँसारिक वस्तुओं के क्षय होने पर दु:ख नहीं होता। उनकी स्वाभाविक गतियों को जो भली प्रकार जानता है, वह उनमें लिप्त नहीं रहता, अलिप्तता की भावना से ओत प्रोत रहता है। ममता के प्रति विशेष रूप से सजग रहने को कहा गया है क्योंकि 'ममता मनुष्य के हृदय में एक महान वृक्ष के रूप में स्थित है। अज्ञान को इसका बीज, अहंकार को अंकुर और ममकार को तना कहा गया है। घर-द्वार, खेती-बाड़ी की शाखाएँ, धन सम्पत्ति को पत्ते, स्त्री-पुत्र को पल्लव, पाप-पुण्य को पुष्प, सुख-दु:ख को फल इच्छाओं को भ्रमर की संज्ञा दी है। यह आदिकाल से है और निरन्तर बढ़ रहा है। यह साधक को आत्म-विस्मृत करता हैं। सत्संग व विद्या के अस्त्रों से यह कट सकता है तभी मोक्ष मार्ग प्रशस्त होगा।

प्रलय के विस्तृत वर्णन करने का उद्देश्य यह है कि हम नित्य के मनन चिन्तन और ध्यान से अनुभव करें कि इस विश्व की जितनी वस्तुओं से हमारा सम्बन्ध है, वह धीरे-धीरे नष्ट होती जा रही है। बंधु बान्धव साथ छोड़ते जा रहे हैं, पंचभौतिक शरीरों का निरन्तर क्षयहोता जा रहा है,ये विनाशकी ओर तीव्र गति से बढ़ रहे हैं, बड़े-बड़े भवन और प्रासाद ध्वस्त होते जा रहे हैं, असंख्यों जीव-जन्तु अपने प्राण छोड़ रहे हैं, बड़े-बड़े राजा महाराजा और 'धन कुबेर भी इस प्रवाह में बहे जा रहे हैं, किसी में रुकने की क्षमता नहीं है। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि सारा विश्व जलकर भस्म हो गया है और चारों ओर जल ही जल दिखाई दे रहा है।

देवी उपासना का निर्देशन इस पुराण की एक प्रमुख विशेषता है। देवी के आविर्भाव उद्देश्य, आसुरी शक्तियों से संघर्ष आदि का विस्तृत

वर्णन है। देवता देवी की स्तुति करते हुए कहते है 'इस प्राणी जगतको अपने प्रभाव से विस्तार करने वाली, समस्त देवगणों की एकत्रित शक्ति से उत्पन्न होकर साकार रूप में परिणित हुई हो ! एवं जो समस्त सद्-गणों एवं महामुनि की पूज्या हो। अनन्त भगवान्, ब्रह्म एवं महेश भी जिनकी शक्ति और प्रभाव का वर्णन करने में असमर्थ हैं वह देवी चण्डिका समस्त विश्व का पोषण करने के लिए और उसके अहित व भय के नाश के लिए आकांक्षित हों। समस्त विश्व की घोर विपत्ति को शमन करने वाली आप ही हैं। आप ही बुद्धि स्वरूप हैं, कठिन भय सागर से निस्तार करने वाली अनुपम नौका स्वरूप हैं। कैटभ शत्रु के वधकर्त्ता भगवान् विष्णु के हृदय में निवास करने वाली लक्ष्मी और महादेव के वाँये अङ्ग पर प्रतिष्ठित गौरी आप ही हैं। आपके पराक्रम की किसी अन्य के साथ तुलना नहीं की जा मकती। आपका रूप शत्रुओं को भयदाता एवं अत्यन्त अनुपम है।''

देवी का आविर्भाव देव शक्तियों के संग्रह से हुआ है। जव-जब राष्ट्र पर घोर संकटों के बादल छाये हैं, तब-तब दिव्य पुरुष एकत्रित होकर अपने समस्त सामर्थ्यों को राष्ट्र हित के लिए समर्पित कर देते हैं परन्तु पृथक् प्रयत्नों का कोई आशाजनक फल नहीं प्रतीत होता। संगठन से ही शक्ति का विकास होता है। जब महिषासुर मधु, कैटभ, शुम्भ, निशुम्भ आदि शक्तिशाली विरोधियों ने सर उठाया तो देव शक्तियों ने उनसे अलग-अलग जूझने में अपने को समर्थ पाया। वह सब मिल-कर एक हो गये तब असुरों को पराजित होना पड़ा। भगवान कृष्ण ने भी ग्वालों को कहा था, तुम अपनी-अपनी अँगुली लगा दो, यह गोव-र्धन सहज में ही उठ जायेगा। यह संगठन शक्ति की ओर से ही संकेत था। भगवान राम ने वानरों की निम्न स्तर की जाति का संगठन करके ही लङ्का पर आक्रमण किया और सिद्धहस्त सेना को परास्त कर दिया। आज हमारा सामाजिक, नैतिक व साँस्कृतिक ढाँचा अस्त-व्यस्त हो रहा है। चारों ओर से आसुरी शक्तियाँ इसे और व्यस्त करने का प्रयत्न कर

रही है। अब यह लड़खड़ाती स्थिति में हैं, इसे स्थिर रखने के लिए आवश्यकता है कि देवी की उपासना की जाये। देव शक्तियों को एकत्रित किया जाये और असुरों के नगर व गढ़ों को नष्ट भ्रष्ट किया जाय, ताकि देवता सुख की साँस ले सकें अर्थात् राष्ट्र का नैतिक व सांस्कृतिक विकास हो। ऐसे संगठन बनाये जायें या बने हुओं का सहयोग किया जाय, जो सामाजिक रोगों और कुरीतियों के विरुद्ध अभियान चलाएँ, उनसे घोर संघर्ष करें, ताकि सारे राष्ट्र में नैतिकता की अजस्र धारा प्रवाहित हो।

देवी उपासना का उद्देश्य यह भी है कि जब हम देवी को जगज्जननी मानते हैं तो समस्त स्त्री जाति को ईश्वर रूप मानना होगा। आज दूषित दृष्टि की कमी नहीं है। वहाँ भी इसका अनुभव किया जा सकता है। नारी जाति के प्रति आदर व सम्मान की भावनाएँ रखना और उन्हें पुत्री भगिनी और मातृत्व की पवित्र भावना से देखना ही सच्ची देवी उपासना है। इसी की ओर पुराणकार ने इङ्गित किया है। अश्लीलता, युवतियों का अपहरण, बलात्कार, कामवासना के तांडव के नृत्य चारों ओर दिखाई दे रहे हैं। इसका शमन इस देवी उपासना से ही सम्भव है।

समन्वयात्मक दृष्टिकोण

मार्कण्डेय पुराण के रचयिता एक सामाजिक बन्धनों से मुक्त महर्षि हैं जो आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हैं। वह चाहते तो इसमें अपने पक्ष का प्रतिपादन करते और बुद्ध, नारद की तरह सबको ही गृह-त्याग की शिक्षा देकर संन्यासी बना देते। गीता का प्रतिपाद्य विषय तो कर्म-योग है परन्तु हर टीकाकार आचार्य ने अपनी मान्यताओं के अनुसार उसे अपने अनुकूल मोड़ दिया। मार्कण्डेय चाहते तो वे भी सुविधापूर्वक ऐसा कर सकते थे। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने जगत के कल्याण की पवित्र भावना से इसका निर्माण किया था। जन-साधारण का हित इसी में है कि उनके बौद्धिक-स्तर और पात्रता के अनुसार ही उन्हें शिक्षा व प्रेरणा दी जाये ताकि वह उसे सुविधापूर्वक अपना सकें। शिक्षायें ऐसी व्यावहारिक होनी चाहिए जिन्हें जन साधारण के लिए असम्भव न

कहा जा सके। मार्कण्डेय दूरदर्शी थे। उन्होंने जगत् के प्रवाह का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया और अपने अनुयाइयों को इस धारा के अनुरूप ही हर व्यक्ति को उपदेश दिया। धारा के विरुद्ध चलने में कड़ा संघर्ष करना पड़ता है जो सर्वसाधारण के लिए अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है। इसलिए उनके ऐसे मार्ग निर्देशन द्वारा उच्चतम स्थित तक पहुँचा जा सकता है।

मार्कण्डेय स्वयं विरक्त थे परन्तु उन्हें गृहस्थ से विद्वेष नहीं था। उन्होंने भौतिक जीवन को हर प्रकार से समुन्नत करने की प्रेरणा दी, सभी साधनों को पूर्णरूप से विकसित करने पर बल दिया परन्तु इन सब प्रक्रियाओं का आधार धर्म और कर्तव्य ही माना। गृहस्थ की उन्होंने प्रशंसा की है क्योंकि इससे संघर्षमय जीवन की क्रियात्मक शिक्षा मिलती है। यही जीवन-निर्माण की आधार शिला बनती। प्रगति पथ पर आरूढ़ होने के लिए आवश्यक नियमों का विवेचन किया गया और सद्गुणों के विकास पर बल दिया गया है। साथ ही साथ अवगुणों के प्रति चेतावनी दी गई है, ताकि उपार्जित शक्तियाँ सुरक्षित रह सकें, उनका अपव्यय होकर वह मानव को दीन-हीन न बना दें।

ऋषि व्यक्तिगत उत्थान के समस्त सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं परन्तु इस उत्थान को वे अधूरा मानते हैं, जब तक कि परहित की उदार भावनायें मन क्षेत्र में जाग्रत न हो जायें। पूर्णता की प्राप्ति के लिए वह सारे विश्व को अपना परिवार मानने पर बल देते हैं। इस स्थिति तक पहुँचने के लिए महत्वपूर्ण साधनाओं का भी मार्ग दर्शन किया है।

मार्कण्डेय ने भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के जीवन का उचित मूल्यांकन किया है। व भौतिकवाद की उपेक्षा नहीं करते, उसे भी आवश्यकता समझते हैं परन्तु केवल उन्हीं के लिए जीवन नष्ट करने को अज्ञानता मानते हैं। उनका दृष्टिकोण समन्वयात्मक है। यही जन-साधारण के अनुकूल हैं। इसीलिए इसे एक उच्चकोटि का पुराण माना जाता है।

* समाप्त *

भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम धर्म-ग्रन्थ

१. ऋग्वेद ४ खण्ड	....	६८)
२. अथर्व वेद २ खण्ड	....	३४)
३. यजुर्वेद	....	१७)
४. सामवेद	....	१५)
५. १०८ उपनिषद् ३ खण्ड	....	५४)
६. बृहदारण्यकोपनिषद्	....	१०)
७. छान्दोग्योपनिषद्	....	१०)
८. वैशेषिक दर्शन	....	१३)
९. न्याय दर्शन	....	११)
१०. साँख्य दर्शन	....	१३)
११. योग दर्शन	....	१२)
१२. वेदान्त दर्शन	....	११)
१३. मीमांसा दर्शन	....	१५)
१४. मनुस्मृति	....	२४)
१५. योग वासिष्ठ २ खण्ड	....	४०)
१६. पञ्चदशी	....	२३)
१७. विचार सागर	....	३०)
१८. विचार चन्द्रोदय	....	५)
१९. पञ्चीकरण	....	१०)
२०. उपदेश साहस्त्री	....	१०)
२१. वृत्ति प्रभाकर	....	१३)
२२. सौन्दर्य लहरी	....	१२)

प्रकाशक:—संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब वेद नगर,
बरेली-२४३००३ (उ० प्र०)

विश्व ओंकार परिवार की स्थापना

ॐ परमात्मा का नाम सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम है। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र-राज, बीज मन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम, महानतम और पवित्रतम मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं है। यह सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से भावित करता है! सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता है। भौतिक व आध्यात्मिक उत्थान के लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषि मुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी को अनुभव करते हुए विश्व ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय बरेली से मंगवा लें। आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके चार मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष ३२००० साधकों द्वारा १५०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना हैं आशा है कि ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के श्रेष्ठतम आध्यात्मिक महायज्ञ में आप सम्मिलित होकर महान पुण्य के भागी बनेंगे।

ओंकार रहस्य, ओंकार दैनिक विधि, ओंकार चालीसा, ओंकार कीर्तन और ओंकार भजनावली नामक २० पैसे मूल्य वाली सस्ती पुस्तिकाओं को अधिक से अधिक संख्या में वितरित करें।

विनीत :

विश्व ओंकार परिवार — चमनलाल गौतम

खवाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली—२४३००३ (उ० प्र०)

एक मौन व्यक्तित्व का समर्पण

— — —

डा० चमनलाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक संस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्य साहित्य के शोध, प्रकाशक और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहे हैं। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व असाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन, तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। ध्यान और त्राटक पर उनके वैज्ञानिक प्रयोग प्राचीन ऋषियों की तप साधना की याद दिलाते हैं। इन प्रयोगों और अनुभूतियों पर रचा साहित्य स्वयं में एक आश्चर्य है। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही आध्यात्मिक साधना के महापुश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ विश्व ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसन्तपञ्चमी की परम पवित्र बेला के साथ हो गया है। अत: उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता, ओंकार परिवार की शाखाओं के व्यापक विस्तार के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रशस्त करना, ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचना व प्रचार-प्रसार को समर्पित है।

—स्वामी सत्यभक्त

K. P. SABHA AMBPHALLA
LIBRARY
No ....
Date............
M

पुराणों का बृहद् प्रकाशन

(सरल हिन्दी अनुवाद सहित)

१—शिव पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
२—विष्णु पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३६)
३—मार्कण्डेय पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
४—गरुड़ पुराण	१ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
५—हरिवंश पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
६—देवी भागवत पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
७—भविष्य पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
८—लिंग पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
९—पद्म पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१०—कूर्म पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
११—ब्रह्मवैवर्त पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१२—स्कन्द पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१३—ब्रह्म पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१४ नारद पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१५ कालिका पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१६—वामन पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	—	३८)
१७—अग्नि पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	...	३८)
१८—ब्रह्माण्ड पुराण	२ खण्ड (भा.टी.)	...	३८)
१९—कल्कि पुराण	(भा.टी.)	—	२०)
२०—सूर्य पुराण	(भा.टी.)	—	१६)
२१—आत्म पुराण (भाषा)		—	१६)
२२—गणेश पुराण (भाषा)		—	२०)
२३—महाभारत (भाषा)		—	१८)
२४—श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा (भाषा)		—	३०)

प्रकाशक : संस्कृति संस्थान, ख्वाजाकुतुब वेदनगर

बरेली–२४३००३ (उ०प्र०)